उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

।। सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ।।

MAGO - 103

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013
www.uprtou.ac.in
टोल फ्री नम्बर- 1800-120-111-333

स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

उत्तर प्रदेश सरकार का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय

।। सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ।।

MAGO-103
आर्थिक भूगोल के मूल तत्व

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013
www.uprtou.ac.in
टोल फ्री नम्बर- 1800-120-111-333

कुलपति
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

सन्देश

प्रयागराज की पवित्र भूमि पर भारत रत्न राजर्षि पुरूषोत्तम दास टण्डन के नाम पर वर्ष 1999 में स्थापित उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज उ0प्र0 का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय है। यह विश्वविद्यालय उ0प्र0 जैसे विशाल जनसंख्या वाले राज्य में उच्च शिक्षा के प्रत्येक आकांक्षी तक गुणात्मक तथा रोजगारपरक उच्च शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने में निरन्तर अग्रसर एवं प्रयत्नशील है। तत्कालीन देश की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों में एक वैकल्पिक व नवाचारी शिक्षा व्यवस्था के रूप में भारत में मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का पदार्पण हुआ था, परन्तु वर्तमान परिस्थितियों तथा तकनीकी का सार्थक प्रयोग करते हुये मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा आज की सर्वोत्तम पूरक शिक्षा व्यवस्था के रूप में स्थापित हो चुकी है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली के सामने व्याप्त पाँच मुख्य चुनौतियों - (i) पहुँच (Access), (ii) समानता (Equity), (iii) गुणवत्ता (Quality), (iv) वहनीयता (Affordability) तथा (v) जवाबदेही (Accountability) को केन्द्र में रखकर घोषित देश की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP-2020) के प्रस्तावों को क्रियान्वित करने में उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय कृत संकल्पित है। उ0प्र0 की माननीय राज्यपाल एवं कुलाधिपति श्रीमती आनंदीबेन पटेल जी की सद्इच्छाओं के अनुरूप उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, शैक्षिक दायित्वों के साथ-साथ सामाजिक दायित्वों के निर्वहन में भी लगातार नवप्रयास कर रहा है। चाहे वह गाँवों को गोद लेकर उनके समग्र विकास का प्रयास हो या ग्रामीण महिलाओं, ट्रान्सजेन्डर व सजायाफ्ता कैदियों को शुल्क में छूट प्रदान कर उनमें आत्मविश्वास जागृति व उच्च शिक्षाा के प्रति अलख जगाने का प्रयास हो।

राष्ट्रीय विकास को बढ़ावाा देने के लिए शिक्षा एक मूलभूत जरूरत है। ज्ञान-विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्रों में हो रहे तीव्र परिवर्तनों व वैश्विक स्तर पर रोजगार की परिस्थितियों में आ रहे परिवर्तनों के कारण भारतीय युवाओं को विभिन्न क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा। इसीलिए विभिन्न क्षेत्रों में सफलता हेतु शिक्षा को सर्वसुलभ, समावेशी तथा गुणवत्तापरक बनाना समसामयिक अपरिहार्य आवश्यकता है। कोविड-19 संक्रमण काल ने परम्परागत शिक्षा को और भी सीमित कर दिया है जबकि कोविड-19 के संक्रमण काल में तथा कोविड-19 के बाद भी मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था ही एकमात्र पूरक एवं प्रभावी शिक्षा व्यवस्था के रूप में सार्थक सिद्ध हो रही है। ऐसी स्थिति में विश्वविद्यालय का दायित्व और भी बढ़ जाता है। इस दायित्व को एक चुनौती स्वीकार करते हुए विश्वविद्यालय ने प्राचीन तथा सनातन भारतीय ज्ञान, परम्परा तथा सांस्कृतिक दर्शन व मूल्यों की समृद्ध विरासत के आलोक में सभी के लिए समावेशी व समान गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने तथा जीवन पर्यन्त शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए अपने शैक्षिक कार्यक्रमों में प्रमाणपत्र, डिप्लोमा, परास्नातक डिप्लोमा, स्नातक, परास्नातक तथा शोध उपाधि के समसामयिक शैक्षिक कार्यक्रमों की संख्या तथा गुणात्मकता में वृद्धि की है।

शैक्षिक कार्यक्रमों में संख्यात्मक वृद्धि, गुणात्मक वृद्धि तथा रोजगारपरक बनाने के साथ-साथ प्रत्येक उच्च शिक्षा आकांक्षी तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए अध्ययन केन्द्रों व क्षेत्रीय केन्द्रों के विस्तार के साथ-साथ प्रवेश, परीक्षा, प्रशासन तथा परामर्श (शिक्षण) में आनलाइन व्यवस्थाओं को सुनिश्चित किया गया है। विश्वविद्यालय कार्यप्रणाली में पारदर्शिता तथा जवाबदेही सुनिश्चियन की दृष्टि से तकनीकी के प्रयोग को बढ़ायाा गया है। 'चुनौती मूल्यांकन' की व्यवस्था सुनिश्चित करने का कार्य किया गया है, तो शिक्षार्थी सहायता सेवाओं में भी वृद्धि की जा रही है। शिक्षार्थियों की समस्याओं के त्वरित निस्तारण हेतु शिकायत निवारण प्रकोष्ठ को सुदृढ़ करने के साथ-साथ पुरातन छात्र परिषद को गतिशील किया गया है।

शोध और नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर होते हुए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) नई दिल्ली तथा माननीय राज्यपाल एवं कुलाधिपति, उ0प्र0 की अनुमति से विश्वविद्यालय में शोध कार्यक्रम पुनः प्रारम्भ किया गया है तथा वर्ष पर्यन्त समसामयिक विषयों पर व्याख्यान, सेमिनार, बेबिनार तथा आनलाइन संगोष्ठियों आदि की श्रृंखला भी प्रारम्भ की गयी है। विभिन्न क्षेत्रों में रिसर्च प्रोजेक्ट सम्पादन पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया है। पुस्तकालय को अत्याधुनिक तथा सुदृढ़ बनाने हेतु कदम उठाये गये हैं। शिक्षकों व कर्मचारियों के स्वास्थ्य तथा कल्याण की योजनायें क्रियान्वित की गयी है। वर्तमान की विषम परिस्थितियों के दृष्टिगत विश्वविद्यालय ने मुख्यमंत्री तथा प्रधानमंत्री राहत कोष में अंशदान देने का भी प्रयास किया है।

भौतिक अधिसंरचना की दृष्टि से विश्वविद्यालय निजी स्रोतों से ही निरन्तर आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ा है। विश्वविद्यालय के शिक्षकों, परामर्शदाताओं, क्षेत्रीय समन्वयकगण, अध्ययन केन्द्र समन्वयकगण तथा कर्मचारियों की एकता व कर्मठता ही वह ऊर्जा पिण्ड है जिसके बल पर विश्वविद्यालय जीवंत व प्रकाशवान है। मुझे विश्वास है कि इसी ऊर्जा पिण्ड की सहायता से यह विश्वविद्यालय देश, प्रदेश तथा समाज को अपनी सेवाओं व योगदान प्रदान कर और अधिक समृद्ध, सुदृढ़ और गौरवशाली बनाने में अपनी भूमिका अदा कर सकेगा। मैं समस्त विश्वविद्यालय परिवार के प्रति आदर व आभार व्यक्त करती हूँ।

प्रो. सीमा सिंह
कुलपति

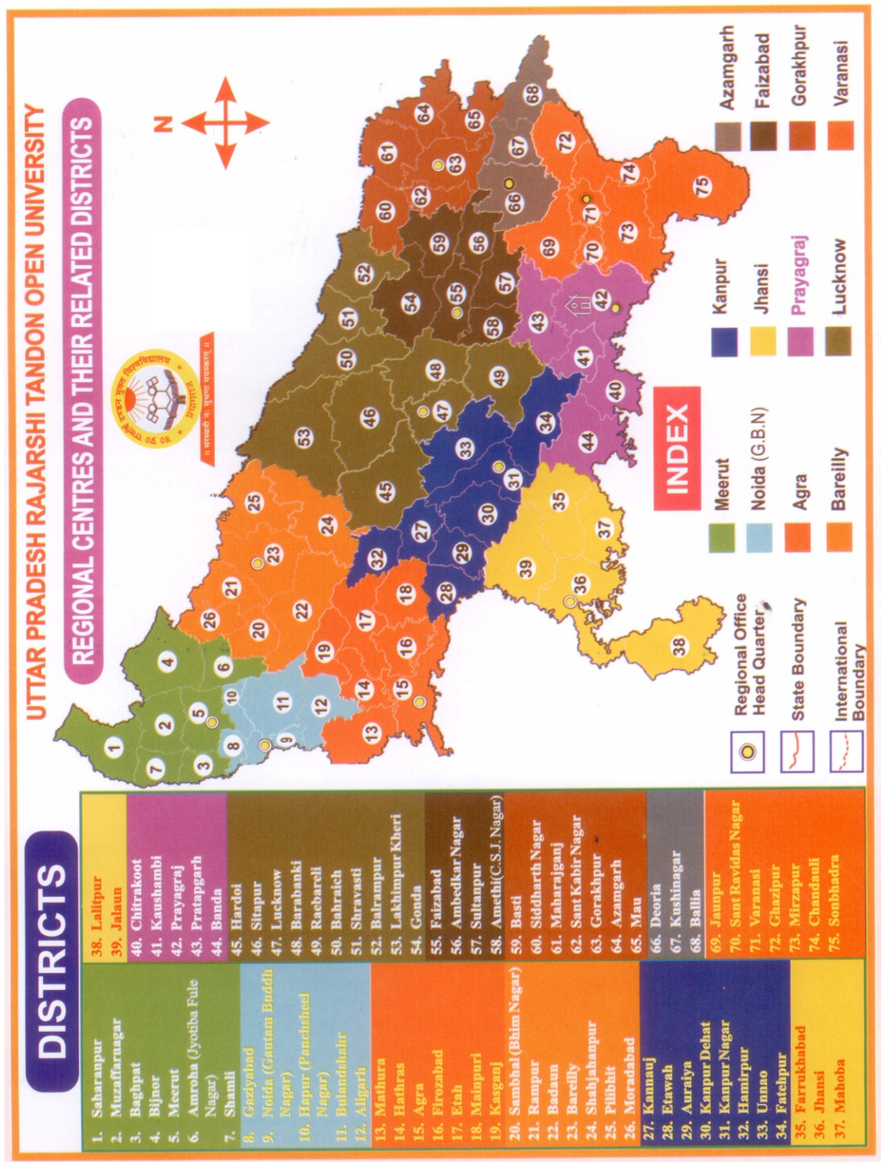

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013

"अपने भाइयों को मै सचेत करना चाहता हूँ कि मोम न बनें और आसानी से पिघल न जायें। छोटी-छोटी सी बातों के लिए ही हम अपनी भाषा को या संस्कृति को न बदलें।"

राजर्षि पुरूषोत्तमदास टंडन

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परामर्श समिति

प्रो0 सीमा सिंह कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विनय कुमार कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति ; (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार आचार्य, इतिहास, निदेशक, समाज विज्ञान, विद्याशाखा, उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 संजय कुमार सिंह सह – आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 अभिषेक सिंह सहा0 आचार्य समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 एन.के .राना आचार्य, भूगोल विभाग बी0एच0यू0, वाराणसी

प्रो0 ए0 आर0 सिद्दीकी आचार्य, भूगोल विभाग इलाहाबाद विश्वविलय प्रयागराज

प्रो0 अरूण कुमार सिंह आचार्य, भूगोल विभागबी0एच0यू0, वाराणसी

लेखक

डॉ0 संजय कुमार सिंह सह– आचार्य, भूगोल, समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 शाशि भूषण राम त्रिपाठी सहा0 आचार्य, भूगोल, समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 श्याम दत्त दूबे सहा0 आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 राजकुमार सिंह सहायक आचार्य, भूगोल
नेशनल पी.जी.कॉलेज भोगाँव, मैनपुरी

डॉ0 अभिषेक सिंह सहायक आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सम्पादन

डॉ0 संजय कुमार सिंह सह – आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ0 अभिषेक सिंह सहायक आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रित वर्ष – 2023

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. - 978-81-963573-9-9

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उप्र राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय साम्रगी में मुद्रित साम्रगी के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन विनय कुमार, कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2023।

MAGO-103

आर्थिक भूगोल के मूल तत्व

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

MAGO-103 आर्थिक भूगोल के मूल तत्व

इकाई 01– आर्थिक भूगोल की संकल्पना, विषय क्षेत्र, आधारभूत संकल्पनाएं, आर्थिक भूगोल का क्रम विकासएवं बदलती परिभाषाएं,

इकाई 02–अध्ययन के उपागम, अध्ययन की विधियाँ, आर्थिक भूगोल का अर्थशास्त्र से सम्बन्ध, भू–मण्डलीकरण,

इकाई 03–खनिज संसाधनों की विशेषताएं एवं उत्खनन को प्रभावित करने वाली दशाएं तथा कारक,

इकाई 04–विश्व स्तर पर लौह–इस्पात, बाक्साइट, टिन की संचित राशि, उत्पादन, वितरण एवं व्यापार।

इकाई 05 विश्व में ऊर्जा तथा शक्ति संसाधन– ऊर्जा के विविध प्रारूप, ऊर्जा की विद्यमान स्थिति तथा परिस्थितियाँ, पेट्रोलियम, विश्व स्तर पर संचित राशि, प्रादेशिक वितरण एवं व्यापार,

इकाई 06–प्राकृतिक गैस–पर्याप्तता एवं संचित राशि, कोयला संचित राशि, उत्पादन वितरण,

इकाई 07–जल विद्युत शक्ति – प्राकृतिक दशाएं, विश्व स्तर पर संभाव्यता एवं उत्पादन का वितरण स्वरूप

इकाई 08–नव्यकरणीय ऊर्जा स्रोत– सौर शक्ति, भू–तापीय ऊर्जा, विश्व ऊर्जा संकट, ऊर्जा भविष्यक्षेण तथा संरक्षण।

इकाई 09–कृषि के स्थानीयकरण के सिद्धान्त– फॉन थ्यूनेन का सिद्धान्त, आधुनिक सिद्धान्त,

इकाई 10–कृषि प्रदेश, परिभाषा, सीमाकंन के आधार तत्व, उद्‌भव एवं विकास के कारण,

इकाई 11–विश्व के कृषि प्रदेश, कृषि प्रदेशों का सीमांकन तथा विशेषताएं

इकाई 12–यू.एस.ए. के कृषि प्रदेश, चीन के कृषि प्रदेश एवं नवीनतम वैज्ञानिक कृषि प्रदेश।

इकाई 13–वस्तु निर्माण उद्योग, लघु पैमाने के उद्योग, वृहद उद्योग, उद्योगो का स्थानीयकरण,

इकाई 14–उद्योग स्थानीयकरण के सिद्धान्त– बेवर का सिद्धान्त, बेवर के सिद्धान्तों में परिष्कार, बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त, समन्वित सिद्धान्त,

इकाई 15–स्थानीयकरण के विभिन्न तत्वों का सापेक्षिक महत्व : बाजार, शक्ति, श्रम, पूँजी तथा उद्योग का स्थानीयकरण

इकाई 16–विश्व के औद्योगिक प्रदेश– यूरोपीय समुदाय के औद्योगिक प्रदेश, अमेरिका के औद्योगिक प्रदेश एवं जापान के औद्योगिक प्रदेश

आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व

इकाई–01

आर्थिक भूगोल की संकल्पना, विषय क्षेत्र, आधारभूत संकल्पनाएँ, आर्थिक भूगोल का क्रम, विकास एवं बदलती परिभाषाएँ (Concept of Economic Geography, Scope, Fundamental Concepts, the evolution and changing definitions of Economic Geography)

पाठ संरचना (Lesson Structure)

1. उद्देश्य (Objectives)
2. आर्थिक भूगोल की संकल्पना तथा उनकी विशेषताएँ (Concept of Economic Geography and their characteristics)
3. आर्थिक भूगोल का विषयक्षेत्र तथा उसका विस्तार (The subject area and scope of economic geography)
4. आर्थिक भूगोल की मौलिक संकल्पनाएँ, उनका अर्थ एवं विशेषताएँ (The fundamental concept of economic geography is their meaning and characteristics)
5. आर्थिक भूगोल के विकास का इतिहास और उसी अनुसार बदलती परिभाषाएँ (History of development of Economic Geography and changing definitions accordingly)
6. निष्कर्ष (Conclusion)
7. मॉडल प्रश्न (Model Questions)
8. सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

उद्देश्य (Objectives)

1. आर्थिक भूगोल की संकल्पनाओं तथा उनकी विशेषताओं को जानेंगे।

2. आर्थिक भूगोल में अध्ययन की जाने वाली महत्त्वपूर्ण विषय अर्थात् विषयक्षेत्र को जानेंगे।

3. आर्थिक भूगोल की मौलिक संकल्पनाओं और उनकी विशेषताओं को जानेंगे।

4. आर्थिक भूगोल में समय के साथ होने वाले परिवर्तन (विकास) को समझेंगे।

5. आर्थिक भूगोल की बदलती हुई परिभाषाओं को समझेंगे।

प्रस्तावना

आर्थिक भूगोल पृथ्वी तल पर मिलने वाली आर्थिक क्रियाओं की स्थानिक भूमिका का अध्ययन करता है। यह अध्ययन पृथ्वी पर मिलने वाले संसाधनों के वितरण की दृष्टि से तो महत्त्वपूर्ण है लेकिन 19वीं शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के बढ़ते महत्त्व से सबसे पहले जर्मनी में आर्थिक भूगोल का प्रादुर्भाव हुआ। आर्थिक भूगोल का वास्तविक विकास 20वीं शताब्दी के तीसरे दशक में प्रारम्भ हुआ, जब इसमें कृषि उत्पादन व व्यापार तथा प्राकृतिक पर्यावरण को विश्लेषित किया जाएगा। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आर्थिक भूगोल की विषय–वस्तुऐं संसाधनों के वितरण, उपभोग तथा संरक्षण तक सीमित न रहकर विश्वव्यापी हो गया है। आज दुनिया में आर्थिक गुटों के निर्माण से सम्पूर्ण विश्व पर आर्थिक मंच पर समन्वित हो रहा है तथा भूमण्डलीकरण जैसी प्रक्रियायें इसमें समीप रही हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 21वीं शताब्दी में आर्थिक भूगोल में आर्थिक क्रियाओं के स्थानिक वितरण के साथ ही इनमें विद्यमान क्षेत्रीय विभिन्नताओं का अध्ययन उन पर पड़ने वाले पर्यावरणीय प्रभाव के सन्दर्भ में किया जा रहा है। वर्तमान समय में आर्थिक भूगोल में संविकास पर जोर दिया जा रहा है और मानव कल्याण के लिए विषय को समर्पित किया जा रहा है। इसलिए इसके विभिन्न पक्षों का अध्ययन करने के लिए आर्थिक भूगोल में ही कई शाखायें विकसित हो गईं।

आर्थिक भूगोल की संकल्पना

मानव एक क्रियाशील प्राणी है वह पृथ्वी तल पर अनेक परिवर्तन करता है। उसके द्वारा यह परिवर्तन भोजन, आवास, वस्त्र, रोजगार, शिक्षा और स्वास्थ्य के लिए किया जाता है। इसे हम आर्थिक क्रियाओं के अन्तर्गत रखते हैं। आर्थिक भूगोल मानव भूगोल की ही एक शाखा है। इसमें एक स्थान से दूसरे स्थान के बीच पायी जाने वाली आर्थिक क्रियाओं की भिन्नता का अध्ययन किया जाता है। आर्थिक भूगोल में मृदा, वनस्पति, जल संसाधन, जैव तत्त्व, खनिज, ऊर्जा आदि प्राकृतिक संसाधनों तथा शिकार, कृषि, मछली पालन, उद्योग, पशुपालन, परिवहन, संचार, व्यापार, वाणिज्य आर्थिक क्रियाओं तथा अन्य आर्थिक पक्षों एवं संगठनों के अध्ययन को शामिल करते हैं। इस प्रकार यह पृथ्वी तल की स्थानिक भिन्नताओं का अध्ययन आर्थिक क्रियाओं के निर्धारण के रूप में सामने आता है। पृथ्वी का स्थल मण्डल मानव द्वारा आर्थिक क्रियाओं के सम्पादन की सुविधाएँ प्रदान करता है तथा इसकी प्रकृति बदलते ही आर्थिक क्रिया का स्वरूप बदल जाता है। जैसे मानव धरातल पर खनन एवं कृषि कार्य करता है लेकिन महासागरों एवं सागरों में मूलतः मत्स्यन करता है।

आर्थिक भूगोल हमें ऐसे प्राकृतिक संसाधनों की स्थिति, प्राप्ति और वितरण आदि से परिचित कराता है जिनके द्वारा वर्तमान में किसी देश की आर्थिक उन्नति हो सकती है। इसके द्वारा हमें पता चलता है कि किसी देश में पायी जाने वाली प्राकृतिक सम्पत्ति का किस विधि द्वारा और कहाँ तक और किस कार्य के लिए उपयोग किया जा सकता है। सामान्य तौर पर कहा जा सकता है कि भूगोल किसी राष्ट्र की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का निर्धारण करता है। जैसे किसी भी क्रिया की स्थापना के लिए उच्चावच्च, जलवायु, परिवहन, संचार, कच्चा माल इत्यादि आवश्यक तत्व होते हैं। इन सबका प्रभाव उसके विकास पर पड़ता है। इस प्रकार आर्थिक भूगोल में मानव के प्राथमिक एवं गौण व्यवसाय तथा क्रियाएँ, विश्व के औद्योगिक प्रदेश एवं उनके उद्योग, परिवहन के साधन, नगरों का विकास तथा व्यापार का विस्तृत विवेचन किया जाता है।

इस प्रकार आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत भूतल के विभिन्न प्रदेशों में आर्थिक विकास एवं गुणात्मक जीवन स्तर का अध्ययन सम्पूर्ण भौगोलिक वातावरण के सन्दर्भ में किया जाता है।

आर.ई.मर्फी के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल मनुष्यों की जीविकोपार्जन की विधियों में एक स्थान से दूसरे स्थान पर पायी जाने वाली समानताओं और विषमताओं का अध्ययन है।''

रसडल ब्राउन के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल, भूगोल विज्ञान की वह शाखा है जिसमें मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं पर पर्यावरण के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।''

गोट्ज (GOTZ) के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में प्रकृति की वैज्ञानिक खोज करता है जिसका वस्तुओं के उत्पादन पर प्रत्यक्ष प्रभाव होता है।''

चिशोल्म (G. Chisholm) के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत उन सभी भौगोलिक परिस्थितियों का वर्णन आता है जो वस्तुओं के उत्पादन, परिवहन तथा विनिमय को प्रभावित करती हैं। आर्थिक भूगोल का महत्त्व इस बात में है कि इसके द्वारा किसी प्रदेश के वाणिज्यिक विकास की दशा का ज्ञान हो जाता है और यह पता चलता है कि उस पर भौगोलिक दशाओं का क्या प्रभाव पड़ता है।''

प्रो. शॉ. के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत इन बातों का अध्ययन किया जाता है कि किस प्रकार मानव की विभिन्न जीविकोपार्जन क्रियाएं विश्व के उद्योगों, आधारभूत साधनों और औद्योगिक वस्तुओं की प्राप्ति के अनुरूप होती है।''

प्रो. जॉन्स (Prof. C.F. Jones) और डार्कनवाल्ड (Darkanwald) के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल उत्पादक व्यवसायों का अध्ययन करता है और यह बताने का प्रयास करता है कि क्यों कुछ प्रदेश विविध वस्तुओं के उत्पादन और निर्यात में अग्रणी है तथा कुछ दूसरे प्रदेश क्यों इन वस्तुओं के लिए महत्त्वपूर्ण तथा उपयोग में विशिष्ट स्थान बनाए हुए हैं।''

रूडॉल्फ वेटजेन्स (Rudolf Wetgens) के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल (अ) पृथ्वी के विभिन्न प्रदेशों की संसाधनता तथा (ब) आर्थिक मानव की अन्योन्य क्रिया का अध्ययन है जिसमें मुख्य रूप से अन्योन्य क्रिया के तत्सम्बन्धी सार्थक परिणामों के वितरण की व्याख्या करता है।''

हंटिंगटन (E. Huntington) के शब्दों में– ''मानव व्यवसाय, मानव दक्षता तथा मानव की आवश्यकताओं (जैसे, कला, धर्म, प्रशासन, शिक्षा एवं सभ्यता) के अन्य पक्षों पर भौगोलिक वातावरण के प्रभाव की सीमा का अध्ययन आर्थिक भूगोल में किया जाता है।''

हार्टशोर्न (Hartshorn) तथा अलेक्जेण्डर (Alexander) ने आर्थिक भूगोल की परिभाषा इस प्रकार की है, ''आर्थिक भूगोल पृथ्वीतल की क्रियाओं की स्थानिक विभिन्नताओं

का अध्ययन करता है जो उत्पादन, विनिमय तथा वस्तुओं के उपभोग तथा सेवाओं से सम्बन्धित हैं।''

जॉन डब्ल्यू. अलेक्जेण्डर (John W. Alexander) के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल भूतल पर धन के उत्पादन, विनिमय एवं उपभोग से सम्बन्धित मानव की आर्थिक क्रियाओं से उत्पन्न क्षेत्रीय विभिन्नताओं का अध्ययन करता है।''

एन.जी. पाउण्डस (N.G. Pounds) के अनुसार– ''आर्थिक भूगोल भूतल पर मानव की उत्पादक क्रियाओं के वितरण से सम्बन्धित है। ये उत्पादक क्रियाएं– प्राथमिक, द्वितीयक तथा तृतीयक हैं।

जी.टी. रेनर (G.T. Renner) एवं अन्य विद्वानों के शब्दों में, ''आर्थिक भूगोल मानव के आर्थिक क्रिया–कलापों के उपेक्षित पक्षों का अध्ययन है, जो वस्तुओं, स्थानों और उनके उत्पादन की दशाओं, परिवहन तथा उपयोग से सम्बन्धित हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आर्थिक भूगोल की प्रकृति को इन रूपों में देख सकते हैं–

1. आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत मानव की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। अतः मानव भूगोल के कारण ही भूगोल को सामाजिक विज्ञान में जगह दी गई जो कि कला और विज्ञान दोनों का ही मिला–जुला रूप होता है।

2. आर्थिक भूगोल में भू–क्षेत्रों के सम्बन्ध में आर्थिक तथ्यों का विश्लेषण किया जाता है। अतः आर्थिक भूगोल में स्थानीय विभिन्नताओं को यथार्थ क्रमबद्ध तार्किक ढंग से स्पष्ट किया जाता है।

3. आर्थिक भूगोल का एकमात्र लक्ष्य केवल ज्ञान की प्राप्ति नहीं है बल्कि इसमें आर्थिक क्रियाओं व भौगोलिक प्रतिरूपों का अध्ययन सामाजिक कल्याण के उद्देश्य से किया जाता है।

4. आर्थिक भूगोल स्थानिक संघटन के कार्यात्मक स्वरूप का अध्ययन करता है।

5. आर्थिक क्रियाओं से सम्बन्धित होने के कारण आर्थिक भूगोल मूलतः सामाजिक विज्ञान तो है ही परन्तु सामाजिक विज्ञान में भी इसका घनिष्ठ सम्बन्ध अर्थशास्त्र विषय से है।

आर्थिक भूगोल की विशेषताएँ

1. आर्थिक भूगोल के अध्ययन से आर्थिक क्रियाओं का ज्ञान होता है।

2. वैश्विक परिदृश्य में मानव के आवास और उसके भौतिक पर्यावरण से क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।

3. मानव का रहन–सहन, खान–पान, वेशभूषा एवं अन्य दशाएँ किस प्रकार से है। इसका भी अध्ययन आर्थिक भूगोल में किया जाता है।

4. प्राकृतिक संसाधन का मात्रावरण एवं उनकी गुणवत्ता का निर्धारण आर्थिक भूगोल में ही किया जाता है।

5. आर्थिक क्रियाओं से किस प्रकार जीवन स्तर उठाया जाय। इसका भी अध्ययन आर्थिक भूगोल में किया जाता है।

6. वैश्विक परिदृश्य में देशों के विकास का कारण क्या है इसको भी आर्थिक भूगोल बताता है। कोई भी देश किन वजहों से आर्थिक उन्नति को बहुत अधिक कर लेता है। उसके कारणों पर भी प्रकाश डालता है।

7. वर्तमान समय में आर्थिक भूगोल मानव की आर्थिक क्रियाओं के फलस्वरूप उत्पन्न संकेत जैसे ऊर्जा संकट, संसाधन की न्यूवता, पर्यावरण प्रदूषण आदि को ध्यान में रखते हुए संसाधन संरक्षण, सतत विकास ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों पर ध्यान केन्द्रित कर रहा है।

आर्थिक भूगोल के विषय क्षेत्र

आर्थिक भूगोल की विभिन्न परिभाषाओं से हम जान चुके हैं कि आर्थिक भूगोल में प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरणीय दशाओं में आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। आर्थिक भूगोल में भौतिक, जैविक और सामाजिक–आर्थिक विज्ञान का अपना दर्शन पद्धति शास्त्र एवं कार्य क्षेत्र होता है। इसी प्रकार भूगोल में प्राकृतिक तथा मानव निर्मित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है। इसके विषय क्षेत्र को परिभाषा और के आधार पर सीमांकित किया जा सकता है। आर्थिक भूगोल में भूतल पर मानवीय क्रियाओं द्वारा वस्तुओं के उत्पादन, विनिमय

और उपभोग का अध्ययन करते हैं। इसके विषय क्षेत्र में मानव की आर्थिक गतिविधियों के वितरणों एवं उनके विभिन्न प्रतिरूपों की क्षेत्रीय विभिन्नताओं पर प्रकाश डालने वाले कारकों एवं प्रतिक्रियाओं को शामिल किया जा सकता है। इसके विषय क्षेत्र को निम्न तरीके से समझ सकते हैं–

(i) आर्थिक क्रियाओं के वितरण का अध्ययन

आर्थिक भूगोल के अध्ययन में आर्थिक क्रियाओं के वितरण प्रतिरूपों की सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। उदाहरण के लिए कृषि करना, मछली पकड़ना, खनन करना, उद्योग की स्थापना, परिवहन का विकास, व्यापार इत्यादि अपने स्पष्ट रूपों में सामने आती है।

(ii) प्राकृतिक संसाधनों का मूल्यांकन और उसकी मात्रा का निर्धारण

प्राकृतिक संसाधनों जैसे– जल, जंगल, जमीन, शक्ति एवं ऊर्जा संसाधन, खनिज संसाधन, पशु संसाधन इत्यादि का मूल्यांकन करके उसकी मात्रा का निर्धारण करता है।

(iii) अर्थव्यवस्था का वातावरण के साथ सम्बन्ध का अध्ययन

आर्थिक भूगोल में अर्थव्यवस्था तथा प्राकृतिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक वातावरण के साथ अन्तर सम्बन्धित है। इसमें अर्थतन्त्र पर पड़ने वाले प्रभाव से अन्य तन्त्र भी प्रभावित होते हैं और इसका प्रभाव पर्यावरण पर भी पड़ता है। इसीलिए पर्यावरण के साथ अर्थव्यवस्था का गहरा सम्बन्ध है।

(iv) स्थानिक विशेषताओं का अध्ययन

आर्थिक भूगोल में इन तथ्यों का अध्ययन किया जाता है कि कोई भी पदार्थ किसी स्थान विशेष पर ही क्यों पाया जाता है? उसके विकसित होने का क्या कारण है? उनकी विशेषतायें क्या हैं? और उनका स्थानीय लोगों से सम्पर्क का लाभ कितना मिला है? इत्यादि।

(v) मानवीय संसाधनों का मात्राकरण और सम्भावनायें

आर्थिक भूगोल में मानवीय संसाधन, उसकी संख्या, उसकी विशेषताएं, उनकी सम्भावनाओं का अध्ययन किया जाता है। इसके अलावा इन संसाधनों के गुणात्मक विकास हेतु प्रयास भी किया जाता है। लोगों में दक्षता को बढ़ाया जाता है। उन्हें कार्यकुशल बनाया जाता है।

(vi) आर्थिक भूगोल में आर्थिक क्रियाकलाप और प्रौद्योगिकी की अन्तःक्रिया का प्रादेशिक एवं कालक्रमिक भिन्नता के रूप में अध्ययन किया जाता है।

(vii) आर्थिक भूगोल में आर्थिक उन्नति स्तर, स्थानीय संगठन और प्रादेशिक नियोजन को भी शामिल किया जाता है।

इसके अलावा आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों को शामिल करके उसको मजबूत बनाया जाता है, जिसका विवरण इस प्रकार है–

1. प्राकृतिक संसाधन–

- स्थानिक स्थिति
- भूमि की बनावट या स्थलाकृति
- जलवायु सम्बन्धी दशायें
- मृदा एवं खनिज
- झीलें एवं तालाब
- वनस्पतियाँ एवं जीव जन्तु

2. मानवीय संसाधन–

- जनसंख्या वितरण एवं घनत्व
- जनांकिकीय विशेषतायें
- स्वास्थ्य एवं कार्यक्षमता
- सामाजिक कार्य क्षमता
- शिक्षा , प्रशिक्षण , शोध

- प्रौद्यौगिकी

आर्थिक क्रियाओं की विभिन्नता का विश्लेषण

1. प्राथमिक क्रियाएँ – कृषि, पशुपालन, मत्स्यन खनन आदि।

2. द्वितीयक क्रियायें – निर्माण एवं विनिर्माण उद्योग।

3. तृतीयक क्रियायें – व्यापार एवं वाणिज्य परिवहन एवं संचार, शिक्षा एवं प्रशासन, चिकित्सा एवं विधि सेवायें आदि।

4. चतुर्थक क्रियायें – विज्ञान, कला, साहित्य, प्रौद्योगिकी, शोध आदि।

5. पंचमक क्रियायें – उच्च स्तरीय शोध एवं कार्यकारी प्रशासकीय/वैज्ञानिक शोध एवं विकास

आर्थिक विकास की प्रमुख योजनायें

1. क्षेत्रीय आधार पर आर्थिक असमानता को कम करना।
2. संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग करना।
3. ससाधनों का संरक्षण करना।

अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत मिट्टी, पानी, सूक्ष्म जैविक तत्त्व, वनस्पति, खनिज, ऊर्जा आदि प्राकृतिक संसाधनों और शिकार, मछली पालन, कृषि, उद्योग, परिवहन, संचार, व्यापार, वाणिज्य आदि आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।

आर्थिक भूगोल की आधारभूत संकल्पनायें

किसी भी विषय की मौलिक संकल्पनाओं का अर्थ है विषय का मूलभूत सिद्धान्त जिसे विषयक से अलग नहीं किया जा सकता है। यदि इनको विषय से अलग कर दिया जाय तो विषय का अस्तित्व ही समाप्त हो सकता है। किसी भी विषय का स्वरूप व्यक्त करने वाली कुछ एक मौलिक संकल्पनायें होती हैं। जो कि सिद्धांत अथवा परिभाषा से भिन्न होती हैं। आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत मृदा, जल, जैव तत्व, खनिज ऊर्जा आदि प्राकृतिक संसाधनों और

आखेट मत्स्य पालन वनाद्योग, कृषि, पशुपालन, विनिर्माण उद्योग, परिवहन संचार, व्यापार, वाणिज्य आदि आर्थिक क्रियाओं तथा अन्य आर्थिक पक्षों एवं संगठनो के अध्ययन को सम्मिलित किया जाता है। आर्थिक भूगोल की मूलभूत संकल्पनायें निम्नलिखित हैं–

1. **आर्थिक क्रिया की संकल्पना–** जिस क्रिया द्वारा मनुष्य अपनी जीविका अर्जित करता है आर्थिक क्रिया कहलाती है, जो कि व्यवसाय के समान होती है। मनुष्य जीविकोपार्जन हेतु सभ्यता के प्रारम्भ से ही विभिन्न क्रियायें करता आया है। जैसे– पाषाण काल में आखेट करना या जंगली उत्पादों को एकत्रित करना, फिर पशुपालन व कृषि कार्यों के बाद नगरीकरण व औद्योगिकीकरण आदि सब आर्थिक क्रियायें ही है। आर्थिक क्रियायें इस प्रकार हैं– 1. प्राथमिक, 2. द्वितीयक, 3. तृतीयक, 4. चतुर्थक।

2. **आर्थिक क्रियाओं की अवस्थिति की संकल्पना–** आर्थिक भूगोल में हम विभिन्न आर्थिक क्रियाओं की अवस्थिति का अध्ययन करते हैं। किसी स्थान विशेष पर अवस्थिति महत्त्वपूर्ण जैसे कृषि, उद्योग, व्यापार, परिवहन आदि की वॉनथ्यून का कृषि सिद्धान्त, वेबर का औद्योगिक सिद्धान्त, आर्थिक क्रियाओं की अवस्थिति का मौलिक सिद्धान्त है। इसके अतिरिक्त क्रास, हूबर, ईजार्ड आदि ने भी आर्थिक अवस्थिति को समझाया है।

3. **आर्थिक भू–दृश्य की संकल्पना–** यह आर्थिक भूगोल की प्रमुख संकल्पना है। किसी भी राज्य/प्रदेश की समस्त आर्थिक क्रियाओं के मिले–जुले स्वरूप को आर्थिक भू–दृश्य कहते हैं। किसी–किसी भू–दृश्य में 2 या अधिक क्रियाओं की प्रधानता होती है। जैसे– कृषि भू–दृश्य, व्यापारिक भू–दृश्य, औद्योगिक भू–दृश्य, परिवहन भूदृश्य आदि।

4. **आर्थिक विकास की संकल्पना–** निम्न स्तर से उच्च स्तर की ओर गति को विकास कहते हैं। जिसके सामाजिक, आर्थिक, भौतिक, राजनैतिक कई मानक होते हैं। आर्थिक विकास से अभिप्राय राष्ट्रीय आय व प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि से है। आर्थिक विकास में बहुआयामी परिवर्तन होता है। यह आर्थिक वृद्धि से अलग क्योंकि आर्थिक वृद्धि में एक आयामी परिवर्तन होता है।

5. **संसाधन की संकल्पना–** संसाधन वे होते हैं जिनसे मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती हैं। दूसरे शब्दों में मानव जीवन की प्रगति, विकास तथा अस्तित्व संसाधनों पर ही निर्भर करता है। संसाधन मानव जीवन के लिए उपयोगी होते हैं लेकिन इनका उपयोग

तकनीकी विकास, योग्यता और दक्षता पर निर्भर करता है। जिम्मरमैन ने कहा भी है ''संसाधन का अर्थ किसी उद्देश्य की प्राप्ति करना है, यह उद्देश्य व्यक्तिगत आवश्यकताओं तथा सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति करता है।'' इस प्रकार संसाधन की निम्न विशेषताएँ सामने आती हैं–

(i) उन वस्तुओं का उपयोग किया जा सके।

(ii) वस्तुओं को उपयोगी और मूल्यवान बनाया जा सके।

(iii) इससे उद्देश्यों की पूर्ति हो।

(iv) दोहन की क्षमता और दक्षता हो।

6. **संसाधन प्रबंध या संरक्षण की संकल्पना–** संसाधन प्रबंध या संरक्षण एक–दूसरे के पूरक हैं। संसाधनों का ऐसा प्रबंध कि उनके अनुकूलतम उपयोग और अनावश्यक क्षति को रोका जा सके। संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग ही संसाधन संरक्षण है। इसमें जो वर्तमान सामाजिक–आर्थिक आवश्यकताओं तकनीकी ज्ञान, भावी उपयोगिता एवं आवश्यकता, पर्यावरण संरक्षण आदि को ध्यान में रखा जाता है।

7. **संपोषणीय विकास संकल्पना–** यह आर्थिक भूगोल की नवीन संकल्पना है जो 1980 के दशक में प्रकट हुई, जिसके अन्तर्गत भावी पीढी की आवश्यकता पूर्ति के बिना प्रभावित किये वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। इसका अर्थ ऐसे विकास से है जो मानवीय समाज की तात्कालिक आवश्यकताओं की ही पूर्ति न करे बल्कि भविष्य को भी ध्यान में रखकर विकास करे। इसे स्थायी विकास या सतत पोषणीय विकास भी कहते हैं।

8. **आर्थिक प्रदेश की संकल्पना–** समान प्रकार भू–दृश्यों वाला भू–भाग आर्थिक प्रदेश कहलाता है। आर्थिक प्रदेश ऐसे क्षेत्र होते हैं जहाँ आर्थिक–सामाजिक तथा विकास उत्पादन पद्धति में समानता होती है। इसमें आर्थिक भूदृश्य में समानता होती है।

9. **स्थानिक अन्तर्क्रिया की संकल्पना–** विभिन्न स्थानों के बीच वस्तुओं, विचारों एवं मनुष्यों की गतिशीलता को ही स्थानिक पारस्परिक क्रिया कहा जाता है।

10. **आर्थिक भूगोल की समय एवं क्षेत्रपरक संकल्पना–** आर्थिक क्रियाओं में पायी जाने वाली क्षेत्रीय भिन्नताओं का अध्ययन किया जाता है। समय के साथ–साथ प्रत्येक क्षेत्र या स्थान या प्रदेश की आर्थिक क्रियाओं के विकास में परिवर्तन होते हैं। यही कालिक परिवर्तन कहलाता है।

11. **भौगोलिक क्षेत्र और उसकी माप की परिकल्पना–** आर्थिक भूगोल में सापेक्षिक स्थिति का अध्ययन सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। ज्योमितीय स्थिति उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं होती है।

आर्थिक भूगोल का विकास एवं बदलती परिभाषाएँ

आर्थिक भूगोल समय के साथ बदलता रहा है, अपनी विकासशील विशेषताओं के कारण आर्थिक भूगोल को समझने के लिए उसके विकास क्रम का ज्ञान आवश्यक है। और इसका क्रमबद्ध अध्ययन भी आवश्यक हो जाता है। आर्थिक भूगोल के वर्तमान स्वरूप का विकास एवं विषय क्षेत्र का विस्तार मुख्य रूप से 20वीं शताब्दी में ही हुआ है। इसका वर्तमान स्वरूप जो दिखाई पड़ता है वह मनुष्य के आर्थिक कार्यों के विस्तार एवं जटिलताओं से जुड़ा हुआ है। यही कारण है इसकी परिभाषाओं में परिवर्तन होता रहा है। आर्थिक भूगोल के विकास एवं बदलती हुई परिभाषाओं को 4 चरणों में रखकर देखा जा सकता है–

1. प्रारम्भिक युग
2. दोनों विश्वयुद्धों के काल का युग
3. द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से 1970 तक का युग
4. 1970 से वर्तमान समय का युग

प्रारम्भिक युग

औद्योगिक क्रान्ति के शुरूआत से मानव के आर्थिक कार्यों में व्यापक परिवर्तन हुए। और 19वीं सदी के खत्म होते–होते औद्योगीकरण तेजी से हुआ जिसके फलस्वरूप आर्थिक क्रियाकलाप में तेजी आयी और इसी समय आर्थिक भूगोल स्वतन्त्र विषय के रूप में सामने आया।

आर्थिक भूगोल का सबसे पहले उद्‌भव वाणिज्य भूगोल के रूप में हुआ। 1862 में एण्ड्री (Andree) की ''विश्व व्यापार का भूगोल'' पुस्तक प्रकाशित हुई। इसमें विभिन्न देशों के व्यापार सम्बन्धी आँकड़ों एवं तथ्यों का सम्बन्ध था। इससे यूरोप में व्यापार का महत्त्व बढ़ने लगा। 1862 में जर्मनी के गोट्‌ज (Gotz) ने सबसे पहले आर्थिक भूगोल शब्द का प्रयोग किया और इस पर पुस्तक लिखी और इन्हें आर्थिक भूगोल का जनक कहा जाता है। इन्होंने आर्थिक भूगोल की निम्न परिभाषाएँ दी हैं–

''आर्थिक भूगोल में विश्व के विभिन्न भागों की प्राकृतिक विशेषताओं का वैज्ञानिक विवेचन किया जाता है ये परिभाषा 'रसडल' की मान्यताओं पर आधारित रही, फिर भी इसमें विभिन्न भागों की प्राकृतिक विशेषताओं और आँकड़ों के संग्रह पर जोर दिया गया है। इसी समय ब्रिटेन में, चिशोम (हैण्ड बुक ऑन कॉमर्शियल ज्योग्राफी) तथा अमेरिका में 'डी.एम. स्मिथ' आदि में वाणिज्य भूगोल को ही प्रोत्साहित करते रहे, पहले विश्व युद्ध तक लगभग यही स्थिति बनी रही।

दोनों विश्व युद्धों के काल का युग

इस काल में आर्थिक भूगोल वाणिज्य भूगोल से अलग हो गया। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रवाह में बाधा पड़ी। इसके फलस्वरूप औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशों के कच्ची सामग्री के नए उत्पादन स्रोतों की ओर ध्यान देना पड़ा। इससे गोट्‌ज के आर्थिक भूगोल की मान्यता बढ़ी और अब उत्पादन पर ध्यान दिया जाने लगा।

20वीं शताब्दी के पश्चात् नियतिवाद के स्थान पर सम्भववाद के सिद्धान्त को मान्यता मिली और भूगोल में मानवीय पक्ष को महत्त्व मिलने लगा। इसमें पृथ्वी और मानव के सम्बन्ध को नए ढंग से स्थापित करने का प्रयास किया गया। 1925 के बाद आर्थिक भूगोल के अध्ययन में तीव्रता आयी, अमेरिका में कार्ल सावर एवं जर्मनी में अल्फ्रेड हैटनर के प्रभाव में भूगोल को क्षेत्रीय विश्लेषण के रूप में स्थापित किया गया। इसी समय आर्थिक भूगोल (Economy Geography) नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। 'व्हिटलसी' ने विश्व के लिए प्रदेशों का सीमांकन किया, द्वितीय विश्व युद्ध तक प्राथमिक उत्पादन का भी विशेष अध्ययन होता रहा। रसडल ब्राउन ''आर्थिक भूगोल का वह पहलू है जिसके अन्तर्गत वातावरण (जैविक

व अजैविक) के द्वारा मानवीय क्रिया कलापों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।''

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद 1970 तक का युग

इस काल में दुनिया के लगभग सारे देश औपनिवेशिक काल से मुक्त हो चुके थे। इसके फलस्वरूप उत्पादन की नयी प्रणाली का विकास हुआ, औद्योगीकरण और विनिर्माण का तेजी से विकास प्रारम्भ हो गया। इसके परिणाम स्वरूप व्यापार एवं परिवहन का भी विकास हुआ। 1950 के दशक के मध्य से प्रत्यक्षवाद के प्रभाव में भूगोल को अधिक वैज्ञानिक बनाने में सांख्यिकीय विधियों तथा मॉडल निर्माण का प्रयोग बढ़ने लगा। साथ ही साथ औद्योगिक उत्पादन की कुशलता भी बढ़ने लगी। 1970 के दशक तक विकसित देशों में आर्थिक विकास के मार्ग पर तेजी से बढ़ने की होड़ लगी रही। इसके परिणाम स्वरूप विश्व के प्राकृतिक संसाधनों पर बहुत अधिक दबाव पड़ने लगा। इस समय आर्थिक भूगोल की परिभाषाएं इस प्रकार रही–

1. **R.E. Murphy-** ''आर्थिक भूगोल मनुष्य के जीविकोपार्जन की विधियों में एक स्थान से दूसरे स्थान पर मिलने वाली समानता एवं विषमता का अध्ययन करता है।''

2. **C.F. Jones-** ''आर्थिक भूगोल उत्पादक व्यवसायों का अध्ययन करता है, कुछ प्रदेश विशेष क्यों विविध, वस्तुओं के उत्पादन तथा निर्यात में अग्रणी है तथा क्यों कुछ दूसरे प्रदेश इन वस्तुओं के आयात तथा उपभोग में प्रमुख हैं इसकी व्याख्या करता है। इस काल की परिभाषाओं को विकसित बनाने में हैटनर, हार्टशोर्न, अलेक्जेण्डर आदि प्रमुख थे।''

1970 से वर्तमान समय का युग

आधुनिक काल में आर्थिक विकास की प्रक्रिया में विभिन्न देशों के अर्थतन्त्र में व्यापक संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं। इस समय जटिल सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग होने लगा, साथ ही औद्योगिक उत्पादन की तकनीकी कुशलता भी बढ़ने लगी। इसके परिणामस्वरूप बड़ी मात्रा में उत्पादक तथा उपभोक्ता वस्तुओं का निर्माण होने लगा। इसी समय निर्वनीकरण, मृदा समस्याएँ, प्रदूषण, ओजोन परत का क्षरण एवं मरुस्थलीय करण की समस्याएँ सामने आने

लगी। अंधाधुन्ध आर्थिक विकास की सार्थकता पर प्रश्न खड़े होने लगे। अतः भूगोलवेत्ता संसाधन संरक्षण सतत विकास जैसे आर्थिक मॉडलों की ओर आगे बढ़ा, स्मिथ के शब्दों में भूगोल कौन, कहाँ, क्या पता है, का अध्ययन करने वाला विषय बन गया। डी0एम0 स्मिथ, ''आर्थिक भूगोल आर्थिक प्रक्रियाओं की स्थानिक अभिव्यक्ति का अध्ययन है जो वैकल्पिक स्थानों में वैकल्पिक उद्देश्यों हेतु संसाधनों का आबंटन करता है।'' इसी को ध्यान में रखते हुए रूसी भूगोलवेत्ता साउस्किन की परिभाषा इस प्रकार है, ''आर्थिक भूगोल का गहरा सम्बन्ध क्षेत्रीय, सामाजिक आर्थिक तन्त्र से है।'' प्रो0 बुकानन, ''आर्थिक भूगोल में मानव के आर्थिक प्रयत्नों का उसके निवास स्थान के सम्बन्ध में अध्ययन करते है।'' प्रो0 ए0दास0 गुप्ता, ''मानव की आर्थिक क्रियाओं पर प्राकृतिक परिस्थितियों के प्रभाव का अध्ययन आर्थिक भूगोल कहलाता है।''

मात्रात्मक क्रान्ति से उत्पन्न असंतुष्टि के चलते 1970 के बाद मानव एवं आर्थिक भूगोल में अनेक दार्शनिक विचारधाराओं का सम्बन्ध लोगों के सामाजिक कल्याण में विभिन्न पक्षों से जुड़ा हुआ है जिसमें स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, रोजगार आदि शामिल हैं। क्रांतिकारी विचारधारा ने निर्धनता के कारण बंधन और सामाजिक असमानता के लिए मार्क्स को आधार माना था। व्यवहार के अनुसार मनुष्य आर्थिक क्रियाएँ करते समय हमेशा आर्थिक लाभ का ही विचार नहीं करता बल्कि वह यथार्थ पर्यावरण से जुड़ता चला जाता है। आर्थिक विचारों में बदलाव आंशिक रूप से विश्लेषण के मापदण्डों में परिवर्तन के कारण आते हैं। 21वीं शदी में आर्थिक भूगोल में सामान्य निकाय सिद्धान्त तथा मानवीय दशाओं की व्याख्या करने वाले वैश्विक सिद्धांतों की उपयोगिता पर प्रश्न चिन्ह उठने लगे। वर्तमान समय में स्थानीय संदर्भ की समझ के महत्त्व पर जोर दिया जा रहा है।

अतः स्थानीय के लिए मुखरता (Vocal for Local) की बात सामने आ रही है। 21वीं सदी का आर्थिक भूगोल एक स्वस्थ, समृद्ध और सामंजस्यपूर्ण दुनिया की माँग कर रहा है।

इसमें तकनीकी दक्षता, जैव प्रौद्योगिकी और सूचना प्रौद्योगिकी से सब कुछ बदलने का प्रयास किया जावेगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आज के उदारीकरण, निजीकरण, भूमण्डलीकरण के युग में विश्व आपस में वैश्विक गाँव के रूप में बदल गया है और उसकी आर्थिक क्रियाएँ भी एक–दूसरे से जुड़ी हुई हैं। इन परिभाषाओं से आर्थिक भूगोल का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है। आज आर्थिक भूगोल न केवल विभिन्न आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करने लगा है बल्कि उसके प्रभावों तथा पर्यावरण संरक्षण, सतत विकास जलवायु परिवर्तन को भी अपने अध्ययन में शामिल कर लिया है।

निष्कर्ष (Conclusion)

आज के दौर में आर्थिक भूगोल एक गन्यात्मक विषय बन गया है। एक ओर जहाँ आर्थिक भूगोल में संसाधनों और उसके वितरण का अध्ययन किया जाता है। वहीं दूसरी ओर संसाधनों के संरक्षण, उपभोग, उद्योग, व्यापार, संचार, बाजार, परिवहन, आर्थिक क्रियाओं का भी अध्ययन किया जाता है। आर्थिक भूगोल में कच्चे मालों, तैयार मालों के उत्पादन तथा उसके व्यापार का भी अध्ययन होता है। इस अध्याय में इन्हीं सब बातों की जानकारी प्राप्त होती है। आज आर्थिक भूगोल का क्षेत्र विस्तृत होता जा रहा है। इसीलिए आर्थिक भूगोल विकसित होता जा रहा है और उसकी परिभाषाओं में भी परिवर्तन हो रहा है।

मॉडल प्रश्न (Model Question)

(i) आर्थिक भूगोल को परिभाषित कीजिए और उसके विषय क्षेत्र को बताइए।

(ii) आर्थिक भूगोल की संकल्पनाओं की विवेचना कीजिए।

(iii) आर्थिक भूगोल और अर्थशास्त्र में सम्बन्धों का विवेचन कीजिए।

संदर्भ पुस्तकें (Reference Books)

(i) आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व – प्रो0 जगदीश सिंह

(ii) आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व – डॉ0 अलका गौतम

(iii) आर्थिक भूगोल – डॉ0 वी0सी0 जाट

(iv) आर्थिक भूगोल – डॉ0 एस0डी0 मौर्य

(v) Economic Geography - J.W. Alexander

(vi) Human and Economic Geography - Goh Leong and Gillian C. Morgan

आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व

इकाई–02

अध्ययन के उपागम, अध्ययन की विधियाँ, आर्थिक भूगोल का अर्थशास्त्र से सम्बन्ध, भूमण्डलीकरण (Approaches and Methods of Economic Geography, Relation between Economic Geography and Economics, Globalization)

पाठ संरचना (Lesson Structure)

1. उद्देश्य (Objectives)
2. आर्थिक भूगोल की अध्ययन विधियों का अर्थ, प्रकार और उनकी विशेषताएँ
3. आर्थिक भूगोल का अर्थशास्त्र से सम्बन्ध और दोनों में समानताएँ
4. भूमण्डलीकरण का अर्थ, विशेषताएँ, उसके आयाम तथा प्रभाव
5. निष्कर्ष (Conclusion)
6. मॉडल प्रश्न (Model Questions)
7. सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

उद्देश्य (Objectives)

1. आर्थिक भूगोल के अध्ययन के उपागम एवं विधियों को जानेंगे।
2. आर्थिक भूगोल और अर्थशास्त्र के साथ समानताओं को समझेंगे।
3. भूमण्डलीकरण के अर्थ एवं विकास को समझेंगे।
4. भूमण्डलीकरण के विविध आयामों और उनके प्रभावों को जानेंगे।

प्रस्तावना

आर्थिक भूगोल मानव भूगोल के परिवर्तित होते विषयवस्तु और उसके विशेषीकरण का प्रतिफल है। अठारहवीं शताब्दी में आर्थिक भूगोल में केवल आर्थिक क्रियाओं का ही अध्ययन किया जाता था लेकिन औद्योगिक क्रांति के बाद आर्थिक भूगोल में काफी विविधता देखने को मिलती है। आज आर्थिक भूगोल की सामग्री को कई तरीकों और उपागमों के आधार पर विश्लेषित कर सकते हैं। आर्थिक भूगोल की संकल्पना, विषयक्षेत्र, उद्देश्य इत्यादि भूगोल के सामान्य विकासक्रम के अनुसार विकास होने के कारण भौगोलिक अध्ययन में प्रयुक्त विभिन्न उपागमों के इसमें व्यवहार होता है। इसके अलावा आर्थिक भूगोल का अर्थशास्त्र से बहुत गहरा सम्बन्ध बन चुका है, क्योंकि मानव अपनी प्रतिदिन की जरूरतों के लिए वस्तुओं और सेवाओं पर निर्भर करता है और इन वस्तुओं और सेवाओं का सम्बन्ध आर्थिक भूगोल के साथ–साथ अर्थशास्त्र से भी होता है। अर्थशास्त्र में साधनों के विभिन्न आर्थिक कार्यों के आबंटन की प्रक्रिया एवं संगठन का अध्ययन किया जाता है और आर्थिक भूगोल में भी आर्थिक साधनों के खोज पर बल दिया जाता है।

इस प्रकार अर्थशास्त्र वह विषय है जो धन के उपभोग, उत्पादन व विनिमय का मानव कल्याण से जुड़ा हुआ है। वहीं दूसरी ओर आर्थिक भूगोल मानव के आर्थिक क्रियाओं अर्थात् उत्पादन, उपभोग व विनिमय के स्थानिक क्रिया व प्रक्रिया का अध्ययन है। इसके अलावा आर्थिक भूगोल में भूमण्डीकरण आज के समय में एक प्रमुख जरूरत बन गई है, क्योंकि वर्तमान समय में विश्व के सभी देश आपस में गहनतम रूप में जुड़ते जा रहे हैं। इन देशों के बीच इस पारस्परिक जुड़ाव के कई आयाम हैं। लेकिन उसमें आर्थिक आयाम सबसे महत्त्वपूर्ण और प्रभावी है।

आर्थिक भूगोल के उपागम, अध्ययन की विधियाँ (Approaches and Methods Study of Economic Geography)

आर्थिक भूगोल की अध्ययन विधियों एवं उपागम का तात्पर्य यह है कि विषय का अध्ययन किन–किन तरीकों एवं आधारों पर किया जा रहा है।

आर्थिक भूगोल की विषय सामग्री में विविधता एवं गत्यात्मकता है। इसकी विषय सामग्री को कई रूपों में देखा एवं विश्लेषित किया जाता है। विषय विश्लेषण के इस दृष्टिकोण को ही उपागम (Approaches) या अध्ययन की विधि कहा जाता है। विषय की गत्यात्मक प्रवृत्ति होने के कारण इसके अध्ययन की उपागमों एवं विधियों में परिवर्तन होता रहा है। 21वीं शताब्दी के भूमण्डलीकरण के युग में इसकी अध्ययन विधियों में व्यापक परिवर्तन हुए हैं जिसका विवरण इस प्रकार है–

(1) क्रमबद्ध उपागम (Systematic Approach)

क्रमबद्ध उपागम के अन्तर्गत किसी भी वस्तु एवं तत्त्व (Phenomenon) विशेष के विश्व वितरण सम्बन्धी सामान्य विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है। ये तत्त्व प्राकृतिक, गैर प्राकृतिक अथवा इनका अन्तर्सम्बन्धित समुदाय हो सकता है। क्रमबद्ध उपागम में प्रत्येक तत्व का अलग–अलग अध्ययन होता है एवं उसके विश्व वितरण प्रतिरूप का विश्लेषण करते हैं। कृषि एवं औद्योगिक उत्पादों के प्रतिरूपों के अध्ययन को वस्तुपरक उपागम (Commodity Approach) कहा जाता है, क्योंकि इसमें अलग–अलग पदार्थों (Commodities) का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है। इस उपागम का आर्थिक भूगोल के अध्ययन में काफी महत्त्व है। क्रमबद्ध एवं वस्तुपरक अध्ययनों का क्षेत्र सम्पूर्ण विश्व होता है। वास्तव में तत्त्वों के वितरण के प्रतिरूप के आधार पर इस उपागम में भी प्रदेश बनाये जाते हैं। इसे इस तरह कह सकते हैं कि क्रमबद्ध उपागम के तत्वों की प्रादेशिक विभिन्नता का विश्लेषण किया जाता है।

(2) प्रादेशिक उपागम (Regional Approach)

प्रादेशिक उपागम द्वारा किसी प्रदेश को अध्ययन की एक इकाई मानकर उसके सम्पूर्ण संसाधनों का वितरण प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरणार्थ, भारत को संसाधन अध्ययन की इकाई मानने पर उसमें खनिज व शक्ति संसाधनों, जैविक संसाधनों, कृषि फसलों, जल एवं मृदा संसाधनों के मानवीय उपयोग तथा जनसंख्या का क्रमबद्ध (प्रकरणात्मक) अध्ययन किया जायेगा। अध्ययन की प्रादेशिक विधि भूगोल के साथ आर्थिक भूगोल में भी काफी महत्त्वपूर्ण रही है एवं आर्थिक भूगोल के प्रारम्भिक युग में प्रादेशिक उपागम का अधिक उपयोग होता था।

प्रादेशिक अध्ययनों में विश्लेषण मात्र एक क्षेत्र तक ही होता है परन्तु यह विश्लेषण एक तत्त्व का न होकर सम्पूर्ण आर्थिक भू–दृश्य का होता है। सामान्यतः ऐसे अध्ययन में एक ही अंग की दशाओं का विश्लेषण होता है, लेकिन कभी–कभी प्रादेशिक विशिष्टता एवं असन्तुलन सम्बन्धी अध्ययनों में कई क्षेत्रों पर भी विचार किया जाता है। कभी–कभी प्रादेशिक अध्ययनों में सभी विषयों को न रखकर एक वस्तु का अध्ययन किया जाता है जिसे वस्तुपरक प्रादेशिक अध्ययन (Commodity Regional Study) कहा जाता है।

स्पष्टतया कहा जा सकता है कि प्रादेशिक उपागम में सर्वप्रथम, सम्पूर्ण विश्व को कुछ प्रदेशों में विभाजित करने का प्रयत्न किया जाता है उसके बाद प्रत्येक प्रदेश में सभी तत्त्वों के वितरण एवं उनके अन्तर्सम्बन्ध का अध्ययन किया जाता है। क्रमबद्ध या प्रादेशिक उपागम को सम्मिलित रूप से वितरणात्मक या संस्थागत अध्ययन पद्धति कहा जाता है। (चित्र–1)

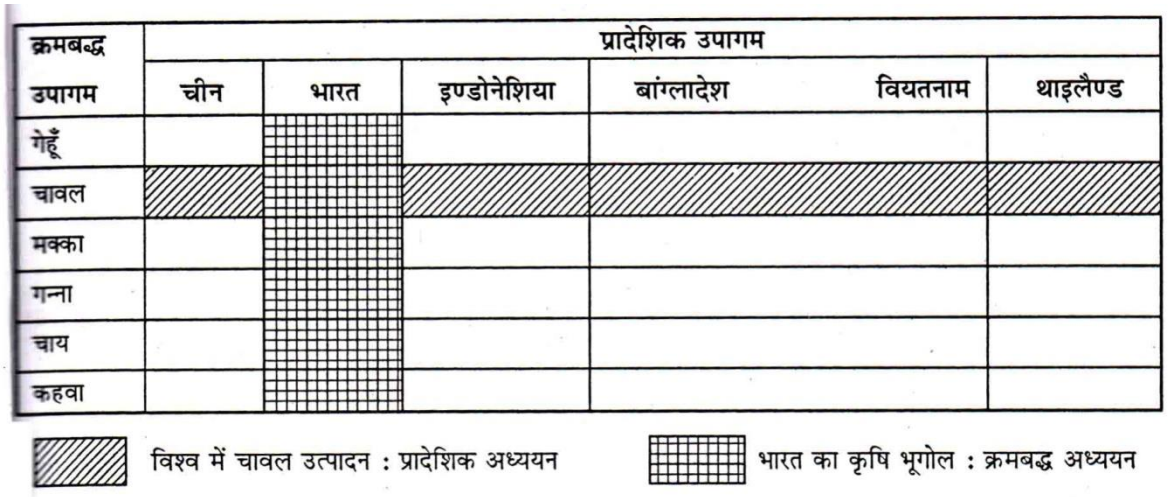

चित्र–1 : क्रमबद्ध बनाम प्रादेशिक उपागम

(3) सैद्धान्तिक उपागम (Theoretical Approach)

आर्थिक भूगोल को अधिक वैज्ञानिक बनाने की इच्छा रखने वाले भूगोलवेत्ताओं का मत है कि क्षेत्रीय विभिन्नता को स्पष्ट करने के लिये आर्थिक कार्यों के स्थानीयकरण सम्बन्धी सिद्धान्त (Theories of Location) तथा नियम विकसित करना अधिक उचित होगा। इसके प्रतिपादन में प्रादेशिक उपागम अक्षम है इसी कारण सैद्धान्तिक उपागम में कृषि, उद्योग आदि के स्थानीयकरण, उसके वर्गीकरण तथा वितरण की व्याख्या के नियम एवं सिद्धान्तों को बनाने पर जोर दिया जाता है। मॉडल भी इसकी एक आवश्यकता है।

सैद्धान्तिक भूगोलवेत्ता स्थानीयकरण की व्याख्या में चरों (Variables) के साहचर्य (Combination) पर विशेष जोर देते हैं एवं स्थानीयकरण के कारणों पर कम ध्यान देते हैं। सैद्धान्तिकरण में गणितीय एवं सांख्यिकी पद्धतियों का उपयोग अधिक हुआ है। अल्फ्रेड वेबर का औद्योगिक अवस्थिति सिद्धान्त, वॉन थ्यूनेन का कृषि अवस्थिति सिद्धान्त एवं क्रिस्टालर का केन्द्रीय स्थान सिद्धान्त आदि मॉडल प्रमुख हैं, जिनका आर्थिक भूगोल में प्रयोग होता है। सैद्धान्तिक उपागम से अध्ययन में एक आदर्श स्थिति की कल्पना की जाती है।

(4) आगमनिक एवं निगमन विधियाँ (Empirical and Deductive Methods)

आगमनिक अध्ययन विधि प्रत्यक्ष अवलोकन से प्राप्त आनुभविक ज्ञान पर आधारित होती है। इस विधि में निष्कर्ष महत्त्वपूर्ण होता है और आर्थिक भूगोल में इसका अध्ययन होता रहा है। इसमें सामान्य से विशेष की ओर तथा निष्कर्ष से उदाहरण की ओर चलते हैं। इस प्रकार के अध्ययन प्रत्यक्ष अवलोकन से प्राप्त आनुभाविक ज्ञान पर आधारित होते हैं। अध्ययन की इस विधि को आगमनिक विधि (Empirical methods) कहते हैं। आनुभाविक ज्ञान पर आधरित इस विधि के विपरीत वर्तमान में सैद्धान्तिक तर्कों पर आधारित एक अन्य विधि का उपयोग किया जाने लगा है जिसे निगमन विधि (Deductive Method) कहा जाता है। इस विधि में कुछ मान्यताओं को लेकर तर्क के आधार पर उन परिस्थितियों में सम्भावित दशायें परिकल्पित की जाती हैं। इस विधि का उपयोग अधिकतम लाभ देने वाले वितरण के निर्धारण में अधिक होता है। कुछ ऐसे अर्थशास्त्री हैं जो वास्तविक उत्पादन प्रतिरूप के स्थान पर अनुकूलतम स्थिति को निर्धारित करना अधिक उचित समझते हैं। इसके लिये 'लीनियर प्रोग्रेमिंग' विधि का उपयोग किया जाता है।

(5) तन्त्र–विश्लेषण उपागम (System Analysis Approach)

इसमें किसी अर्थतन्त्र के क्षेत्रीय संगठन का ज्ञान प्राप्त करने के लिये अधिक कार्यों की अन्योन्याश्रितता (Interdependence) तथा समग्रता (Wholeness) पर विशेष बल दिया जाता है। वास्तव में प्रणाली या तन्त्र का एक समूह होता है जिसमें तत्त्व एवं उनसे सम्बद्ध विशेषतायें परस्पर अन्तर्सम्बन्धित व आश्रित होती हैं। हॉल (Hall) एवं हैगेन (Hagen) के अनुसार तन्त्र, तत्त्वों का एक समूह है जिसमें तत्त्व एवं उनसे सम्बद्ध विशेषतायें परस्पर अन्तर्सम्बन्धित होती हैं। (System is a set of objects together with the relationship between the objects

and their attributes) ल्यूडवीग वॉन बेस्टालेन्फी ने सन् 1951 में सामान्य तन्त्र सिद्धान्त (General Systems Theory) का प्रतिपादन किया था जिससे प्रभावित होकर सन् 1966 में हॉल व हैगन ने प्रणाली उपागम के महत्त्व पर प्रकाश डाला।

(6) संसाधन–उपयोग–प्रक्रिया उपागम (Resources Use Process Approach)–स्पेंसर (Spencer) नामक आर्थिक भूगोलवेत्ता ने आर्थिक भूगोल के अध्ययन पर एक अन्य उपागम संसाधन उपयोग–प्रक्रिया उपागम बताया। उनके अनुसार सम्पूर्ण पृथ्वी के संसाधन उपयोग हेतु प्रक्रियाओं को दो मूलभूत वर्गों में रखा जा सकता है–

(अ) वे प्रक्रियाएँ जो संसाधन उपयोग से सम्बन्धित हैं तथा

(ब) वे प्रक्रियाएँ जो तत्त्वों के क्षेत्रीय या स्थितिक अन्तराल (Intervening Space) को समाप्त करने से सम्बन्धित हैं।

व्यवहारपरक उपागम (Behavioural Approach)

इसे आचारपरक उपागम भी कहा जाता है। मानव भूगोल की अन्य प्रमुख शाखाओं की भाँति आर्थिक भूगोल में भी व्यवहारपक उपागम का विशिष्ट स्थान है। यह भूगोल में प्रयुक्त एक नूतन उपागम है जिसका प्रयोग 1980वें दशक से होने लगा है। भौगोलिक अध्ययनों में व्यवहारपरक उपागम के बढ़ते प्रयोग से भूगोल में एक क्रांतिकारी एवं गुणात्मक परिवर्तन का सूत्रपात हुआ है। इस अध्ययन विधि में मानव व्यवहार को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है और तथ्यों के विश्लेषण में मनुष्य के व्यक्तिगत तथा सामूहिक आचरण (व्यवहार) को प्राथमिकता प्रदान की जाती है। अध्ययन की इस विधा में यह खोज करने का प्रयत्न किया जाता है कि किसी कार्य के करने या न करने में अथवा क्षेत्र विशेष के आर्थिक–सामाजिक विकास में मनुष्य के निर्णय को उसका व्यक्तिगत या सामूहिक व्यवहार किस प्रकार और किस सीमा तक प्रभावित करता है।

उदाहरण के लिए एशियाई देशों में निर्वाहमूलक कृषि और अमेरिकी देशों की व्यापारिक कृषि के विश्लेषण में दोनों प्रदेशों के मनुष्य के दृष्टिकोणों, सामाजिक–आर्थिक दशाओं, मान्यताओं आदि को समझना अत्यंत आवश्यक है। इसी प्रकार प्राकृतिक वनों तथा पशुओं के प्रति जनता के व्यवहार के परिप्रेक्ष्य में ही वन प्रदेशों का भौगोलिक अध्ययन सफल हो सकता

है। पाश्चात्य विकसित देशों के आर्थिक विकास में भौतिकवादी दृष्टिकोण को प्रबलता का प्रमुख हाथ है जबकि ईश्वरवादी या भाग्यवादी एशियाई देश विकास की दौड़ में पीछे रह गये हैं।

कल्याण परक उपागम (Welfare Approach)

कल्याणपरक उपागम मानव–पर्यावरण की ऐसी अन्तक्रिया पर बल देता है जिससे किसी प्रदेश या क्षेत्र के निवासी जनों की प्रमुख आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहे और वहाँ का पर्यावरण संतुलन भी बना रहे। इस उपागम के अंतर्गत विभिन्न प्रकार की मानवीय सुविधाओं यथा प्रतिव्यक्ति आय, आवास, पेय जल, शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, मनोरंजन आदि की सुविधाओं के वितरण में सामाजिक तथा प्रादेशिक न्याय के सिद्धांत पर विशेष बल दिया जाता है।

आर्थिक भूगोल का अर्थशास्त्र से सम्बन्ध

आर्थिक भूगोल का विकास भूगोल की एक प्रमुख शाखा के रूप में हुआ है जिसकी गणना सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत की जाती है। विभिन्न सामाजिक विज्ञान मानव की विभिन्न क्रियाओं का अध्ययन एवं विश्लेषण स्वस्व विषयानुकूल करते हैं। विभिन्न सामाजिक पक्षों के विकास में आर्थिक कारकों का महत्वपूर्ण योगदान पाया जाता है। अतः आर्थिक भूगोल का विभिन्न सामाजिक विज्ञानों विशेष रूप से अर्थशास्त्र से घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है।

एडम स्मिथ आदि परम्परावादी अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र को धन की व्याख्या करने वाला विज्ञान बताया है। उनके अनुसार अर्थशास्त्र यह विज्ञान है जो धन का अध्ययन करता है। इनके अनुसार अर्थशास्त्र का अध्ययन केवल इस तथ्य पर प्रकाश डालता है कि सामान्य जनता द्वारा किस प्रकार धनोपार्जन किया जाता है और किस प्रकार उनका व्यय किया जाता है।

राबिन्श (1932) ने अर्थशास्त्र की कल्याण मूलक परिभाषाओं की कठोर आलोचना करते हुए बताया कि अर्थशास्त्र उन समस्याओं का अध्ययन करता है जो साधनों की सीमितता के कारण उत्पन्न होती हैं। प्रकृति प्रदत साधन सीमित होने के कारण मानव जाति की समस्त आवश्यकताओं और साधनों के चुनाव की समस्या उत्पन्न होती है। इसी चुनाव की समस्या का

अध्ययन अर्थशास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है। चुनाव की समस्या उत्पन्न होने के प्रमुख कारण हैं–

1. मानवीय आवश्यकताओं का असीमित होना

2. साधनों का सीमित होना

3. साधनों के वैकल्पिक उपयोग की संभावना

4. आवश्यकताओं की तीव्रता में अन्तर का पाया जाना

जहाँ एक ओर मार्शल ने अर्थशास्त्र को सामाजिक विज्ञान बताया है वहीं दूसरी ओर राबिन्श ने इसे मानव विज्ञान माना है। मानव विज्ञान के रूप में अर्थशास्त्र सभी व्यक्तियों की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करता है चाहे ये समाज के सदस्य हो अथवा न हो।

अर्थशास्त्र के अन्तर्गत मनुष्य की सामान्य आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। अर्थशास्त्र की विषयवस्तु को मुख्यतः 5 वर्गों में विभाजित किया जाता है–

1. उपभोग

2. उत्पादन

3. विनिमय

4. वितरण

5. राजस्व

आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत इन सभी आर्थिक वर्गों का अध्ययन स्थान या क्षेत्र के सन्दर्भ में किया जाता है। वर्तमान समय में किसी प्रदेश को वस्तु विशेष के उत्पादन, वितरण, विनिमय तथा उसके आर्थिक विकास पर उस क्षेत्र या उसके समीप स्थित क्षेत्रों की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा पर्यावरणीय दशाओं का ही नहीं बल्कि विश्व के अन्य भागों में उस वस्तु के उत्पादन एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक परिस्थितियों का भी प्रभाव पाया जाता है। इस प्रकार के आर्थिक सम्बन्ध अर्थशास्त्र और आर्थिक भूगोल के पारस्परिक सम्बन्धों को व्यक्त करते हैं।

भूमण्डलीकरण

भूमण्डलीकरण एक बेहद ताकतवर परिघटना है जो सब कुछ बदल दे रही है। यह दो–धारी तलवार जैसी है जो सार्वभौम ढाँचे को अपने साँचे में तो ढालती ही है। उनके प्रति उसके विरोधियों की प्रतिक्रिया भी अंततः उसके ढाँचे को मदद ही करता है। अर्थात् आज के दौर में भूमण्डलीकरण का विस्तार होता ही जा रहा है।

विश्व के लगभग सभी देश आपस में जुड़ते जा रहे हैं। यद्यपि देशों के बीच इस पारस्परिक जुड़ाव के अनेक आयाम हैं जैसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक इत्यादि। भूमण्डलीकरण को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के विदेश व्यापार एवं विदेशी निवेश के माध्यम से देशों के बीच एकीकरण के रूप में परिभाषित किया जाता है। भूमण्डलीकरण में बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपने उत्पादन का व्यापार करती रहती हैं। इसमें उत्पादन का एकीकरण और बाजार का एकीकरण एक महत्त्वपूर्ण धारणा शामिल है। यह वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सम्पूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्था को दूसरे देशों की अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण करना होता है। इसमें वस्तुओं सेवाओं व्यक्तियों और सूचनाओं का सीमा रहित आवागमन की भूमण्डलीकरण के रूप में जाना जाता है। इसमें बाजारों हेतु बहुव्यापी विकल्प अपनाया जाता है तथा कुछ ही वर्षों में हमारा व्यापार पूर्णतः परिवर्तित हो जाता है। वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सम्पूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्था को दूसरे देशों की अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण करना होता है। इसमें वस्तुओं, सेवाओं, व्यक्तियों और सूचनाओं का सीमारहित आवागमन ही वैश्वीकरण या भूण्डलीकरण है।

भूमण्डलीकरण का अर्थ

भूमण्डलीकरण एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें दुनिया को सीमारहित होना होता है अर्थात् एक देश से दूसरे देशों के बीच बाजारों और वस्तुओं में भेदभाव रहित एकीकरणशः इसमें विदेशी व्यापार की बढ़ती हुई प्रवृत्ति, बढ़ती हुई तकनीकि ज्ञान और दक्षता की वजह से वैश्विक व्यापार को प्रोत्साहन मिलता है। भूमण्डलीकरण से विश्व के देशों में सहयोग और समन्वय मिलता है जिससे दुनिया को कार्य करने में आसानी होती है। भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया से वस्तुओं एवं सेवाओं के व्यापार हेतु एक तरीके से अवरोधों को समाप्त कर दिया

जाता है। इस प्रकार भूमण्डलीकरण में विश्व में बाजार की शक्तियाँ स्वतन्त्र रूप से कार्य करने लगती हैं। बाजारी शक्तियों पर सरकारों का नियंत्रण या तो होता ही नहीं है या फिर यदि होता भी है तो बहुत कम। इसमें सिद्धान्त रूप में यह माना जाता है कि विश्व के सभी देशों में वस्तुओं की कीमत लगभग समान होगी। यह एक तरीके से वस्तुओं, सेवाओं और व्यापार का अन्तर्राष्ट्रीयकरण है। यह मूलभूत रूप में भूमण्डलीकरण उदारीकरण और अन्तर्राष्ट्रीयकरण ही है।

ब्रैन्को मिलानोविक के अनुसार, ''भूमण्डलीकरण का अभिप्राय पूँजी, वस्तुओं, प्रौद्योगिकी, विचारों तथा लोगों के निर्बाध प्रवाह से है।''

स्टिगलिट्ज (1992) में भूमण्डलीकरण को परिभाषित किया तथा बताया कि दुनियाँ के लोग आपस में जुड़े तथा कृत्रिम सीमाओं को तोड़कर आगे बढ़ने की प्रक्रिया बतायी।

भूमण्डलीकरण के उद्देश्य

भूमण्डलीकरण में व्यापार को काफी बढ़ावा मिलता है इसके कुछ उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. घरेलू उदारीकरण के तहत उत्पादन निवेश और बाजार व्यवस्था का महत्त्व बढ़ता जाता है।
2. भूमण्डलीकरण में राजकोषीय घाटा, मौद्रिक घाटा और वित्तीय घाटा को सीमित करना होता है।
3. भूमण्डलीकरण में अर्थव्यवस्था में अमूल–चूल परिवर्तन करना होता है तथा वस्तुओं और सेवाओं की माँग को बढ़ावा देना होता है।
4. भूमण्डलीकरण में विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्था को मुक्त व्यापार से जोड़ना होता है।
5. इसमें विदेशी वस्तुओं, सेवाओं, प्रौद्योगिकी तथा पूँजी के आयात से प्रतिबन्ध को हटाना होता है।

भूमण्डलीकरण का विकास

भूण्डलीकरण उस सफर का नाम है जो 19वीं सदी के 7वें दशक में आधुनिकता ने शुरू किया था। आधुनिकता ने एक तरह से क्रान्ति को जन्म दिया है। यह क्रान्ति तार्किकता, विवेकशीलता, व्यावसायिकता की रही है। इसी ने वस्तुओं और सेवाओं को अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर पहुँचाया है। लेकिन भूमण्डलीकरण की शुरूआत पुनर्जागरण काल से मानी जा सकती है जब तार्किकता और स्वतंत्रता के मूल्यों का विकास प्रारम्भ हुआ। लेकिन इस दिशा में शुरूआत सोलहवीं शताब्दी में जॉन लॉक के उदारवादी सिद्धान्त से माना जाता है लेकिन उसी के साथ 16वीं शताब्दी में उपनिवेशवाद की शुरूआत होती है जब एक देश दूसरे देश से सम्पर्क में आते चले जाते हैं। हालांकि यह प्रक्रिया अव्यवस्थित और अवरोधों से भरी होती है फिर भी कमोवेश अवरोधों के साथ विश्व व्यापार जारी रहता है।

भूमण्डलीकरण को अगर आधुनिकता की आर्थिक अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाय तो इसमें 1870 से 1914 के बीच के समय को उन्मुक्त बाजार या 'अबाध वाणिज्य' के युग के रूप में जाना जा सकता है। इस समय ब्रिटेन महाशक्ति के रूप में था और उसकी मुद्रा पाउण्ड एक महामुद्रा के रूप में थी। भाप के इंजन, टेलीग्राम, रेलवे उसके वाहक थे। जो भूमण्डल को आपस में कम कर रहे थे। प्रथम विश्व युद्ध के समय पूँजी और आय के आवागमन में मुश्किल हुई। लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद दुनिया दो क्षेत्रों में बँट गयी। पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों अपने–अपने तरीके से उद्योग, व्यापार, परिवहन को प्रोत्साहित कर रहे थे। इसी समय 1960 के दशक में पीटर डूकर (P Drucker) ने निजीकरण की संकल्पना बनायी। इसी समय ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने मार्गरेट थैचर ने ब्रिटिश दूर संचार को निजी हाथों में सौंप दिया।

आर्थिक एकीकरण को प्रभावशाली बनाने के लिए सन् 1970 के दशक में सकारात्मक प्रयास शुरू किए गए थे। इस दशक में अन्तर्राष्ट्रीय पूँजी बाजार में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। अगले दशक में (1980) विश्व में आर्थिक संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई। इस वजह से अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से ऋण पाने के लिए देशों ने अपने आर्थिक तन्त्र में अनेक संरचनात्मक परिवर्तन शुरू कर दिए।

भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया 1990 के दशक में बहुत तेजी से शुरू हुई और इसी दशक में WTO की स्थापना (1995) के साथ भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में व्यवस्थित स्वरूप सामने

आया। एशिया के देश भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में शामिल होते चले गए। वर्तमान समय में सूचना, संचार, इंटरनेट, आवश्यकता एवं वैज्ञानिक प्रगति ने भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया को बहुत अधिक तेज और सशक्त बना दिया है। आज विभिन्न संस्कृतियों के लोग आपस में घुल–मिल रहे हैं। दुनियाँ वैश्विक गाँव के रूप में बदलती जा रही है।

भूमण्डलीकरण को प्रभावित करने वाले कारक

1. **आवश्यकता–** आज के दौर में कोई भी देश अपनी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम नहीं है इसलिए उसे अन्य देशों के साथ सम्बन्धों को गति देनी पड़ती है और समझौते करने पड़ते हैं।

2. **उदारीकरण की प्रक्रिया–** इस प्रक्रिया को आज लगभग सभी देशों ने अपना लिया है। आर्थिक उदारीकरण की नीति को अपनाए बिना कोई भी देश भूमण्डलीकरण से जुड़ ही नहीं सकता। उदारीकरण का अर्थ है विदेशी पूँजी को पूर्ण उदारता के साथ अपने देश में निवेश करने की अनुमति प्रदान करना।

3. **तकनीकी ज्ञान का प्रसार–** भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में तेजी तकनीकी ज्ञान के बढ़ने से बहुत तेजी से हुआ है। जैसे–जैसे परिवहन, संचार, मोबाइल, फैक्स, कम्प्यूटर, इंटरनेट और अन्य तकनीकों में सुधार और भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया तीव्रतर होती चली गयी है।

4. **बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ–** आज दुनिया की कोई बड़ी कम्पनी एक राष्ट्र तक ही सीमित है अपितु उसका विस्तार अनेकों देशों में होने से भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में तेजी आयी है। उदाहरण के लिए वर्तमान समय में कम्पनियाँ अपने प्लांट उस जगह लगाती हैं जहाँ उसकी उत्पादन लागत कम है जैसे कच्चा माल, श्रम, कर की दरें इत्यादि।

5. **विदेशी व्यापार–** आज के समय में आवश्यकताएँ असीमित हैं। कोई भी देश अपने आपमें हमारी वस्तुओं का न तो उत्पादन कर सकता है और न ही उनका निर्माण। ऐसी परस्थिति में विश्व व्यापार का उदय होता है। इससे भी भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में तेजी आती है।

6. **गैट और विश्व व्यापार संगठन–** विश्व व्यापार संगठन की स्थापना 15 अप्रैल 1994 को जारी मराकेश (मोरक्को) घोषणा पत्र में विश्व व्यापार संगठन की स्थापना हुई। विश्व व्यापार संगठन की स्थापना 1 जनवरी 1995 को हुई। इनके गैट (GATT) का स्थान किया। इसकी स्थापना से विभिन्न देशों के मध्य व्यापार में अधिक विस्तार सम्भव हुआ जिससे भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में तीव्रता आयी।

भूमण्डलीकरण विभिन्न आयाम

भूमण्डलीकरण के आयामों में आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं धार्मिक आदि प्रमुख हैं। इसके आयामों का विवरण इस प्रकार है–

1. आर्थिक आयाम

भूमण्डलीकरण का सबसे महत्त्वपूर्ण और प्रभावी आयाम आर्थिक आयाम ही है। इसमें बाजार, निवेश, उत्पादन एवं पूंजी का प्रवाह सरलतम तरीके से करने का प्रयास किया जाता है। या ऐसा दिखता हुआ प्रतीत कराया जाता है। विश्व के बहुत सारे विकासशील और अविकसित राष्ट्रों के पास निवेश के लिए पूंजी का अभाव होता है। इसी निवेश की कमी को पूरा करने के लिए इन राष्ट्रों में विदेशी पूंजी यानि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की चाहत लगातार बढ़ती जा रही थी। ताकि वह अपने देश का विकास कर सके। ऐसी परिस्थितियों का लाभ उठाने के लिए विकसित देश इन राष्ट्रों को विश्व व्यापार के दायरे में घसीट कर अपने चंगुल में फसा लिया है। भूमण्डलीकरण के कारण दुनिया के देशों में व्यापार और पूंजी का प्रवाह काफी तेजी से बढ़ा है। जिसकी वजह से राष्ट्रों में आपसी निर्भरता भी काफी बढ़ गयी है। अलग–अलग देशों की जनसंख्या, व्यापार, संस्कृति, खान–पान और सरकार के बीच एकीकरण बढ़ता जा रहा है। अर्थव्यवस्थायें और समाज खुल रहे हैं। इसी कारण से भूमण्डलीकरण के समर्थक इसको दुनिया के लिए वरदान मानने लगे हैं।

वैश्वीकरण के कारण वस्तुओं के व्यापार में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। इससे देश में होने वाले आयात पर टैक्स की दरों को कम कर रहे हैं और विभिन्न प्रकार की बाधाओं को भी हटा रहे हैं। जिसका लाभ यह हुआ है कि धनी देशों के पूंजीपति गरीब देशों में पूंजी लगाकर वहाँ के लोगों को रोजगार और सुविधा मुहैया करा रहे हैं। इस निवेश और पूंजी से इन अविकसित देशों में ढाँचागत संरचनात्मक परिवर्तन हुआ है और तकनीकि और रोजगार के

अवसरों में वृद्धि हुई है, जिससे देशों की जनता के जीवन स्तर में भी वृद्धि हुई है। पहले अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में कुछ ही देशों की स्थिति मजबूत थी लेकिन अब कई नये देश भी इस खेल में आगे आ रहे हैं और अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं।

लेकिन वैश्विककरण से केवल फायदा ही नहीं हुआ है बल्कि गरीब राष्ट्रों के संसाधनों पर विकसित देश अपनी पूंजी के माध्यम से कब्जा जमाने लगे हैं और उनका व्यापार असंतुलन बढ़ता जा रहा है। उनके यहाँ संसाधनों का दोहन तीव्र हो गया है। लोगों के बीच असमानतायें पनप रही हैं। पूँजी कुछ ही व्यक्तियों तक केन्द्रित होती जा रही है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वैश्विककरण से आर्थिक आयाम को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझ सकते हैं–

(i) उदारीकरण की नीति और स्वतन्त्र अर्थव्यवस्था

(ii) दूसरे देशों में आवाजाही

(iii) तकनीकि अर्थव्यवस्था

(iv) आउटसोर्सिंग

(v) ज्ञानात्मक अर्थव्यवस्था

(vi) पूंजी का भूमण्डलीकरण

(vii) रोजगार के लिए दूसरे देशों का भ्रमण

(viii) रोजगार सृजन में विविधता

(ix) कच्चे संसाधनों के मूल्य में बढ़ोत्तरी

(x) संसाधनों का केन्द्रीकरण

(xi) सुदूर संसाधनों तक पहुँच

(xii) दक्ष होते युवा

(xiii) उच्च वेतन पैकेज

(xiv) शारीरिक श्रम करने वाले लोगों की कमी

2. सामाजिक एवं सांस्कृतिक आयाम

आज के समय में वैश्विक स्तर पर सामाजिक और सांस्कृतिक दूरियाँ मिट रही हैं। इसके पीछे प्रमुख कारण एक तो एक ही देश में बहुत से समाजों के निवासी आवासित हैं और उनका रहन–सहन, खान–पान मिलता जुलता है। नृत्य, संगीत, सिनेमा आदि इसको भूमण्डलीकृत करते जा रहे हैं।

3. राजनीतिक आयाम

वर्तमान समय में राजनीतिक नेतृत्व अपने को वैश्विक नेता के रूप में स्थापित करना चाहता है। वह चाहे किन्हीं देशों के बीच कोई भू–राजनीतिक मामलों में हस्तक्षेप, मध्यस्तता और अन्य तरीके अपनाये जा रहे हैं। इसके अलावा आज के कोविड के दौर में वैक्सीन की कूटनीति भी अपनायी जा रही है। संसाधनों की कूटनीति भी महत्त्वपूर्ण बनी हुई है। इससे भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया तेज होती है।

4. धार्मिक आयाम

दुनियाँ के कई सारे देश एक ही धर्म को समर्थन और मान्यता देते हैं (धर्म सापेक्ष) लेकिन आज ऐसा कोई भी देश नहीं जहाँ एक ही धर्म के लोग निवास कर रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में यदि किसी देश में अल्पसंख्यकों या दूसरे धर्म के लोगों का शोषण होता है तो वहाँ पूरी दुनिया एकजुट हो जाती है। धार्मिक तीर्थ भी एक देश की सीमाओं में केन्द्रित नहीं है।

5. पर्यावरणीय आयाम

भूमण्डलीकरण के परिणामस्वरूप पर्यावरण का ह्रास और उसकी गुणवत्ता में नकारात्मक परिवर्तन हुआ है। तीव्रतर होती औद्योगीकरण के कारण पर्यावरणीय प्रदूषण मिट्टी का अमलीय या क्षारीय हो जाना, बाढ़, सूखा अति वृष्टि, अनावृष्टि इत्यादि पर्यावरणीय समस्यायें सामने आ रही हैं। जंगलों में भयानक अग्नि लग रही है। औद्योगीकरण में नवीन वैज्ञानिक तकनीकि के

प्रयोग की प्रक्रिया से उद्योगों से अधिक से अधिक उत्पादन करने का प्रयास किया जाता है जिससे इस उत्पादन में कम लागत, कम श्रम, कम मूल्य वहन करना पड़े और उद्योगों का अधिकतर लाभ हो। इस प्रक्रिया से प्रदूषण बढ़ता है और पर्यावरण को व्यापक हानि पहुँचती है। लेकिन साथ ही साथ वैश्वीकरण की वजह से अनेक प्रकार की समस्याओं से भी लड़ने की प्रेरणा मिलती है और आज के समय में दुनिया के अधिकतर देश जलवायु परिवर्तन, वैश्विक तापन, ओजोन क्षरण से चिंतित होकर सबको एकजुट करे इससे लड़ने का प्रयास कर रहे हैं।

6. अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन

इससे लोग एक–दूसरे देश को जानते हैं। उनके रहन–सहन–खानपान और उसकी अर्थव्यवस्था, ज्ञान तथा तकनीकों की जानकारी लेते हैं।

भूमण्डलीकरण का प्रभाव

1. **व्यापार पर प्रभाव–** भूमण्डलीकरण का प्रमुख उद्देश्य, वस्तुओं एवं सेवाओं के व्यापार में विस्तार करना है। इससे अर्थव्यवस्था को गति मिलती है तथा श्रम और रोजगार को प्रोत्साहन मिलता है। इससे अभाव वाला देश अपनी कमी को पूरा करता है।

2. **आर्थिक एवं राजनीतिक प्रभाव–** वर्तमान समय में घटित कोई भी घटना वैश्विक स्तर पर अपना प्रभाव अवश्य छोड़ती है। जैसे– बुहान (चीन) में कोविड (Covid-19) ने पूरी दुनिया को तहस–नहस कर दिया है। इससे न केवल अर्थव्यवस्था प्रभावित हुई है। अपितु दुनिया की राजनीति में भी परिवर्तन आया है। इसके साथ ही दुनियाँ की आर्थिक मंदी ने राजनीति और अर्थव्यवस्था दोनों को प्रभावित किया है। इसका सीमाओं से बहुत अधिक लेना–देना नहीं है।

3. **औद्योगीकरण का प्रभाव–** अमरिड टायनवी के अनुसार, ''औद्योगिक क्रान्ति कोई आकस्मिक घटना नहीं थी अपितु विकास की निरन्तर प्रक्रिया थी।'' औद्योगिक क्रान्ति इंग्लैण्ड से प्रारम्भ हुई। भूमण्डलीकरण ने औद्योगीकरण को भी प्रभावित किया है। नई औद्योगिक नीति ने निजीकरण और उदारीकरण को अपनाया जाता है। अर्थव्यवस्था को विदेशी निवेश के लिए खोज दिया जाता है। इससे भूमण्डलीकरण को बढ़ावा मिलता है।

4. **रोजगार पर प्रभाव–** भूमण्डलीकरण से मनुष्य के जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। इससे उसका पूरी तरीके से सांस्कृतिक परिवर्तन हो गया है। इससे रोजगार के नये अवसरों का भी सृजन होता है और अनेक रोजगार का अवसर खत्म हो जाते हैं। विश्व व्यापार संगठन द्वारा प्रतियोगिता को भी बढ़ावा मिलता है। भूमण्डलीकरण ने रोजगार में व्यापक परिवर्तन किया है। वहीं श्रमिकों हेतु नये अवसर खुले हैं।

5. **गरीबी उन्मूलन पर प्रभाव–** भूमण्डलीकरण से वैश्विक स्तर पर गरीबी उन्मूलन पर काफी सराहनीय प्रयास हुए हैं। गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के द्वारा रोजगार के अवसरों को बढ़ाना, औद्योगीकरण को बढ़ाना, प्रतिव्यक्ति आय एवं सकल राष्ट्रीय आय में बढ़ोत्तरी तथा जीवन की गुणवत्ता में सुधार पर बल दिया जा रहा है।

6. **कृषि पर प्रभाव–** भूमण्डलीकरण ने कृषि को आय का प्रमुख साधन बना दिया है। दुनिया के अनेक देशों की अर्थव्यवस्था का आधार कृषि एवं पशुपालन ही है। तीसरी दुनिया के कई देश विकसित देशों की अपनी उपज को निर्यात करते हैं।

7. **पर्यावरणीय समस्याओं का वैश्विक अध्ययन–** आज अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ वैश्विक पटल पर सामने हैं। दुनिया के अधिकतर देश इन समस्याओं से लड़ते हुए दिखायी पड़ते हैं तो इसके पीछे भूमण्डलीकरण ही है।

भूमण्डलीकरण का नकारात्मक प्रभाव

1. बेरोजगारी में बढ़ोत्तरी
2. लघु उद्योगों की समस्या
3. रोजगार की अनिश्चितता
4. बाजार पर एकाधिकार
5. पूँजीवाद को बढ़ावा
6. विकसित देशों को बढ़ावा
7. क्षेत्रीय विषमताएँ

8. प्रदूषण की समस्या

9. जलवायु परिवर्तन की समस्या

10. कृषि पर नकारात्मक प्रभाव

11. आय असमानता में बढ़ोत्तरी

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भूमण्डलीकरण ने किसी भी समस्या से लड़ने के लिए एक वैश्विक विजन प्रदान किया है। लेकिन ग्लोबल आर्थिक ताकतों ने राष्ट्र और राज्य को जिस तरह से पीछे हटने पर मजबूर कर दिया है। उससे लगता है राष्ट्रातीत सत्ता का एक नया प्रोटोकॉल तैयार हो चुका है। वह सत्ता की मौजूदा संरचनाओं से टकराकर अपने उद्योग, व्यापार, विकास का मॉडल स्थापित करना चाहता है। इसके शीर्ष पर अमेरिका, यूरोप, जापान बैठे हुए हैं। चीन और भारत नयी भूमण्डलीकृत सत्ता संरचना में जगह बनाना चाह रहे हैं। वाणिज्य, विदेशी निवेश और वित्तीय प्रवाहों तथा अधिग्रहण के आँकड़े यही कहानी कहते हैं। यदि कोर्ट इसको भंग करने का प्रयास करता है या पुरानी अर्थव्यवस्था में जाने का प्रयास करता है तो उसके अस्तित्व को ही बाजारी ताकतें खत्म करने पर आमादा हो जाती हैं।

निष्कर्ष (Conclusion)

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आर्थिक भूगोल की अध्ययन विधियों के माध्यम से यह जानकारी मिलती है कि आर्थिक भूगोल के अध्ययन के तरीके क्या–क्या हो सकते हैं। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की आर्थिक क्रियाओं के वितरण प्रतिरूपों तथा उन कारकों एवं प्रक्रमों का अध्ययन किया जाता है जो भूतल पर भिन्नता को दर्शाते हैं। इसी प्रकार आर्थिक भूगोल और अर्थशास्त्र में घनिष्ट सम्बन्ध है दोनों ही विषय अर्थ का अध्ययन करते हैं। आर्थिक भूगोल में जितनी भी वस्तुओं, संसाधनों का अध्ययन करते उनका परिप्रेक्ष्य भूमण्डलीकृत ही है। क्योंकि इसमें भेदभाव रहित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहन मिलता है।

मॉडल प्रश्न (Model Questions)

1. आर्थिक भूगोल की अध्ययन विधियों की विवेचना कीजिए।
2. आर्थिक भूगोल का अर्थशास्त्र से सम्बन्धों को बताइए।

3. भूमण्डलीकरण क्या है? उसके आयामों की चर्चा कीजिए।

संदर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व – प्रो0 जगदीश सिंह
2. आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व – डॉ0 अलका गौतम
3. आर्थिक भूगोल – डॉ0 वी0सी0 जाट
4. भारत का भूमण्डलीकरण – डॉ0 अभय कुमार दुबे
5. इण्टरनेट।

आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व

इकाई–03

खनिज संसाधनों की विशेषताएँ एवं उत्खनन को प्रभावित करने वाली दशाएँ तथा कारक (Characteristics and Factors Affecting Mineral Resources and Excavation)

पाठ संरचना (Lesson Structure)

1. उद्देश्य (Objectives)
2. खनिज संसाधनों के अर्थ एवं परिभाषाएँ
3. खनिजों की उत्पत्ति
4. खनिजों का संचित परिमाण
5. खनिज संसाधन की विशेषताएँ
6. खनिज संसाधनों के उत्खनन से सम्बन्धित विविध आयाम
7. उत्खनन को प्रभावित करने वाली दशाएँ एवं कारक
8. खनिज संसाधनों का संरक्षण
9. निष्कर्ष (Conclusion)
10. मॉडल प्रश्न (Model Questions)
11. सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. उद्देश्य (Objectives)

(i) खनिज संसाधनों के अर्थ एवं परिभाषा को समझेंगे।

(ii) खनिज संसाधनों की उत्पत्ति के कारणों को समझेंगे।

(iii) खनिज संसाधनों के संचित परिमाण के बारे में जानेंगे।

(iv) खनिज संसाधन की विशेषताओं को जानेंगे।

(v) खनिज संसाधनों के उत्खनन को प्रभावित करने वाले कारकों को समझेंगे।

(vi) खनिज संसाधनों के उत्खनन से सम्बन्धित विविध आयामों को समझेंगे।

(vii) खनिज संसाधनों के संरक्षण को समझेंगे।

प्रस्तावना

खनिज एक प्रकार के प्राकृतिक संसाधन होते हैं जिनकी रचना एक से अधिक तत्वों के मिलने से व प्राप्त शैलों से होती है। प्राचीन काल में खनिजों का उपयोग उपकरण, शस्त्र, बर्तन, सड़कें, नहरें आदि बनाने में किया जाता था। लेकिन खनिज संसाधन का वास्तविक विकास औद्योगिक क्रान्ति के बाद हुआ। खनिज सामान्य तौर पर ठोस और एक क्रिस्टल संरचना से बना होता है। इस तरीके के खनिजों को एक निश्चित फार्मूले से दर्शाया जाता है। खनिज संसाधन सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए एक महत्त्वपूर्ण भौगोलिक आधार होते हैं। मनुष्य द्वारा उपयोग की जाने वाली 95% से अधिक ऊर्जा, 80% औद्योगिक कच्चे माल और कृषि उत्पादन के लिए 70% कच्चे माल खनिज संसाधनों से ही प्राप्त होते हैं। अब तक विश्व में 2000 से अधिक खनिजों की खोज हो चुकी है। लेकिन उसमें से कुछ सौ खनिज ही आर्थिक दृष्टि से उपयोगी हैं।

खनिज संसाधन अपने आप में विशिष्ट होते हैं, और उनके वर्गीकरण को कई आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है। दुनिया में इनके निक्षेप भण्डार और वितरण में समानता नहीं पायी जाती है। आज के इस औद्योगीकरण के युग में खनिज संसाधनों के बढ़ते उपयोग को ध्यान में रखते हुए इसके संरक्षण की बहुत जरूरत है।

2. खनिज संसाधनों के अर्थ एवं परिभाषाएँ

सामान्य अर्थों में खनिज वे सब पदार्थ हैं जो खनन क्रिया से प्राप्त होते हैं। वैज्ञानिक रूप से खनिज एक जैविक–अजैविक पदार्थ हैं जिसका एक निश्चित रासायनिक संघटन होता है। सामान्यतः सभी खनिजों की रवेदार रचना होती है। मानव के लिए उपयोगी खनिज पदार्थों को खनिज संसाधन (Mineral resource) कहते हैं।

जो पदार्थ पृथ्वी के अंतरतम या आंतरिक भाग से निकाली जाती है या गर्भ ग्रह से खोदकर निकाली जाती है उन्हें खनिज संसाधन के रूप में जाना जाता है। सामान्य तौर पर खनिज प्राकृतिक रूप से निकलने वाले वह पदार्थ है जिसकी अपनी भौतिक विशेषताएं होती हैं और जिनकी बनावट को रासायनिक गुणों द्वारा अभिव्यक्त करके अलग किया जा सकता है। खनिज सामान्य तौर पर प्राकृतिक रासायनिक भौतिक योगिक होते हैं जो प्रमुख रूप से अजैव प्रक्रियाओं से बनकर हमारे सामने आते हैं। इसीलिए धातुओं के अतिरिक्त कोयला, पेट्रोलियम, गंधक अथवा अन्य चट्टाने मिश्रण से बनी होती है, को खनिज पदार्थ के रूप में जाना जाता है। निर्माण की प्रक्रिया विभिन्न प्रकार के धातुओं का मिश्रण और विभिन्न प्रकार के भौतिक गुण आदि में अंतर के कारण विभिन्न खनिजों की विशेषताएं अलग–अलग होती है। खनिज कुछ मिट्टी वाले तत्वों के साथ मिले होते हैं कुछ कंकड़ और पत्थरों के साथ मिले होते हैं कुछ चट्टानों के रंगों और शिराओं के रूप में पाए जाते हैं। कुछ विशेष प्रकार के खनिज झीलों, तालाबों और समुद्रों की नितलों में व्यापक पैमाने पर भी पाए जाते हैं। खनिज जिन स्थानों से निकाले जाते हैं उन्हें खान कहते हैं। खनिज पदार्थ जिन कच्ची धातुओं के मिश्रण से बनते हैं उन्हें अयस्क के रूप में जाना जाता है।

धातु से सम्पन्न खनिज धात्विक अयस्क के रूप में पाए जाते हैं और इनमें धातुओं की मात्रा तथा अनुपात विभिन्न प्रकार से मिश्रित होता है। जब एक या अधिक धात्विक खनिज एक जगह पर मिलते हैं और उनमें धात्विक सम्पन्नता इतनी रहती है कि उनका आर्थिक रूप से दोहन हो सके तो इन्हें हम धात्विक निक्षेप के रूप में जानते हैं। स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि उत्पादन योग्य धात्विक सम्पन्नता कई बातों पर निर्भर करती है। जैसे–

- विभिन्न प्रकार की धातुऐं

- भौतिक विशेषतायें
- धातु प्राप्ति का स्थल और निष्कर्षण के तरीके
- निष्कर्षण में लगी हुई प्रौद्योगिकी,
- माँग और पूर्ति की स्थिति,
- उसका बाजार मूल्य,
- धातुओं की विरलता
- धातुओं की उपयोगिता

इस प्रकार से स्पष्ट है कि किसी भी धात्विक खनिज का महत्त्व कई कारकों पर निर्भर करता है। पूर्व के समयों में जिन खनिजों का महत्त्व नहीं था, आज उनका अधिक महत्त्व हो गया है, इसके पीछे कई कारण हैं। जैसे– प्रौद्योगिकी का विस्तार, जनसंख्या का बढ़ता दबाव, मनुष्य की आवश्यकतायें इत्यादि।

खनिजों का वर्गीकरण

खनिज वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी पर 1600 से अधिक खनिज पाए जाते हैं जिसमें से केवल 200 ही आर्थिक महत्त्व के होते हैं। धातुओं को ध्यान में रखते हुए यदि खनिजों का विश्लेषण किया जाए, तो खनिजों का वर्गीकरण इस प्रकार है–

धात्विक खनिज

1. लौहांस – हैमेटाइट, मैग्नेटाइट, लिमोनाइट, सिडराइट, पाइराइट आदि लौह अयस्क।

2. लौह मिश्र – मैगनीज, क्रोमियम, कोबाल्ट, मॉलिब्डेनम, निकिल, टंग्स्टन, वैनेडियम आदि जो विविध प्रकार के इस्पात बनाने में काम आते हैं।

3. अलौह – ताँबा, सीसा, जस्ता, टिन, थोरियम, यूरेनियम आदि।

4. बहुमूल्य धातुएँ – सोना, चाँदी, प्लेटिनम आदि।

अधात्विक खनिज

1. खनिज ईंधन – कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, यूरेनियम, थोरियम आदि।

2. खनिज उर्वरक – नाइट्रेट, फास्फेट, पोटाश (जो रसायनों के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं)।

3. रत्न जवाहरात – अमेथीस्ट, एक्वामेरीन, एमराल्ड, जेड, ओपल, रूबी, डायमण्ड आदि।

4. भू–द्रव्य – जिप्सम, नमक, गन्धक, अभ्रक, खड़िया, बजरी, बालू आदि।

3. खनिजों की उत्पत्ति

पृथ्वी पर खनिजों की उत्पत्ति की अनेक प्रक्रियायें हैं जिनका विवरण इस प्रकार है–

(i) जल तापीय घुलनशील विधि

पृथ्वी के आन्तरिक भाग में अनेक प्रकार की क्रियायें स्वतः गतिशील रहती हैं जैसे पटल–विरूपण शक्तियाँ, पृथ्वी का घूर्णन, आन्तरिक भाग में रेडियोएक्टिव पदार्थों की क्रिया–प्रतिक्रिया आदि। इनकी वजह से पृथ्वी में विभिन्न प्रकार के ऊष्ण द्रव और गैस चलायमान हो जाते हैं और ये विभिन्न प्रकार के खनिजों को आपस में घोलते रहते हैं। कालान्तर में यही पदार्थ अपना एक नया स्वरूप प्राप्त कर लेते हैं और एक नये खनिज के रूप में सामने आते हैं। ऐसे निक्षेपीकरण को ऊष्ण जलीय विलयन विधि भी कहते हैं।

(ii) चुम्बकीय वियोजन विधि

ऊष्ण जलीय विलयन विधि में द्रवीभूत शैलों के अवशीतलन काल में विभिन्न तापमानों पर गुण विभिन्न प्रकार के हो जाते हैं। इस प्रकार निक्षेप होने के साथ ही विभिन्न प्रकार की धातुऐं भी अलग–अलग हो जाती हैं। इन्हीं द्रवीभूत शैलों में ऐसी धातुओं के यौगिक पाए जाते हैं जो बचे हुए द्रवों अर्थात् स्वतः दृवित चट्टानों में ऐसी धातुओं की प्रचुरता हो जाती है और किसी प्रकार ठण्डे होने के बाद उक्त चट्टानों में ऐसी धातुऐं मोटी परतों के रूप में एकत्रित हो जाती हैं।

(iii) सम्पर्क निक्षेपण

जब धात्विक रूप से तत्व शैल अपने आस–पास के चट्टानों में प्रवेश कर जाते हैं तो उनका सम्पर्क विभिन्न प्रकार के खनिज तत्वों के साथ होता है। इस सम्पर्क के कारण विभिन्न कटिबन्धों में नये प्रकार के खनिजों का निर्माण होता है और खनिजों में विविधता भी पायी जाती है।

(iv) अवसादन विधि

अवसादन विधि में दो प्रकार की प्रक्रियायें महत्त्वपूर्ण होती हैं – पहली रासायनिक अवसादन जिसमें खनिज विभिन्न पदार्थों के साथ घुलकर एक नये स्वरूप में परिवर्तित हो जाता है, जबकि दूसरी विधि भौतिक अवसादन की होती है जिसमें अपक्षय और अपरदन की क्रिया के माध्यम से पदार्थों का जमाव होता रहता है और कालान्तर में एक नये प्रकार के खनिज का निर्माण होता है। पेट्रोलियम और शक्ति के साधनों की उत्पत्ति इसी प्रक्रिया के तहत हुई है।

(v) अवशिष्ट अपक्षयण विधि

जब कभी–कभी घुलनशील तत्व विभिन्न प्रक्रियाओं के माध्यम से बह जाता है, तो घुलनशील तत्वों के बह जाने से भूपटल के ऊपरी भाग में केवल अघुलनशील अवशिष्ट ही रह जाता है जिसके फलस्वरूप ये अघुलनशील अवशिष्ट कालान्तर में अपेक्षाकृत अधिक शुद्ध बना रहता है, और उसकी धात्विक सम्पन्नता बनी रहती है। बाक्साइट का निर्माण इसी प्रक्रिया से होता है। इस प्रक्रिया में जब कभी इन पदार्थों को लेकर नदियाँ समुद्र में अवसादन करती हैं तो इनकी धात्विक सम्पन्नता और अधिक भी बढ़ सकती है।

(vi) ऊर्ध्वापतन क्रिया

पृथ्वी के आन्तरिक भाग से निकलने वाली गैस रास्ते में अपने साथ विभिन्न प्रकार की खनिजों के साथ सम्पर्क करती हुई आगे बढ़ती है तो उसमें विशिष्टता आती जाती है और भू पटल में भी बिना ऊपरी भाग के सम्पर्क के आन्तरिक भाग में ही ठण्डी हो जाती है। ऐसे निक्षेप धरातल पर लावा से जुड़े हुए पाए जाते हैं।

(vii) आसवन क्रिया

समुद्रों में छोटे–छोटे जीव–जन्तुओं के शरीर के विघटन और वियोजन से एक प्रकार के रस का स्राव होता है, इस क्रिया को आसवन क्रिया कहते हैं। पेट्रोलियम पदार्थों की उत्पत्ति इसी क्रिया के माध्यम से होती है।

(viii) खनिजों का शुद्धिकरण

कुछ विशिष्ट प्रकार के खनिजों में कई प्रकार के खनिज पाए जाते हैं जब इनका विलयन अन्य तत्वों के साथ होता है तो शुद्धिकरण की प्रक्रिया से एक नये प्रकार के खनिज का निर्माण होता है।

(ix) वाष्पीकरण तथा अधिसंतृप्तीकरण क्रिया

जब विभिन्न प्रकार के जल भण्डारों में घुले हुए नमक की अधिकता होती है तो सूर्यातप के कारण वाष्पीकरण की प्रक्रिया से जल वाष्पीकृत हो जाता है और नमक की मात्रा की एक परत बिछ जाती है।

(x) कायान्तरण प्रक्रिया

काफी लम्बे समय तक दबाव, तापमान और ऊष्मा आदि के प्रभाव से बहुत से चट्टानों का परिवर्तन होकर वह नये खनिजों के रूप में बदल जाते हैं और अपना धात्विक महत्त्व और बढ़ा लेते हैं। उदाहरण के लिए चूना पत्थर इन्हीं प्रक्रमों के माध्यम से संगमरमर के रूप में बदल जाता है।

4. खनिजों का संचित परिमाण

खनिज पदार्थों की संचित राशि उसकी धात्विक सम्पन्नता, उसकी विशेषताऐं इत्यादि का सम्पूर्ण ज्ञान आज के विकसित प्रौद्योगिकी के समय में भी सम्भव नहीं हो पा रहा है। सामान्य तौर पर संचित भण्डार उन्हें कहते हैं जो खनिज मनुष्य के लिए आर्थिक दृष्टि से उपयोगी हो। जबकि आर्थिक कारणों से कोई खनिज महत्त्वपूर्ण तो हो, लेकिन निकालने योग्य न हो तो ऐसे जमाव को संसाधन कहते हैं। ऐसा इसलिए कहा जाता है क्योंकि हर नये अध्ययन में खनिजों की संचित राशि की मात्रा का आंकलन बदलता रहता है। इसीलिए संचित राशि की प्राकल्पना अत्यन्त कठिन और जटिल है। इसको कई प्रकार

के कारक प्रभावित भी करते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि संचित राशि सामान्य तौर पर एक अनुमान मात्र है। जो उक्त तथ्यों में परिवर्तन के साथ परिवर्तित होता रहता है।

अतः संचित राशि के जमाव को कई आधारों पर देखा जा सकता है–

(i) मापित संचित राशि (Measured Reserves)

जब चट्टानों के अध्ययन, उनकी खुदाई, उत्खनन आदि प्रक्रियाओं द्वारा कई नमूने लेकर जमाव की धातु सम्पन्नता, आकार आदि का हिसाब लगाकर मात्रा में आंकलन किया जाता है तो उसे मापित संचित राशि कहते हैं।

(ii) ज्ञापित संचित राशि (Indicatesd Reserves)

जब संचित राशि की मात्रा तथा धात्विक सम्पन्नता का आकलन आंशिक रूप से ही हो पाता है तो भूगर्भिक इतिहास, संरचना आदि के अध्ययन के आधार पर इसे ज्ञापित संचित राशि कहते हैं।

(iii) आकलित संचित राशि (Inferred Reserves)

जब स्थानीय या प्रादेशिक भूगर्भिक लक्षणों के आधार पर संचित राशि का अनुमान लगाया जाता है तो उसे आकलित संचित राशि कहते हैं।

(iv) प्रमाणित निक्षेप (Proved Ore Deposit)

प्रमाणित निक्षेप उसे कहते हैं जब धातुयें तीन ओर से पूरी तरह से दिखायी दें और उनकी सीमायें भी निश्चित हो गई हों।

(v) सम्भाव्य निक्षेप (Probable Deposit)

जब खनिज संसाधन केवल दो तरफ से दिखाई दे रही हों और उनकी सीमायें भी पूरी तरह से निश्चित न हो तो उन्हें सम्भाव्य निक्षेप कहते हैं।

(vi) सम्भव जमाव (Possible Deposit)

भूगर्भिक इतिहास और परिस्थितियों के अनुसार जहाँ खनिजों के मिलने की सम्भावना हो उसे सम्भाव्य निक्षेप कहते हैं।

उपर्युक्त परिस्थितियों और कारकों के आधार पर खनिजों के संचित राशि में परिवर्तन हो रहा है। इसके लिए मानवीय ज्ञान, आर्टिफिशियल इंटैलीजेन्स, प्रौद्योगिकीय प्रगति, संसाधनों के दक्षतम उपयोग के तरीके इत्यादि मिलकर खनिजों के संचित राशि को बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं।

5. खनिज संसाधनों की प्रमुख विशेषताएँ

खनिज संसाधन एक ऐसा संसाधन होता है जिसे सामान्य तौर पर एक बार ही प्रयोग किया जा सकता है, उसके पश्चात् ये संसाधन समाप्त प्रायः हो जाते हैं। खनिजों का उद्देश्य मानव कल्याण हेतु एक विकल्प प्रदान करना है। चूँकि खनिज एक क्षयशील संसाधन है जिन्हें फिर से नवीकरणीय नहीं बनाया जा सकता है। इसीलिए इनके संरक्षण की आवश्यकता भी महसूस की जाती रही है। सामान्य तौर पर खनिज विभिन्न प्रकार के यौगिकों के संयोजन से बने होते हैं। जैसे– हीरे एवं कार्बन को छोड़कर अधिकांशतः खनिज एक से अधिक तत्वों से बने होते हैं। खनिजों के कुछ प्रमुख गुण इस प्रकार हैं– रवेदार, कठोरता, आपेक्षिक घनत्व, रंग, चमक, पारदर्शिता, वर्णरेखा आदि। खनिज संसाधनों की कतिपय महत्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) खनिज निक्षेप (deposit) प्रायः छोटे–छोटे क्षेत्रों में तथा बिखरे रूप में पाये जाते हैं। यद्यपि कोयला, पेट्रोलियम, लोहा आदि के क्षेत्र अपेक्षाकृत् विस्तृत होते हैं किन्तु कुछ खनिज अत्यंत सीमित भू–क्षेत्र में और विरल रूप में भी पाये जाते हैं।

(2) खनिज निक्षेप सामान्यतः भूगर्भ में स्थित होते हैं यद्यपि कुछ खनिज भू–सतह पर भी पाये जाते हैं। जिस स्थान पर किसी महत्वपूर्ण खनिज का उत्खनन (quarrying) या खनन (mining) होता है उसे खदान (quarry) या खान (mine) कहते हैं। सामान्यतः धरातल की ऊपरी शैलों को खोदकर निकालने की क्रिया को उत्खनन और गहराई से खनिजों को निकालने के कार्य को खनन कहते हैं।

(3) खनिज पदार्थों का भण्डार निश्चित और सीमित होता है। इनका निर्माण अति दीर्घ काल (करोड़ों वर्ष) में होता है और एक बार भूगर्भ से निकाल लेने के बाद वे सदा के लिए समाप्त हो जाते हैं।

(4) धात्विक खनिजों को गलाकर उनसे निर्मित वस्तुएँ अधिक मजबूत और टिकाऊ होती हैं जैसे– लोहा, ताँबा, अल्युमीनियम आदि से निर्मित वस्तुएँ।

(5) खनिज पदार्थों में संचित भण्डार के कम होते जाने, खदानों या खानों की गहराई में वृद्धि होने, उच्च कोटि के धातु सम्पन्नता वाली खनिज राशि के कम होते जाने आदि के कारण खदानें या खानें क्रमशः खर्चीली (मंहगी) होती जाती हैं।

6. खनिज संसाधनों के उत्खनन से सम्बन्धित विविध आयाम

खनिज संसाधनों के उत्खनन से सम्बन्धित भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों काल जुड़े हुए होते हैं और यही कालान्तर में विभिन्न आयामों के माध्यम से उत्खनन को प्रभावित करते हैं। ये आयाम खनिजों के खनन की गति को कम या ज्यादा कर सकते हैं। खनिजों का उपयोग कई प्रकार के उद्योगों में किया जाता है और ये विविध उद्योगों हेतु कच्चे माल के रूप में प्रयोग में लाए जाते हैं। इसके विभिन्न आयामों को हम इन रूपों में देख सकते हैं–

(i) आर्थिक आयाम

खनिजों के उत्खनन को प्रभावित करने में आर्थिक आयाम सबसे महत्त्वपूर्ण और सबसे अपरिहार्य माना जाता है, क्योंकि यदि किसी खनिज की आर्थिक उपयोगिता नहीं होगी तो उसे महत्त्व मिलना सम्भव नहीं होगा। ऐसा देखा ही जाता है जिस खनिज की कीमत जितनी अधिक होती है उसकी माँग उतनी ही अधिक और वह उतना ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। लेकिन आर्थिक रूप से कब महत्त्वपूर्ण खनिजों का खनन उतना विकसित नहीं हो पाया है। खनिजों की आर्थिक उपादेयता ही यह तय करती है कि किसी खनिज को तेजी से या धीमी गति से उत्खनन किया जाएगा। इस प्रकार देखा जा सकता है कि खनिजों के उत्खनन को वहीं गति मिली है जो देश आर्थिक रूप से संसाधन सम्पन्न है और खनिज भी मूल्यवान है, तो उसका खनन तेजी से किया जा रहा है।

(ii) सामाजिक आयाम

खनिजों के खनन को सामाजिक रीतियाँ, सामाजिक परम्परायें, आपसी सम्बन्ध और समाजों में रहने वाले व्यक्तियों के बीच परस्पर सामाजिक सामंजस्य महत्त्वपूर्ण होते हैं। ऐसा देखा गया है कि अफ्रीका महाद्वीप के कई देशों के समाजों में आपसी सामंजस्य न होने के कारण गृह युद्ध की स्थिति बनी रहती है। वह आपस में लड़ते रहते हैं। इससे संसाधन सम्पन्न होने के बावजूद इन देशों में खनन की गतिविधियाँ ठप्प हो जाती हैं। इस आधार पर यह देखा जाता है कि कोई समाज किन मूल्यों के साथ आगे बढ़ रहा है। यदि समाज परम्परागत तरीके से चल रहा है तो खनिजों के उपयोग की मात्रा कम होगी और यदि समाज तथाकथित आधुनिक और उपभोक्तावादी है तो खनिजों के उपयोग को अधिक से अधिक प्रोत्साहन मिलता है, और इससे खनिजों का उत्खनन तेजी से होता है।

(iii) धार्मिक और सांस्कृतिक आयाम

लोगों का रहन–सहन, खान–पान, परम्परायें, धार्मिक मूल्य और धार्मिक विश्वास यह तय करते हैं कि किन प्रकार के खनिजों का उपयोग किया जाएगा और धार्मिक समूह की मान्यता किस प्रकार से है कि खनन की गतिविधियाँ वहाँ संचालित होगी कि नहीं। जैसे अभी हाल ही में भारत के उड़ीसा राज्य में लौह अयस्क के खनन को इसलिए रोकना पड़ा क्योंकि वहाँ रहने वाली जनजाति उस खनिज वाले टीले को अपने इष्ट देव के रूप में स्वीकार करती है। इसी प्रकार से दुनियाँ में तमाम जनजातीय समूह ऐसे हैं जहाँ उनके रीति–रिवाज और धार्मिक मान्यतायें कुछ विशेष प्रकार के खनिजों के उपयोग को प्रतिबन्धित करते हैं। इस प्रकार धार्मिक सांस्कृतिक आयाम भी खनिजों के प्रयोग को प्रोत्साहित या हतोत्साहित करते हैं।

(iv) राजनीतिक आयाम

खनिजों के उत्खनन को राजनीतिक नेतृत्व और नीतियाँ पूरी तरीके से प्रभावित करते हैं। भूमण्डलीकृत अर्थव्यवस्था में देश खनिज संसाधनों हेतु एक–दूसरे पर निर्भर हैं। लेकिन राजनीतिक कारणों से अक्सर ये देखा गया है कि किसी खनिज के उत्पादन को कभी इतना अधिक बढ़ा दिया जाएगा कि उसकी कीमत कम हो जाए और कभी उसके उत्पादन को इतना कम कर दिया जाता है कि उसकी कीमतें कई गुना बढ़ जाती हैं।

पेट्रोलियम पदार्थों के संदर्भ में ऐसा अक्सर देखा जाता है। इसके अलावा स्वर्ण खनन, ताँबा खनन, यूरेनियम खनन, लौह अयस्क इत्यादि के खनन को राजनीति ही प्रभावित करती रहती है। यूरेनियम के खनन हेतु तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर न्यूक्लियर सप्लायर ग्रुप से अनुमति लेनी पड़ती है। न्यूक्लियर सप्लायर ग्रुप में विकसित देशों का ही वर्चस्व है और वह अपने स्वार्थ के अनुसार नीतियों की व्याख्या करते रहते हैं।

(v) पर्यावरणीय आयाम

आज के समय में पर्यावरणीय संकट वैश्विक चुनौती बना हुआ है। इसकी वजह से अनेक प्रकार की चरम घटनायें घटती जा रही हैं। इसीलिए अब ऐसी नीतियों को अपनाने पर बल दिया जा रहा है कि पर्यावरण को कम से कम नुकसान हो। क्योंकि अनियंत्रित और अव्यवस्थित उत्खनन से बहुत से पर्यावरणीय संकट और बीमारियाँ सामने आती हैं। यदि समय रहते पर्यावरण को ध्यान में नहीं रखा गया तो आने वाला समय काफी भयावह हो सकता है और सम्पूर्ण मानवता के लिए एक चुनौती बन सकता है। अक्सर यह देखा गया है कि खनिज संसाधनों का आवश्यकता से अधिक दोहन, उसकी बर्बादी, अव्यवस्थित खनन, खनन के नाम पर जंगलों का सफाया सहित सम्पूर्ण पारिस्थितिकी को तहस–नहस कर दिया जाता है। इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि उत्खनन करते समय पर्यावरणीय दृष्टिकोण को ध्यान में जरूर रखा जाए। यदि ऐसा नहीं किया गया तो आने वाली पीढ़ियों पर केवल समस्यायें रहेंगी, समाधान हेतु विकल्प सीमित हो जाएंगे।

7. उत्खनन को प्रभावित करने वाली दशाएँ एवं कारक

उत्खनन को अनेक प्राकृतिक या भौतिक (physical) तथा आर्थिक एवं मानवीय दशाएं प्रभावित करती हैं–

I. प्राकृतिक या भौतिक दशाएँ (Physical factors)

1. **खनिज का प्रकार (Type of mineral)–** मूल्यवान खनिजों की खोज तथा उत्पादन के सर्वाधिक प्रयास किये जाते हैं, किन्तु साधारण या कम मूल्य वाले खनिजों के उत्पादन पर विचार नहीं किया जाता। आस्ट्रेलिया की मरुभूमि में मूल्यवान् स्वर्ण धातु का उत्पादन साधनों के अभाव में भी किया जा रहा है।

2. **खनिजों की सम्पन्नता (Mineral richness)–** आर्थिक दृष्टि से विभिन्न खनिजों की शोषणीयता में बहुत अन्तर पाये जाते हैं। अधिक सम्पन्न खनिजों का उत्पादन शीघ्रता से किया जाता है।

3. **खनिजों की संचित मात्रा (Reserves of minerals)–** खनिजों के वृहत् भण्डार वाले क्षेत्र अधिक शोषणीय होते हैं, जिनमें दीर्घ अवधि तक उत्पादन सम्भव होता है। छोटे भण्डार क्षेत्र में पूँजी लगाना अनार्थिक सिद्ध होता है।

4. **खनिज भण्डारों की स्थिति (Location of mineral deposits)–** भौगोलिक दृष्टि से बाजार, परिवहन के साधनों से दूरी, पर्वतीय या अधिक गहराई पर खनिजों की स्थिति होने पर उनके उत्पादन पर अधिक व्यय होता है।

5. **खनिजों की संचय–अवस्था (Stage of mineral occurrence)–** खनिजों के स्तर मोटे हैं या वे टूटी फूटी विदीर्ण अवस्था में है, यह तथ्य उनके उत्पादन को प्रभावित करता है।

II. मानवीय दशाएँ (Human factors)

प्राकृतिक दशाओं के अनुकूल होने पर भी खनिजों के उत्पादन के लिए उपयुक्त मानवीय कारकों का होना आवश्यक है, जो कि निम्नलिखित हैं–

1. खनिज उपभोग की आवश्यकता तथा इच्छा मानव समाज द्वारा निर्धारित होती है।

2. लोगों का जीवन स्तर (standard of living of people)।

3. प्राविधिक ज्ञान–स्तर (Level of technology)।

4. आर्थिक विकास स्तर (Level of economic development)

5. सामाजिक–आर्थिक एवं राजनीतिक संगठन (Socio & economic and politcal organisation)।

जीवन स्तर में वृद्धि के साथ विविध खनिजों की माँग बढ़ती है। नयी मशीनों तथा प्राविधिकी के विकास के साथ–साथ नये खनिजों का उत्पादन तथा उपभोग सम्भव होता

है। प्राविधिक ज्ञान वृद्धि (technological development) तथा आर्थिक विकास (economic developement) साथ–साथ चलते हैं। अतः उन्नत देशों में खनिजों की माँग तथा उत्पादन अधिक होता है। इसके अतिरिक्त परिवहन के साधनों, पर्याप्त कुशल तथा अकुशल श्रम (skilled and unskilled labour), पूंजी उपलब्धता तथा संरक्षक सरकारी नीतियाँ भी खनिज उत्पादन पर प्रभाव डालते हैं।

8. खनिज संसाधनों का संरक्षण

आज की औद्योगिक परिस्थिति में खनिजों की अनिवार्यता और अपरिहार्यता ऐसी है कि कब किसी धातु सम्पन्नता वाले खनिजों की माँग या मूल्य बढ़ जाए तो उसकी पूर्ति की सम्भावना कई गुना घट जाती है। तकनीकी तथा संरक्षण की दृष्टि से ऐसा उत्पादन सम्भव हो जाता है कि आगे आने वाले वैज्ञानिक अनुसंधान के चलते, इसकी सम्भावना बढ़ जाती है। निःसंदेह प्रमुख औद्योगिक धातुओं के दबाव जो काफी गहरे खानों से प्राप्त होते हैं। उनमें आज धात्विक सम्पन्नता भी कम होती जा रही है और वह समाप्त भी होते जा रहे हैं।

वर्तमान समय में खनिजों में जो कमी दिखाई दे रही है, इसके कई कारण सामने आते हैं। जैसे– अधिक धातु सम्पन्नता वाले निक्षेप सीमित परिमाण में हैं, अधिक धातु सम्पन्नता वाले जमाव असमान रूप से वितरित हैं, ऐसे खनिज संसाधन दूर–दराज पर्वत, पठारों, जंगलों, नदियों आदि में पाए जाते हैं। वर्तमान आर्थिक–राजनीतिक परिस्थितियों में पूंजी तथा तकनीकी विषमता के कारण अपेक्षाकृत कम विनिमय मूल्य द्वारा सम्पन्न देशों में आवश्यक खनिजों की पूर्ति की जा रही है, ऐसे देशों में जहाँ खनिजों के लिए पूर्ण अन्वेषण हो चुका है, वहाँ भी भू रासायनिक तथा भू भौतिक विधियों द्वारा अन्वेषण नहीं हुआ है। ऐसे देशों में धात्विक सम्पन्नता वाले खनिजों की खोज की आवश्यकता महसूस होती है।

खनिजों की मात्रा निश्चित है और खनिज क्षयशील तथा अनवीकरणीय संसाधन होते हैं और विद्यमान आर्थिक तकनीकी उनकी उपलब्धता की सम्भावना का ठीक–ठीक अनुमान नहीं लगा पा रहे हैं। यदि अनुमान लग भी जाए तो भी इनकी मात्रा निश्चित ही होती है। उसे बढ़ाना आसान नहीं। औद्योगिक क्रान्ति ने खनन क्रान्ति को जन्म दिया इससे खनिज संसाधनों में कमी होती जा रही है। आज के औद्योगिक विकास के लिए खनिज संसाधनों

के अतिशय उपयोग से धरातल पर उनके अस्तित्व के समाप्त होने की आशंका है। इसलिए उनके संरक्षण की आवश्यकता महसूस होती है। इसके लिए संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग किया जाए, जिसमें 3 बिन्दु महत्त्वपूर्ण होते हैं– (1) संसाधनों के निरन्तर दोहन का नियंत्रण, (2) खनिजों का दक्षतापूर्ण उपयोग और (3) खनिजों के विकल्प को तलाशना।

इन विकल्पों के अतिरिक्त खनिज संसाधनों के संरक्षण के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

- नवीन खनिजों का अन्वेषण
- खनन करते समय खनिजों की शून्य बर्बादी
- खनन से प्राप्त खनिजों से अधिकतम धातु को प्राप्त करना।
- खनन करने के पश्चात् खनिजों को बर्बादी से सुरक्षा प्रदान करना।
- खनिजों का बहुचक्रीय उपयोग।
- खनिजों का बहुउद्देश्यीय उपयोग।
- वैकल्पिक खनिजों की खोज।
- ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों की तरफ ध्यान देना।
- निम्न कोटि के खनिजों के उपयोग को बढ़ावा।
- खनिजों के अवशिष्टों का एकत्रीकरण।

9. निष्कर्ष (Conclusion)

खनिजों के निर्माण में निर्माण विधि, धात्विक मिश्रण, निर्माण का समय आदि में विभिन्नता होती है। इसीलिए खनिजों की विशेषतओं में अन्तर पाया जाता है। इन्हीं कारणों से इनके खनन के तरीकों एवं विधियों में भी अन्तर पाया जाता है। लेकिन फिर भी खनिज पदार्थ मनुष्य के लिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आधुनिक प्रौद्योगिकी विकास का आधार खनिज

पदार्थ ही माने जाते हैं। सुई से लेकर हवाई जहाज तक कारखानों में लगी मशीनें, पानी पर तैरते बड़े–बड़े जहाज, ऊँची और बड़ी–बड़ी इमारतें, बड़ी–बड़ी निर्माण गतिविधियाँ, बाँध, सड़कें, हाईवे, एक्सप्रेस वे आदि के निर्माण में विभिन्न प्रकार के खनिजों का उपयोग होता है। कोई देश कितना विकसित होगा, उसके पास संसाधन आधार कितने हैं, ये सब खनिजों पर ही निर्भर करते हैं। यदि मनुष्य के पास खनिज नहीं होता तो आधुनिक सभ्यता की परिकल्पना करना सम्भव नहीं था। मानवता के विकास के लिए इतने अधिक और विविध संसाधनों को जुटाना बिना खनिजों के सम्भव नहीं था। इसीलिए खनिज आधुनिक सभ्यता और मानवता के लिए रीढ़ के समान हैं।

10. मॉडल प्रश्न (Model Questions)

(i) खनिज क्या होते हैं? उनकी विशेषताएँ बताइए।

(ii) खनिज के गुणों की चर्चा करते हुए उनके उत्खनन को प्रभावित करने वाले कारकों की चर्चा कीजिए।

(iii) खनिज संसाधनों के विभिन्न आयामों की चर्चा कीजिए।

(vi) खनिज संसाधनों के संरक्षण के तरीकों को बताइये।

(v) खनिज संसाधन के संचित परिमाण के बारे में संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

11. संदर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व – प्रो0 जगदीश सिंह
2. आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व – डॉ0 अलका गौतम
3. आर्थिक भूगोल – डॉ0 एस0डी0 मौर्य
4. आर्थिक भूगोल – डॉ0 बी0सी0 जाट
5. Economic Geography - Dr. H.M. Saxena

आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व

इकाई–04

विश्व स्तर पर लौह अयस्क, बॉक्साइड, टिन की संचित राशि, उत्पादन, वितरण एवं व्यापार (Globally accumulated volume of Iron ore, Bauxite and Tin, its production, distribution and trade)

पाठ संरचना (Lesson Structure)

1. उद्देश्य (Objectives)
2. विश्व स्तर पर लौह अयस्क की विशेषताएँ, प्रकार, संचित मात्रा, वितरण प्रतिरूप, उत्पादन एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार।
3. विश्व स्तर पर बॉक्साइड के अयस्क, उसकी विशेषतायें, संचित राशि, उत्पादन, वितरण एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार।
4. वैश्विक स्तर पर टिन के अयस्क, इसकी उपयोगिता, संचित राशि, उत्पादन, वितरण एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार।
5. निष्कर्ष (Conclusion)
6. मॉडल प्रश्न (Model Questions)
7. सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

उद्देश्य (Objectives)

1. लौह अयस्क, बॉक्साइड एवं टिन की विशेषताओं को जानेंगे।
2. लौह अयस्क, बॉक्साइड एवं टिन के प्रकार को समझेंगे।

3. लौह अयस्क, बॉक्साइड एवं टिन के संचित भण्डार, उत्पादन एवं वितरण प्रतिरूप को जानेंगे।

4. लौह अयस्क, बॉक्साइड एवं टिन के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार प्रतिरूप को समझेंगे।

प्रस्तावना

खनिज वह पदार्थ होते हैं जो खनन क्रिया से प्राप्त होते हैं। इनका निर्माण अजैव प्रक्रियाओं द्वारा होता है। धातु युक्त खनिजों में धातुऐं अलग–अलग अनुपात में पिण्ड के रूप में तथा विभिन्न अनुपातों में मिश्रण के रूप में पाए जाते हैं। खनिजों के निर्माण प्रक्रिया विभिन्न तत्वों के मिश्रण, निर्माण की समयावधि, भौतिक गुण इत्यादि में विभिन्नता के कारण खनिजों के गुणों, विशेषताओं तथा उपयोगों में भिन्नता पायी जाती है। इन्हें धात्विक खनिज और अधात्विक खनिज, दो वर्गों में बाँटकर अध्ययन किया जाता है।

लौह अयस्क का उपयोग मानव द्वारा प्राचीन काल से ही किया जा रहा है। लेकिन वर्तमान समय में इसके उपयोग में काफी विविधता आयी है। यही कारण है कि ये वर्तमान समय में काम आने वाले छोटे–से–छोटे यन्त्र से लेकर बड़ी–बड़ी मशीनों के रूप में निर्मित होकर सामने आता है। गुणवत्ता की दृष्टि से भी लौह अयस्क 4 प्रकार के होते हैं और इनका वितरण विश्व स्तर पर समान नहीं मिलता है। बाक्साइड खनिज अपने आपमें एक महत्त्वपूर्ण खनिज है और एल्यूमिनियम उद्योग का आधार है। एल्यूमिनियम एक बहु–उपयोगी धातु है जिसका उपयोग विद्युत एवं संचार उद्योगों, धातु उद्योगों, बर्तन, रेफ्रीजरेटर, फर्नीचर, मोटर वाहन, जलयानों, वायुयानों तथा रेलवे आदि के निर्माण में किया जाता है। इसी प्रकार टिन एक धातुवर्द्धक धातु है जिससे पतली चादरें बनायी जाती हैं। टिन का उपयोग कांसा बनाने, कंकड़ अक्षरों को ढालने, मोटर वाहन निर्माण, वायुयान निर्माण, विद्युत उपकरणों के निर्माण में उपयोग में लाया जाता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि टिन एक बहु–उपयोगी धातु है।

लौह अयस्क

आधुनिक युग मशीनों का युग है। लोहे का प्रयोग सभी मशीनों, उपकरणों, वाहनों, रेफ्रिजरेटरी, इमारतों, पुलों आदि के निर्माण में किया जाता है। वस्तुतः लोहे का महत्व अन्य धातुओं की अपेक्षा इसकी मजबूती तथा टिकाऊपन के कारण है। विभिन्न अनुपातों में अन्य धातुओं के साथ मिश्रित करके अधिक टिकाऊ, मजबूत तथा विशेष गुणधर्मी बनाया जा सकता है।

लौह अयस्क के प्रकार–

1. हेमेटाइट (Hametite – Fe_2O_3) – लोहांश 50% से 65% तक
2. मैग्नेटाइट (Magnetite – Fe_3O_4) – लोहांश 70% तक
3. लिमोनाइट (Limonite – $2Fe_2O_3H_2O$) – लोहांश 50% तक
4. सिडेराइट (Siderite – $FeCO_3$) – लोहांश 20% से 30% तक

संचित राशि–

पृथ्वी के ऊपरी भाग अर्थात् भू–पटल के निर्माण में लौह का 5 प्रतिशत भाग होता है। लेकिन सम्पूर्ण पृथ्वी के निर्माण में लौह का प्रथम स्थान (35 प्रतिशत) है। उच्च धातु सम्पन्नतायुक्त लौह का संचित भण्डार लगभग 170 अरब मीटरी टन है। इसका लगभग 25 प्रतिशत भाग पश्चिमी यूरोप एवं उत्तरी अमेरिका में, 25 प्रतिशत भाग रूस एवं पूर्वी यूरोपीय देशों में, 20 प्रतिशत दक्षिणी अमेरिकी देशों में एवं शेष 20 प्रतिशत दक्षिणी–पूर्वी एवं पूर्वी एशिया के देशों में पाया जाता है। कच्चे लौह अयस्क जमाव की दृष्टि से आस्ट्रेलिया प्रथम तथा रूस द्वितीय स्थान पर है।

सारणी– विश्व के प्रमुख देशों में लौह अयस्क का संचित भण्डार (मिलियन मीट्रिक टन) 2017

देश	संचित भण्डार	
	कच्चा अयस्क	लौह तत्त्व
1. संयुक्त राज्य अमेरिका	2900	760
2. आस्ट्रेलिया	50000	24000
3. ब्राजील	23000	12000
4. कनाडा	6000	2300
5. चीन	21000	7200
6. भारत	8100	5200
7. इरान	2700	1500
8. कजाखस्तान	2500	900
9. रूस	25000	14000
10. द0 अफ्रीका	1200	770
11. स्वीडेन	3500	2200
12. यूक्रेन	6500	2300
13. अन्य देश	18000	9500
कुल विश्व	**170000**	**83000**

Source: U.S. Department of Mineral Summary, 2018

लौह अयस्क का विश्व उत्पादन

लौह अयस्क के उत्पादन में 20वीं शताब्दी के मध्यावधि से तीव्रता आयी है। सन् 1948 में विश्व में कुल लौह अयस्क का उत्पादन 1035 करोड़ टन था जो बढ़कर 1990 में 58.70 करोड़ टन हो गया। सन् 1998 में विश्व में 104.50 करोड़ टन तथा सन् 2017 में 240 करोड़ टन लौह अयस्क का उत्पादन हुआ है। विगत दशक में रूस, ब्राजील, कनाड़ा, संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, चीन, स्वीडेन, भारत और फ्रांस क्रमशः सर्वाधिक उत्पादन करने वाले राष्ट्र थे। लेकिन वर्तमान दशक में यूरोपीय व अमेरिकी देशों की जगह एशियाई एवं अफ्रीकी देश उत्पादन में आगे निकले हैं। वर्तमान में आस्ट्रेलिया सर्वाधिक लौह अयस्क उत्पादन करने

वाला देश बन गया है। इसके उपरान्त क्रमशः ब्राजील, चीन, भारत, रूस, यूक्रेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिणी अफ्रीका, कनाडा तथा स्वीडन आते हैं।

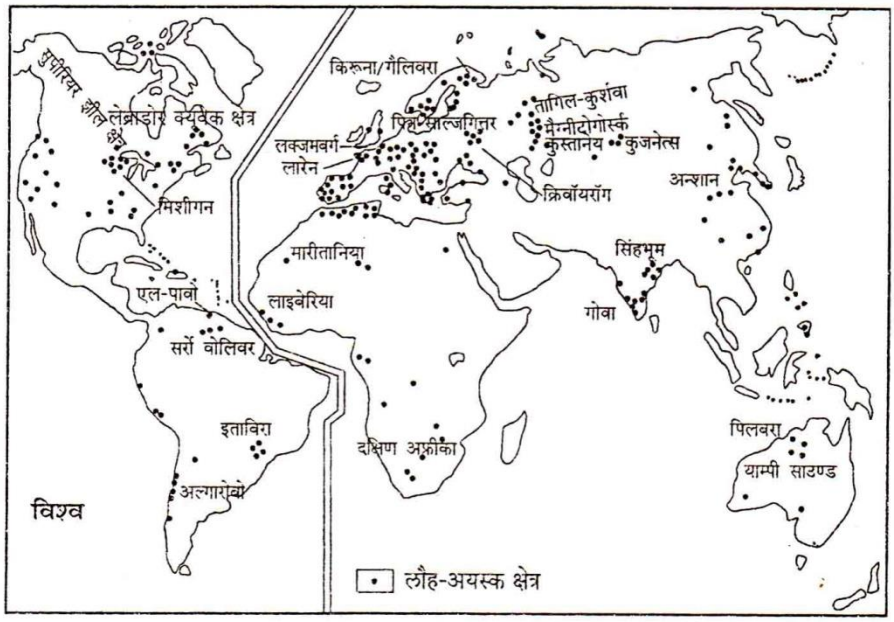

चित्र–1 : विश्व के प्रमुख लौह–अयस्क उत्पादक क्षेत्र

सारणी– विश्व के प्रमुख देशों में लौह–अयस्क का उत्पादन

विश्व	2017 में क्रम	विश्व का प्रतिशत		उत्पादन (मिलियन मीट्रिक टन में)	
		1975	2005	2016	2017
1. आस्ट्रेलिया	1	12.2	18.4	858	880
2. ब्राजील	2	9.2	19.7	430	444
3. चीन	3	6.5	24.3	348	340
4. भारत	4	5.2	9.2	185	190
5. रूस	5	25.4	6.3	101	103
6. यूक्रेन	7	–	4.5	63	63
7. सं.रा.अमेरिका	8	9.8	3.6	42	46
8. दक्षिण अफ्रीका	6	1.5	2.6	68	68
9. कनाडा	9	5.5	2.0	47	47
10. स्वीडेन	12	6.5	1.5	27	27

11. कजाकिस्तान	11	—	1.3	34	34
12. ईरान	10	—	1.1	35	35
13. अन्य देश	—	—	—	116	110
कुल विश्व				2350	2400

Source: U.S. Geological Survey 2006, U.S. Department of Mineral Commodity Summary, 2018, P. 89.

(1) आस्ट्रेलिया

आस्ट्रेलिया लौह उत्पादन की दृष्टि से सन् 2017 में प्रथम स्थान पर आ गया है। आस्ट्रेलिया का अधिकांश उत्पादन पश्चिमी भाग में पर्थ से 1200 किमी0 दूर स्थित पिलबारा क्षेत्र एवं 1000 किमी0 दूर स्थित हैमस्ले खदान एवं गोल्डम नदी खदान से होता है। पिलबारा क्षेत्र में माउन्ट टोम राइस व माउण्ट न्यूमेन तथा इसके उत्तर में माउण्ट गोल्डसवर्थी मुख्य खनन केन्द्र हैं। कुछ उत्पादन उत्तरी भाग में स्थित है। इनके अलावा क्लीवलैण्ड, टस्मानिया एवं दक्षिण आस्ट्रेलिया में स्थित मिडिलबैंक रेंज, आयरन नॉब (Iron Knob) एवं सिडनी क्षेत्र प्रमुख उत्पादक क्षेत्र हैं। आस्ट्रेलिया में उत्पादित अधिकांश लौह, अयस्क का जापान को निर्यात कर दिया जाता है।

(2) ब्राजील

ब्राजील दक्षिण अमेरिका महाद्वीप का प्रमुख लौह उत्पादक देश है। ब्राजील का लौह उत्पादन 1992 में 14.6 करोड टन था, जो 2017 में बढ़कर मात्र 44.4 करोड़ टन हो गया है। ब्राजील वर्तमान समय में लौह उत्पादन की दृष्टि से विश्व का दूसरा प्रमुख लौह उत्पादक देश है।

ब्राजील का मिनास गेरास राज्य प्रमुख लौह उत्पादक राज्य है। संचित भण्डार की दृष्टि से भी यह राज्य ब्राजील का प्रमुख राज्य है। इस राज्य का माउन्ट इताबिरा क्षेत्र प्रमुख लौह उत्पादक क्षेत्र है जहाँ ब्राजील के लौह उत्पादन का अधिकांश प्राप्त होता है। ब्राजील में काराजोस एवं इण्डियन जमाव क्षेत्र प्रमुख है, जो अमेजन की सहायक जिंग नदी के पूर्व में स्थित है तथा साओ लुइस बन्दरगाह तक रेल मार्ग से जुड़े हैं। तकनीकी एवं औद्योगिक

विकास की कमी के कारण ब्राजील अपने उत्पादन का अधिकांश भाग निर्यात कर देता है। यहाँ से मुख्यतः संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी तथा फ्रांस को निर्यात किया जाता है।

(3) चीन

वर्तमान समय में लौह–अयस्क के उत्पादन में ब्राजील के बाद चीन विश्व में तीसरे स्थान पर चला गया है। 2017 में चीन में 340 मिलियन टन लौह अयस्क का उत्पादन हुआ। चीन में पाए जाने वाले लौह अयस्क की धातु सम्पन्नता लगभग 35 प्रतिशत पायी जाती है। चीन में लौह धातु का उत्पादन 1960 के बाद विश्व के अन्य देशों की तुलना में अत्यधिक तीव्र गति से हुआ है। चीन के प्रमुख लोह उत्पादक क्षेत्र निम्नांकित हैं–

(i) दक्षिणी मंचूरिया – यहाँ चीन के कुल संचित भण्डार का 50 प्रतिशत पाया जाता है। दक्षिण मंचूरिया के प्रमुख लोहा उत्पादक प्रदेश अशांन, चांगलिंग तथा पेंकी क्षेत्र प्रमुख हैं।

(ii) अन्य क्षेत्र – कुछ लौहा उत्पादक क्षेत्र हैनान द्वीप, चा–हार, होनान, हुपे, सांतुंग अन्तरीय, हैकांऊ, कासू, शिकांग, ग्वेची, आन्तरिक मंगोलिया, खुइयुआन बुहान क्षेत्र आदि प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त शांशी क्षेत्र में भी छिटपुट स्थानों पर लौह अयस्क पाया जाता है।

(4) भारत

यहाँ के कुल लौह अयस्क जमावों का 59 प्रतिशत हैमेटाइट किस्म का है। देश में निकाले जा सकने योग्य हैमेटाट लौह अयस्क का लगभग 1231.7 करोड़ टन भण्डार स्वीडेन, ब्रिटेन, भारत, फ्रांस व जर्मनी से प्राप्त होता है। विश्व के 25 प्रतिशत लौह अयस्क का भण्डार भारत में मौजूद है। प्रमुख क्षेत्र– उड़ीसा (मयूरभंज, क्योंझर, सुन्दरगढ़), झारखण्ड (सिंहभूम), मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ (बस्तर का बैलाडीला एवं दुर्ग का डल्ली राजहरा), कर्नाटक (चिकमंगलूर, चित्रदुर्ग, बेल्लारी) आदि।

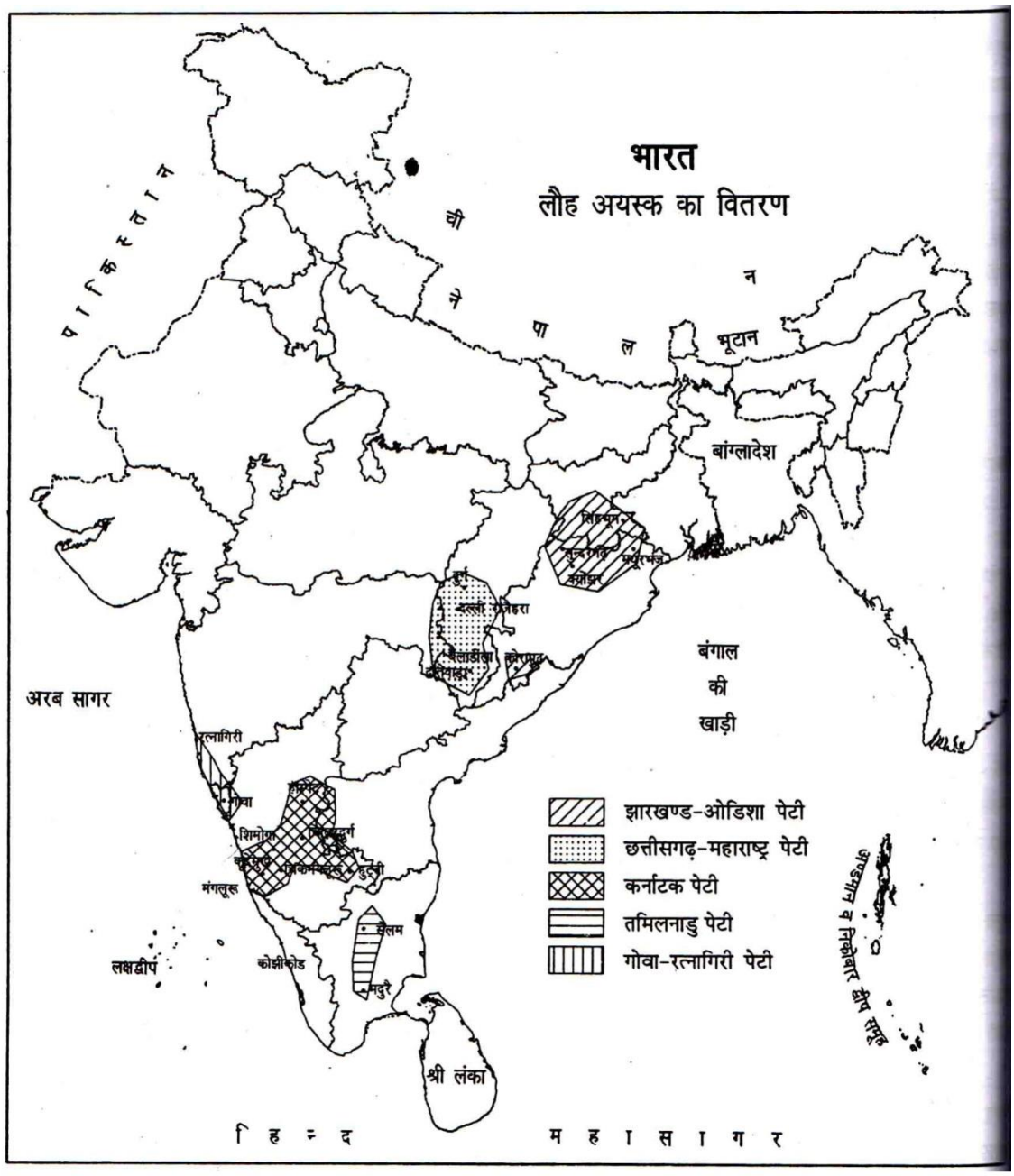

चित्र–2 : भारत के प्रमुख लौह–अयस्क उत्पादक क्षेत्र

रूस एवं सी.आई.एस.

यहाँ उच्च कोटि का हैमाटाइट लौह अयस्क विशाल मात्रा में पाया जाता है। रूस में, अनुमानतः विश्व का सबसे बड़ा लौह–अयस्क का भण्डार है। प्रमुख उत्पादक क्षेत्र हैं–

(i) यूक्रेन–क्रिवॉयरॉग क्षेत्र

(ii) यूराल क्षेत्र– द0 में मैग्निटोगर्स्क, मध्य में येकटेरीनबर्ग एवं उ0 में निझनी तागील।

(iii) मध्य साइबेरिया–कुजबास क्षेत्र

(iv) पूर्वी साइबेरिया–अंगारा क्षेत्र

(v) पश्चिमी साइबेरिया – ओस्स्क क्षेत्र।

(vi) कुर्स्क एवं कर्च प्रायद्वीप

(vii) कजाकिस्तान – कटनाई क्षेत्र

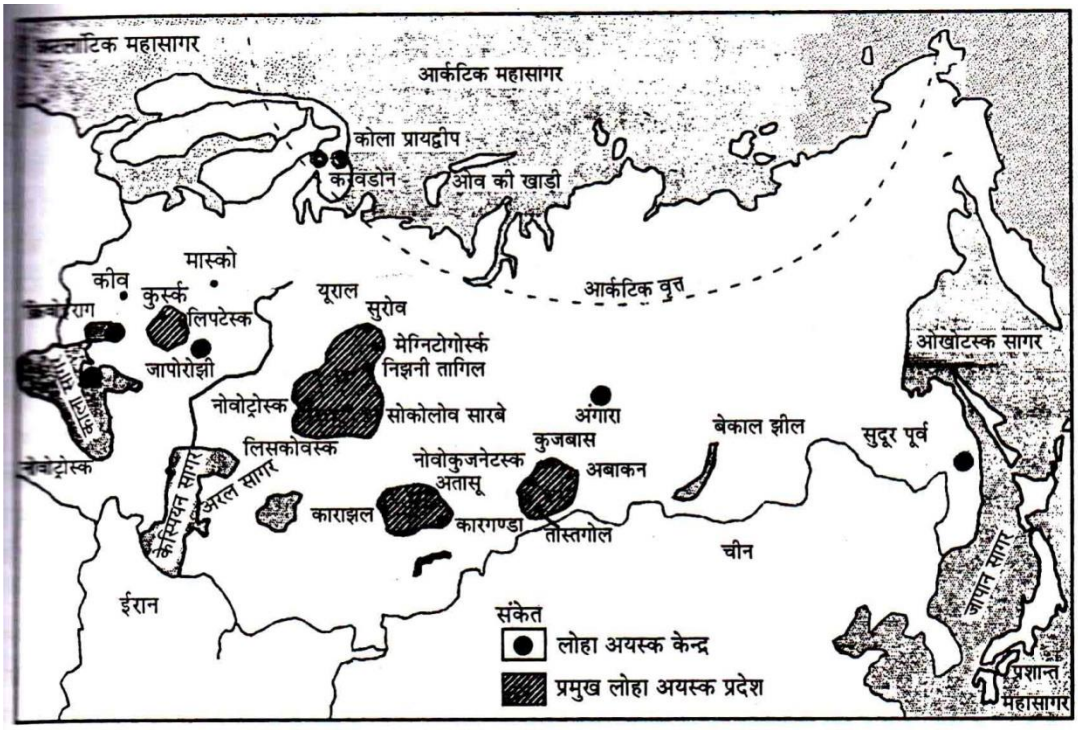

चित्र–2 : रूस एवं सी.आई.एस. के प्रमुख लौह–अयस्क उत्पादक क्षेत्र

संयुक्त राज्य अमेरिका

यहाँ लोहे की खानें मुख्य रूप से मिनेसोटा, मिशिगन एवं अलाबामा राज्यों में स्थित हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका का 90 प्रतिशत से भी अधिक लोहा हेमाटाइट किस्म का है।

(i) सुपीरियर झील क्षेत्र– यहाँ की मेसाबी खान विश्व की सबसे बड़ी खानों में एक है, जिसका उच्च कोटि का लौह भंडार लगभग समाप्तप्राय है, जबकि निम्न कोटि का भंडार विशाल परिमाण में मौजूद है। अन्य खाने–मैसाबी रेंज, वार्मिलियन, मिनोमिनी, मरकेटी, गोजेबिक एवं कुयाना।

(ii) दक्षिणी अप्लेशियन या अलाबामा क्षेत्र– बर्मिंघम, अलबामा।

(iii) उत्तर–पूर्वी अप्लेशियन क्षेत्र– न्यूयार्क, पेंस्लिवेनिया, न्यू जर्सी को अदिरेन डाक, कार्निवाल, डोगारफील्ड आदि।

(iv) पश्चिमी क्षेत्र– आयरन माउण्टेन तथा डेजर्ट माउण्टेन (यूटा), इंगिल माउण्टेन (कैलिफोर्निया) एवं डेंगरफोल्ड (उ0–पूर्वी टेक्सास प्रांत)।

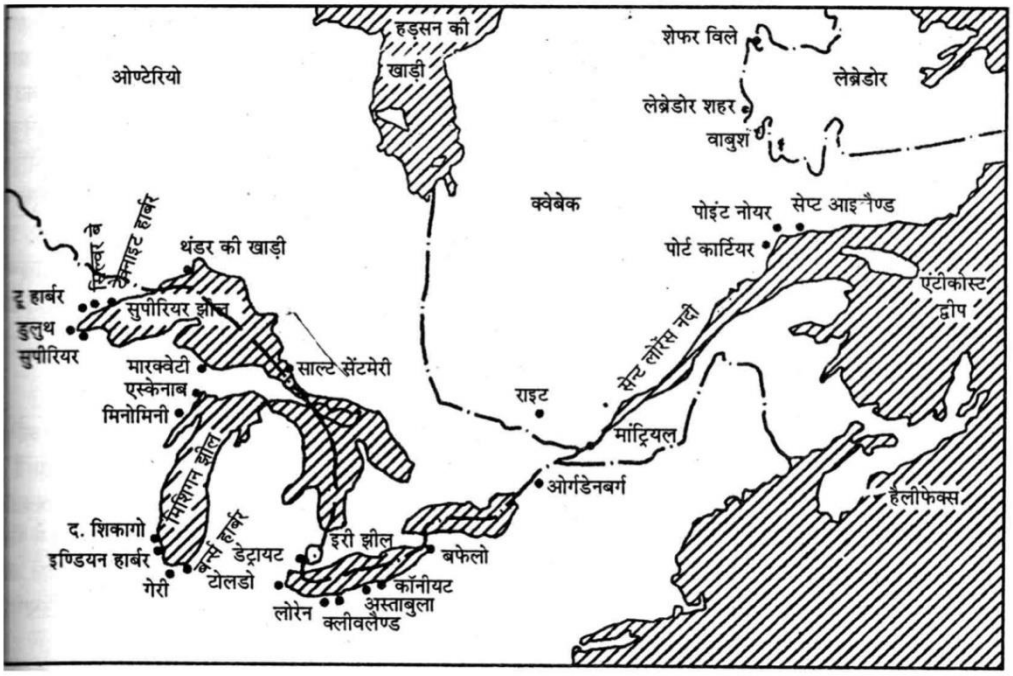

चित्र–3 : संयुक्त राज्य अमेरिका एवं कनाडा के प्रमुख लौह–अयस्क उत्पादक क्षेत्र

कनाडा

यहाँ लोहे की खानें ऑटेरियो, नोवा–स्कोशिया, अल्बर्टा एवं बैंकूवर द्वीप में स्थित हैं। प्रमुख क्षेत्र–

(i) महान झील प्रदेश– स्टीप रॉक।

(ii) क्यूबेक– राइट (Wright), सेप्ट (Sept Iles)

(iii) लैब्राडोर– शेफरविले।

फ्रांसः (i) लॉरेन, (ii) नॉरमाडी, (iii) पिरेनीज

लॉरेन में यूरोप का सर्वाधिक संचित भंडार पाया जाता है। फ्रांस के कुल लौह अयस्क उत्पादन का 95 प्रतिशत यहीं से प्राप्त होता है।

स्वीडेनः स्वीडन में उच्च कोटि का लौह अयस्क पाया जाता है। प्रमुख क्षेत्र : (i) किरूना एवं गैलीवारा (उत्तरी भाग में) (ii) डेनेमोरा (द0 भाग में)।

ब्रिटेन : यहाँ लोहे का निक्षेप मुख्यतः पूर्वी इंग्लैंड में पाया जाता है। प्रमुख क्षेत्र उ0 लंकाशायर, यार्कशायर, लिंकन शायर, नादम्बरलैंड, ईस्ट मिडलैण्डस क्लीवलैंड की पहाड़ियाँ आदि।

जर्मनी : यहाँ लोहे का निक्षेप सीजरलैंड घाटी एवं बेसारलैंड घाटी में पाया जाता है। सार एवं वेस्टफोलिया क्षेत्र लौह अयस्क उत्पादन के लिए प्रसिद्ध हैं।

दक्षिण अमेरिकाः चिली में अल–टोफो, वेनेजुएला में एल्पाओं एवं सोरोवोलिवार तथा अर्जेन्टीना में अमशनस क्षेत्र में लौह अयस्क का उत्पादन किया जाता है।

अफ्रीकाः यहाँ द0अफ्रीका (ट्रांसवाल, उत्तरी केप एवं नेटाल), लाइबेरिया, सियरा–लियोन, अल्जीरिया, मोरक्को, ट्यूनीशिया में लौह अयस्क का निक्षेप पाया जाता है।

स्पेनः बिलवाओ, सेंटाडर, गैबून आदि।

जापानः होकैडो द्वीप का दक्षिणी भाग (मुरोरान) एवं होंशू द्वीप का उत्तर–पूर्वी भाग (केमेशी क्षेत्र की सेनिन खान)।

उपरोक्त देशों के अलावा उत्तरी कोरिया (मुसान क्षेत्र) मलेशिया (त्रेगानु क्षेत्र), मेक्सिको (दुरांग क्षेत्र), फिलीपींस (मिन्डनाओ) में भी लौह अयस्क के संचित भंडार पाये जाते हैं।

लौह का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

सम्पूर्ण विश्व में उत्पादित लौह धातु का लगभग एक–तिहाई भाग का विभिन्न देशों के मध्य आदान–प्रदान होता है। वर्तमान समय में बड़े जलयानों के निर्माण के कारण लौह धातु का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तीव्र गति से बढ़ रहा है। जापान विश्व में लौह अयस्क के आयात की दृष्टि से प्रथम स्थान पर है। यह अपनी आवश्यकता का लगभग 90 प्रतिशत लौह अयस्क का आयात करता है। जापान में आयातित लौह अयस्क के प्रमुख निर्यातक देश भारत, पीरू, ब्राजील, चिली, मलेशिया एवं आस्ट्रेलिया हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का दूसरा प्रमुख लौह अयस्क आयातक देश है। वेनेजुएला, कनाडा, चिली, ब्राजील एवं लाइबेरिया संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए प्रमुख निर्यातक देश हैं। विश्व के अन्य प्रमुख लौह आयातक देश जर्मनी, ब्रिटेन, चेक गणराज्य, पोलैण्ड, इटली, लक्जेम्बर्ग, बेल्जियम एवं प्रमुख निर्यातक देश लाइबेरिया, वेनेजुएला, ब्राजील, भारत, आस्ट्रेलिया, चिली, मारीटानिया, पीरू तथा स्वीडन हैं।

बाक्साइट

यह खनिज भूगर्भ से खनिज (अयस्क) के रूप में निकाला जाता है और उसे कारखाने में पीस कर साफ किया जाता है। बाक्साइट एक मृत्तिकामय खनिज है जिसमें सिलिका कम और अल्युमिना अपेक्षाकृत् अधिक पायी जाती है। बाक्साइट अयस्क में मिले हुए अपद्रव्यों– लोहा, सिलिका आदि को कास्टिक सोडा, चूना आदि के द्वारा अलग किया जाता है। शोधन के पश्चात् श्वेत रंग की धातु प्राप्त होती है जिसे 'अल्यूमिनियम' के नाम से जाना जाता है। आर्थिक दृष्टिकोण से 60 प्रतिशत से अधिक अल्युमिनायुक्त बाक्साइट को उत्तम माना जाता है। आर्थिक उपयोगिता के अनुसार बाक्साइट की तीन प्रमुख किस्में हैं– (1) बोटामाइट (58 प्रतिशत अल्युमिना), (2) गिवराइट (65 प्रतिशत अल्यूमिना) और (3) डायस्कोर (85 प्रतिशत अल्युमिना)। इनके अतिरिक्त कोरन्डम, सिलिमानाइट तथा कियानाइट खनिजों में भी अल्युमिना पायी जाती है। अतः इसका खनन प्रायः खुली खदान विधि से किया जाता है।

वर्तमान काल में अल्युमिनियम एक अत्यंन्त उपयोगी धातु है। एल्यूमिनियम उद्योग का आधार है। यह उष्ण एवं उपोष्ण कटिबन्धीय भाग में अधिकतम पाया जाता है। एल्यूमिनियम

धातु अधिकतर धरातल के पास ही पाए जाते। विश्व में 2018 तक बाक्साइट के कुल भण्डार अफ्रीका (32.1), ओशेनिया (23.1), दक्षिणी अमेरिका एवं कैरिबियन (21.1), एशिया (18.1) तथा अन्य (6.1) में 55 से 75 बिलियन टन आकलित किया गया है। (USGS, 2018)

बॉक्साइट उत्पादन का विश्व में वितरण प्रतिरूप

1990 से पूर्व बॉक्साइट का उत्पादन विश्व में अधिक तीव्र गति से नहीं होता था, लेकिन 1990 के बाद विमान उद्योग में एवं अन्य उद्योगों में एल्यूमिनियम की बढ़ती माँग के कारण बॉक्साइट के उत्पादन में अत्यधिक तीव्रता आयी है। वर्तमान में विश्व में बॉक्साइट का कुल उत्पादन 16.5 करोड़ टन होता है, जिसका 1/3 भाग अकेला आस्ट्रेलिया उत्पादित करता है।

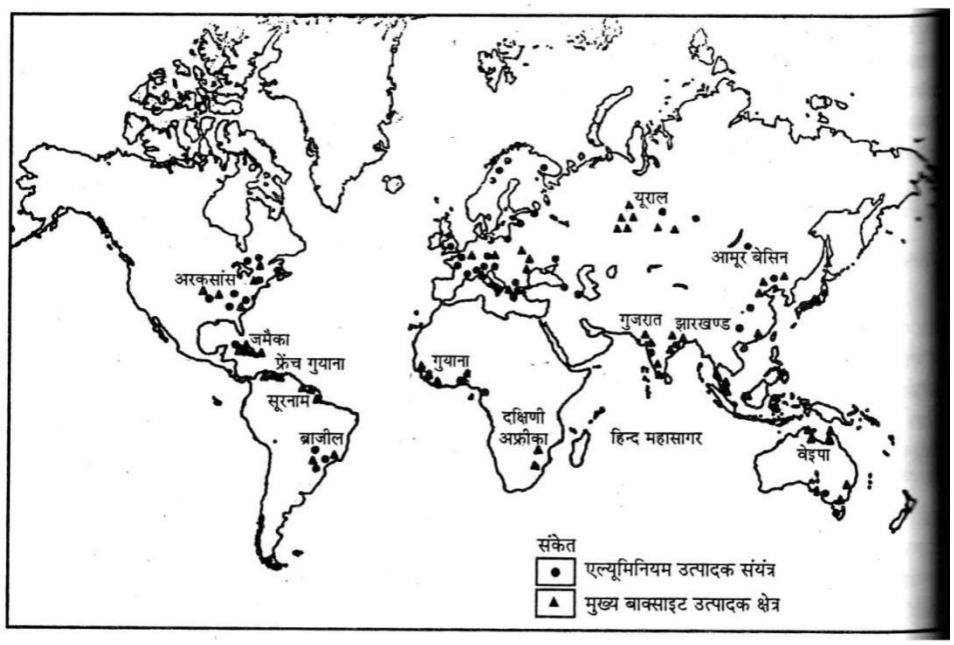

चित्र–4 : विश्व के प्रमुख बाक्साइट उत्पादक क्षेत्र

आस्ट्रेलिया – विश्व में कुल बॉक्साइट उत्पादन का 35.1 प्रविशत भाग उत्पादित करके आस्ट्रेलिया प्रथम वृहत्तम उत्पादक देश है। आस्ट्रेलिया में बॉक्साइट के उत्पादन एवं संचित भण्डार की दृष्टि से क्वींसलैण्ड प्रान्त के केपयार्क प्रदेश में स्थित वाइपा क्षेत्र सम्पूर्ण विश्व में महत्त्वपूर्ण हैं। वाइपा क्षेत्र के समीप स्थित आर्नहेम लैण्ड क्षेत्र के मध्य स्थित गीव थान क्षेत्र भी बॉक्साइट उत्पादन की दृष्टि से प्रमुख हैं।

मध्य तथा दक्षिणी अमेरिका– दक्षिण अमेरिका महाद्वीप का ब्राजील 10.9 प्रतिशत उत्पादन के साथ बॉक्साइट उत्पादन विश्व में इसका वृहत्तम उत्पादक देश है। ब्राजील के आन्तरिक भाग में स्थित मैदानी प्रदेश में ब्राजील का अधिकांश बॉक्साइट उत्पादित किया जाता है।

सूरीनाम विश्व के कुल बॉक्साइट उत्पादन का 2.7 प्रतिशत उत्पादन करता है । इसके प्रमुख यॉक्साइट उत्पादक क्षेत्र सूरीनाम एवं कोहिका नदियों के प्रवाहित मार्ग में पाया जाता है। इसके अलावा कैरीबियन सागर के तटवर्ती भाग में भी बॉक्साइट की कुछ मात्रा पायी जाती है। जमैका विश्व के कुल उत्पादन का 8.5 प्रतिशत बॉक्साइट का उत्पादन करके विश्व में छठा वृहत्तम उत्पादक बन गया है। जमैका के बॉक्साइट उत्पादक क्षेत्र तटवर्ती भाग एवं आन्तरिक भाग में स्थित हैं।

सारणी– विश्व के प्रमुख देशों में बॉक्साइट का उत्पादन

देश	संचित भण्डार	उत्पादन (हजार मी0टन में)	
		2016	2017
1. आस्ट्रेलिया	6000	82.0	83.0
2. ब्राजील	2600	34.4	36.0
3. चीन	1000	65.0	68.0
4. गिनी	7400	31.5	54.0
5. भारत	830	23.9	27.0
6. जमैका	2000	8.54	8.1
7. रूस	500	4.43	5.6
8. वियतनाम	3700	1.2	2.0
9. कजाखस्तान	160	5.0	5.0
10. यूनान	250	1.8	1.8
11. गुयाना	850	1.7	1.5

12. इण्डोनेशिया	1000	1.4	3.6
13. मलेशिया	110	1.0	1.0
14. सउदी अरब	210	3.84	3.9
15. अन्य देश	3200	3.1	2.7
विश्व	30,000	275	300

Source: U.S. Geological, Mineral Commodity Summary, 2018, P. 31.

गुयाना का उत्पादन विश्व का 0.57 प्रतिशत है । इसके उत्पादक प्रदेश समुद्र तटीय भाग में एवं मध्य आन्तरिक भाग में देमेदरा एवं बरविश नदियों की घाटियों में परतों के रूप में पाया जाता है। गुयाना अपने उत्पादित बॉक्साइट के अधिकतम भाग को निर्यात कर देता है। पूर्व सोवियत संघ के यूराल प्रदेश के पूर्वी भाग में स्थित स्वेर्डलोवस्क से ओर्स्क तक का प्रदेश, मध्य यूराल में सेरोव, कर्मेस्क क्षेत्र, मास्को, तिखविन, यूक्रेन आदि प्रमुख बॉक्साइट उत्पादक प्रदेश हैं। अफ्रीका महाद्वीप में स्थित गिनी विश्व में चौथा वृहत्तम उत्पादक देश है। गिनी में बॉक्साइट उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र कोनाकी बन्दरगाह का पृष्ठ प्रदेश एवं कास्या क्षेत्र में होता है। गिनी का लगभग सम्पूर्ण बॉक्साइट का उत्पादन इसी क्षेत्र में होता है।

घाना भी विश्व का प्रमुख बॉक्साइट उत्पादक देश है। कुमासी के दक्षिण–पश्चिम भाग में स्थित अफोह क्षेत्र प्रमुख बॉक्साइट उत्पादक प्रदेश हैं। कैमरून का डौनाला एवं सियरालिओ क्षेत्र तथा जायरे का आन्तरिक भाग भी मुख्य उत्पादक प्रदेश है।

भारत, चीन, मलेशिया आदि भी बॉक्साइट के छोटे उत्पादक देश हैं। भारत में बॉक्साइट के संचित भण्डार 830 हजार टन है। प्रमुख उत्पादक क्षेत्र मध्य प्रदेश में सरगुजा, शहडोल, जबलपुर क्षेत्र, झारखण्ड–ओडिशा, गुजरात में जामनगर, कच्छ, सूरत क्षेत्र, कर्नाटक में बेलगाँव एवं बाबाबदून की पहाड़ी क्षेत्र प्रमुख एल्यूमिनियम उत्पादक क्षेत्र हैं।

इण्डोनेशिया के सुमात्रा की बहिद्वीप में स्थित विन्टम द्वीप में देश का सम्पूर्ण बॉक्साइट संचित है। चीन में हुनान, ग्वेचो एवं जेवनान प्रदेश उत्पादन एवं संचित भण्डार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं।

विश्व के अन्य बॉक्साइट उत्पादक देश

अन्य बॉक्साइट उत्पादक देशों में रूस का यूराल पर्वत पूर्वी भाग में उर्स्क तक बॉक्साइट के भण्डार मिलते हैं। यहाँ सरोव प्रमुख क्षेत्र है। इसके अतिरिक्त साइबेरिया का कोला प्रायद्वीप, टूलोन के उत्तर में स्थित ब्रिग्नोल्स क्षेत्र, यूगोस्लाविया एड्रियाटिक सागर के डालमेशिनय तट का इस्त्रीयन, हंगरी के उत्तर–प्रदेश में बरटैस पर्वत तथा बेकौनी, यूनान में कोरिथ की खाड़ी के उत्तर में माउण्ट पेरानास क्षेत्रों में बॉक्साइट का उत्पादन होता है।

बॉक्साइट का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

बॉक्साइट का निक्षेप अधिकतर विकासशील देशों में ही पाया जाता है। लेकिन तकनीकी विज्ञान के अभाव की वजह से ये देश उत्पादित अधिकांश बॉक्साइड का निर्यात कर देते हैं। जमैका, सूरीनाम, गुयाना, गिनी, घाना आदि प्रमुख बॉक्साइड निर्यातक देश हैं। जबकि जापान, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, जर्मनी, ब्रिटेन, रूस, इटली आदि प्रमुख आयातक देश हैं।

टिन

प्राचीन काल से ही टिन का उपयोग ताँबे के साथ मिलाकर कांसा बनाने में किया जाता रहा है। वर्तमान समय में टिन का उपयोग टिन प्लेट बनाने में, उद्योगों में मोटर आदि में, वायुयान, विद्युत उद्योगों में एवं आजकल विभिन्न प्रकार के रसायन उद्योगों में भी टिन का उपयोग किया जाता है। टिन की प्रमुख धातु केसिटेराइट अथवा टिनस्टोन है जिसमें 75 प्रतिशत तक धात्विक सम्पन्नता पायी जाती है। यह आग्नेय तथा कायांतरित शैलों की शिराओं तथा लोड्स में मिलती हैं। विश्व के 80 प्रतिशत जमाव जलोढ़ निक्षेपों में मिलते हैं जिसके कारण इसका खनन प्लेसर विपि (Placer Method) से किया जाता है। अनुमानित आकलनों के अनुसार विश्व में टिन का कुल संचित भण्डार 80 लाख टन है, जिसका सर्वाधिक भाग दक्षिणी एवं पूर्वी एशिया महाद्वीप में पाया जाता है।

सारणीः विश्व के प्रमुख देशों में टिन का उत्पादन, 2017

देश	संचित भण्डार (000 टन)	उत्पादन (000 टन)
1. चीन	1100	100.0
2. इण्डोनेशिया	800	50.0
3. पेरू	105	18.0
4. बोलीविया	400	18.0
5. ब्राजील	700	25.5
6. वियतनाम	11	5.4
7. रूस	350	1.0
8. कांगो	150	5.8
9. मलेशिया	250	4.0
10. आस्ट्रेलिया	490	7.0
11. थाईलैण्ड	170	0.7
12. म्यांमार	113	50
13. लाओस	—	1.0
14. नाइजीरिया	—	2.5
15. रवांडा	—	1.5
16. अन्य देश	180	2.0
विश्व	**4800**	**290**

Source: U.S. Geological, Mineral Commodity Summary, 2018, P. 173.

विश्व उत्पादन प्रतिरूप

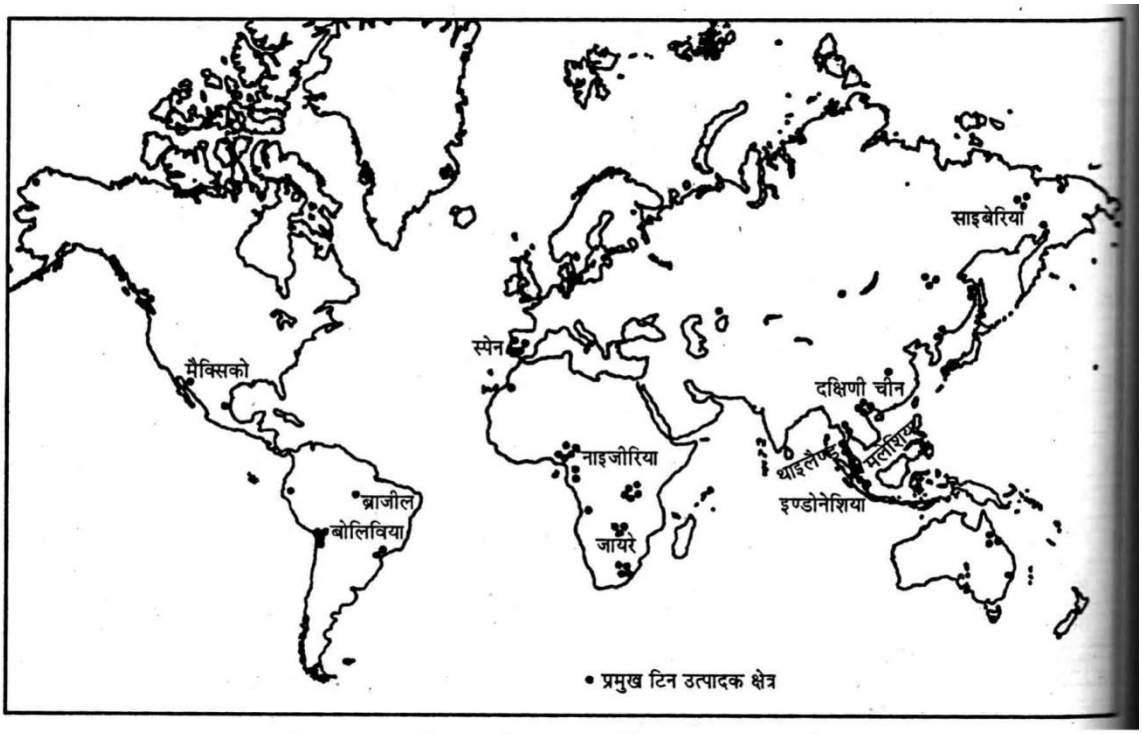

चित्र–5 : विश्व के प्रमुख टिन उत्पादक क्षेत्र

चीन– विश्व में उत्पादित कुल टिन का 34.48 प्रतिशत भाग उत्पादित कर उत्पादन की दृष्टि से प्रथम स्थान पर है। चीन में उत्पादित टिन का अधिकांश भाग यूनान पठारी भाग (गेजू) से प्राप्त होता है। इसके अलावा कांग्सी, कियाँसो, ग्वेचो तथा हुनान क्षेत्र भी प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है।

मलेशिया– यह 1987 से पूर्व विश्व में टिन उत्पादन की दृष्टि से प्रथम स्थान पर था। लेकिन वर्तमान में टिन उत्पादन में मलेशिया का नवाँ स्थान हो गया है। मलेशिया में पेराक प्रदेश में स्थित किंता पाटी (Kinta Valley), क्वालालंपुर के समीप केलांग घाटी (Kelang Valley) एवं सेंगुई लिम्बंग जो पहाग प्रदेश में स्थित है, इनके अतिरिक्त लारुत (Larut Plain), जेमेलाँग एवं कोटा टिंगी प्रमुख हैं। मलेशिया में विश्व के अन्य देशों की तुलना में सस्ता टिन प्राप्त होता है।

थाइलैण्ड– थाइलैण्ड का सम्पूर्ण उत्पादन उसके प्रायद्वीपीय भाग के तटीय भाग एवं आन्तरिक भाग से होता है। यह (Kra) प्रायद्वीप तथा फूकेट द्वीप मुख्य क्षेत्र हैं। प्रमुख केन्द्रों में रेनोंग, फेंगंगा एवं टकूपा महत्त्वपूर्ण हैं। इण्डोनेशिया वर्तमान समय में टिन उत्पादन की दृष्टि से विश्व में दूसरे स्थान पर आ गया है। सुमात्रा के पूर्वी भाग में बर्हिद्वीप बंग्का, बिलिटन एवं सिकेप प्रदेश प्रमुख उत्पादक हैं। मलक्का जलडमरूमध्य सागरीय जमाव भी पाये जाते हैं।

ब्राजील– विश्व में टिन उत्पादन की दृष्टि से पाँचवें स्थान पर है। साओ जोआओ क्षेत्र में स्थित खदानें ब्राजील की प्रमुख टिन उत्पादक खदानें है। ब्राजील, पीरू एवं बोलिविया के टिन उत्पादक क्षेत्र एण्डिज पर्वत के पूर्वी भाग में 800 किमी. लम्बी एवं 96 किमी. चौड़ी पट्टी में पाए जाते हैं, जहाँ भौगोलिक एक मानवीय परिस्थितियाँ टिन उत्पादन के अनुकूल पायी जाती हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

विश्व के अधिकांश (लगभग 94 प्रतिशत) टिन का उत्पादन विकासशील देशों द्वारा किया जाता है। चीन के अतिरिक्त अन्य विकासशील देश अपने अधिकांश या सम्पूर्ण टिन का निर्यात विकसित देशों को कर देते हैं। टिन का निर्यात शोधित करके और कच्ची धातु दोनों रूपों में किया जाता है। मलेशिया, इण्डोनेशिया, बोलीविया, थाईलैण्ड, ब्राजील, पीरू, आस्ट्रेलिया, नाइजीरिया, म्यांमार, रूआण्डा आदि टिन के प्रमुख निर्यातक हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, जर्मनी, फ्रांस, जापान, इटली आदि विकसित देश टिन के प्रमुख आयातक देश हैं। भारत भी दक्षिणी–पूर्वी एशियाई देशों– इण्डोनेशिया, थाईलैण्ड और म्यांमार से टिन का आयात करता है।

निष्कर्ष (Conclusion)

खनिज ऐसे भौतिक पदार्थ होते हैं, जिन्हें अधिकतर खनन विधि से प्राप्त किया जाता है। लौह अयस्क अर्थव्यवस्था की रीढ़ होता है। सुई से लेकर हवाई जहाज तक बनाये जाते हैं। बिना इसके आज के समाज की कल्पना करना असम्भव है। लौह अयस्क को अति उच्च

तापमान पर लगाया जाता है और उसमें से अशुद्धियों को दूर करके शुद्ध धातु निकाली जाती है। बॉक्साइड एक मृत्तिकामय खनिज होता है जिससे एल्युमिनियम की प्राप्ति होती है। वर्तमान समय में एल्युमिनियम सबसे महत्त्वपूर्ण धातु बन गया है। इसका उपयोग विद्युत एवं संचार, बर्तन, फाउण्ड्री और धातु उद्योग, जहाज, हवाई जहाज, फर्नीचर, रेफ्रीजरेटर, रेलवे, मोटरयानों में उपयोग होता है। टिन (Tin) एक विरल धातु है। टिन को ताँबा के साथ मिलाकर कांसा (Bronze) बनाया जाता है। इसका उपयोग अलौह धातुओं के मिश्रण के रूप में किया जाता है। टिन से अत्यन्त पतली चादरें बनायी जा सकती हैं। अतः स्पष्ट है कि आधुनिक अर्थव्यवस्था के विकास के लिए लौह अयस्क, बॉक्साइड और टिन आधार का कार्य करते हैं।

मॉडल प्रश्न (Model Questions)

1. विश्व में लौह अयस्क के उत्पादन, वितरण एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का विवरण प्रस्तुत कीजिए।
2. बॉक्साइड का संचित भण्डार बताते हुए इसके प्रमुख उपयोगों की जानकारी प्रस्तुत कीजिए।
3. टिन खनिज की उपयोगिता बताते हुए इसका अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का वर्णन कीजिए।

संदर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व – प्रो0 जगदीश सिंह
2. आर्थिक भूगोल के मूल तत्त्व – डॉ0 अलका गौतम
3. आर्थिक भूगोल – डॉ0 वी0सी0 जाट
4. आर्थिक भूगोल – डॉ0 एस0डी0 मौर्य
5. सामान्य भूगोल – प्रो0 आर0सी0 तिवारी
6. Human and Economic Geography - Goh Cheng and Gillian Morgan

आर्थिक भूगोल के मूल तत्व

ईकाई– 05

विश्व मे ऊर्जा तथा शक्ति संसाधन– ऊर्जा के विविध प्रारुप, ऊर्जा की विद्यमान स्थिति तथा परिस्थितियॉं, पेट्रोलियम, विश्व स्तर पर संचित राशि, प्रादेशिक वितरण एवं व्यापार।

ईकाई की रुपरेखा

5.0 प्रस्तावना
5.1 उद्देश्य
5.2 ऊर्जा के विविध प्रारुप
5.3 ऊर्जा का वर्गीकरण
5.4 पेट्रोलियम की उत्पत्ति
5.5 उपयोग
5.6 उत्पादन क्षेत्र
    5.6.1 संयुक्त राज्य अमेरिका
    5.6.2 मैक्सिको के तेल क्षेत्र
    5.6.3 कनाडा का तेल क्षेत्र
    5.6.4 दक्षिण अमेरीका का तेल क्षेत्र
    5.6.5 दक्षिण पश्चिमी एशिया
    5.6.6 दक्षिण पूवी एशिया
    5.6.7 एक्षिण एशिया
    5.6.8 पूर्वी एशिया
    5.6.9 सोवियत संघ
    5.6.10 अफ्रीका
5.7 संचित राशि
5.8 राष्ट्रीय व्यापार
5.9 स्वमूल्यांकन प्रश्न एंव आदर्श उत्तर
5.10 स्वमूल्यांकन प्रश्न
5.11 सन्दर्भ/उपयोगी पुस्तके
5.12 अभ्यास प्रश्न (सत्तान्त परीक्षा की तैयारी हेतु)

विश्व में ऊर्जा तथा शक्ति संसाधनः–

5.0– प्रस्तावनाः–

ऊर्जा पारिस्थितिक तंत्र का एक प्रमुख स्रोत है पृथ्वी के वातावरण के जैव एवं अजैव तत्व ऊर्जा प्रवाह पर ही आश्रित है। ऊर्जा प्रवाह के अंतर्गत ही सूर्य से ऊर्जा प्राप्ति उसका एक तत्व से दूसरे तत्व में आवर्तन भंडारण तथा अंत में वायुमंडल में निस्तारण भी सम्मिलित है ऊर्जा एक रूप से दूसरे रूप में परिणत होती है परंतु ऊर्जा का विनाश नहीं होता है अर्थात जितनी उर्जा वातावरण में ब्यय होती है उतनी उर्जा का आमद भी होती दूसरे नियम के अनुसार– ऊर्जा के प्रत्येक रूपांतरण के साथ पदार्थ के मौलिक कणो में अव्यवस्था की अभिवृद्धि होती है। वर्तमान आर्थिक विकास वस्तुतः ऊर्जा नियंत्रण के स्तर का प्रतिफल है।

5.1– उद्देश्यः–

भूगोल में महत्वपूर्ण विषय आर्थिक भूगोल MAGO-103 पाठ्यक्रम के पंचम ईकाई है। इस ईकाई को पढने के बाद आप–

- विश्वभर में प्राप्त ऊर्जा के विविध प्रकारो को समझ सकेगें।
- शक्ति के संसाधनो को समझ सकेगें।
- विश्व भर में प्राप्त ऊर्जा की वर्तमान स्थिति तथा परिस्थितियॉ जान सकेगें।
- ऊर्जा का प्रमुख स्रोत पेट्रोलियम पदार्थ के विषय में ज्ञान होगा।
- विश्वभर में पेट्रोलिय खनिज पदार्थ को संचित राशि का ज्ञान होगा।
- पेट्रोलियम पदार्थ का उत्पादन तथा वितरण की जानकारी होगी।

5.2– ऊर्जा के विविध प्रारूपः–

पृथ्वी पर उपलब्ध समस्त ऊर्जा का मूल स्रोत सूर्य है सभी जैविक अजैविक स्रोतो को भी सूर्य से ही ऊर्जा प्राप्त हो रही है। प्रकाश संश्लेषण द्वारा पौधे सूर्य से ऊर्जा ग्रहण करते हैं। यही ऊर्जा भोजन श्रृंखला द्वारा रूपांतरित होते हुए मानव शरीर में पहुंचती है पौधे के भूमिगत दबाने सड़ने गलने से जीवाश्म ईंधन कोयला पेट्रोल गैस के रूप में प्रकट होता है। जिस माध्यम से ऊर्जा का उपयोग होता है उसके अनुसार इसे तीन भागों में बांट सकते हैं–

1. यांत्रिक ऊर्जा
2. रासायनिक ऊर्जा
3. विद्युत ऊर्जा

ऊर्जा की उपलब्धता प्राप्यता, अप्राप्यता अथवा उपभोग स्तर के अनुसार ऊर्जा का वर्गीकरण किया जा सकता है।

5.3– ऊर्जा का वर्गीकरणः–

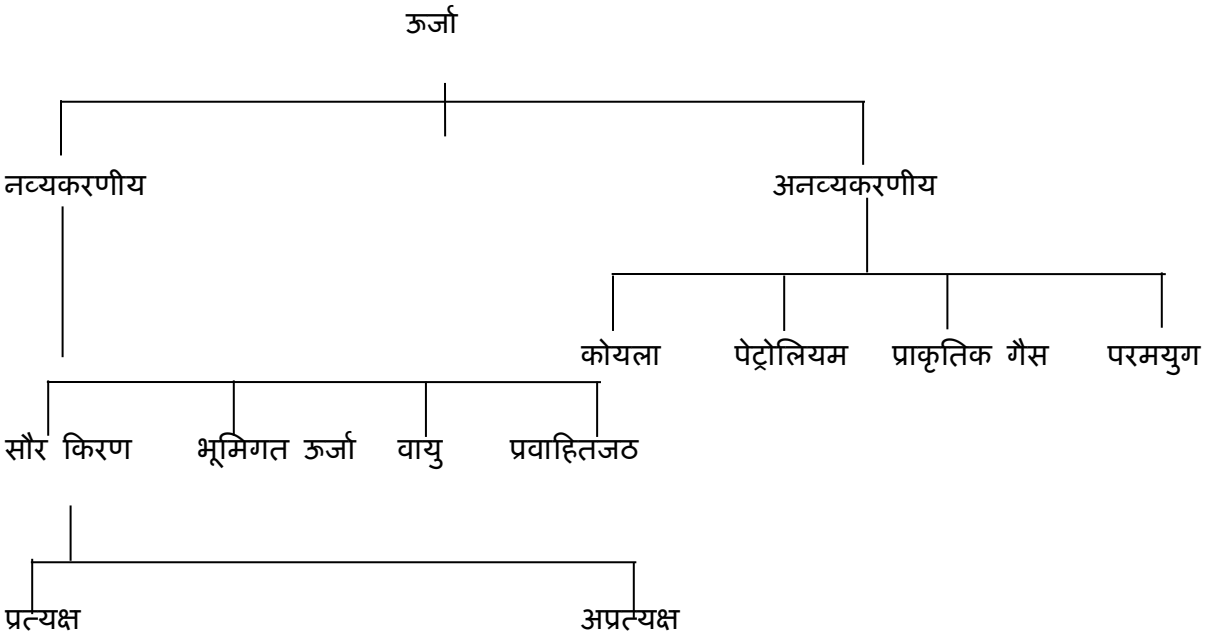

सौर ऊर्जा	प्रकाश संश्लेषण द्वारा भोजन के माध्यम से
1– प्रकाश संश्लेषण	1– पौधो से प्राप्त् फल आदि
2– प्रकाश रासायनिक	2– पौधो से निकाला गया ण्ल्कोहल गैस
3– प्रकाश विद्युत	3– पशु शक्ति
4– ताप विद्युत	4– गोबर गैस इत्यादि

पेट्रोलियम या खनिज तेल (Petroleum or Mineral oil):-

पेट्रोलियम आधुनिक युग में अत्यन्त महत्वपूर्ण संसाधन है आजकल यह न केवल प्रमुख शक्ति संसाधन है अपितु कई उद्योग, विशेषकर पेट्रोलियम– रासायनिक का प्रमुख कच्चा माल भी है। कुओं से निकलने के बाद पेट्रोलियम एक गाढा तरल पदार्थ होता है जो हाइड्रो–कार्बनो के विभिन्न मात्रा में मिश्रीत होने से बनता है। पेट्रोल विविध रंगी होता है। विभिन्न सरायनों के मिश्रीत मात्रा के अनुसार इसका रंग, गहरा हरा, भूरा, पीला गाढा, चिपचिपा तरल, मोम की तरह ठोस होता है।

5.4– पेट्रोलियम की उत्पत्तिः–

पेट्रोलियम उत्पाद तेल रिफाइनरियों में संशोधित कच्चे तेल से प्राप्त होने वाली उपयोगी सामग्रियों को पेट्रोलियम कहते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि तेल की उत्पत्ति वनो और समुद्री जीव जंतुओं के जो प्राचीन काल के डेल्टाओ झीलों और समुद्रों में रहते थे दब जाने से हुई है। जब अवसादी शैल बन रही थी तो उसमें बहुत से समुद्री जीव जंतु भी दब गए थे। दब जाने पर समय पाकर गर्मी और दबाव के प्रभाव से इन्ही जीव जंतुओं की चर्बी खनिज पदार्थों में मिलकर मिट्टी का तेल बन गई। मिट्टी का तेल प्रायः बालू के पत्थर चिकनी मिट्टी के पत्थर और कहीं कहीं छिद्राकार चूने की शैलो में पाया जाता है।

तेल प्रायः नमकीन जल और गैसों के साथ मिला रहता है। सबसे नीचे जल रहता है उसके ऊपर नमकीन तेल और सबसे ऊपर गैस होती है सामान्यतः पेट्रोलियम पदार्थ 2000 मीटर की गहराई में मिलता है विश्व का सर्वाधिक गहरा तेल कुआं 5000 मीटर कैलिफोर्निया प्रांत में है कच्चे तेल पेट्रोलियम पदार्थ में बहुत अशुद्धियां मिली रहती है। इसलिए इसे अशुद्ध तेल कहते हैं। पेट्रोलियम पदार्थ के प्रयोग में लाने से पूर्व बड़े-बड़े तेल शोधक कारखानों में काम करना पड़ता है।

5.5– उपयोगः–

पेट्रोलियम पदार्थों का उपयोग ताप प्रकाश चालक शक्ति और मशीनों को चिकना करने के लिए किया जाने लगा है। या एक सुविधाजनक ईधन है। जल थल वायु यातायात में क्रांति लाने में पेट्रोलियम पदार्थ का महत्वपूर्ण स्थान है इसका प्रमुख कारण है कि तेल अधिक सुगमता पूर्वक और कम व्यय में कौन से दूसरे स्थान को ले जाया जा सकता है क्योकि यह कोयले की अपेक्षा कम स्थान घेरता है। सैकड़ों किलोमीटर तक पाइपलाइन द्वारा तथा जहाज में भरकर ले जाया जा सकता है।

कच्चे तेल की संरचना और मांग के अनुसार रिफाइनरीयां पेट्रोलियम उत्पादों को विभिन्न मात्राओं में उत्पादित कर सकती है। तेल उत्पादों का सबसे अधिक मात्रा में ऊर्जा वाहको के रूप में इस्तेमाल किया जाता है जैसे कि ईधन तेल तथा गैसोलीन पेट्रोलियम के विभिन्न प्रकार उर्जा वाहक ईधनों में गैसोलीन जेट ईधन गरमाने वाले तेल तथा भारी ईधन तेल शामिल होते हैं। भारी अंशो का इस्तेमाल एस्फाल्ट, डामर, पैराफिन, मोम, चिकनाई पैदा करने वाले तथा अन्य भारी तेलों के उत्पादन के लिए भी किया जा सकता है। पेट्रोल रिफाइनरियॉ अन्य रसायनों का उत्पादन भी करती है पेट्रोलियम कोक के रूप में हाइड्रोजन और कार्बन को भी पेट्रोलियम उत्पादों के रूप में उत्पादित किया जा सकता है लगभग 5000 प्रकार की विभिन्न उप वस्तुये प्राप्त की जाती है। इसका सबसे अधिक मुख्य उपयोग युद्ध काल में कृत्रिम रबर बनाने में किया जाता है। एक अनुमान के अनुसार एक ढोल कच्चे तेल से 36% ईंधन का तेल, 35% गैसोलीन, 15% का तेल, 8% मिट्टी का तेल, 4% डिस्टीलेट और 2% चिकना करने का तेल, पैराफिन, नेफथ, वैसलीन, बेन्जाइन, कोक, मोम इत्यादि प्राप्त होता है।

पेट्रोलियम पदार्थ अनेक प्रकार से मानव जीवन के उपयोग में आता है इसका उपयोग न केवल चिमनियो, लालटेन, इंजन में होता है वरन दरवाजों पर वार्निंग करने प्लास्टिक की पेटियां बनाने, लिपिस्टिक नाखून की पॉलिश ग्रामोफोन की चूड़ियां आ बनाने में भी उपयोग होता है। स्प्रीट, पैराफीन, मोमबत्तियां, एस्फाल्ट से धूल से, बचाव वाली सडके बनाई जाती है। पेट्रोलियम पदार्थ उद्योगों व विकासशील देशों का जीवन स्तर कहां जाता है।

5.6– उत्पादक क्षेत्रः–

विश्व के लगभग सभी बड़े देशों में पेट्रोलियम पदार्थ का उत्पादन होता है। विश्व के प्रमुख तेल क्षेत्र प्रदेश निम्न है–

1. उत्तरी अमेरिका क्षेत्र
2. मध्य पूर्व का क्षेत्र
3. एशिया के दक्षिणी पूर्वी क्षेत्र

5.6.1– संयुक्त राज्य अमेरिकाः–

यह विश्व में सर्वाधिक तेल उत्पादित करता है सन् 1980 के बाद पेट्रोलियम उत्पाद में गिरावट दर्ज की जा रही है। टेक्सास 5.07 मिलियन बैरल 806000 प्रतिदिन उत्पादित करने वाला राज्य है समुद्र तटीय क्षेत्रों में मेक्सिको की खाड़ी में 1.90 मिलियन बैरल 302000 प्रतिदिन उत्तरी डकोटा 1.42 मिलियन बैरल 226000 प्रतिदिन और न्यू मैक्सिको 0.90 मिलियन बैरल 143000 प्रतिदिन उत्पादन हो रहा है।

तालिका–01

पेट्रोलियम उत्पादक देश–2020

क्रमांक	देश	पेट्रोलियम उत्पादन प्रतिदिन बैरल में
1	संयुक्त राज्य अमेरीका	11307560
2	रुस	9865495
3	सऊदी अरब	9264921
4	कनाडा	4201101
5	इराक	4102311
6	चीन	3888989
7	संयुक्त अरब अमीरात	3138249
8	ब्राजील	2939950
9	ईरान	2665809
10	कुवैत	2625145
11	नाईजीरिया	1775940
12	कजाकिस्तान	1756705
13	नार्वे	1712937
14	मैक्सिको	1710303
15	कतर	1530000
16	अंगोला	1249678
17	अल्जीरिया	1122432
18	ओमान	948967
19	यूनाइटेड किंगडम	947208
20	कोलम्बिया	791844
21	इण्डोनेशिया	712112
20	अजरबेजान	693880
21	भारत	627415
22	ग्रीस	586735
23	मलयेशिया	541017
24	बेनेजुएला	527063

यह सभी आंकड़े वर्ष 2019 के है। संयुक्त राज्य अमेरिका सन् 2019 में लगभग 12.25 मिलियन बैरल पेट्रोल का उत्पादन प्रतिदिन कर रहा है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रमुख तेल क्षेत्र निम्न है–

1. अप्लेशियन क्षेत्र में पेट्रोल एक लंबी सकरी पट्टी के रूप में पाया जाता है। जो न्यूयार्क राज्य के दक्षिणी पश्चिमी किनारे से पेन्सिलवानिया और ओहियो होती हुई पश्चिमी वर्जिनिया तथा कैण्टुकी तक फैली है।
2. इमरती क्षेत्र एक पट्टी के रूप में ओहियो, पश्चिमी मिसिसिपी और उत्तर में महान झीलो को मिलाकर जो त्रिभुज बनता है उसमें लीमा इंडियाना व इलीनायस क्षेत्र महत्वपूर्ण पेट्रोलियम उत्पादक देश है।
3. मध्यवर्ती क्षेत्र एक पट्टी के रूप में उत्तर से दक्षिण तक मिसीसिपी के समानांतर उसके पश्चिम में फैला हुआ है। यह कसास, ओकलाहामा, टैक्सास तथा लूसियाना राज्यों की सीमाओं तक है।
4. खाडी क्षेत्र तट से 80 किलोमीटर दूर है। सया के कुएँ 640 किलोमीटर लम्बे क्षेत्र में फैले हुए है। प्रमुख कुएँ सिण्डिल टॉप, अम्बिका, गूज क्रीक तथा सारा टीगा है।
5. उत्पादन की दृष्टि से कैलिफोर्निया द्वोत्र का स्थान द्वितीय है यहाँ उत्पादन दक्षिणी कैलीफोर्निया, सेण्ट ज्वानकीन की घाटी में लॉस एंजिल और बै 2 मिनट लैलाक्सफील्ड क्षेत्रों में होता है।

5.6.2– मेक्सिको के तेल क्षेत्रः–

यहां पर अधिकांश उत्पादन टैंपिको के उत्तर पश्चिम में, मेक्सिको की खाड़ी के किनारे पर रियोग्राण्डे, डैलनार्ड तथा टेहनटार्पेक के स्थल संयोजक के बीच में दक्षिण की ओर मैक्सिको के मुख्य उत्पादक क्षेत्र है। इबाना, पेबिको नदियों के बीच त्रिभुजाकार टैंपिको, पेबुको, तोमजी उत्पादक क्षेत्र हैं। दूसरा टैम्पिको से टक्सान तक तेल क्षेत्र फैला हुआ है।

5.6.3– कनाडा का तेल क्षेत्रः–

ओण्टारियो, अलबली और मैकेंजी की घाटी में 1999 ई० में 6-8 बिलियन बैरल प्रेम पेट्रोलियम निकाला गया था। कनाडा में दीस रिवर नगर, एकमाण्टन नगर व कालगेरी नगर प्रमुख पेट्रोलियम पदार्थ उत्पादक क्षेत्र है।अल्बर्ट प्रान्त, लेड्यूक क्षेत्र, ससकैचवा व ब्रिटिश कोलम्बिया से तेल प्राप्त होता है।

5.6.4– दक्षिण अमेरिका के तेल क्षेत्रः–

सन्–2020 के आंकड़ों के आधार पर 7.5 मिलियन बैरल पेट्रोल प्रतिदिन उत्पादित हो रहा है। दक्षिण अमेरिका में प्रमुख तेल उत्पादक क्षेत्र इस प्रकार है–

बेनेजुएला– उत्पाद क्रम से वेनेजुएला विश्व का 3%, ब्राजील अर्जेंटीना कोलंबिया प्रमुख उत्पादक है। सन् 1998 ई० से वेनेजुएला के उत्पादन में लगातार ह्रास हो रहा है। निर्यात के लिए यातायात के साधनों का अच्छा विकास हुआ है। वेनेजुएला का लगभग 70% उत्पादन मारा कईयों झील एवं समीपवर्ती जाॅनोज में ओरोनोको नदी घाटी के छिटपुट क्षेत्रों तथा दक्षिण पश्चिम आपूरे नदी घाटी में होता है। पास ही बर्हितटीय कुराकाओं तथा आरुबा द्वीपो में बृहद तेल शोधन शालाए हैं। यहां का लगभग 90% तेल निर्यात हो जाता है। ब्राजील में बाहिया क्षेत्र प्रमुख है। कोलंबिया में ऊपर, मध्य तथा नीचली मैग्डालेना

घाटी का क्षेत्र तथ मारकोइबो बेसिन का धुर दक्षिणी क्षेत्र अर्जेटाइना में पाटागोनिया मरुभाग तथा एण्डिज पर्वत के पूर्वी छोर में स्थित है।

यूनसआयर्स खेत में अच्छी उच्च तकनीकी युक्त शोधनशाला है पीरु का 90% तेल उत्तरी मरूभाग में पीऊरा प्रदेश के 6 क्षेत्रों में तथा शेष 10% एण्डिज पर्वत के पूर्व में स्थित क्षेत्र में उत्पन्न होता है।चीली (मैगलेन स्ट्रेट क्षेत्र) बोलीविया एण्डिज पर्वतीय भाग एवं इक्वेडोर (सांता एलेना प्रायद्वीपीय क्षेत्र) में भी थोड़ा तेल निकलता है।

5.6.5– दक्षिण पश्चिमी एशियाः–

सऊदी अरब, ईरान, इराक, कुवैत, संयुक्त अरब अमीरात, ओमान, कतर, बहरीन, अबू धाबी, टर्की, इजराइल तथा सीरिया में विश्व के कुल संचित भंडार का 60% (2006) मिलता है। संपूर्ण दक्षिण पश्चिमी एशिया में अनुकूल भूगर्भिक परिस्थिति सस्ते श्रम हर देश में केवल एक या दो कंपनियों के उत्पादन अधिकतर बृहद संचित भंडार बृहद पूँजी तथा आधुनिकतम उत्पादन प्राविधिकी के उपयोग कुओं की न्यूनतम संख्या जो कम चलायमान है। प्रत्येक कुएँ में संसार की अधिकतम उपलब्धियां होती है। आदि कारणों से उत्पादन लागत भी न्यूनतम है।

इधर इन देशों ने पेट्रोलियम निर्यातक संघ (OPEC) के नियमानुसार अपने उत्पादनों में बड़ी संख्या में कटौती की है। सऊदी अरब में 1980-1987 में भी अपना उत्पादन ढाई गुना कम कर दिया है। कुवैत आदि देशों में भी उत्पादन कम किया गया है। ईराक द्वारा कुवैत पर आक्रमण एवं खाड़ी युद्ध में हार के फलस्वरूप आर्थिक नाकेबंदी के कारण उत्पादन लगभग बंद रहने के पश्चात अब पुनः लगभग 4% प्रारंभ हुआ है।

टर्की, इजराइल एवं उत्तरी इराक को छोड़कर लगभग संपूर्ण तेल उत्पादक क्षेत्र फारब की बाड़ी के समीपस्त भू क्षेत्र एवं टतस्थ जलमग्न क्षेत्र में स्थित है। भारत के प्राचीन पठार तथा उत्तर के जाग्रोस पर्वतमाला के मध्य स्थित क्षेत्र को समेटते हुए एक त्रिभुजाकार क्षेत्र है। जो फारस की खाड़ी और कुवैत, बहरीन, पूर्वी सऊदी अरब, ईरान, ईराक के दक्षिणी क्षेत्र होते हुए उत्तरी ईराक तथा टर्की तक क्रमशः पतला होता चला गया है। एक प्रदेश के प्रमुख पेट्रोलियम उत्पादक क्षेत्र सऊदी अरब में घहरान, दम्मान, अबाकिक, कातिफ और धावर, कुवैत में बरगन विश्व के वृहत्तम् संचित भंडार का एकाकी क्षेत्र, ईरान में मस्जिदे सुलेमान हफ्तकेत, आगाजारी, गचसरन, नफ्त सफेद, करमनशाह एवं कुम क्षेत्र इराक में उत्तरी क्षेत्र जुबैर, बसरा एवं टर्की में रमन तथा बजरन क्षेत्र विश्व के प्रमुख उत्पादक क्षेत्रों में से एक है।

इधर फारस की खाड़ी की मग्नतट भूमि में संचार का वृहत्तम, मग्नतट भूमि तेल भंडार प्राप्त हुआ है। यह विशाल भूमि 10 से 15 मीटर पानी के नीचे है। और कुवैत से लेकर दक्षिण में टसियल कोस्ट तक लगभग 1000 किलोमीटर में फैली हुई है। इस प्रदेश का अधिकांश तेल निर्यात होता है। अतः मरुभूमि में तेल नलिकाओं का घना जाल बिछा हुआ है।

5.6.6– दक्षिण पूर्वी एशियाः–

दक्षिण पूर्वी एशिया में इंडोनेशिया विश्व का 1.1 प्रतिशत वृहद पेट्रोलियम उत्पादक देश है। यहां सुमात्रा के दक्षिण में पालम्बाग तथा ताराकान क्षेत्र तक जावा के पूर्वोत्तरी किनारे पर कावेनगान तथा सुराबाया तक, एवं न्यूगिनी में उत्तरी पश्चिमी छोर कियामोनी क्षेत्र तक तथा सोरामू द्वीपो में तेल उत्पादन

होता है। पापुआ न्यूगिनी में भी अधिक बड़े भंडार प्राप्त होने का अनुमान किया जाता है। बोर्नियो द्वीपओ के ब्रूने क्षेत्र सोरिया तथा मिरी क्षेत्र, म्यांमार में रंगून से उत्तर पश्चिम चौक तक यनांक एवं उंग क्षेत्रों में मलेशिया में विश्व का लगभग 1% उत्पादन होता है।

5.6.7– दक्षिण एशियाः–

दक्षिण एशिया के पेट्रोलियम उत्पादक देशों में केवल भारत संचित भंडार का 1.2 प्रतिशत तथा बोल मात्रा में पाकिस्तान में तेल निकलता है। यद्यपि विश्व स्तर पर भारत पेट्रोलियम का अत्यंत छोटा उत्पादक है भारत में तेल उत्पादन में वृद्धि हो रही है। भारत के पश्चिमी तथा उत्तरी भागों में विशाल खंड पर परतदार चट्टानों की घटिया है। जिसमें तेल मिलने का अनुमान किया जाता है। भारत में तेल ⁄ पेट्रोलियम पदार्थ उत्पादन में निरंतर वृद्धि हो रही है। सन 1950-51 में 30 हजार टन से बढ़कर अब उत्पादन 3.2 करोड़ टन हो गया है। भारत में सन 1890 ई० में ही आसाम प्रांत के डीगबोर्ड क्षेत्र में तेल मिला था। सन 1899 ई० से ही आसाम आयल कंपनी ने उत्पादन प्रारंभ कर दिया था। आसाम का लखीमपुर डीगबोर्ड प्रमुख उत्पादक था। सन 1970-71 ई० प्रदेश में 70 लाख टन तेल की खपत थी। परंतु 6.8 लाख टन उत्पादन होता था। इधर कई नए क्षेत्रों मे तेल के लिए सर्वेक्षण हुआ है। जिसके फल स्वरूप असम में डिगबोर्ड के समीप माकुम, पथरिया, बदरपुर, नहरकटिया तथा शिवसागर के पास रूद्र सागर, लकवा एवं गुजरात के अंकलेश्वर, काम्बे, गांधार तथा क्लोठ क्षेत्रों में तेल के भंडार मिले हैं। तेल की खोज जल्दी नतीजे दे इसके लिए रणनीति बनी। आज भी सर्वेक्षण का कार्य जारी है। 3 लाख 80 हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र का तटीय इलाका और 13 लाख 40 हजार वर्ग किलोमीटर के इलाके में करीब 30 अरब टन हाइड्रोकार्बन होने का अनुमान है। अभी सिर्फ मुंबई हाई ऊपरी आसाम खंभात और कृष्णा गोदावरी बेसिन तथा कावेरी घटिया, राजस्थान में जैसलमेर जिले के मंगला, ऐश्वर्या, कुपों से ही तेल निकाला जा रहा है। मुंबई हाई में कुओं से थकान दिखने लगी है। उत्पादन में कमी आई है। भारत में दुनिया का केवल 1.2 प्रतिशत तेल होने का अनुमान है। जबकि यहां तेल की खपत कुल विश्व की खपत का 3.5 प्रतिशत है। खपत प्रतिवर्ष बढ़ रहा है। मांग भी बढ़ रहा है

राजस्थान और कृष्णा गोदावरी बेसिन में प्राकृतिक गैस के बहुत बड़े भंडारों का पता चलने से भारत में तेल व गैस के अधिक उत्पादन की संभावनाएं बढ गई है। कोयला वाले क्षेत्रों में गैस मिलने की प्रबल संभावनाएं हैं। नाै खोजे हो चुकी है। इसमें से अकेले कृष्णा गोदावरी बेसिन में 70 खरब घन फिट गैस होने का अनुमान है। जो विश्व के कुल भंडार का 0.6 प्रतिशत है।

5.6.8– पूर्वी एशियाः–

पुर्वी एशिया में चीन का उत्पादन 203 मीट्रीकटन हो गया है। जो विश्व उत्पादन का 5.2 प्रतिशत है। चीन के जेचवान तथा उत्तर पश्चिम में साइडम एवं यूमेन, शेसी तथा सुदूर उत्तर पश्चिम में रूसी सीमा तक कारामाई में उत्पादन होता है। सिक्यांग सेसी तथा जेंचवान क्षेत्र में और बड़ा भंडार मिलने का अनुमान है। तेल उत्पादक क्षेत्र ह्वांगहो के ऊपर ही बेसिन में लांगचाऊ जेचांग तथा ह्वांगहों डेल्टा क्षेत्र में मंचूरिया रेड बेसिन एवं दक्षिण पूर्वी तट माओमिंग क्षेत्र में बिखरे मिलते हैं।

5.6.9– सोवियत संघः–

विश्व स्तर पर सोवियत संघ तेल उत्पादन 13% है सोवियत संघ में पेट्रोलियम उत्पादन के कई प्रदेश हैं।

I. बोल्गा युराल प्रदेशः– मास्को से लगभग 1600 किलोमीटर पश्चिम उत्तर में किरोब तथा दक्षिण में सारातेब नामक नगरों से घिरा त्रिभुजाकार प्रदेश है। यहां पर 75% तेल पर्म, ऊफा तथा कूडबीशेय क्षेत्र से प्राप्त होता है।

II. काकेशस प्रदेशः– काकू क्षेत्र जो कैश्चियन सागर के पश्चिम है। ग्रोझनी व मैकप प्रदेश जो काकेशस पर्वत के उत्तर दक्षिण में स्थित है। कैस्पियन सागर के आसपास के क्षेत्रों से भी उत्पादन प्रारंभ हो गया है। टार्कसेन, ताशकंद, फरगना घाटी, उष्टा क्षेत्र, पश्चिमी यूक्रेन का बोरिस्लाव क्षेत्र तथा सुदूर उत्तर में उष्टा क्षेत्र पश्चिमी यूक्रेन का बोरीस्लाव क्षेत्र तथा सुदूर पूर्व का सखालिन द्वीप जहां 20 लाख टन तेल निकल रहा है। रूस में बोल्गा से बैकाल झील तक 3700 किलोमीटर तक तेल पाइप है। दूसरा तेल पाइप का जाल पूर्वी यूरोप के देशों के निर्यात के लिए पूर्ण हो चुका है।

5.76.10– अफ्रीकाः–

अफ्रीका के उत्तरी क्षेत्र लीबिया, अल्जीरिया, मिश्र तथा नाइजीरिया के तेल क्षेत्र के विकास से विश्व के पेट्रोलियम मानचित्र पर सन् 1960 ई० के बाद क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है। सहारा के 20 लाख वर्ग मीटर से अधिक के भूभाग में तेल के वृहद भंडार विद्यमान है। यहां व्यापारिक दृष्टि अनुकूल दशाएं उपलब्ध है। यहां ना तो स्वेज नहर का भारी ट्रैक्स है ना राजनीतिक बाधाएं है। भूमध्य सागरीय बंदरगाहों, मोपोलिए, जेनोवा, इटली फ्रांस से लंबे तेल पाइपों द्वारा जोड़ दिया गया है। लीबिया विश्व का बड़ा पेट्रोलियम उत्पादक देश है। नाइजीरिया अफ्रीका का बृहदत्तम उत्पादक विश्व का 3% हो गया है।

5.7– राष्ट्रीय व्यापारः–

अंतरराष्ट्रीय मांग पर 17% कैरेबियन प्रदेश, 5% संयुक्त राज्य अमेरिका, 17% दक्षिणी पश्चिमी एशिया, 3% इंडोनेशिया और 5% अन्य उत्पादक क्षेत्रों से आपूर्ति होती थी। विश्व के सबसे बड़े आयातक देशों में पश्चिमी यूरोप के देश है। संयुक्त राज्य अमेरिका भी विश्व के आयातक देशों में सम्मिलित हो गया है। (तालिका–2) दक्षिण पश्चिमी एशिया तथा दक्षिण अमेरिका निर्यातक देश है। अल्जीरिया, लिबिया, सऊदी अरब, कुवैत, कतर, इराक, ईरान, वेनेजुएला, इंडोनेशिया के भी निर्यातक देश है।

तालिका –02

वृहद पेट्रोलियम आयातक देश (हजार बैरल प्रतिदिन)

क्रमांक	देश	बैरल
1	संयुक्त राज्य	10984
2	जापान	4652
3	चीन	3858
4	जर्मनी	2418
5	दक्षिणी कारिया	2144

6	भारत	2078
7	फ्रांस	1915
8	स्पेन	1534
9	इटली	1477

तालिका –03

विश्व के वृहद पेट्रोलियम निर्यातक देश (हजार बैरल प्रतिदिन)

क्रमांक	**देश**	**बैरल**
1	सऊदी अरब	8406
2	सोवियत संघ	6874
3	संयुक्त अरब अमीरात	2521
4	ईरान	2433
5	कुवैत	2390
6	नार्वे	2246
7	अंगोला	1948
8	बेनेजुएला	1893

सोवियत संघ पूर्वी यूरोप रोमानिया आदि देशों की मांग की पूर्ति करता है। एशिया में भारत, जापान, चीन बड़े आयातक देश हैं। चीन देश इंडोनेशिया तथा दक्षिण पश्चिमी एशिया के देशों पर निर्भर है। भारत में ईरान, इराक, इंडोनेशिया, म्यांमार आदि देशों से आयात होता है।

5.7.1– संचित राशिः–

विश्व भर में पेट्रोलियम पदार्थ की कुल संचित भण्डार लगभग 204 अरब बैरल है। जो इस प्रकार है।

पेट्रोलियम के प्रमुख ज्ञात भण्डार

क्र० सं०	देश	अरब बैरल में भण्डार	विश्व का प्रतिशत
1	वेनेजुएला	2965	21.3
2	सऊदी अरब	2646	19.0
3	कनाडा	1752	15.6
4	इरान	1506	10.8
5	इराक	1435	10.3
6	मैक्सिको	1390	10.00
7	कुवैत	1040	7.5
8	संयुक्त अरब अमीरात	978	7.0
9	रुस	742	5.3

10	लिबिया	470	3.4
11	नाइजीरिया	372	2.7
12	कजाकिस्तान	300	2.2
13	कतर	254	1.8
14	चीर	203	1.5
15	संयुक्त राज्य अमेरीका	192	1.4
16	ब्राजील	142	1.1
17	अजरबैजान	140	1.0
18	अंगोला	135	1.0
19	अल्जीरिया	122	0.9
20	भारत	90	0.7
21	सूडान	68	0.5
22	नार्से	67	0.5
23	इक्वेडोर	65	0.5
24	ओमान	55	0.4
25	धाना	50	0.4
26	वियतनाम	47	0.4
27	मिश्र	45	0.3
28	इण्डोनेशिया	41	0.3
	विश्व	13925	100

स्रोत– एस०डी० कौशिक आर्य के भूगोल केसरल सिद्धान्त

5.8– स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

स्वमूल्यांकन प्रश्न–

I. कौन सा देश सर्वोच्च पेट्रोलियम उत्पादक देश है?

अ– संयुक्त राज्य अमेरीका ब– सऊदी अरब

स– कुवैत द– संयुक्त अरब अमीरात

II. निम्नलिखित में से किस प्रकार की शैलो में खनिज तेल पाया जाता है?

अ– अवसादी ब– रुपान्तरित

स– आग्नेय द– कोई नही

III. पेट्रोलियम के सर्वाधिक ज्ञात भण्डार निम्नलिखित में से कहाँ है?

अ– संयुक्त राज्य अमेरीका ब– रुस

स– कनाडा द– बेनेजुएला

IV. पश्चिमी एशिया के प्रमुख तेल क्षेत्र है

अ– रुस　　ब– सऊदी अरब

स– कनाडा　　द– भारत

V. पूर्वी एशिया का प्रमुख उत्पादक देश कौन है?

अ– वियतनाम　　ब– थाईलैण्ड

स– इण्डोनेशिया　　द– सिंगापुर

VI. रुस में सर्वाधिक पेट्रोल का उत्पादन का क्षेत्र है?

अ– पश्चिमी पूर्वी साइबेरिया　　ब– दक्षिणी रुस

स– मध्य रुस　　द– इनमें से कोई नही

आर्दश उत्तरः–

1- ब,　2- अ,　3- द,　4- ब,　5- स,　6- अ

5.9– सन्दर्भ /उपयोगी पुस्तकेः–

1. प्रो० जगदीश सिंह– आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. अलका गौतम– आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
3. एस०डी० मौर्य– आर्थिक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन, प्रयागराज।
4. J.W. Alexander- Economic Geography.
5. Leong, G.C. and Morgan, G.C. Human and Economic Geography oxford university press Hong Kong.
6. ए० गौतम– अर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
7. एस०डी० कौशिक– आर्थिक भूगोल के सरल सिद्धान्त।

5.10– अभ्यास प्रश्न–

1. विश्व के प्रमुख पेट्रोलियम अत्पादक प्रदेशों की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।
2. पश्चिमी एशिया में पेट्रोलियम के भण्डार तथा उत्पादन के आर्थिक महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. विश्व में पेट्रोलियम खनिज पदार्थ के उत्पादन एवं वितरण की व्याख्या कीजिए।
4. पट्रोलियम पदार्थ की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
5. प्रकृति में पट्रोलियम किस रुप में मिलता है। विवरण दीजिए।

नोट– इस ईकाई का अध्ययन कर अभ्यास प्रश्नों का उत्तर स्वयं लिखिए।

MAGO 103- आर्थिक भूगोल के मूलतत्व

ईकाई 6 प्राकृतिक गैस – पर्याप्तता एवं संचित राशि
कोयला – संचित राशि, उत्पादन एवं वितरण

6.0 प्रस्तावना
6.1 उद्देश्य
6.2 प्राकृतिक गैस की पर्याप्तता (उपलब्धता) एवं संचित राशि
6.3 प्राकृतिक गैस उत्पादन क्षेत्र
अमेरीका
रुस
मैक्सिको
बेनेजुएला
6.4 प्राकृतिक गैस का उपयोग
6.5 भारत में प्राकृतिक गैस
6.6 भारत में प्राकृतिक गैस पाइप लाईन
6.7 शहरी गैस वितरण अवसंरचना
6.8 कोयला परिचय
6.9 कोयला के प्रकार
6.10 कोयले का उपयोग
6.11 कोयला उत्खनन की विधिया एवं प्रौधोगिक विकास
6.12 विश्व में कोयले का आरक्षित भण्डार
6.13 कोयला उत्पादन क्षेत्र
6.14 प्रमुख कोयला उत्पादक देश
6.15 कोयले के प्रमुख उपभोक्ता देश
6.16 शब्द सूची
6.17 स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आर्दश उत्तर
6.18 उपयोगी पुस्तके
6.19 अभ्यास प्रश्न (संतात परिक्षा की तैयारी हेतु)

प्राकृतिक गैस (NATURAL GAS)

6.0– प्रस्तावनाः–

प्राकृतिक गैस कई गैसों का मिश्रण है। जिसमें प्रमुख गैसे पायी जाती है। 10 से 20% तक अन्य उच्च हाइड्रोकार्बन जैसे कई ईथेन गैस होती है। प्राकृतिक गैस ईंधन का प्रमुख स्रोत है। प्राकृतिक गैस अन्य जीवाश्म ईंधन के साथ पाई जाती है।

प्राकृतिक गैस करोड़ों वर्षों पूर्व धरती के अंदर जमे हुए, मरे हुए जीवों के सडे गले पदार्थ से बनती है।यह गैसीय अवस्था में पाई जाती है। सामान्यतः यह मीथेन, एथेन, ब्यूटेन, पेन्टेन का मिश्रण है। जिसमें मीथेन 80 से 90% तक पाई जाती है। इसके अतिरिक्त कुछ अशुद्धियां भी पाई जाती है। जैसे सल्फर, जल, वाष्प आदि प्राकृतिक गैस के

साथ मिश्रीत रूप में पाए जाते हैं। वर्तमान समय में प्राकृतिक गैस (सी०एन०जी०) का उपभोग करने में विश्व की सबसे बड़ी सी० एन० जी० से चलने वाली यातायात व्यवस्था दिल्ली (भारत) बन गया है।

पिछले 2 दशकों से संपूर्ण विश्व में प्राकृतिक गैस के महत्व पर पहचाने जाने लगा है। उत्पादन तथा उपभोग दोनों क्षेत्रों में वृद्धि हुई है। इसके कई कारण है। पहला कारण है यह पूर्णतया ज्वलनशील और गंध एवं कालिख रहीत स्वच्छ ईधन है। दूसरा कोयला तथा पेट्रोलियम की अपेक्षा इसका उत्पादन वितरण आसन तथा कम खर्चीला होता है। तिसरा जलाने में कठिनाई नहीं होती है। पूरी क्षमता, उष्मा के साथ जलती है। चौथा सस्ती है।

भारत में प्राकृतिक गैस का विकास सन 1960 ई० के दशक में प्रारंभ हुआ। असम और गुजरात प्रदेश में खोज हुई। सन् 1970 ई० में ONGC द्वारा दक्षिण बेसिन खोज हुई बाद में निजी कंपनियों की भागीदारी बढी, वर्तमान विदेशी कंपनियां NELP के अंतर्गत भागीदारी कर रही है। वर्तमान में गुजरात, केजी बेसिन, कावेरी बेसिन, त्रिपुरा, आसाम आदमी खोज किया गया।

6.1– उद्देश्यः–

- प्राकृतिक गैस के उत्पादन व उपभोग के विषय में जानकारी प्राप्त हो सके।
- गैसो के मिश्रण व मात्रा को पहचान सके।
- प्राकृतिक गैस का उपभोग कहॉ कहॉ सम्भव है। शिक्षार्थी जान सके।
- कोयला का निर्माण कैसे होता है जान सके।
- कोयले का उत्पादन व उपभोग कहॉ–कहॉ होता है जान सकें।

6.2– प्राकृतिक गैस की उपलब्धता एवं संचित राशिः–

प्राकृतिक गैस कई प्रकार के फैराफीन आधार वाले हाइड्रोकार्बन तत्वों का मिश्रण है। जिसमें अन्य प्रकार के अणू भी विद्यमान रहते हैं। यह रूपों में मिलती है। ऐसे आगारों में जो प्रधानतः या पूर्ण तथा गैस से भरे रहते हैं तथा जो पेट्रोलियम आगारो के साथ-साथ मिलते हैं।

विश्व की कुल संचित राशि 187 ट्रिलियन घन मीटर आंकी गई है।

विश्व में अनुमानित प्राकृतिक गैस भंडार (2000)

क्रमांक	देश	उत्पादन (विलियन घन मीटर में)
1	रुस	48100
2	कनाडा	1810
3	नीदरलैण्ड	1770
4	ग्रेट ब्रिटेन	740
5	रुमानिया	370
6	इण्डोनेशिया	2050
7	ईरान	897
8	मैक्सिको	850
9	ईटली	230
10	बेनेजुएला	4010
11	लीबिया	1310
12	भारत	650

6.3– प्राकृतिक गैस उत्पादन क्षेत्रः–

प्राकृतिक गैस के मुख्य उत्पादक देश सन् 2015 के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, ईरान, कतर, कनाडा,चीन, यूरोपीय संघ, नार्वे, सऊदी अरब, इंडोनेशिया, तुर्क मेनिस्तान, अल्जीरिया, ऑस्ट्रेलिया, मलेशिया, संयुक्त अरब अमीरात, उज़्बेकिस्तान, नीदरलैंड, भारत आदि देश है।

संयुक्त राज्य अमेरिकाः– संयुक्त राज्य अमेरिका में गैस की प्राप्ति टेक्सास, लुसियाना, ओकलाहामा, कन्सास, न्यू मैक्सिको और कैलिफोर्निया राज्यों से होती है।
रूसः– रूस देश में मुख्य प्राकृतिक गैस उत्पादक क्षेत्र काला सागर के निकटवर्ती प्रदेश पिछोरा, बेसिन, बाकू क्षेत्र, यूराल, बोल्गा क्षेत्र और मध्यएशिया है।
मेक्सिकोः– मेक्सिको में गैस का उत्पादन जोसकोलोमा, पोजारिका, सिन्दा स, रेनोसा और तोबासे में किया जाता है।
वेनेजुएलाः– मारकाइबो की खाड़ी के चारों ओर प्राकृतिक गैस का उत्पादन होता है।
जापानः– जापान के मध्यवर्ती द्वीप यूरोप में राइन प्रदेश में सैलीन, ग्रोनिन जैन क्षेत्र में तथा उत्तरी सागर प्रदेश और रुमानिया तथा इटली में भी प्राकृतिक गैस मिलते हैं।
भारतः– भारत के अंकलेश्वर व बाम्बे हाई में प्राकृतिक गैस का उत्पादन होता है। कृष्णा गोदावरी क्षेत्र में खोज व उत्पादन निरंतर चल रहा है।

तालिका – 01
प्राकृतिक गैस उत्पादक देशः– 2015

रैंक/क्रमांक	देश	प्राकृतिक गैस का वार्षिक उत्पादन मिलियन (M3) में
1	संयुक्त राज्य अमेरिका	766200
2	रुस	598600
3	ईरान	184800
4	कतर	164000
5	कनाडा	149900
6	चीन	138400
7	यूरोपीय संघ	118200
8	नार्वे	117200
9	सऊदी अरब	102300
10	इण्डोनेशिया	86940
11	तुर्कमेनिस्तान	83700
12	अल्जीरिया	83040
13	आस्ट्रेलिया	67200
14	मलयेशिया	63430
15	संयुक्त अरब अमीरात	60180
16	उजबेकिस्तान	55700
17	नीदरलैण्ड	74460
18	नाईजीरिया	45150
19	अर्जेटाइना	44600
20	यूनाइटेड किंगडम	41340
21	त्रिनाडटोबैंका	40870
22	मैक्सिको	40370
23	थाईलैण्ड	39820
24	पाकिस्तान	39300
25	ओमान	29930
26	अजरबैजान	29370
27	भारत	26210
28	बंग्लादेश	26100
29	बेनेजुएला	26000

6.4– प्राकृतिक गैस का उपयोगः–

सस्ता उपयोग में सरल भंडारण में कम स्थान घेरने के कारण , कालिख व गंध रहित होने के कारण, प्राकृतिक गैस का उपयोग बढ़ता ही जा रहा है। अभी भारत ही नहीं वरन विश्व के लगभग 80% आवासों में प्राकृतिक गैस का उपयोग हो रहा है। ईंधन का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है। वाहनों में इसका उपयोग प्रारंभ हो गया है। भारत में दिल्ली की बस टेंपो यातायात व्यवस्था विश्व की सबसे बड़ी सी० एन० जी० से चलने वाली यातायात व्यवस्था बन गई है। इसके साथ ही उद्योगों में मांग बढी है।

6.5– प्राकृतिक गैस का उपयोगः–

1– खाद के निर्माण में, 2– विद्युत के निर्माण में, 3– नगर गैस पाइपलाइन वितरण, 4– रसोई में उपयोग, 5– घरेलू गैस वितरण, 6– कारखाने में ईंधन के रूप में उपयोग हो रहा है।

सबसे अधिक प्राकृतिक गैस दो यंत्रों के द्वारा बनायी गयी है।

1. Biogenic Gas जैव जनित
2. Thermogenic उष्मा जनित

1– Biogenic Gas जैव जनित– दलदल उथले तलछट में, तथा जीवो के द्वारा बनाई जाती है।

2– Thermogenic उष्मा जनित– पृथ्वी की गहराई में उपस्थित तापमान व दाब मे दफन जौविक सामग्री से बनाया जाता है।

इससे पहले प्राकृतिक गैस के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसमें मिश्रित मीथेन, हाइड्रोकार्बन, सल्फर, कार्बन डाइऑक्साइड, एटेन, प्रोपैन जलवाष्प को साफ कर शुद्धीकरण किया जाता है।

प्राकृतिक गैस धरातल पर 19 वी सदी में आमतौर पर तेल उत्पादन का प्रतिफल के रूप में प्राप्त हुई थी। क्योंकि यह उससे छोटे, हल्के गैस कार्बन श्रृंखला के समाधान से बाहर आती है। आज प्राकृतिक गैस का उत्पादन कुओ से बढ़ रहा है। ज्यो–ज्यो मांग बढ़ रही है कुओं से उत्पादन भी बढ रहा है। मांग विश्व स्तरीय है। इसलिए पाइपलाइन के सहारे पूरे विश्व में प्राकृतिक गैस को पहुंचाया जा रहा है। उपयोग निरंतर बढ़ रहा है।

6.6– भारत में प्राकृतिक गैसः–

भारत में प्राकृतिक गैस की मांग, उत्पादन, उपभोग में लगातार वृद्धि होती जा रही है। भारत सरकार प्राकृतिक गैस को घर घर पहुंचाने के लिए कई योजनाएं चला रही है। जिसमें गैस पाइपलाइन, शहर का गैस वितरण आदि शामिल है

6.7– प्राकृतिक गैस पाइपलाइनः–

भारत में 14987 किलोमीटर लंबा गैस पाइपलाइन नेटवर्क है। जिसकी क्षमता सभी 15 राज्यों तथा संघ शासित क्षेत्रों में 401 MMSCMD हैं।

प्रमुख वर्तमान पाइप लाइनों का वितरण निम्नलिखित है–

क्र०सं०	प्राकृतिक गैस पाइपलाईन का नाम	कम्पनी का नाम	लम्बाई कि०मी० में
1	हजीरा–बीजापुर–जगदीशपुर–दाहेज–विजयपुर	गेल इंडिया लिमिटेड	4222
2	दाहेज–बीजापुर–विजयपुर–दादरी	गेल इंडिया लिमिटेड	1280
3	उरान–ट्राम्बे	ONGC	24
4	दाहेज–उरान–पनवेल–दाभोल	गेल इंडिया लिमिटेड	815
5	अगरतला क्षेत्रीय जाल	गेल इंडिया लिमिटेड	554
6	मुम्बई जाल	गेल इंडिया लिमिटेड	125
7	कावेरी–गोदावरी जाल	गेल इंडिया लिमिटेड	878
8	गुजरात क्षेत्रीय जाल	गेल इंडिया लिमिटेड	609
9	कावेरी बेसिन जाल	गेल इंडिया लिमिटेड	214
10	अहमदाबाद–हैदराबाद	रिलायंस	1460
11	गुजरात ग्रीड गैस जाल	गुजरात स्टेट पेट्रोनेट लिमिटेड	2100
12	हजीरा–अंकलेश्वर	गुजरात गैस कम्पनी	73

13	दादरी–पानीपत	ONGC	132
14	असम क्षत्रीय जाल	अमस गैस कम्पनी	105
15	दादरी–बवाना–नांगल	गेल इंडिया लिमिटेड	886
16	चैनसा–झझर–हिसस	गेल इंडिया लिमिटेड	455
17	दाभोल–बंग्लौर	गेल इंडिया लिमिटेड	1414
कुल			14987 कि०मी०

वर्तमान में प्राकृतिक गैस प्राप्त करने के लिए देशों में एक व्यापक क्षेत्रीय असंतुलन है। गुजरात, महाराष्ट्र वह उत्तर प्रदेश में से 70% उपलब्ध है। लेकिन अन्य राज्यों में यह सुविधा नहीं है। और अधिक विकास करने की आवश्यकता है।

6.8– शहरी गैस वितरण अवसंरचनाः–

शहरी गैस वितरण क्षेत्र में सपीड़ित प्राकृतिक गैस और पाइप प्राकृतिक गैस (PNG) के ग्राहक शामिल हैं। देश में गैस की उपलब्धता बढ़ने के साथ शहरी गैस वितरण वृद्धि हुई है। घरेलू ग्राहकों, सार्वजनिक परिवहन और औद्योगिक/वाणिज्यीक कंपनियों के लिए पहुंच बन रही है। सन 2014 तक कुल 950 CNG स्टेशन है।

कोयला(Coal):-

6.8– परिचयः–

कोयला एक ठोस कार्बनिक पदार्थ है। ईंधन के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। ऊर्जा के प्रमुख स्रोत के रूप में कोयला अत्यंत महत्वपूर्ण है। कोयला एक ज्वलनशील ऑर्गेनिक भूतत्व है जिसमें कार्बन, वाष्पशील पदार्थ, नमी, राख आदि तत्व रहते हैं। पौधो के विघटन रूप परिवर्तन तथा कालांतर में ऊष्मा एवं दबाव के फल स्वरूप अश्मीकरण (Pertification) होने से पहले पीट बनता है। कालान्तर में दबाव वृद्धि के साथ उष्मा भी बढ़ती है। परिणाम स्वरूप कार्बनीकरण प्रक्रिया में वृद्धि के साथ-साथ पीट का रूप परिवर्तन होता जाता है। इस दबाव के अतिरिक्त उच्च कोटी के कोयले के निर्माण में भूगर्भिक दबावो का भी योगदान रहता है। उदाहरण स्वरूप एथ्रसाइट आदि कडे कोयले के निर्माण में वलन, भंशन तथा संपीड़न आदि क्रियाओ से नमी सूख जाती है। कुल प्रयुक्त ऊर्जा का 35% से 40% भाग कोयले से प्राप्त होता है। कोयले से अन्य दहनशील तथा उपयोगी पदार्थ भी प्राप्त किए जाते हैं। अलग-अलग प्रकार के कोयले में कार्बन की मात्रा अलग-अलग होती है। कोयला निर्माण की दृष्टि से दो भूगर्भिक कलाविधियां प्रमुख है–

1. ऊपरी कार्बोनीफेरस युग
2. तृतीय महायुग

6.9– कोयला के प्रकारः–

लकड़ी से कोयला बनने तक की प्रक्रिया में 5 अवस्थाओं में पदार्थ मिलते हैं। लकड़ी, पीट, लिग्नाइट, विट्मिनस तथा एन्थ्रेसाइट कोयला। पांच पदार्थों की अलग-अलग विशेषताएं हैं। सभी पदार्थों में कार्बन की मात्रा अलग-अलग पाई जाती है। कार्बन की मात्रा से ही उष्मा की मात्रा का भी निर्धारण होता है। लकड़ी में कार्बन की मात्रा 0.3% सबसे कम तो सर्वाधिक मात्रा एन्थ्रसाइट में 91 से 96% तक कार्बन मिलता है। कोयला चार प्रकार का होता है–

1– एन्थ्रे साइट (Anthracite):-

यह सबसे उच्च गुणवत्ता वाला कोयला माना जाता है। क्योंकि इस में कार्बन की मात्रा 94 से 98% तक पाई जाती है। यह कोयला मजबूत चमकदार व काला होता है। इसका प्रयोग घरों तथा व्यवसाय में होता है।

2– बिटुमिनस (Bituminous):-

यह कोयला भी अच्छी गुणवत्ता वाला माना जाता है। इसमें कार्बन की मात्रा 77 से 86% तक पाई जाती है। यह एक ठोस अवसादी चट्टान है। जो काली गहरी भूली रंग की होती है। इस प्रकार के कोयले का उपयोग भाप तथा विद्युत संचालित ऊर्जा के इंजनों में होता है। इस कोयले से कोक का निर्माण भी किया जाता है।

3– पीट (Peat):-

यह कोयले के निर्माण से पहले की अवस्था होती है। इस में कार्बन की मात्रा 27% से भी कम होती है। तथा यह कोयला स्वास्थ की दृष्टि से अधिक हानिकारक होता है।

6.10– कोयले का उपयोगः–

कोयले का उपयोग उष्मा उत्पादन तथा यांत्रिक ऊर्जा के लिए कई विधियों से किया जाता है। कोयले की उष्मा उत्पादकता बढ़ाने के लिए उसे साफ करना, विशिष्ट आकार में तोडना और चलना आदि क्रियाएं बढ रही है। ऊर्जा के अतिरिक्त धातुकर्मी तथा रासायनिक कारखानों की कई प्रक्रिया में कोयले का कच्चे माल के रूप में उपयोग होता है। कोक तैयार करने में कोयले का लगभग 30% वजन कई प्रकार की गैसों तथा कोल तार आदि के रूप में निकाला जाता है।जिससे कई गोंड वस्तुएं तैयार होती है। कोयला से तेल तथा मिथेन गैस भी निकाली जा रही है।

6.11– कोयला उत्खनन की विधियां तथा प्रौद्योगिकी विकासः–

कोयले की खदाने चार प्रकार की होती है वहन (Drift mine) खदान, धरातलीय (Shaft mine) खदान, ढाल (Slope mine) खदान। खदानों के प्रकार भू प्रदेश क्षेत्र की भौगोलिक दशायें तथा कोयले के जमाव, भूगर्भिक दिखाओ पर निर्भर करता है। वहन तथा ढाल खदाने पार्वतीय घाटीयों के क्षेत्र में किन्तु धूरा तथा धरातलीय खदानें अधिकतर मैदानी भागों में तथा जल विभाजक क्षेत्रों में पाई जाती है। धरातलीय खदाने सर्वश्रेष्ठ होती है। क्योंकि उनमें कोयले की उपलब्धि 80 से 100% तक होती है। जबकि भूमिगत खदानों में 40 से 60% ही संभव है। मैं अपेक्षाकृत श्रेष्ठ यंत्रों का उपयोग होता है।

6.12– विश्व में कोयला का आरक्षित भंडारः–

तालिका–(01) से स्पष्ट है कि विश्व में कोयले का बृहद भंडार है। एन्थ्रेसाइट एवं विटुमिनल जैसे उत्तम कोटि के कोयले का भंडार 4 लाख 50 हजार मिलियन टन (404762) है। विटुमिनस कोयले का भंडार दो लाख साठ हजार (260789) मिलियन टन का भंडार है। लिग्नाइट कोयले का भंडार एक लाख पन्चानवे हजार (195387) मिलियन टन का भंडारण है। अर्थात कुल (860938) आठ लाख साठ हजार मिलियन टन का भंडारण है।

तालिका– 01

क्रमांक	देश	एन्थ्रेसाइट एवं बिटुमिनस	सब बिटुमिनस	लिग्नाइट	कुल	सकल विश्व का प्रतिशत
1	संयुक्त राज्य अमेरिका	108501	98618	30176	237295	22.6
2	रुस	49088	97472	10450	157010	14.4
3	चीन	62200	33700	18600	114500	12.6
4	आस्ट्रेलिया	37100	2100	37200	76400	8.9
5	भारत	56100	0	4500	60600	7.0
6	जर्मनी	0099	0	40600	40699	4.7
7	युक्रेन	15351	16577	1945	33873	3.9
8	कजाकिस्तान	21500	0	12100	33600	3.9
9	दक्षिण अफ्रीका	30156	0	0	30156	3.5
10	सर्बिया	009	361	13400	13770	1.6
11	कोलम्बिया	6366	380	0	6746	0.8

12	कनाडा	3474	872	2236	6528	0.8
13	पोलेण्ड	4338	0	1371	5709	0.7
14	इण्डोनेशिया	1520	2904	1105	5529	0.6
15	ब्राजील	000	4559	0	4554	0.5
16	यूनान	0	0	3020	3020	0.4
17	बोस्निया	484	0	2369	2853	0.3
18	मंगोलिया	1170	0	1350	250	0.3
19	बुल्गारिया	02	190	2174	2366	0.3
20	पाकिस्तान	0	166	1904	2070	0.3
21	तुर्की	529	0	1814	2343	0.3
22	उजबेकिस्तान	47	0	1853	1900	0.2
23	हंगरी	13	439	1208	1660	0.2
24	थाईलैण्ड	0	0	1239	1239	0.1
25	मैक्सिको	860	300	51	1211	0.1
26	ईरान	1203	0	0	1203	0.1
27	सेच	192	0	908	1100	0.1
28	किरगिस्तान	0	0	812	812	0.1
29	अल्बानिया	0	0	794	794	0.1
30	उत्तरी कोरिया	300	300	0	600	0.1
31	न्यूजीलैण्ड	33	205	333	571	0.1
32	स्पेन	200	300	30	530	0.1
33	लाओस	4	0	499	503	0.1
34	जिम्बाबे	502	0	0	502	0.1
35	अर्जेन्टाइना	0	0	500	500	051
36	अन्य सभी	3421	1346	846	5613	0.7
37	विश्व का योग	404762	260789	195387	860938	100

* **इन्टरनेट अगस्त 2021 से प्राप्त आकडे है। जो सन् 2008 का भण्डारण दिखा रहा है।**

विश्व के कुल 35 देशों के कोयले का भंडारण तालिका 01 में दिखाया गया है। जिसमें संयुक्त राज्य अमेरिका प्रथम स्थान पर है विश्व के कुल भंडारण का 22.6 % कोयले का भंडार अकेले अमेरिका के पास है दूसरे क्रमांक पर रूस है जो विश्व का 14.4% भंडारण रखा हुआ है। तीसरे क्रमांक पर चीन है। जो विश्व का 12.6% कोयले का भंडारण और पांचवें स्थान पर भारत है जो संपूर्ण विश्व का 7.8% कोयले का भंडारण रखा हुआ है। ब्राजील में 0.5% कोयले का भण्डार है।

6.13– कोयला उत्पादनः–

भूगोल के अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है कोयले का भंडार एक निश्चित मात्रा में ही है। जो धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है। सन् 1860 ई० मैं 20 करोड़ टन 1960 में 262 करोड़ टन सन् 1976 ई० में 331 करोड टन 1987 ई० में 455 करोड टन कोयले के भंडार कहां पता लगा था। सन 2021 में 769 करोड़ टन कोयले का भंडारण का पता लगा है विश्व के प्रमुख कोयला उत्पादक देश व उनके उत्पादन मिलियन टन में इस प्रकार है।

उत्पादन की दृष्टि से क्रमशः चीन 49.5% प्रथम संयुक्त राज्य अमेरिका14.1 % के साथ द्वितीय स्थान पर हैं। भारत 5.6% उत्पादन करता है और विश्व में तृतीय स्थान पर है। पश्चिमी विकसित देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका को छोड़कर कोयला उत्पादन कार्य स्थिर हो गया है। जहां उत्पादन हो रहा है उस देश में उत्पादन हासोन्मु ख है।

एशियाः–

एशिया में बृहद विश्व का 55% कोयले का भंडार है। यहां चीन और भारत में विशाल कोयले का भंडार है।

चीनः–

चीन को विश्व का प्रथम स्थान प्राप्त है। विश्व का 50% कोयला अकेले चीन में उत्पादित होता है। चीन में 30 से अधिक कोयले की खाने है। सर्वाधिक कोयला क्षेत्र शासी, सेंसी, कांसू, होनान प्रदेश में पड़ता है यहां एन्थ्रेसाइट कोयले का भंडार सर्वाधिक मात्रा में है। मंचूरिया, होपे, शांतुंग एवं अन्हवी प्रांतों में भी कोयले का उत्पादन होता है। जेचवान कोयला भंडारण विश्व भर में प्रसिद्ध है मंचूरिया में विटूमिनस प्रकार का कोयला प्राप्त होता है। फुशुन, फुटशिन प्रमुख कोयले के भंडार हैं। शेनयांग से 36 किलोमीटर दूर है जो सर्वाधिक मोटी परत 120 मीटर मिलती है।यांगटिसीक्यांग के दक्षिण निम्न आबादी वाले क्षेत्रों में सर्वाधिक कोयला छोटी खदानों से प्राप्त होता है।

भारतः–

विश्व के प्रमुख कोयला उत्पादक देशों में भारत का तीसरा स्थान है विश्व का 5.6% कोयले का उत्पादन भारत के दामोदर घाटी, रानीगंज, झरिया, बोकारो, रामगढ़, गिरिडीह, सोम नदी घाटी, गोदावरी घाटी मैं होता है। कुल उत्पादन का 50% कोयला रानीगंज व झरिया खदान से होता है। तमिलनाडु, केरल, आंध्र प्रदेश व कर्नाटक विद्युत आपूर्ति में कोयले का महत्व अधिक है। भारत में कोयले का उत्पादन विकसित अवस्था में है। यंत्रों द्वारा खुदाई होती है।

संयुक्त राज्य अमेरिकाः–

संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का द्वितीय वृहत्तम जुनूनियत पिक्चर14.1% उत्पादक देश है। संयुक्त राज्य अमेरिका में निम्नलिखित कोयला प्रदेश पाए जाते हैं।

अप्लेशियन तथा अन्य पूर्वी प्रदेश के अंतर्गत अप्लेशियन प्रदेश उत्तर पूर्वी पेंसिलवानिया , एन्थ्रसाइट तथा अटलांटिक तटीय क्षेत्र पेंसिलवानिया से लेकर दक्षिण पश्चिम में मध्य अलबामा तक लगभग 960 किलोमीटर लंबाई में फैला है। इस प्रदेश में तीन प्रमुख कोयला उत्पादन क्षेत्र हैं जिनमें उत्तरी अप्लेशियन क्षेत्र दक्षिणी अप्यलेशियन क्षेत्र व पश्चिमी बर्जिनिया का एक भाग पूर्वी केटकी टेन्नेसी सम्मिलित है। अलबामा राज्य तक पाए जाते हैं।

रूसः–

संपूर्ण विश्व का 14.4 प्रतिशत संरक्षित कोयले का भंडार रूप में पाया जाता है। यह विश्व में द्वितीय स्थान पर है। उत्पादन की दृष्टि से रूस विश्व में छठे स्थान पर है। यह विश्व का 4.0% कोयले का उत्पादन करता है। मध्य सारबेरिया, डोनवास, यूराल, कारागाण्डा, कुजबास आदि प्रसिद्ध कोयला उत्पादक प्रदेश का।

यूरोपः–

यूरोप विश्व का 4.2% कोयले का उत्पादन करता है। यहां कोयले का उत्पादन स्थिर अवस्था में पहुंच गया है। जर्मनी यूरोप का सर्वाधिक कोयला उत्पादक देश है। यूरोपीय देशों में श्रम महंगा हो गया है। कोयले की खदान अब गहरी घाटी में बदल गई है। इसलिए उत्पादन स्थिर हो गया है। क्लाइट घाटी, नाथर्थम्बरलैण्ड, यार्कशायर डबर्ब क्षेत्र बेल्स क्षेत्र, लंकाशायर, फ्रान्स बेलजियम, कोयला क्षेत्र आदि यूरोप की प्रसिद्ध कोयला प्रदेश है। जर्मनी विश्व का 1.1 प्रतिशत कोयले का उत्पादन करता है यह किस्तों में नौवें स्थान पर है।

पोलैंड विश्व का दसवां सबसे बड़ा कोयला उत्पादक देश है। हय विश्व का 1.4 प्रतिशत कोयले का उत्पादन करता है।

आस्ट्रेलियाः–

आस्ट्रेलिया में विश्व का 5.8%कोयले का उत्पादन होता है। यह विश्व में पांचवा सबसे बड़ा देश है। जहां पर कोयले का उत्पादन होता है। विश्व के आरक्षित भण्डार की दृष्टि से ऑस्ट्रेलिया चौथा बड़ा क्षेत्र है यहां पर विश्व का 8.9% कोयले का भंडार है। यहां पर उत्तम कोटि व निम्न कोटि का कोयला पाया जाता है। ऑस्ट्रेलिया के प्रत्येक राज्य में थोड़ा बहुत कोयले का भंडार है व उत्पादन होता है। न्यू साउथ् वेल्स, क्वींसलैण्ड में विटुमिनस व विक्टोरिया प्रान्त में लिग्नाइट प्रकार का कोयला पाया जाता है। इसलिए उद्योग का विकास इन्ही क्षेत्रों में हुआ है। यहां तीन प्रमुख दाने हैं– न्यूकैसल खदान, लिथो खदान व कबा खदान।

दक्षिण अफ्रीकाः–

दक्षिण अफ्रीका में प्रचुर मात्रा में कोयले का भंडार उपलब्ध है। जहां विश्व का 3.6% उत्पादन होता है तथा विश्व का 3.5% संचित भंडार उपलब्ध है। यहां उत्तम कोटि का कोयला पाया जाता है। दक्षिण अफ्रीका में अधिकांश कोयला नेटाल, ट्रांसवाल, अरेंज फ्री स्टेट, मिडिल वर्ग, विटबैंक, प्रिटोरिया के पास जोहास वर्ग में कोक कोयला पाया जाता है। जिम्बाम्बे, जामबिन क्षेत्रों में कोयले के थोड़े बहुत भंडार पाए जाते हैं।

6.14– प्रमुख कोयला उत्पादक देश–

देश और वर्ष के अनुसार कोयला उत्पादन (मिलियन टन में)

क्र०सं०	देश	2003	2004	2005	2006	2007	2008	2009	2010	2011	Percent	Reserv 4 fryeon
1	चीन	1834	2122	2349	2528	2691	2801	2973	3235	3520	49.5%	35
2	संयुक्त राज्य अमेरिका	972	1008	1026	1054	1040	1063	975	983	992	14.1%	239
3	भारत	375	407	428	449	478	515	556	573	588	5.6%	103
4	यूरोपीय संघ	637	627	607	595	592	563	538	535	576	4.2%	97
5	आस्ट्रेलिया	350	364	375	382	392	399	413	424	415	5.8 %	184
6	रुस	276	281	298	309	313	328	301	321	333	4.0%	471
7	इण्डोनेशिया	114	132	152	193	216	240	256	275	324	5.1%	17
8	दक्षिण अफ्रिका	237	243	244	244	247	252	250	254	255	3.6%	118
9	जर्मनी	204	207	202	197	201	192	183	182	188	1.1%	216
10	पोलैण्ड	163	162	159	156	145	144	135	133	139	1.4%	41
11	अन्य सभी	85	87	87	96	97	111	100	110	115	1.5%	290
विश्व योग		5301	5716	6035	6342	6573	6795	6880	7254	7695	100%	112

6.15– कोयले के प्रमुख उपभोक्ता देशः–

कोयले का उपयोग दिन प्रतिदिन बढता जा रहा है। इसलिए इसकी खपत बढ रही है। मांग भी बढ रही है। आज कोयले का प्रयोग न केवल उष्मा उत्पादन व यांत्रिक ऊर्जा में हो रहा है बल्कि रासायनिक कारखानो में कोयले का कच्चे माल के रुप में उपयोग हो रहा है। कोक' कोलतार आदि कोयले से तैयार किया जा रहा है। कोयला से तेल व मिथेन गैस भी निकाली जा रही है। इधर विकसित देशो में कोयले का उपभोग बढा है। जिसमें चीन विश्व का 50 प्रतिशत कोयले का उपभोग करके प्रथम स्थान पर है। संयुक्त राज्य अतेरिका 12.5 प्रतिशत तथा भारत 9.9 प्रतिशत कोयले का उपभोग कर तृतीय स्थान पर है।

सारणी –03

देश एवं वर्ष के अनुसार कोयले का उपभोग (मिलियन टन में)

क्रमांक	देश	2008	2009	2010	2011	Percent
1	चीन	2966	3188	3695	4053	50.7%
2	संयुक्त राज्य अमेरीका	1121	997	1048	1003	12.5%
3	भारत	641	705	722	788	9.9%
4	रुस	250	204	256	262	3.3%
5	जर्मनी	268	248	256	256	3.3%
6	दक्षिण अफ्रिका	215	204	206	210	2.6%
7	जापान	204	181	206	202	2.5%
8	पोलैण्ड	149	151	149	162	2.0%
योग		7377	7318	7994	N/A	100%

***अगस्त 2021 इन्टरनेट से प्राप्त आकडो के आधार पर है।**

जहॉ सन् 2008 में 7327 करोड मीटरीटन कोयले की खपत भी वही बढकर सन् 2010 में 7994 करोड मीटरीटन हो गया हैं। मात्र दो वर्षो में 6 करोड मीटरीटन कोयले की खपत में वृद्धि हुई है। इससे ज्ञात होता है कि एक

वर्ष में लगभग 3 करोड मीटरीटन से ज्यादा कोयले की मांग बढ रही हैं। कोयले की खपत और मांग चाहे जितनी रहे। लेकिन सबको पता है कि कोयले का भण्डार सीमित मात्रा में है। और कोयले की भण्डारण क्षमता नही बढने वाली है।

6.16– शब्द सूचीः–

.कोयला	– Coal
अवसादी शैल	– Sedimentary rocks
तृतीयक युग	– Tertiary Age
दलदली	– Swamp
परत	– Seams
कार्बोनीफेरस	– Carboniferous
वनस्पति	– Vegetation
एन्थोसाइट	– Anthracite
बितुमिनस	– Bituminus
लिग्नाइट	– Lignite
पीट	– Peat
खुली खदान	– Open Cast mining
संचित भण्डार या संचित राशि	– Coal Reserves
प्राकृतिक गैस	– Natural Gas
मीथेन	– Methane
सी़०एन०जी०	– Compressed Natural Gas
ओ० एन०जी०सी०	– Oil and Natural Gas Corporation
एम०एम०एस०सी०एम०डी०	– Million standard cubic feet perday
गेल (GAIL)	– Gas Authorty of India Limited

6.17– स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

1. प्राकृतिक गैस का सर्वाधिक उत्पादन करने वाला देश है?
   अ– चीन ब– भारत
   स– संयुक्त राज्य अमेरीका द– रुस
2. एन्थ्रोसाइट कोयले में कार्बन की मात्रा कितनी है?
   अ– 90% से अधिक ब– 40% से 90%
   स– 45% से 70% द– 70% से अधिक
3. भारत की सबसे लम्बी गैस पाइपलाईन कौनसी है?
   अ– हजीरा–विजयपुर–लगदीशपुर ब– काबेरी बेसिन
   स– गुजरात पाइपलाईन द– इनमें से कोई नही
4. भारत की सबसे बडी प्राकृतिक गैस कम्पनी कौन है?
   अ– गेल ब– भेल
   स– ओ एन जी सी द– इनमें से कोई नही
5. भारत में सबसे अधिक प्राकृतिक गैस उत्पादन करने वाला राज्य है?
   अ– मुंबई हाई ब– गुजरात
   स– असम द– तमिलनाडु
6. बिटुमिनस कोयले में कार्बन की मात्रा कितनी पायी जाती है?
   अ– 90% ब– 70% से 90%
   स– 45% से 86% द– कोई नही

आदर्श उत्तर–

1–द, 2–अ, 3–अ, 4–अ, 5–अ, 6–स।

6.18– उपयोगी पुस्तकेः–

1. प्रो० जगदीश सिंह– आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. अलका गौतम– आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
3. एस०डी० मौर्य– आर्थिक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन, प्रयागराज।
4. J.W. Alexander- Economic Geogrphy.
5. Leong, G.C. and Morgan, G.C. Human and Economic Geography oxford university press Hong Kong.
6. ए० गौतम– अर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
7. एस०डी० कौशिक– आर्थिक भूगोल के सरल सिद्धान्त।

6.19– अभ्यास प्रश्न–

1. विश्व के पांच प्रमुख गैस उत्पादक देशों का वर्णन कीजिए।
2. विश्व के पांच प्रमुख कोयला खदानो का वर्णन कीजिए।
3. प्राकृतिक गैस के महत्व का वर्णन कीजिए।
4. विश्व में कोयले के असमान वितरण के क्या कारण है।
5. कोयला खनन की विधियो का वर्णन कीजिए।
6. भारत में प्राकृतिक गैस पाइप लाइन के विकास का वर्णन कीजिए।

नोट– इस ईकाई का अध्ययन कर अभ्यास प्रश्नों का उत्तर स्वयं लिखिए।

***

MAGO- 103 आर्थिक भूगोल के मूलतत्व

इकाई–7 जल विद्युत शक्ति, प्राकृतिक दशाएं, विश्व स्तर पर संभाव्यता एवं उत्पादन का वितरण स्वरुप

इकाई की रुप रेखाः–

7.0– **प्रस्तावना**

7.1– **उद्देश्य**

7.2– **प्राकृतिक दशाएँ**

7.3– **जल विद्युत के आवश्यक घटक**

7.4– **जल विद्युत शक्ति के विकास की आवश्यक दशाएँ**

7.5– **जल विद्युत शक्ति का महत्व**

7.6– **जल विद्युत शक्ति की संचित राशि**

7.6.1– **उत्पादन क्षेत्र वितरण स्वरुप**

7.7– **विश्व वितरण स्वरुप**

7.7.1– **उत्तरी अमेरीका में जल शक्ति**

7.7.2– **यूरोप में जल शक्ति उत्पादन क्षेत्र**

7.7.3– **अफ्रीका में जल विद्युत शक्ति उत्पादन क्षेत्र**

7.7.4– **एशिया में जल विद्युत शक्ति उत्पादन क्षेत्र**

7.7.5– **भारत में जल विद्युत शक्ति उत्पादन क्षेत्र**

7.8– **शब्दसूची**

7.9– **स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आर्दश उत्तर**

7.10– **सन्दर्भ/उपयोगी पुस्तके**

7.11– **अभ्यास प्रश्न (सत्तन्त परीक्षा की तैयारी हेतु)**

जल विद्युत शक्ति (HYDRO ELECTRIC POWER):-

7.0– प्रस्तावनाः–

वर्तमान समय में जल विद्युत शक्ति बड़े महत्व का एक प्रमुख शक्ति संसाधन है जल शक्ति के विकास एवं उत्पादन और उपभोग से ही किसी देश की आर्थिक अवस्था का पता लगाया जा सकता है। यह एक निश्चित सत्य है कि भूमंडल पर कोयले और तेल के भंडार प्रायः सीमित है समाप्त के कगार पर है। इसके विपरीत जल शक्ति एक अटूट साधन है कभी समाप्त नहीं होगा। जल शक्ति बहुत ही सरल है इस का प्रयोग उत्पादन से दूर तक पहुंचा कर किया जा रहा है।

7.1– उद्देश्यः–

भूगोल के महत्वपूर्ण पाठ्यक्रमो में से एक MAGO-103 आर्थिक भूगोल की सातवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- वर्षो से बहते हुए जल से विद्युत उत्पादन को जान पायेंगे।
- तीन बडे आविष्कारो को जान पायेंगे।
  1– टरबाइन
  2– डायनमों
  3– पोर्ट लैण्ड सीमेन्ट
- इन तीनो के सहयोग से नदियों पर बॉध बनाकर जल विद्युत उत्पादन किया जाता है। यह आप जान सकेगें।
- उपर से गिरते हुए जल का महत्व जान सकेगें।
- बहते हुए जल का महत्व पहचान सकेगें।

7.2– प्राकृतिक दशायें–

जल विद्युत उत्पादन के लिए निम्नलिखित प्राकृतिक दशायें होनी चाहिए–

1– ऊचाई– अहता हुआ जल ऊपर से नीचे गिरकर अपने धक्के से टरबाइन के पहिए घुमाता है। जितनी अधिक ऊचाई से जल बहकर आ रहा होगा उतनी ही अधिक मात्रा में शक्ति उत्पादन होगा।

2– वर्ष– वर्षा पर्याप्त मात्रा में हो, जिससे वर्ष भर पर्याप्त मात्रा में जल बहता रहे।

3– तेज ढाल– तेज ढाल वाले क्षेत्रों में एक से अधिक बांध बनाकर विद्युत उत्पादन किया जाता है।

4– जल की समान मात्रा– नही, झील में, जल की मात्रा वर्ष भर समान रुप से बना रहें।

5– तापमान– वर्ष भर तापमान, बना रहें। कभी हिमांक नीचे न जाय।

7.3– जल विद्युत गृह के आवश्यक घटकः–

जल विद्युत के उपयोग में मानव पहले की अपेक्षा अधिक वृद्धि कर सकता है इससे तीन विशेष काम इस प्रकार है–

1– जल शक्ति से चलने वाले टरबाइन का विकासः– यह एक जल पहिया होता है। जिसमें जल की एक नियंत्रित धारा दबाव डालने पर इस पहिये के पंखे से टकराती है और जल पहिया घूमने लगता है।

2– डायनमो का पूर्ण विकास होनाः– जिसमें टरबाइन के घूमने से जो यांत्रिक शक्ति उत्पन्न होती है वह विद्युत शक्ति में परिवर्तित होती है।

3– तुम प्रकार के सीमेंट के निर्माण में निरंतर वृद्धि होते जाना जिससे कंक्रीट के बड़े बाॅध बनाकर विशाल जल राशि को संग्रहित कर नियमित रूप से नीचे की ओर छोडा जा सकता है।

7.4– जल विद्युत शक्ति के विकास की आवश्यक दशाएः–

जल विद्युत शक्ति के विकास के लिए निम्नलिखित भौगोलिक आर्थिक दशाओं का होना आवश्यक है–

1. जिस स्थान पर जल शक्ति उत्पन्न की जाय वहां का धरातल ऊंचा नीचा होना चाहिए। क्योंकि ऐसे स्थान पर ही जलप्रपात बन सकते हैं। यही कारण है कि नार्वे, स्वीडेन, इटली, जापान तथा भारत में बड़ी मात्रा में जल विद्युत उत्पन्न की जाती है।
2. जलप्रपात का ऊंचा तथा बड़ा होना भी जलविद्युत की मात्रा को प्रभावित करता है। जहां जलप्रपात से जितनी ऊंचाई से जल गिरेगा वहां उतने ही कम व्यय और सुविधा से अधिक विद्युत उत्पन्न होने की संभावना है।
3. जल विद्युत के उत्पादन में जल की मात्रा का निरंतर और एक सी मात्रा में उपलब्ध होना भी आवश्यक है यदि ऐसा ना हुआ तो जल विद्युत उत्पादन में अवरोध होने लगता है ऐसे स्थानों पर वर्षा जल को रोककर नियंत्रित करना पड़ता है। जिससे वर्ष भर आवश्यक मात्रा में जल प्राप्त हो सके।
4. जल प्रताप का प्राकृतिक होना भी आवश्यक है। जहां प्रपात नहीं होते वहां कृत्रिम जलप्रपात बनाए जाते हैं। कृत्रिम प्रपात बनाने में बड़ा व्यय होता है। इससे विद्युत भी महंगी पड़ती है।
5. जल विद्युत उत्पादन उन्ही प्रदेशों में हो सकता है जहां पर कोयला था तेल की उपलब्धता कम हो व महंगा हो। नही तो विद्युत कोई खरीदेगा नही।
6. जल विद्युत उत्पादन जल विद्युत उत्पादन केंद्र क्षेत्र के पास सड़क मार्ग रेल मार्ग की सुविधा सुगमता हो।
7. जल विद्युत उत्पादन व उपभोग में ज्यादा दूरी नहीं होनी चाहिए क्योंकि विद्युत तार में 10 से 20% विद्युत नस्ट हो जाती है ह्रास होता है।
8. विद्युत उत्पादन में जो राशि काम में आती है यदि उसे बाद में सिंचाई के लिए काम में लाया जा सके तो उससे विद्युत उत्पादन का व्यय घट जाता है। भारत की नदी घाटी योजनाएं इस प्रकार की हैं–

7.5– जल विद्युत शक्ति का महत्वः–

जल विद्युत शक्ति का महत्व अधिक है। क्योंकि अन्य पदार्थ जैसे कोयला, पेट्रोल महंगे होते जा रहे हैं। उत्पादन में ह्रास हो रहा है। भंडार समाप्त हो रहे हैं। जल विद्युत शक्ति की सर्वर प्रियता, शीघ्र प्रचार तथा महत्व के निम्नलिखित कारक है–

1. कोयला व पेट्रोलियम की मात्रा निश्चित है। जबकि जल की मात्रा का भंडार अक्षय है। यह निरंतर उत्पन्न की जा सकती है।

2. जलविद्युत के प्रयोग में स्वच्छता व सुविधा रहती है अतः इसे श्वेत कोयला कहते हैं। कोयला तथा पेट्रोलियम की अपेक्षा इसमें कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है।
3. विद्युत के प्रयोगों से उद्योगों के विकेंद्रीकरण में सरलता हो गई है। उसे केंद्रीकरण के दोषो से बचाया जा सकता है।
4. विद्युत द्वारा यंत्र चलाने से कम शक्ति का व्यय होता है।
5. 6 टन कोयला बराबर 1 हॉर्स पावर विद्युत शक्ति होती है इतना कोयला जलाने पाडेगें।
6. विद्युत के उपयोग से कोयले की बचत होती है। धुऑ नहीं होता है।
7. जलविद्युत के उपयोग से पेट्रोलियम पदार्थ की बचत होती है।
8. कोयले के स्थान पर अब बिजली से रेल गाड़ी चलती है।
9. धुआं रहित यातायात को बल मिल रहा है।

7.6– जल शक्ति की सम्भावित राशि, संचित राशिः–

जल विद्युत की सुरक्षित और उत्पादित राशि का अनुमान करना बडा ही दुष्कर है। विश्व की सुरक्षित राशि का 40% अफ्रीका में एशिया में 23% उत्तर अमेरिका में 13% यूरोप में 11% पाया जाता है। दक्षिणी अमेरिका में 10% तथा आस्ट्रेलिया में 3% सुरक्षित है।

विश्व के जल विद्युत शक्ति का अनुमानित भंडार सबसे अधिक उष्ण कटिबंधीय अफ्रीका में पाए जाते हैं। ऐशिया दूसरे स्थान पर है। उत्तरी अमेरिका तीसरे स्थान पर है।

7.6.1– जल विद्युत शक्ति उत्पादन क्षेत्र, वितरण स्वरूपः–

जलविद्युत का सर्वाधिक विकास यूरोपीय देशों और अमेरिका में हुआ है। इटली, फ्रांस, स्वीडेन, नार्वे, स्विट्जरलैंड और जर्मनी यूरोप की समस्त विकसित शक्ति का 75% उत्पन्न करते हैं। व्यक्तिगत रूप से इटली में अपनी जलशक्ती का 60% स्वीटजरलैंड ने 67% जर्मनी ने 54% नार्वे ने 53% फ्रांस 48% स्वीडेन 27% रूस 34% का विकास किया है।

7.7– विश्व वितरण स्वरुप–

विश्व के 10 बड़े जल विद्युत उत्पादक देश–2020

क्र० सं०	देश	वार्षिक जल विद्युत उत्पादन (Twh)	विश्व का प्रतिशत
1	चीन	1232	28.5%
2	ब्राजील	389	9.0%
3	कनाडा	386	8.9%
4	संयुक्त राज्य अमेरिका	317	7.3%
5	रुस	193	4.5%
6	भारत	151	3.5%
7	नार्वे	140	3.2%
8	जापान	88	2.0%
9	वियतमान	84	1.9%

10	फ्रांस	71	1.6%

विश्व के देशो में जल विद्युत उत्पादन (MW में)– 2020

क्र०सं०	देश	उत्पादन मेगावाट में
1	चीन	370160
2	ब्राजील	109318
3	संयुक्त राज्य अमेरिका	103058
4	कनाडा	81058
5	रुस	51811
6	भारत	50680
7	जापान	50016
8	नार्वे	33003
9	टर्की	30984
10	फ्रांस	25897
11	इटली	22448
12	स्पेन	20114
13	वियतनाम	18165
14	वेनेजुएला	16521
15	स्वीडेन	16479
16	स्वीटजरलैण्ड	15571
17	आस्ट्रीया	15147
18	ईरान	13233
19	मैक्सिको	12671
20	कोलम्बीया	12611
21	अर्जेटीना	11348
22	जर्मनी	10720
23	पाकिस्तान	10002
24	पराग्वे	8810
25	आस्ट्रेलिया	8528
26	लाओस	7376
27	पुर्तगाल	7262
28	चीली	6934

29	रोमानिया	6684
30	दक्षिण कोरिया	6506
31	युक्रेन	6329
32	मलयेशिया	6275
33	इण्डोनेशिया	6210
34	पेरु	5735
35	न्यूजीलैण्ड	5384
36	तजाकिस्तान	5273
37	इक्वेडोर	5048

7.7.1– उत्तरी अमेरिका में जल शक्तिः–

संयुक्त राज्य अमेरिकाः– संयुक्त राज्य अमेरिका के मुख्य जल विद्युत उत्पादन केंद्र पूर्वी अटलांटिक समुद्र तटीय मेखला में फैले हुए हैं। विडमात पठार और तट के बीच में झारनो की एक पंक्ति है। जो नदियां अप्लेशियन पर्वत से निकलती है।वे सभी डिलावेयर, सस्केहाना, पोटोमैक और जेम्स पठार को छोड़ते ही मैदानी भाग में प्रवेश करते ही झरने बनाती है प्रमुख झरने ट्रेण्टन, फिलाडेल्फिया, बाल्टीमोर, वाशिंगटन, रिमांण्ड, पिट्सवर्ग, कोलंबिया आज नगर बसे हैं। (चित्र संख्या 1) विश्व के प्रमुख जल विद्युत संसाधन और पर्यावरण

1. न्यूजीलैंड राज्य में पर्याप्त जल विद्युत उत्पादन होता है।
2. वर्जिनियां कैरोलीना राज्यों में प्रपात रेखा के सहारे चारलोट नगर तक जल विद्युत उत्पादन होता है।
3. न्याग्रा जलप्रपात ईरी और ओप्टारियाे झीलो के मध्य स्थित है यहां से लेकर हडसन नदी तक जल विद्युत केंद्र स्थापित है।
4. महान जिलों के दक्षिणी क्षेत्र में सुपीरियर, मिशीगन आदि में औद्योगिक मांगे आधार जल विद्युत का उत्पादन होता है।
5. प्रशांत तटीय क्षेत्रों में कैलिफोर्निया तक जल विद्युत का उत्पादन होता है।
6. टेनेसी घाटी परियोजना तक बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना के अंतर्गत जल विद्युत का उत्पादन किया जाता है।

7.7.2– यूरोप में जल विद्युत शक्ति उत्पादन क्षेत्रः–

1. इटली में सर्वाधिक जल विद्युत उत्पादन की जाती है। देश के उत्तरी भागों में पर्वत और मैदान के संगम क्षेत्र जल विद्युत उत्पन्न करने के आदर्श क्षेत्र हैं। पीडमाण्ड, लोम्बार्डी और वैनेशिया राज्य विद्युत उत्पादन में प्रथम है।
2. नार्वे तथा स्वीडेन यूरोप का 25% जल विद्युत उत्पादित करते हैं। ऊंचे पर्वतीय भाग हिमनदकृत महान झीलें तंग घाटियों और द्रुतगामी प्रपात बनाने वाली नदियों से पूरा क्षेत्र भरा पड़ा है। इसलिए सर्वाधिक विद्युत उत्पादन यहां पर होता है।

3. रुस जल शक्ति भंडार की दृष्टि से विश्व में सबसे प्रथम देश है। रूस का पहला जल विद्युत केंद्र सन 1957 ई० में बोल्खोव में स्थापित किया गया। यूरोप में सबसे पहले निपर नदी पर सन् 1932 ई० मे बनाया गया। कांकेस प्रदेश की निपर, बोल्गा, ड्वीना, खीवर, बारखोव नदियों पर जल विद्युत उत्पादन होता है।
4. स्विट्जरलैंड में अल्प्स से निकलने वाली नदियों पर जल विद्युत का उत्पादन होता है।
5. फ्रांस में जल विद्युत उत्पादन आल्प्स, पीरेनीज, सेवान्स, पर्वतो के सहारे–सहारे किया जाता है।

7.7.3– अफ़्रीका के जल विद्युत शक्ति उत्पादन क्षेत्रः–

समस्त विश्व अफ्रीका महाद्वीप जल विद्युत उत्पादन में पिछड़ा हुआ है। लेकिन दक्षिण अफ्रीका देश अफ्रीका में प्रथम स्थान रखता है फिर भी पिछड़ा हुआ है इसके प्रमुख इस प्रकार है–

1. नदियों में बाढ़े आती है।
2. नदिया वर्ष पर्यन्त नहीं बहती है।
3. उद्योगों का अभाव है विद्युत मांग नहीं है।
4. गरीबी के कारण अफ्रीका में विद्युत उत्पादन नहीं किया जाता है।

इसके बाद भी विक्टोरिया प्रपात, फरीदा आंध, ओवने प्रपात आस्वांन बाघ, ओकोसोम्बा बांध जल विद्युत उत्पादन के प्रमुख केंद्र हैं।

7.7.4– एशिया के जल विद्युत उत्पादन क्षेत्रः–

1. जापानः– जापान एशिया का सर्वाधिक औद्योगिक व विकसित देश है। इसलिए विद्युत की मांग अधिक है। और जलविद्युत का उत्पादन भी अधिक है। यहां जल विद्युत के उत्पादन के सभी सुविधाएं उपलब्ध है। जापान में सन 2020 के आंकड़े के आधार पर देखा जाए तो 50016 मेगावाट का वार्षिक उत्पादन होता है। विश्व में सातवें स्थान पर है।
2. भारतः– एशिया महाद्वीप का दूसरा सबसे बड़ा देश है जो जल विद्युत का उत्पादन करता है। भारत में जल विद्युत का पर्याप्त उत्पादन हो रहा है। और अभी उत्पादन की संभावनाएं हैं। जल विद्युत उत्पादन की सभी अवस्थाएं भारत में उपलब्ध है। वर्ष भर पर्याप्त वर्षा, जलप्रपात का होना, वर्ष पर्यंत नदियों में जल, पर्वतीय पहाड़ी क्षेत्र, विद्युत की मांग, औद्योगिक विद्युत की मांग आदि सभी अवस्थाएं हैं।

7.7.5– भारत में जल विद्युत उत्पादन के निम्न क्षेत्र हैं–

1. उत्तरी भारत में हिमालय पर्वत के नीचे कश्मीर से लेकर आसान तक का भाग सबसे बड़ा क्षेत्र है।
2. दूसरा दक्षिणी प्रायद्वीपीय क्षेत्र है। इस क्षेत्र में भारत की मुख्य– मुख्य परियोजनाएं कार्य कर रही है।
3. सतपुडा, विंध्याचल, महादेव, मैकाल पहाड़ियों के सहारे जल विद्युत का उत्पादन होता है।

भारत विश्व का छठा सबसे अधिक जल विद्युत उत्पादन देश है। भारत से पहले चीन, ब्राजील, यू० एस० ए०,कनाडा, रूस है। भारत प्रतिवर्ष 50680 मेगा वाट जल विद्युत का उत्पादन करता है।

भारत में महाराष्ट्र में टाटा जलविद्युत क्रम, तमिलनाडु में पायकारा योजना, मैसूर योजना, केरल में पल्लीवासल योजना, कर्नाटक में शिवासमुद्राम्, शिम्सा योजना, जोग प्रपात योजना, कश्मीर में बारामूला

योजना, हिमाचल प्रदेश में मंडी योजना, उत्तर प्रदेश में गंगा नहर ग्रीड योजना द्वारा जल विद्युत का उत्पादन हो रहा है।

पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत भाखड़ा नांगल, दामोदर, कोसी, हीराकुंड, तुगंभद्रा, चंबल, रिहंद आदि के माध्यम से जल विद्युत का उत्पादन हो रहा है।

7.8– शब्दसूचीः–

Hydroelectricity	– **जल विद्युत**
Mexlaaus table resource	– **अक्षय संसाधन**
Horse power	- **अश्वशक्ति**
High Voltage	- **उच्च प्रवाह**
Industry	- **उद्योग**
Dam	- **बॉध**
Turbain	- **टरबाइन**
Dynamo	- **डायनमो**
River	- **नदी**

7.9– स्वमूल्यांकन प्रश्न /आर्दश उत्तरः–

1– **विश्व का सर्वाधिक जलशक्ति भण्डार कहॉ उपलब्ध है?**

अ– भारत **ब– संयुक्त राज्य अमेरीका**

स– अफ्रीका **द– ब्राजील**

2– **जलविद्युत शक्ति के उत्पादन को प्रमुख रुप से प्रभावित करता है?**

अ– वर्षा की मात्रा **ब– घाटी की ढाल**

स– तापमान **द– सभी**

3– **जल विद्युत उत्पादन में प्रमुख पदार्थ क्या है?**

अ– कोयला **ब– परमाणु**

स– अणु **द– जल**

4– **टिहरी बॉध किस राज्य में है?**

अ– उत्तर प्रदेश **ब– उत्तराखण्ड**

स– मध्य प्रदेश **द– आन्ध् प्रदेश**

5– **उत्तर प्रदेश में कौन सा बॉध है?**

अ– रिहन्द बॉध **ब– टिहरी बॉध**

स– भाखडा बॉध **द– कोई नही**

आदर्श उत्तर–

1– **ब**, 2–**द**, 3–**द**, 4–**ब**, 5–**अ।**

7.10– संदर्भ/उपयोगी पुस्तकेः–

1. प्रो॰ जगदीश सिंह– आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।

2. अलका गौतम– आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
3. एस०डी० मौर्य– आर्थिक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन, प्रयागराज।
4. J.W. Alexander- Economic Geogrphy.
5. Leong, G.C. and Morgan, G.C. Human and Economic Geography oxford university press Hong Kong.
6. ए० गौतम– अर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
7. एस०डी० कौशिक– आर्थिक भूगोल के सरल सिद्धान्त।

7.11– अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा हेतु)

1– **जल विद्युत उत्पादन के लिए आवश्यक प्राकृतिक दशायें कौन–कौन है?**

2– **किस प्राकृतिक प्रदेश में जल विद्युत उत्पादन सम्भव नही है विस्तार से वर्णन कीजिए?**

3– **किसी एक जल विद्युत उत्पादन केन्द्र की व्याख्या कीजिए?**

4– **विश्व के पॉच प्रमुख जल विद्युत उत्पादन केन्द्रो का नाम बताइए?**

MAGO-103 आर्थिक भूगोल के मूलतत्व

इकाई– 8– नव्यकरणीय ऊर्जा स्रोत– सौर्य शक्ति, भू–तापीय ऊर्जा, विश्व ऊर्जा संकट, ऊर्जा भविष्येण तथा संरक्षण।

8.0– **प्रस्तावना**
8.1– **उद्देश्य**
8.2 **नव्यकरणीय ऊर्जा के स्रोत**
8.3– **सौर्य ऊर्जा**
8.4– **सौर्य ऊर्जा की विशेषताएँ**
8.5– **सौर्य ऊर्जा की उत्पादन क्षमता**
8.6– **भू–तापीय ऊर्जा**
8.7– **भारत में भू–तापीय ऊर्जा**
8.8– **विश्व के 10 बडे भू–तापीय ऊर्जा के केन्द्र**
8.9– **भू–तापीय ऊर्जा उत्पादक क्षेत्र**
8.10– **विश्व ऊर्जा संकट**
8.11– **व्दितीय ऊर्जा संकट**
8.12– **ऊर्जा का भविष्य तथा संरक्षण**
8.13– **शीला तेल**
8.14– **विश्व में शीला तेल**
8.15– **अणु ऊर्जा**
8.16– **अणु ईधन**
8.17– **यूरेनियम**
8.18– **उत्पादक क्षेत्र**
- 8.18.1 **कनाडा**
- 8.18.2 **संयुक्त राज्य अमेरीका**
- 8.18.3 **अफ्रीका**
- 8.18.4 **आट्रेलिया**
- 8.18.4 **रुस**
- 8.18.5 **भारत**

8.19– **विश्व में यूरेनियम के भण्डार**
8.20– **थोरियम**
8.21– **विश्व में थोरियम के उत्पाक क्षेत्र**

विश्व की आर्थिक प्रौद्योगिकी समुन्नती में उत्तरोत्तर वृद्धि के लिए जलविद्युत कोयला पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस के अतिरिक्त निम्न प्रमुख स्रोत है–

8.1– उद्देश्य–

भूगोल के महत्वपूर्ण पाठ्यक्रमो में से एक MAGO-103 आर्थिक भूगोल की आठवी इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- नव्यकरणीय ऊर्जा के स्रोतो के विषय में जानाकारी प्राप्त करेगें।
- सौर्य ऊर्जा के स्रोत सूर्य से निकलने वाली विकरण के प्रभाव को जान सकेगें।
- भू–तापीय ऊर्जा के असीमित भण्डार को जान पायेगें।
- भारत में स्थापित भू–तापीय ऊर्जा के केन्द्र व विश्व के दस बडे भू–तापीय ऊर्जा के केन्द्र को जान सकेगें।
- विश्व में समाप्त होते ऊर्जा के भण्डार व स्रोत को जान पायेगें।

8.2– नव्यकरणीय ऊर्जा स्रोतः–

नव्यकरणीय ऊर्जा स्रोत वे हैं जिनसे अनंत काल तक आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक यंत्रों की सहायता से नई प्राविधिकी का उपयोग करते हुए ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। इनके अंतर्गत सौर, वायु, जल विद्युत, भूतापीय, ज्वारीय तथा समुद्री लहरों से प्राप्त ऊर्जा सम्मिलित है। नव्यकरणीय ऊर्जा के प्राथमिक स्रोत मुख्यतः तीन है–

1– पृथ्वी के अभ्यांतर में आसोट्रोपिक विखंडन (भूतापीय) ।

2– सूर्य में तापीय आजीविक प्रत्यावर्तन एवं ग्रहों के सापेक्ष गति से ज्वार / अन्य स्रोत साैर्य उर्जा के ही विविध रूप है। सन् 1981 में नौरोबी शहर में राष्ट्र संघ के ऊर्जा सम्मेलन में नवीन नव्यकरणीय 13 ऊर्जा स्रोतों के विकास पर विचार विमर्श हुआ। इनके आजविक ऊर्जा स्रोतो एवं जल विद्युत का विश्लेषण हुआ है। ज्वारीय एवं समुद्री लहरों से कम से कम विकासशील देशों में ऊर्जा प्राप्ति की सुदूर भविष्य तक कोई संभावना नहीं है। (तालिका 01)

तालिका 01 में विश्व की नव्यकरणीय ऊर्जा स्रोतों की संभाव्यता दर्शाई गई है।

वर्तमान समय में पेट्रोलियम, कोयला जैसे संसाधनों के भंडारण समाप्त हो रहे हैं। उत्पादन ह्रास आया है। संचित भंडार कम हो गए हैं। इसलिए भविष्य में ऊर्जा की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नव्यकरणीय ऊर्जा एक प्रमुख स्रोत है। जिसमें साैर ऊर्जा प्रमुख है।

8.3– सौर ऊर्जाः–

विश्व के विभिन्न भागों का औसत साैर्य विकिरण अर्थात सूर्यातप का उपयोग कर लिया जाए तो विश्व में उपयोग की जा रही संपूर्ण ऊर्जा लगभग 18 टेरावाट की आपूर्ति इससे ही हो जाएगी।

सौर ऊर्जा वह ऊर्जा है जो सीधे सूर्य से प्राप्त की जाती है। सौर ऊर्जा की मौसम और जलवायु का परिवर्तन करती है। और सौर ऊर्जा ही धरती पर सभी प्रकार के जीवन(पेड़ पौधे, जीव जंतु) का आधार व सहारा है। वैसे तो सौर ऊर्जा को विविध प्रकार से प्रयोग किया जाता है। सूर्य की ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलने को ही साैर ऊर्जा के रूप में जाना जाता है। सूर्य की ऊर्जा को दो प्रकार से विद्युत ऊर्जा में बदला जा सकता है। पहला प्रकाश विद्युत सेल की सहायता से और दूसरा किसी तरल पदार्थ को सूर्य की ऊष्मा से गर्म करने के बाद इससे विद्युत जनरेटर चलाकर सौर ऊर्जा सबसे अच्छा ऊर्जा है। यह भविष्य में उपयोग करने वाली उर्जा है।

8.4– सौर ऊर्जा की विशेषताएं:–

सूर्य एक दिव्य शक्ति स्रोत शान्त व पर्यावरण व प्रकृति के कारण नव्यकरणीय सौर ऊर्जा को लोगों ने अपनी आस्था, संस्कृति व जीवन यापन के तरीके के समान पाया है। विज्ञान व संस्कृति के एकीकरण तथा संस्कृत व प्रौद्योगिकी के उपस्करो के प्रयोग द्वारा सौर ऊर्जा भविष्य के लिए अक्षय ऊर्जा का स्रोत साबित होने वाली है सूर्य से सीधे प्राप्त होने वाली उर्जा में कई खास विशेषताएं हैं। जो इस स्रोत काे आकर्षक बनाती है। प्रमुख विशेषता इस प्रकार है–

1. सौर ऊर्जा प्रदूषण नहीं फैलाता है।
2. सौर ऊर्जा अक्षय है।
3. सौर ऊर्जा 24X7 है।
4. सबसे सस्ती, प्रत्येक घर को उपलब्ध होने वाली है।
5. सरलता से पर्वत, पठार, मैदान, नदी, तालाब, सागर, महासागर आदि के ऊपर पैदा किया जा सकता है।
6. कम लागत अधिक लाभदायक है।
7. विश्व के सभी महाद्वीपों में देशों में उपलब्ध है।

संपूर्ण भारतीय भूभाग पर यदि स सौर ऊर्जा पैदा किया जाए तो 5000 लाख करोड़ किलोवाट घंटा प्रति वर्ग मीटर के बराबर सौर ऊर्जा की है। जो कि विश्व की उर्जा खपत का कई गुना उत्पादन है। 1 वर्ग मीटर में 7 किलो वाट घंटा प्रतिदिन सौर ऊर्जा पैदा होता है। भारत 300 दिन सूर्य 12 घंटे चमकता है। उपलब्ध रहता है सौर ऊर्जा जो रोशनी व उष्मा दोनों में प्राप्त होता है। उसका उपयोग कई प्रकार से हो सकता है।

सौर ऊर्जा का उपयोग अनाज को सुखाने, जल को गर्म करने, भोजन पकाने, जल वाष्पीकरण तथा विद्युत ऊर्जा उत्पादन हेतु किया जा सकता है। भोजन पकाने के समान सोलर कुकर, ओवन, डिश, प्लेट, तावा आदि सोलर से चलते हैं। सोलर मोबाइल चार्जर आदि का निर्माण हुआ है। सौर लालटेन सौर जल पंप आदि सौर ऊर्जा से संचालित होते है।

विश्व के विभिन्न देशो में सौर ऊर्जा का विकास एवं वर्तमान स्थितिः–

8.5– सौर ऊर्जा की उत्पादन क्षमता

सारिणी 01

सौर ऊर्जा की उत्पादन क्षमता (मेगावाट में)

क्र० सं०	देश का नाम	वर्ष								विश्व का प्रतिशत
		2006	2007	2008	2009	2010	2011	2012	2013	
1	चीन	80	100	140	300	800	3300	8300	18300	13.4%
2	जापान	1907	1919	2144	2627	3618	4914	6914	13600	9.9%
3	संयुक्त राज्य अमेरीका	624	831	1169	1616	2534	3966	7312	12000	8.8%
4	फ्रांस	44	75	180	335	1054	2660	3692	4632	3.4%
5	आस्ट्रेलिया	70	83	105	188	571	1408	2408	3255	2.4%
6	बोल्जियम	04	27	108	627	1044	2051	2650	2983	2.2%
7	यूनान	07	08	18	55	205	624	1536	2579	1.9%
8	भारत	30	31	71	101	161	481	1176	2319	1.7%

9	कोरिया	36	81	0358	524	656	812	1064	1476	1.1%
10	कनाडा	21	26	33	95	291	559	827	1210	0.9%
11	बुल्गारिया	0	0	1	7	35	141	908	1020	0.7%
12	हालैण्ड	52	53	57	68	88	131	256	650	0.5%
13	यूक्रेन	0	0	0	0	0	140	326	616	0.5%
14	आस्ट्रिया	26	28	32	53	96	187	422	580	0.4%
15	इलराइल	1	2	3	25	70	190	250	420	0.3%
16	पुर्तगाल	3	18	68	102	131	144	212	254	0.2%
17	तुर्की	3	3	4	5	6	7	9	15	0.0%
18	नार्वे	8	8	8	9	10	10	11	11	0.0%
19	फीनलैण्ड	4	4	4	5	7	8	8	8	0.0%
विश्व		6967	9564	15981	23299	40030	69871	100115	136697	100%

8.6– भू–तापीय ऊर्जाः–

भू–तापीय ऊर्जा का भी असिमित भंडार उपलब्ध है। पृथ्वी के अंतराल में 1017 मेगावाटप्रतिवर्ष उर्जा निहित होने का अनुमान है। 10 किलोमीटर की गहराई तक (जहां तक अभी वेधन संभव नहीं है)संचित ताप 4.10^{13}मेगा वाट प्रतिवर्ष है।यदि पृथ्वी के ताप के 1 घन किलोमीटर को 100^0सेंटीग्रेटठंडा किया जाए तोउससे 6800 मेगा वाटउर्जा निःसृत होगी। यह राशि 60 लाख टनखनिज तेल के बराबर है। इससे 500 मेगा वाट क्षमता का विद्युत गृह वर्षों तक चल सकता है।

अभी विश्व में संवाहिनीजलीय ताप से जिसका तापमान 150^0 सेंटीग्रेड के ऊपर है विद्युत उत्पादन की जाती है। इसमें संयुक्त राज्य अमेरिका(कैलिफोर्निया, न्यू मैक्सिको, रूजवेल्ट, गर्म सोता)मेक्सिको जापान, (मत्स्यकावा, ओताके, ओनूमा, आनाकोबे, चोबारु, काकोदर, सुजीनोई एवं मोरती)न्यूजीलैंड, रूस, ताइवान, एल सल्वाडोर, आइसलैंड तथा फिलीपींस प्रमुख है। कुलनौ विकसित देशों में भू–तापआधारित विद्युत गृहसयुक्त राज्य अमेरिका की स्थापित क्षमता 14.4 Tw/h इटली की 5.32 Tw/h जापान की 3.027 Tw/h न्यूजीलैंड की 2.892 Tw/h तथा मेक्सिको की 7.299 Tw/h है। सबसे बड़ा केंद्र संयुक्त राज्य के वाशिंगटन राज्य में गिजर्स (674 mw) है। तत्पश्चात तिवी (458 mw), लारडरली (420 mw) न्यूजीलैंड (203 mw) संटोपेरिटो (153 mw) संयुक्त राज्य अमेरिका

जापान (मात्स्छ छावा) 165 mw उल्लेखनीय है।

8.7– भारत में भू–तापीय ऊर्जा के केन्द्र निम्नलखित है।

1. तातापानी (छतीसगढ)
2. पूगा (जम्मू कश्मीर)
3. काम्बेग्रेबन (गुजरात)
4. मणिकरन हिमांचल प्रदेश)
5. सूरजकुण्ड (झारखण्ड)
6. छुमाथांग (जम्मू कश्मीर)

सन 2019 ई० के आंकड़े के अनुसार विश्व में कुल 26 भू–तापीय ऊर्जा के केंद्र हैं। विश्व में कुल 15.4 मेगावाट भूतापीय ऊर्जा बिजली का उत्पादन होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का सर्वाधिक भूतापीय बिजली पैदा करने वाला देश है।

8.8– सर्वाधिक भूतापीय बिजली पैदा करने वाला देशः–

क्रमांक	विश्व के 10 बडे भूतापीय ऊर्जा केंद्र)2020)
10	डाराजात ऊर्जा केन्द्र इण्डोनशिया 259 MW
9	वेआंग विन्दू ऊर्जा केन्द्र इण्डोनशिया 227 MW
8	मलितबाग ऊर्जा केन्द्र फिलीपीन्स 232 MW
7	तिवी ऊर्जा केन्द्र फिलीपीन्स 289 MW
6	हेल्लीसीडी ऊर्जा केन्द्र आइसलैण्ड 303 MW
5	कलेनेर्जी ऊर्जा केन्द्र संयुक्त राज्य अमेरीका 340 MW
4	मैकबेन ऊर्जा केन्द्र फिलीपीन्स 458 MW
3	सिरो प्रीटो भूतापीय ऊर्जा केन्द्र मैक्सिको 720 MW
2	लारडेरेलो भूतापीय ऊर्जा केन्द्र इटली 769 MW
1	Geyser गिजर भूतापीय ऊर्जा केन्द्र USA 900 MW

8.9– भू–तापीय ऊर्जा उत्पादक देशः–

क्र०सं०	देश	भूतापीय ऊर्जा (मेगावाट में)
1	संयुक्त राज्य अमेरीका	28.4
2	कनाडा	8.8
3	इटली	7.9
4	जापान	4.6
5	फीलीपीन्स	18.00
6	इण्डोनशिया	10.9
7	आइसलैण्ड	5.3
8	एल सल्वाडोर	1.9
9	केन्या	1.5
10	कोस्टारिका	1.5

भूतापीय ऊर्जा के क्षेत्रीय वितरण से स्पष्ट है कि इसकी अधिक संभाव्यता धरातली भूगर्भिक प्लेटो के छोरो तथा सक्रिय भू–संवलन वाले भ्रंशित क्षेत्र में है। क्षेत्रों के प्राकृतिक तट जल

से अभी विद्युत प्राप्त किया जाता है। ऐसे 80 देशों में जहाँ सक्रीय ज्वालामुखी क्षेत्र मिलते हैं। भूतापीय ऊर्जा की अधिक संभाव्यता है। तथापि इसका उपयोग व्यवसाध्य होने के कारण भविष्य में इस स्रोत के दोहन की संभावना है। भारत में हिमालय विशेषतया उत्तरी पूर्वी क्षेत्र में इसकी संभाव्यता अधिक है।

8.10– विश्व ऊर्जा संकटः–

आर्थिक विकास एवं उच्चतर जीवन स्तर हेतु ऊर्जा का अभीष्ट उपयोग अपरिहार्य है। ऊर्जा की खपत और मांग में दिनानुदिन अभिवृद्धि होती जा रही है। यह भी बताया जा चुका है कि बड़े पैमाने पर उत्पादन हेतु व्यापारिक स्तर पर कोयला, पेट्रोल, प्राकृतिक गैस, आणुविक खनिज जैसे समापनीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग एवं मांग 1960 के पश्चात बहुत बढ़ गया है। अगले 20 से 25 वर्षों में विश्व की ऊर्जा खपत लगभग दोगुनी हो जाने का अनुमान है। आने वाले वर्षों में मांग की दर विकासशील देशों में ही तीव्र होगी। इसके निम्न कारण है–

1. तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के भरण पोषण हेतु खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि के लिए अधिक मात्रा में उर्वरकों एवं उपकरणों के साथ सिंचाई के साधन विकसित करना। इनमें से प्रत्येक अधिक ऊर्जा के उपयोग से ही संभव होगा।
2. औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण में वृद्धि के साथ अधिक ऊर्जा की मांग।
3. कच्ची सामग्री की कमी के साथ कई कच्ची सामग्री के परिष्करण अथवा अधिक गहरी खाने से खनिज प्राप्ति हेतु अपेक्षाकृत अधिक ऊर्जा का उपयोग।

1973 में ऊर्जा उपलब्धता की वृद्धि से एक बहुत गहरा संकट तब उत्पन्न हो गया जब अरब देशों ने पेट्रोल का राष्ट्रीयकरण कर लिया। पेट्रोल निर्यातक देशों के संगठन OPEC मैं पेट्रोल की कीमतें बढ़ाने का निर्णय किया। 1960 के पश्चात विश्व की पेट्रोल पर निर्भरता बहुत बढ़ गई है। 1982 में विश्व की कुल ऊर्जा खपत (12 अरब टन कोयला तल्यांक) का लगभग आधा पेट्रोल से पूरा हुआ है। 1966 से 1972 तक पेट्रोल की लगभग 3 डॉलर प्रति बैरल थी। जबकी 1973 में 11 डॉलर प्रति बैरल हो गई। 1981 में कीमत 21 डॉलर प्रति बैरल हो गई। 1999 से 2000 में OPEC के 11 सदस्यों ने उत्पादन घटाने का निर्णय किया। इसके चलते पेट्रोल की कीमत 37 डालर प्रति बैरल पहुंच गई। यद्यपि ओपेक कंट्रोल प्रति बैरल कीमत 25 से 28 डॉलर के मध्य रखने की इच्छा प्रकट करते थे।

भविष्य में आपूर्ति में कमी की आशंका से व्यापारी जमाखोरी करने लगते हैं एवं कीमतें अनुमान से कहीं अधिक बढ़ जाती है। 1998 के निम्नतम स्तर पर खनिज तेल की कीमत कई गुना बढ़कर 2008 में 180 डालर तक हुई। पेट्रोल आयातक देशों का अर्थतंत्र पुनः चरमराने लगा। कीमतों में वृद्धि मुख्यतः दो कारणों से हुई– तेल की आपूर्ति में बाधाएं आई तूफान के चलते मैक्सिको खाड़ी में तेल उत्पादन प्रभावित हुआ। वेनेजुएला में हड़ताल हुई। पर इन कारणों के अलावा राजनैतिक परेशानियां भी हुई। इराक में उथलपुथल के चलते तेल निर्यातक लाइनों पर असर हुआ। ओपेक के बाहर के तेल - उत्पादक देशों जैसे रूस और नार्वे में भी उत्पादन प्रभावित हुआ। प्रतिदिन17 लाख बैरल तेल निर्यात करने वाली रुसी कंपनी ओएओ यूकोज कंगाली के कगार पर आ गई और उसका उत्पादन प्रभावित हुआ। तेल की मांग और आपूर्ति में बहुत ज्यादा घट बढ सामान्य ढंग से नहीं होता। इसलिए इसकी कीमतें बहुत ही संवेदनशील हैं– जरा सी कमी बेसी का असर तत्काल और गंभीर पड़ता है। 2008-09 में आर्थिक मंदी के दौरान कीमतें घटकर 25 डालर तक आ गई थी। अब पुनः 45 डॉलर प्रति बैरल के

आसपास बनी हुई है। खनिज तेल की मांग मैं सबसे तेज बृद्धि 2005 में हुई। यूरोप, अमेरिका और जापान की अर्थव्यवस्था भी काफी समय बाद तेजी पर थी। भारत की अर्थव्यवस्था का विकास और साथ ही तेल की मांग रिकॉर्ड तेजी से बढ़ी पिछले वर्षों के मुकाबले भारत में 20% ज्यादा तेल आयात किया। उत्पादन और माल ढुलाई, दोनों में तेल की खपत ज्यादा हुई। इसके चलते रूसी फेडरेशन, इंडोनेशिया, नाइजीरिया तथा मेक्सिको जैसे तेल निर्यातकों को लाभ भारत में बढ़ी कीमतों के कारण 2002-03 में 85 हजार करोड़ रुपए तेल आयात पर व्यय हुआ। जो कुल आयात का 29% है। 1973 से ही यह जागरूकता उत्पन्न हुई की फॉसिल स्रोतों से उपलब्ध ऊर्जा सहज प्राप्त नहीं की जा सकती। पेट्रोल की कीमत आसमान छूने लगी थी तथा इसकी संचित राशि के भी 1981 के उपयोग स्तर पर 30 वर्षों में समाप्त हो जाने की आशंका उत्पन्न हो गई। प्राकृतिक गैस भी 50 वर्षों तक ही विश्व की मांग पूरी करने घर को पर्याप्त है। तालिका 8.4 से प्रकट है कि पेट्रोल का क्षेत्रीय वितरण अति सामान है। जहां तक कोयले का प्रश्न है कुल 1 दर्जन देशों में ही कोयले की पर्याप्त संचित राशि है। पेट्रोल की भांति कोयले का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर परिवहन आसान नहीं है क्योंकि अधिक जगह घेरने के कारण यह अत्याधिक व्यय साध्य है। आणविक ऊर्जा के विकिरण से जनजीवन के खतरे में पढ़ने की प्रबल आशंकाएं रहती है। देशों में जहां आणविक ऊर्जा का पर्याप्त विकास हो चुका है, इसके प्रति प्रबल विरोध प्रकट हुए हैं। संयुक्त राज्य में ब्राउनसबरी, अलबामा तथा थ्रीम इल्स आईलैंड, पेंसिलवानिया – आणविक ऊर्जा केंद्रों की दो बड़ी दुर्घटनाओं ने इस विरोध को इतना प्रबल कर दिया कि यूरोप के कुछ देशो जैसे ऑस्ट्रिया एवं स्वीडन ने आणविक ऊर्जा उत्पादन पर प्रतिबंध लगा दिया। 1986 की परनोबिल एवं 2011 में जापान के कुकुशिमा परमाणु संयंत्रो रिसाव की घटनाओं से विश्व अणु ऊर्जा से सहम गया हैं। ऊर्जा संकट का सबसे अधिक प्रभाव विकासशील देशों पर ही पड़ा जो पेट्रोल का आयात करते हैं। प्रत्यक्षतः अब इनकी विदेशी मुद्रा जो प्रायः अंतर्राष्ट्रीय स्रोतो से भारी कर्ज लेने से उपलब्ध होती है का अधिकांश पेट्रोल की कीमत चुकाने में ही लग जाता है। उदाहरणार्थ भारत में 1976 से 90 में कुल आयात का लगभग एक तिहाई सिर्फ पेट्रोलियम आयात पर खर्च हुआ है। इसके अतिरिक्त विकासशील देश जिन निर्मित वस्तुओं का उर्वरक), रासायनिक पदार्थ, मशीनें आदि(विकसित देशों से आयात करते हैं। वे भी उन्हें पहले की अपेक्षा महंगी पड़ती है। क्योंकि निर्यातक देशों में ऊर्जा की बड़ी कीमत के चलते इनकी लागत बढ़ गई। दूसरी और विकसित देश प्रधानतया निर्मित वस्तुओं का आयात करते हैं ऊर्जा की बढी हुई कीमतों को अपनी वस्तुओं की कीमत में वृद्धि करके आयातक देशो जिनमें) पेट्रोल निर्यातक देशशामिल है(वे वसूल लेते हैं। इस प्रकार ऊर्जा संकट वस्तुतः ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतो की कीमत में अत्यधिक वृद्धि की देन है।

8.11– द्वितीय ऊर्जा संकटः–

विकासशील देशों में अधिकांश जनसंख्या देहाती क्षेत्रों में निवास करती है, देहातो में व्यापारिक ऊर्जा की अपेक्षा जैविक ऊर्जा, विशेषकर लकड़ी का ही ईधन अधिक उपयोग होता रहा है। उदाहरणार्थ अफ्रीका में कुल ऊर्जा उपभोग का 59% सिर्फ जलावन की लकड़ी से प्राप्त होता है। नेपाल में 86% ऊर्जा जलावन की लकड़ी से ही सुलभ होती है। बढ़ती जनसंख्या एवं अन्य कारणों से लकड़ी की मांग वृद्धि के कारण इन देशों में बड़े पैमाने पर वनो का कटाव हुआ है। जिससे वह ऊर्जा स्रोत भी अति क्षीण हो गया है। इसे द्वितीय उर्जा संकट से संबोधित किया गया है। तालिका

8.9 में आवश्यक जलावन की लकड़ी प्राप्त करने हेतु निर्वनीकरण पर प्रकाश डाला गया है। स्पष्ट है कि 2020 ई० तक अपनी जलावन की आवश्यकता पूर्ति हेतु अपने वनाच्छादित क्षेत्र में अफगानिस्तान एवं इथियोपिया जैसे देशों को 50 गुना, नेपाल भारत एवं नाइजीरिया को 10 गुना तथा पीरु जैसे देशों को 4 गुना वृद्धि करनी पड़ेगी। इससे खाद्य उत्पादन हेतु भूमि की बड़ी कमी पड़ जाएगी।

8.12– उर्जा भविष्य तथा संरक्षणः–

विश्व के विद्यमान व्यापारिक ऊर्जा उपयोग प्रतिरूप जिसमें 80% अंशदान जीवाश्म ईंधन का है। टिकाऊ नहीं है। यद्यपि विद्यमान उपभोग स्तर पर पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस एवं कोयला कार समाप्ति का काल क्रमशः 44, 62 व 140 वर्ष आंका गया है। तथा इसके के उपयोग से निःसृत हरित गृह गैस, कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर सल्फर डाई ऑक्साइड आदि से पर्यावरण पर बढते दुष्प्रभाव के चलते इनका सीमित उपयोग अपरिहार्य हैं। अतः भविष्य में वैकल्पिक ऊर्जा का उपयोग अनिवार्य होगा।

सन् 1986 ई० में आयजित World Energy Conferenee के अनुसार सन् 2040 तक जीवाश्म ईधन का कुल ऊर्जा खपत में अनुपात 65% रहेगा। जबकि आजविक ऊर्जा एवं नवय ऊर्जा का अनुपात बढ जायेगा। क्योटो प्रोटोकाल के लागू हो जाने तथा जलवायु परिवर्तन के प्रति बढती चिन्ता एवं सजगता एवं ग्लोबल वार्मिंग को सन् 2050 तक 2^0 सेन्टीग्रेट तक सीमित रखने के प्रयास से अब यह सम्भावना और बढ गयी है। क्योकि अब जापान यूरोपीय संघ और रुसी फेडरेशन सहित 55% से अधिक CO2 उत्सर्जन करने वाले देश W2 का उत्पादन 2012 तक 1990 के स्तर से 5 से 10 प्रतिशत तक को कम करने को प्रतिबद्ध थे। चीन' भारत जैसे विशाल विकासशील देशो को आर्थिक पारिस्थतिकीय दोनो कारणो से ऊर्जा संरक्षण की दिशा में कदम उठाना अनिवार्य है।

ऊर्जा संरक्षण का सर्वधिक महत्वपूर्ण है सतत् नव्यकरणीय भूताप, सौर, वायु, जल, ज्वारीय तरंग तथा जैव ऊर्जा एवं अनव्यकरणीय स्रोतो से प्राप्त ऊर्जा का अनुकूलतम अभीष्ट उपयोग समिश्र पाना जिससे ऊर्जा आवश्यकताओ की पूर्ति के साथ ही साथ वातावरण प्रदूषण को भी सीमित किया जा सके।

भविष्य में पेट्रोल व कोयला मुक्त अर्थ व्यवस्था विकसित करने की आवश्यकता है। लघु जल विद्युत परियोजनाओं के माध्यम से अत्यधिक ऊर्जा की जरुरतो को पूरा किया जा सकता है। इसके साथ ही साथ सौर ऊर्जा का विकास करके विद्युत ऊर्जा के सभी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्तिकिया जा सकता है।

भविष्य के औद्योगिक विकास सौर व पवन ऊर्जा पर आधारित होगें। भारत में सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा का अक्षय भण्डार है जो कभी नही समाप्त होगें। भारत में सौर ऊर्जा 2017 तक 12 मेगावाट उत्पादन हो रहा है। तकनीकी विकास के माध्यम से प्रत्येक मकान व प्रत्येक उद्योग स्वयं सौर ऊर्जा का उत्पादन करेगा।

8.13– शिला तेलः–

प्राकृतिक गैस प्राकृतिक पेट्रोलियम की तरह ही अवसाद के रूप में जमा हुआ हाइड्रोकार्बन पदार्थ है। परंतु समुचित दबाव तथा उष्मा से वंचित रहा है। अतः पेट्रोलियम का मूल्य काफी बढ़ जाने पर शिला तेल का अधिक उत्पादन संभव होगा शिला मार्लस्टोन तथा मोम की तरह गाढा कोरोगन का मिश्रण है इसको के शोधन की अधिक सस्ती प्राविधिकी का विकास अभी तक नहीं हुआ है। विभिन्न गौड पदार्थ निकालने की विधियां अभी विकसित नहीं की गई है। जिससे तेल पेट्रोलियम का प्रतिद्वंदी हो सकता है।

एक अनुमान के अनुसार विश्व में शीला तेल का संचित भंडार है। मिल्लर और कैमरान ने गैर कम्यूनिस्ट संसार में कुल संचित भंडार चार हजार अरब बैरल अनुमान किया है। जिसका आधा संयुक्त राज्य में प्रमाणित है संयुक्त राज्य के रॉकी पर्वतीय प्रदेश(विशेषकर उँटा, कोलोरेडो वायोमिंग राज्य) उत्तरी अप्लेशियन प्रदेश तथा ओजार्क के पदीय भाग में अधिकांश संचित भंडार है।

सोवियत संघ की कुल संचित राशि का आकलन 55 अरब टन है। कई प्रदेशों में उक्त राशि बिखरी पड़ी है। परंतु इस्टोटोनिया के उत्तरी पूर्वी भाग में लगभग 7 फीट मोटी 1500 वर्ग मीटर में विस्तृत कोखतला यार्व नामक क्षेत्र सर्व प्रसिद्ध उत्पादक है। यहां कुल संचित राशि 5 अरब टन आंकी गयी है।सन 1918 ई० से ही यहां उत्पादन प्रारंभ है। मंचूरिया (चीन), ऑस्ट्रेलिया, कनाडा मैं भी संचित राशि है। विश्व में अनुमानतः 5760 ट्रिलियन मीटर^3 शिला तेल / गैस प्राप्त किया जा सकता है। एशिया दक्षिणी अमेरिका, उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, यूरोप एवं ऑस्ट्रेलिया में बृहद जमाव है। (तालिका – 01)

8.14– विश्व में शीला तेल/ गैस

क्र० सं०	महाद्वीप	संभावित क्षमता ट्रिलियन मीटर^3 में
1	एशिया	1404 चीन भारत पाकिस्तान
2	द० अमेरीका	1225 कोलम्बिया बेनेजुएला अर्जेटाइना ब्राजील
3	उ० अमेरीका	1069 कनाडा मैक्सिको
4	अफ्रीका	1042 मारेक्को अलजीरिया ट्यूनीशिया द० अफ्रीका
5	यूरोप	624 फ्रान्स जर्मनी नीदरलैण्ड स्वीडेन नार्वे फीनलैण्ड
6	आस्ट्रेलिया	396 न्यूजीलैण्ड तस्मानिया

पृथ्वी के धरातल पर जब तेल के भंडार की खोज होती है। तब यह गाढे काले रंग का शीला तेल प्राप्त होता है। जिसे क्रूड आयल (Crude Oil) भी कहते है।इसमें उदप्रांगारो की बहुलता होती है। जब पृथ्वी से तेल को निकाला जाता है अपरिकृत तेल (Crude Oil) ठोस रूप में होता है।

इससे तेल के विभिन्न रूप पाने के लिए अपरिकृत तेल में मौजूद उदप्रांगार के विभिन्न कणों को अलग करना पड़ता है। तेल शोधन कारखाना में शोधन का यह सबसे सामान्य और पुराना तरीका है। उबलते हुए तापमान का प्रयोग करने वाली इस विधि को प्रभाजी आसवन कहते हैं। आसवन का एक तरीका यह भी होता है कि उदप्रांगार की एक लंबी चैन को जैसे का तैसा निकाल लेने के पश्चात उसे छोटी-छोटी श्रृंखला में निकाला जाता है। इस प्रक्रिया को रासायनिक संस्करण कहते हैं शिला तेल प्राप्त करने के लिए तेल शोधन कारखाना की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

8.15– अणु ऊर्जा (Nuclear Power):–

अणु ऊर्जा में एक ओर सृजन तथा विकास की अपार संभावनाएं निहित है दूसरी ओर यह अविनाश का अनन्य दूत है। अणु ऊर्जा का प्रमुख उपयोग सामरिक उपयोगो के लिए अत्यंत विनाशकारी नमो के निर्माण में हुआ है। केवल उस निर्माण प्रक्रिया के निःसृत गौड उत्पादों, कृषि उद्योग, दवा उद्योग, के क्षेत्र में हो रहा है।

आधुनिक युग में अणु ऊर्जा का महत्व सामाजिक दृष्टि से अधिक है। इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के उद्योगों के लिए तथा बहुमूल्य कच्चे माल के रूप में किया जाता है। अणु ऊर्जा का प्रमुख स्रोत यूरेनियम और थोरियम है।

आज अणु ऊर्जा से विद्युत ऊर्जा का उत्पादन हो रहा है। अणु शक्ति अन्य शक्ति / ऊर्जा की तुलना में महंगी है। एक टन यूरेनियम में जितनी उर्जा पैदा होगी उतने कोयले में 10 हजार टन से भी नहीं पैदा होगी। रेडियो धर्मिता विखण्डनीय अपशिष्टो के निस्तारण तथा अत्यधिक उत्पादन लागत संबंधी समस्याओं को सुलझाने के लिए काफी अनुसंधान कार्य हुआ है। आजविक संयोजन, की ही एक प्रसिद्ध विकल्प है। ऐसे अभिक्रिया के लिए सर्वप्रथम संसाधन स्रोत ड्यूटेरियम नामक हाइड्रोजन है। जो समुद्री जल में उपलब्ध है। अनुमान है कि समुद्री जल से प्रचुर मात्रा में इस पदार्थ का इतना ग्रहण किया जाए कि केवल यहां 1% मात्रा रह जाए तो इससे पृथ्वी की फासिल ईंधनो की प्रारंभिक मात्रा की अपेक्षा 5 लाख गुना ईंधन प्राप्त होगा।

विभिन्न देशों में हजारों अभिक्रियाओ द्वारा उत्पादन हो रहा है। तथा इससे भी अधिक निर्माण अवस्था में है या योजना अधीन है। कुछ अगम्य प्रदेशों के लिए जहां अन्य शक्ति स्रोतों को ले जाने में अत्यधिक परिवहन खर्च पड़ता है। अणुशक्ति अधिक महंगी होते हुए भी वरदान सिद्ध होगी। परंतु अधिकांश ऐसे प्रदेश कम विकसित देशों में है। जहां अणु शक्ति उत्पादन के लिए पूँजी नहीं है। सन् 2010 तक कुल व्यापारिक उर्जा के उपयोग में अणु शक्ति का अंशदान 7% हैं।

8.16– अणु ईधनः–

अणुशक्ति के दो प्रमुख स्रोत यूरेनियम और थोरियम है। एक पाैड यूरेनियम के विखंडन में 25 लाख पाैड कोयले के बराबर जलन शक्ति प्राप्त होती है। पृथ्वी पटल में अधिक मात्रा में लगभग 30 टान चट्टानों में से 2 औंस यूरेनियम पाया जाता है। यूरेनियम और थोरियम की कुल उपलब्ध ऊर्जा की मात्रा मानी जाती है।

कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, शीला तेल आदि सम्मिलित शक्ति से अधिक शक्ति इससे प्राप्त होती है। किंतु कम खर्चीला अणु ईधन सीमित है।

8.17– यूरेनियमः–

यूरेनियम के जमाव दो प्रकार के होते हैं।

1. ऐसी शिराये जिसमें अधिकांशतः पिच ब्लैड रहता है। इसके अंतर्गत कांगो, कनाडा, पुर्तगाल आते हैं और उसमें एक से चार प्रतिशत यूरेनियम रहता है। यह पृथ्वी की बहुत गहराई में पाया जाता है।
2. दूसरे प्रकार का जमाव स्थानांतरण जमाव है। इसके अंतर्गत संयुक्त राज्य अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया आदि क्षेत्र आते हैं। जहां बलुआ चट्टानों के साथ बड़ी मात्रा में सम्बद्ध रहता है।

अणु शक्ति ऊर्जा के दो प्रमुख स्रोत इस प्रकार हैं–

यूरेनियमः– यूरेनियम प्रायः पिच ब्लैड और कार्नोटाइट अयस्को से प्राप्त होते हैं। यह अयस्क भारी और पीतल के रंग की होती है। यह बहुत ही थोड़ी मात्रा में पाई जाती है। अतः अयस्क में 1% धातु होने पर भी इसे निकाला जा सकता है। यह प्रायः बालू मिट्टी के साथ मिली रहती है। चट्टानों से प्राप्त होती है।

8.18– उत्पादक क्षेत्रः– विश्व के उत्पादन का 1% उत्तरी अमेरिका और अफ्रीका से प्राप्त किया जाता है विश्व के मुख्य उत्पादक देश एवं क्षेत्र निम्न है–

8.18.1– कनाडाः– कनाडा में गेट स्टेव झील और ग्रेट वियर झील के निकट (बीवर रलाज और पोर्ट रेडियम) ह्यूरन झील के उत्तर में क्लाइड नदी के पास तथा अन्य भागों में बिखरे हुए रूप में मिलता है।

8.18.2– संयुक्त राज्य अमेरिकाः– संयुक्त राज्य अमेरिका में यह पश्चिमी लोरेडो पूर्वी यूटाहा और उत्तर-पश्चिमी न्यू मैक्सिको और व्योमिंग में प्राप्त होता है।

8.18.3– अफ्रीकाः– अफ्रीका में जैटे कांगो गणतंत्र के कटंगा प्रांत और दक्षिण अफ्रीका गणराज्य में बिटवारसलैंड में नाइजर में यूरेनियम के विशाल निक्षेप पाए जाते हैं। उत्पादन अरलित तथा अकौता खानो से किया जाता है।

8.18.4– ऑस्ट्रेलियाः– ऑस्ट्रेलिया में रेडियम हिल, मेरी कैथरीन और रीम के बनो में पाया जाता है।

8.18.5– रुसः– रूस के ताशकंद में दक्षिण पश्चिम में स्थित तबोसर, व्यान्यान्मुआन पर्वत में अण्डीझान, बैकाल झील के निकट स्ल्यूडीनाका तक तथा दक्षिणी अर्मेनिया की खानों से यूरेनियम निकाला जाता है। अणु अयस्क उत्पादन उद्योग अल्टाई पर्वत के उस्ट– कामेनोगोर्स्क में स्थित है।

8.18.6– भारतः– भारत में राजस्थान, तमिलनाडु, झारखंड, आंध्र प्रदेश और केरल में यूरेनियम पाया जाता है।

8.19– विश्व में यूरेनियम के भण्डार

विश्व के देशों में यूरेनियम उत्पादन क्षेत्र निम्न है।–

तालिका 1

विश्व में यूरेनियम के भण्डार (अनुमसनित हजार मीटरी टन में)

क्र०सं०	देश	भण्डार
1	संयुक्त राज्य अमेरीका	523

2	कनाडा	167
3	आस्ट्रेलिया	243
4	दक्षिणी अफ्रीका	306
5	नाइजर	074
6	उत्तरी कोरिया	26
7	फ्रांस	37
8	भारत	30
9	अल्जीरिया	28
10	ब्राजील	18

फ्रांसः– फ्रांस के मध्यवर्ती पठार के यूरेनियम का भण्डार है।

जापानः– जापान के टैगो क्षेत्र में यूरेनियम का जमाव पाया गया है।

आस्ट्रियाः– आस्ट्रिया में फयूएन्स किरेचन में यूरेनियम का भण्डार है।

8.20– थोरियमः–

थोरियम खनिज का मुख्य स्रोत मानोजाहद है। यह अधिकतर समुद्री तट की बालू मिट्टी में मिलता है। विश्व के उत्पादन का लगभग 75% भारत के केरल राज्य से प्राप्त होता है।

इनके अन्य उत्पादक देश निम्न है। ब्राजील, रूस (यूराल पर्वत), संयुक्त राज्य अमेरिका, कैरोलिना राज्य, नाइजीरिया, श्रीलंका, मलेशिया, थाईलैंड, इंडोनेशिया, ऑस्ट्रेलिया में बालू से प्राप्त होता है।

8.21– विभिन्न देशों में थोरियम के उत्पादक क्षेत्र–

क्र०सं०	देश	केन्द्र
1	रुस	नीवीवोरोनेश बोलोयार्स्क कोया लैनिनग्राह कोलो मानग्रीलास्क बिलबिना।
2	संयुक्त राज्य अमेरीका	शिपिंगपोर्ट पिट्सवर्ग बर्कले लिवरमोर कैलिफोर्निया बासिंगब्न लासवेगांश नेवादा न्यूयार्क इडाहो न्यू मैक्सिको जार्जिया (सवाना)।
3	ग्रेट ब्रिटेन	कैल्डरहाल हटर्सटन केले विड्स्केल ओल्डबर हिकंले प्वाइट सादुजवेल डाउनरे।
4	फ्रांस	मारकूले
5	भारत	तारापुर रावतभाटा कलपक्कम नर्रोरा काकरापारा।
6	जापान	टोकाई सुरंगा।

उपरोक्त सभी थोरियम उत्पादक देश है। उत्पादक देशों में से मुझे कुछ देश जैसे जैरे और दक्षिण अफ्रीका संघ निर्यातक देश है। इसके साथ ही ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस और जापान थोरियम के बड़े आयातक देश है।

8.22– शब्दसूची

परमाणु ऊर्जा - Atomic Energy

थोरियम - Thorium

मोनोजाइट - Monozite

यूरेनियम भण्डार - Uranium Deposits

कच्ची धातु - Ores

परमाणु भट्टी - Nuclear Reactor

विखण्डन - Fission

संगलन - Fusion

कारनोटाइट - Carnotite

यूनेनीनाइट - Unaninite

IAEA – International Atomic Energy Authority

8.23– स्वमूल्यांकन प्रश्न एवं आदर्श उत्तर

1– सौर्य ऊर्जा का प्रमुख उत्पादक देश कौन है?

अ– चीन ब– भारत

स– जर्मनी द– संयुक्त राज्य अमेरीका

2– भू–तापीय ऊर्जा का प्रमुख अत्पादक देश कौन है?

अ– फिलीपींस ब– इण्डोनेशिया

स– तुर्की द– संयुक्त राज्य अमेरीका

3– विश्व का सबसे बडा परमाणु उत्पादक देश है?

अ– भारत ब– संयुक्त राज्य अमेरीका

स– चीन द– जापान

4– परमाणु ऊर्जा किससे प्राप्त होती है?

अ– धात्विक खनिज ब– अधात्विक खनिज

स– कार्बनिक पदार्थ द– इनमें से कोई नही

5– सौर्य ऊर्जा किससे प्राप्त होती है?

अ– वायु ब– सूर्य

स– जल द– मृदा

आदर्श उत्तर–

1– अ, 2– द, 3–ब, 4–द, 5–ब।

8.24– उपयोगी पुस्तकेः–

1. प्रो० जगदीश सिंह– आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
2. अलका गौतम– आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
3. एस०डी० मौर्य– आर्थिक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन, प्रयागराज।
4. J.W. Alexander- Economic Geogrphy.
5. Leong, G.C. and Morgan, G.C. Human and Economic Geography oxford university press Hong Kong.
6. ए० गौतम– अर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
7. एस०डी० कौशिक– आर्थिक भूगोल के सरल सिद्धान्त।

8.25– अभ्यास प्रश्न (सत्रांत परीक्षा की तैयारी हेतु)

1. परमाणु ऊर्जा का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. भविष्य का ईधन सौर्य ऊर्जा है व्याख्या कीजिए।
3. भू–तापीय ऊर्जा पर टिप्पणी लिखिए।
4. अणु ऊर्जा का वर्णन कीजिए।
5. ऊर्जा संकट की विस्तार से विवेचना कीजिए।
6. नव्यकरणीय ऊर्जा के विभिन्न स्रोतो का वर्णन कीजिए।

नोट– इस ईकाई का अध्ययन कर अभ्यास प्रश्नों का उत्तर स्वयं लिखिए।

इकाई 09– कृषि के स्थानीयकरण के सिद्धान्त–वानथ्यूनेन का सिद्धान्त, कृषि अवस्थित के आधुनिक सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

1.0 प्रस्तावना

1.1 उद्देश्य

1.2 वानथ्यूनेन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

1.2.1 कृषि स्थानीयकरण का वानथ्यूनेन का सिद्धान्त

1.2.2 विद्वान वानथ्यूनेन की मान्यताएँ

1.2.3 वानथ्यूनेन का कृषि स्थानीयकरण का पेटियाँ

1.2.4 वानथ्यूनेन की कृषि भूमि उपयोग पद्धति

1.2.5 वानथ्यूनेन के सिद्धान्त में संशोधन

1.2.6 वानथ्यूनेन के सिद्धान्त की आलोचना

1.2.7 वानथ्यूनेन के सिद्धान्त की प्रासंगिकता

1.3 कृषि अवस्थिति के आधुनिक सिद्धान्त

1.3.1 अनुकूलतन भौतिक दशाओं एवं सीमाओं का सिद्धान्त

1.3.2 अनुकूलतन आर्थिक दशाओं एवं सीमाओं का सिद्धान्त

1.3.3 आलोचना

2.0 सारांश

2.1 बोध प्रश्न

2.2 शब्दावली

2.3 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.4 बोध प्रश्न के उत्तर

2.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.0 प्रस्तावना –

मानव अर्थव्यवस्था एवं जीवन में कृषि मूल है, कृषि पर जीवन निर्भर है। मानव जीवन–यापन हेतु विभिन्न परिस्थितियों, अवस्थाओं से गुजरता रहा। कभी आखेट किया, कभी पशुपालन, कभी वन्य वस्तु संग्रह किया और धीरे–धीरे कृषि प्रविधियों को अपनाने लगा और वर्तमान समय में कृषि भरण–पोषण का एकमात्र साधन बनी और इस पर आधारित अनेक व्यवसाय, उद्योग–धन्धे, क्रियाकलाप वर्तमान सभ्यता के आधार बन गये। कृषि लगभग 8000 ई०पू० से प्रारम्भ हुई, जब पौधों और पशुओं के पालने एवं उगाने का कार्य प्रारम्भ किया। एक लम्बे दौर में कभी पशुपालन प्रमुख था, कभी कृषि प्रमुख हो गयी। कृषि का स्वरूप निरन्तर परिवर्तित होता रहा। वर्तमान समय में आधुनिक विकसित औद्योगिक, वाणिज्यिक रूप में स्पष्ट दृष्टिगत होती है। बढ़ती जनसंख्या, भरण–पोषण हेतु मानव ने जंगलों को काटा और भूमि को कृषि कार्य में परिवर्तित किया। धीरे–धीरे कृषि का विस्तार हुआ। मैदानी क्षेत्रों के अलावा पहाड़ों और पठारों में भी कृषि का विस्तार होता गया। मानव अधिक से अधिक कृषि उत्पादन प्राप्त करने के लिए तत्पर रहा, जिससे कृषि क्षेत्र में शोध एवं अध्ययन का महत्व बढ़ा। कृषि भूमि उपयोग में यह महत्वपूर्ण बिन्दु होता है कि हम उस निश्चित इकाई क्षेत्र में किन विधियों, किन फसलों को अपनाकर अधिकतम उत्पादन प्राप्त कर सकें तथा कम लागत में अधिकतम लाभ कमा सकें। इसी सन्दर्भ में कृषि वैज्ञानिकों ने अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है, जिसमें विद्वान जे०एच० वानथ्यूनेन, विद्वान डन, हुबर, लॉश, इजार्ड, एलान्सो, हीरवर्थ, मैकार्टी, लिण्डमैन, आर०बी० मण्डल, जे० न्युमैन, मार्गेन्स्टिन आदि विद्वानों ने अपने विचार दिये।

1.1 उद्देश्य –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- कृषि भूमि उपयोग का अर्थ समझ सकेंगे।
- तुलनात्मक लाभ, उत्पादन लागत, विक्रय–मूल्य, परिवहन लागत, कैसे अन्तर्सम्बन्धित है, को समझ सकेंगे।
- फसल उत्पादन और लाभ के तत्वों की विशद् व्याख्या कर सकेंगे।
- बाजार से बढ़ती दूरी के साथ लाभ पर पड़ने वाले तत्व परिवहन व्यय कैसे कार्य करती है, की समझ विकसित होगी।
- फसल उत्पादन के सन्दर्भ में इस फसल से या किस कृषि क्रिया से अधिकतम लाभ प्राप्त होगा, का वर्णन कर सकेंगे।
- कृषि उत्पादन कार्य में बाजार की भूमिका की समझ कृषक के मस्तिष्क में विकसित होगी।

1.2 वानथ्यूनेन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि –

जॉन हेनरिच वानथ्यूनेन (24 जून, 1783 – 22 सितम्बर, 1850) जर्मनी के एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री थे। संक्षेप में इनको वानथ्यूनेन के नाम से जाना जाता था। उत्तरी जर्मनी के मैकलेनवर्ग में एक कृषि फार्म के व्यवस्थापक (मैनेजर) थे। इन्होंने अपने दीर्घकाल के अनुभव एवं आर्थिक विश्लेषण के आधार पर कृषि भूमि उपयोग से सम्बन्धित एक सिद्धान्त की विवेचना किया, जो वानथ्यूनेन के सिद्धान्त के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह सिद्धान्त इन्होंने 1826 ई० में दिया, ये सुयोग्य कृषि अर्थशास्त्री थे, इन्होंने अपने सिद्धान्त में अर्थशास्त्र एवं कृषि अर्थशास्त्र दोनों पक्षों को शामिल किया।

1.2.1 कृषि स्थानीयकरण का वानथ्यूनेन का सिद्धान्त –

विद्वान वानथ्यूनेन ने अपने दीर्घकालीन अनुभव और ज्ञान के आधार पर सन 1826 में कृषि भूमि उपयोग से सम्बन्धित कृषि अवस्थित या कृषि स्थानीयकरण से सम्बन्धित सिद्धान्त प्रस्तुत किया, जिसमें इन्होंने यह सुलझाने का प्रयास किया कि किस भू–भाग में कौन सी फसल अथवा कौन सी कृषि क्रिया पद्धति अपनायी जाये, जिससे कृषक को अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। विद्वान वानथ्यूनेन ने अपने सिद्धान्त के स्पष्टीकरण में कृषि उत्पादन के समस्त आगत के साथ–साथ बाजार तक उत्पाद को ले जाने तक खर्च होने वाले परिवहन व्यय को अधिक महत्व देते हुए अपने सिद्धान्त की व्याख्या किया। कृषक को होने वाला लाभ विक्रय मूल्य में उत्पादन लागत और परिवहन मूल्य को निकाल देने से निर्धारित होता है। इनके सिद्धान्त में अर्थशास्त्र, लगान का सिद्धान्त का महत्व अधिक है। वान थ्यूनेन का सिद्धान्त ग्रामीण एवं नगरीय दोनों प्रकार के भूमि उपयोग के लिए लागू होता है।

इस सिद्धान्त के अनुसार किसी भी कृषक का लाभ तीन विचलकों पर आधारित होता है, जो निम्न सूत्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है –

$$P = V – (E + T)$$

जहाँ

P = कृषक का लाभ (Profit)

V = वस्तु का विक्रय मूल्य (Selling Price)

E = उत्पादन की लागत (Expense)

T = परिवहन (Transport) लागत के द्योतक हैं।

वानथ्यूनेन की मान्यता है कि किसी भी भू–क्षेत्र पर उन्हीं फसलों का उत्पादन किया जाता है, जिसमें अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। इसका परिकलन निम्न सूत्र से किया जाता है–

$$L = Y(P-C) – YD\ (F)$$

जहाँ

L = अवस्थापनात्मक भूकर Location rent

Y = प्रति इकाई भूमि की उपज (प्रति वर्ग किमी0 टन में) (The Crop Yield)

P = उपज का बाजार मूल्य (Market Price of the crop)

C = उपज की उत्पादन लागत (Production Expenses)

D = बाजार की दूरी (Distance of Central Market)

F = परिवहन लागत (Transport Cost)

विद्वान वानथ्यूनेन के अनुसार नगर से दूरी बढ़ने के अनुसार शस्य स्वरूप में परिवर्तन दृष्टिगत होता है, क्योंकि दूरी बढ़ने के साथ उत्पादकता एवं शुद्ध लाभ में कमी होती जाती है और भूमि उपयोग में परिवर्तन पाया जाता है, जो चित्र सं०–क से स्पष्ट है। वानथ्यूनेन द्वारा प्रस्तुत सूत्र के अनुसार नगर से बाहर की ओर दूरी बढ़ती जाती है, परिवहन लागत बढ़ता है, उसी अनुपात में लाभ घटने लगता है, जहाँ कहीं भी कृषक को उत्पादित होने वाली फसल से लाभ समाप्त हो जाता है, वहीं उस फसल की बाहरी सीमा निर्धारित हो जायेगी। इससे स्पष्ट होता है कि आन्तरिक उक्त पेटियों की सीमायें अधिक लाभ प्रदान करती हैं और कम लाभ देने वाली बाजार से बढ़ती दूरी के अनुसार निर्धारित होती जाती हैं। इस तथ्य का प्रभाव उनकी कृषि पेटियों पर स्पष्ट दिखायी देता है। इसे निम्न उदाहरण से समझा जा सकता है – चित्र 11.1 में स्पष्ट है कि जैसे–जैसे नगर से दूरी बढ़ती जाती है, फसल का परिवहन व्यय बढ़ता जाता है, जिससे बचत कम होती है। चित्र में नगर से दूरी, उत्पादन लागत, प्रति इकाई उपज मूल्य, आर्थिक लगान (बचत), बाजार मूल्य प्रदर्शित किया गया है। नगर से बढ़ती दूरी के अनुसार प

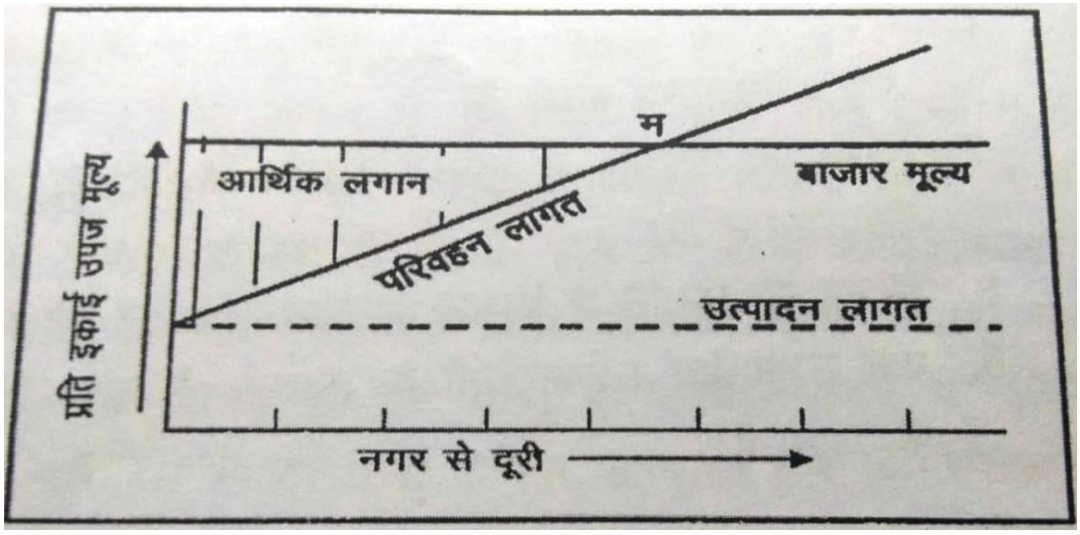

चित्र संख्या–11.1 नगर से दूरी एवं प्रति इकाई उपज मूल्य

बिन्दु पर बचत शून्य हो जाती है। इस कारण यहाँ फसल का उत्पादन लाभदायक नहीं होता है और इस भूमि को सीमान्त भूमि के नाम से जानते हैं। जैसे– मान लिया जाये, सब्जी उत्पादन का विवरण इस प्रकार है, प्रतिहेक्टेयर उत्पादन 1500 किलोग्राम है, बाजार का भाव 5 रुपया प्रति किलोग्राम है और उत्पादन व्यय 2 रुपया प्रति किलोग्राम है, परिवहन व्यय 0.10 रुपया प्रति किलोग्राम है, यदि सब्जी की खेती बाजार में की जाती है तो परिवहन शून्य होगा और कृषक को लाभ 1500 (5.00 – 2.00) – 1500 (0.10×0) = 4500 रुपया प्रति हेक्टेयर का लाभ किसान को होगा। यह लाभ अधिकतम है और यदि इसी सब्जी का उत्पादन इसी मानक के अनुसार 5 किलोमीटर दूर किया जाता है तो लाभ इस सूत्र के अनुसार घटकर रुपया 3,750/– प्रति हेक्टेयर प्राप्त होगा। 30 किलोमीटर की दूरी पर यह लाभ शून्य हो जायेगा। किसान अब आगे सब्जी का कृषि कार्य नहीं सम्पादित करेगा। इसे एक दूसरे उदाहरण और तालिका से समझा जा सकता है।

तालिका संख्या–11.1

विभिन्न फसलों के उत्पादन से प्राप्त लाभ की गणना

नगर से इकाई दूरी	बाजार मूल्य	उत्पादन लागत	परिवहन व्यय	लाभ

लकड़ी				
0.5	200	140	10	50
1.0	200	140	20	40
1.5	200	140	30	30
2.0	200	140	40	20
2.5	200	140	50	10
3.0	200	140	60	0
अन्न				
0.5	80	50	3	27
1.0	80	50	6	24
1.5	80	50	9	12
2.0	80	50	12	18
2.5	80	50	15	15
3.0	80	50	18	12
3.5	80	50	12	9
4.0	80	50	24	6
4.5	80	50	27	3
5.0	80	50	30	0

स्रोत – Anddreas Grotewold, Economic Geography (1959)

विद्वान वानथ्यूनेन ने बताया कि कोई वस्तु केन्द्रीय नगर से जितना अधिक दूरी पर उत्पादित होगी, उतना ही अधिक परिवहन व्यय लगेगा और उतना ही अनुपात में आर्थिक लाभ घटता जायेगा। इसे तालिका 14.1 के आंकड़े से समझा जा सकता है। लकड़ी का उत्पादन नगर के 0.5 की दूरी पर करने पर लाभ 50 रुपये का होता है और तीन इकाई दूरी पर उत्पादन करने पर यह आर्थिक लाभ शून्य हो जाता है। इस तरह अन्न का उत्पादन एक इकाई पर करने पर कृषक को 27 रुपये का आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। पाँच इकाई दूरी पर अन्न उत्पादन से शून्य रुपये का लाभ होता है। दो इकाई दूरी पर उत्पादन से लकड़ी

द्वारा 20 रुपये का एवं अन्न द्वारा 18 रुपये का लाभ होता है, लेकिन 2.5 इकाई दूरी पर लकड़ी द्वारा प्राप्त लाभ 10 है, जबकि अन्न द्वारा प्राप्त आर्थिक लाभ इसी दूरी पर 15 है, इसलिए कृषक दो इकाई तक लकड़ी का उत्पादन करेगा, दो इकाई के बाद आर्थिक लाभ अधिक होने से अन्न का उत्पादन करेगा। जिन वस्तुओं की उत्पादकता प्रति इकाई क्षेत्र कम है, वे नगर से दूर तक उगाई जा सकती है।

विद्वान वानथ्यूनेन के आर्थिक लाभ तथा दूरी के सम्बन्ध को दिखाने के लिए चित्र 11.2 में प्रयास किया गया है। इस आरेख में आर्थिक लगान को दिखाने वाली रेखा सीधी लम्बवत् है और दाहिनी ओर गिरती हुई दिखायी जाती है। परिवहन की दर अलग–अलग होने के कारण रेखाओं की ढाल प्रवणता भी भिन्न भिन्न है। चित्र 11.2 में सब्जी, दूध, मांस एवं पशु, बाजार प्रभाव नगण्य क्षेत्र को आर्थिक लाभ व बाजार से दूरी के परिप्रेक्ष्य में प्रदर्शित किया गया है। चित्र में सब्जी का उत्पादन 4.5 मील तक दूध का उत्पादन, 10 मील तक मांस और पशु का उत्पादन, 25 मील तक बाजार प्रभाव नगण्य वाला क्षेत्र 40 मील तक विस्तृत है। इन दूरियों तक इन फसलों की खेती से कुछ न कुछ आर्थिक लगान प्राप्त होगा, लेकिन फसल और भूमि उपयोग का निर्धारण तुलनात्मक लाभ पर निर्भर करता है, जो चित्र से स्पष्ट है कि सब्जी का उत्पादन 1.7 मील की दूरी तक होगा, उसके बाद दूध का उत्पादन होगा, क्योंकि 1.7 मील के बाद दूध से होने वाला आर्थिक लाभ सब्जी के लाभ से अधिक है। दूध का उत्पादन 5 मील तक होगा, उसके बाद मांस और पशु का उत्पादन होगा, क्योंकि उससे प्राप्त होने वाला आर्थिक लाभ दूध से प्राप्त आर्थिक लगान या लाभ से अधिक होगा। मांस और पशु का उत्पादन 19 मील तक किया जा सकेगा। इसके बाद बाजार प्रभाव नगण्य होने से उसका विस्तार होता जायेगा। इस तरह बाजार को केन्द्र मानते हुए इन दूरियों की त्रिज्या के आधार पर वृत्त बनाये जाते हैं, तो बाजार के चारों ओर संकेन्द्रीय वृत्त खण्ड निर्मित होंगे, जो फसलों के उत्पादन क्षेत्र को प्रदर्शित करेगा। इसी

प्रक्रिया एवं गणना विधि से विद्वान वानथ्यूनेन ने कृषि स्थानीयकरण के सिद्धान्त को मॉडल के रूप में व्यक्त किया है।

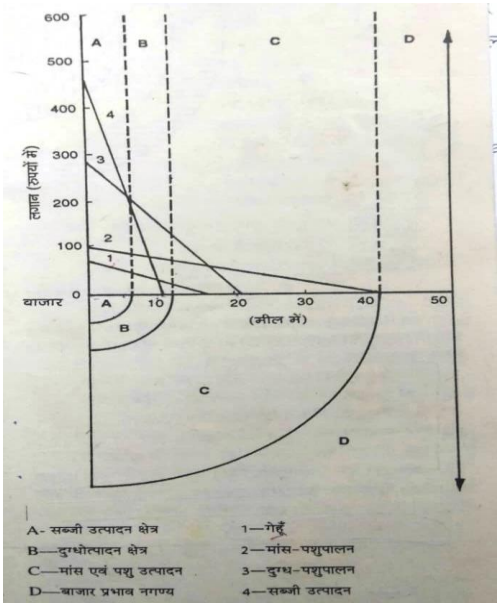

चित्र संख्या–11.2 बाजार दूरी एवं आर्थिक लगान अथवा कृषि पेटियों का सीमांकन

1.2.2 विद्वान वानथ्यूनेन की मान्यताएँ –

अपने सिद्धान्त की व्याख्या के लिए विद्वान वानथ्यूनेन ने अनेक मान्यताएँ निर्धारित किया है, जो इनके सिद्धान्त की व्याख्या के पहले समझना आवश्यक होता है। प्रस्तुत मान्यताएँ अग्रांकित हैं –

1. इन्होंने जिस कृषि क्षेत्र की कल्पना की है, वह एकाकी प्रदेश (आइसोलेटेड स्टेट) के रूप में पाया गया, इसमें एकमात्र नगर है। भौगोलिक दृष्टिकोण से यह अस्वाभाविक एवं काल्पनिक है, लेकिन फिर भी अपने सिद्धान्त की व्याख्या के लिए इन्होंने ऐसी मान्यता को स्वीकारा।

2. प्राकृतिक रूप से कृषि क्षेत्र में एक समान मृदा उर्वरता, एक समान फसलों की उत्पादन क्षमता, एक समान उत्पादन लागत, एक समान परिवहन व्यय की कल्पना किया। यह परिकल्पना भौगोलिक दृष्टि से असहज है। क्षेत्रीय विभिन्नता की संकल्पना के विपरीत है।

3. एकाकी प्रदेश में स्थित एकाकी नगर ही उत्पादन और उपभोग दोनों का स्रोत माना गया है। यह भी वास्तविकता से परे है।
4. इनके अनुसार भार एवं दूरी के अनुपात में परिवहन व्यय बढ़ता है। यह भी उस विशेष सन्दर्भों में ही सही होता है।
5. उस एकाकी प्रदेश में स्थित एक नगर के चारों ओर ग्रामीण अधिवासीय क्षेत्रों में कृषक अधिकतम लाभ के उद्देश्य से बाजार की माँग के अनुसार कृषि क्षेत्र में फसल उगाता है।
6. नगर कृषि क्षेत्रों के अधिशेष उत्पादन (Surplus Production) का एकमात्र बाजार है और कृषि क्षेत्र नगर को वस्तुओं की आपूर्ति का एकमात्र स्रोत है।
7. नगर के बाजार में किसी विशेष फसल के लिए सभी किसान समान मूल्य पाते हैं।
8. यह कृषि क्षेत्र एक समदेशिक सतह है (Uniform plain) जिसमें भूभाग, स्थलाकृति और जलवायु में समरूपता है।
9. कृषक विवेकशील है जो एक आर्थिक मानव जैसा व्यवहार करते हैं और अपने लाभ को अधिकतम करने के लिए खेती में संलग्न है।
10. कृषकों को बाजार की जरूरतों का पूर्ण ज्ञान है।
11. नगर, कृषि भूमि के केन्द्र में स्थित है और इसके आस–पास कोई भी प्रतिचुम्बक (बाजार) नहीं है।
12. यातायात का मात्र एक ही रूप है, घोड़ा गाड़ी एवं नाव। परिवहन लागत एक निश्चित दर से बढ़ती है।

1.2.3 वानथ्यूनेन का कृषि स्थानीयकरण का पेटियाँ –

अधिवास/नगर/गांव से जैसे–जैसे कृषि उत्पादन क्षेत्र की दूरी बढ़ती जाती है, वैसे–वैसे शस्य स्वरूप में विभेद दिखायी पड़ने लगता है, इसी

प्रकार बाजार से दूरी बढ़ने के साथ–साथ उत्पादकता एवं शुद्ध लाभ में कमी होती जाती है और भूमि उपयोग में भी परिवर्तन दिखायी देने लगता है।

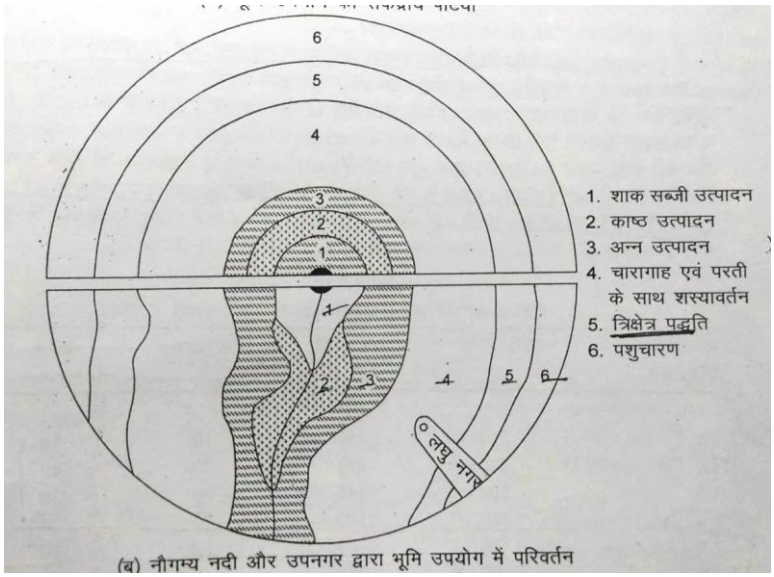

चित्र संख्या–11.3 कृषि अवथिति एवं कृषि पेटियाँ

चित्र संख्या–11.3 से स्पष्ट है कि इन्होंने कुल 6 पेटियों का उल्लेख किया –

1– केन्द्रीय नगर

2– प्रथम पेटी – यह नगर के सबसे निकट क्षेत्र है जिसमें बाजार के लिये सब्जी, दूध, डेयरी पदार्थों का उत्पादन होता है। ये उत्पादन शीघ्र नष्ट होने वाले होते हैं, इन पर परिवहन व्यय अधिक होता है। यह पेटी नगर की आवश्यकतानुसार बाहर की ओर विकसित होती है। माँग के अनुसार इसका पेटी का व्यास बढ़ जाता है।

3– द्वितीय पेटी – वानथ्यूनेन के समय जलाऊँ लकड़ी का बहुत महत्व था, इसलिए नगर के बाद दूसरी पेटी में ईंधन और इमारती लकड़ी का उत्पादन होता था। वर्तमान में इसकी उपयोगिता नहीं रह गयी है, क्योंकि गैस सिलेण्डर, एलपीजी पाइप लाइन एवं कोयले आदि का ईधन के रूप में प्रयोग किया जाने लगा।

4– तृतीय पेटी – इस पेटी में अनाज उत्पादन होता है, इसमें सघन कृषि होती है, कहीं भी परती भूमि नहीं छोड़ी जाती। इस पेटी के साथ नदी की सहलग्नता स्वीकारा था, क्योंकि इकाई की आवश्यकता थी। वर्तमान में सिंचाई के लिए नदी के अलावा अन्य साधन उपलब्ध हैं।

5– नाव्य नदी – इस नदी का प्रवाह–पथ।

6– चतुर्थ पेटी – इस पेटी में भी अनाज उत्पादन होता है किन्तु इसमें परती व चारण भूमि भी छोड़ी जाती है। इस पेटी में सिंचाई के जल की कम आवश्यकता होती है।

7– पांचवी पेटी – यहाँ भी अनाज की खेती होती है, परती भूमि का प्रतिशत अधिक (33 प्रतिशत) होता है और तीन खेत प्रणाली प्रचलित होती है। इसके अन्तर्गत एक तिहाई भाग में खेती, दूसरे में परती, तीसरे एक तिहाई भाग में पशुपालन कार्य सम्पादित होता है। पेटी के बाह्यवर्ती क्षेत्र में चारागाह पाया जाता है।

8– छठीं पेटी – इस पेटी में पशुपालन कार्य होता है। दूध से पनीर प्राप्त होता है और मांस के लिए पशुओं को पैदल नगर तक भेजा जाता है। यह पेटी दूरस्थ भाग में होती है।

विद्वान वानथ्युनेन ने अपनी 6 कृषि पेटियों को उपर्युक्त चित्र में स्पष्ट दर्शाया है। चित्र से स्पष्ट है कि केन्द्रीय नगर के चारों तरफ खेतियाँ वृत्ताकार रूप में फैली हुई हैं। नाव्य नदी के कारण पेटियों के वृत्ताकार स्वरूप में थोड़ा सा परिवर्तन परिलक्षित होता है। इनका सिद्धान्त विचारपरक है और अनावश्यक, अवास्तविक मान्यताओं पर निर्भर है।

1.2.4 वानथ्यूनेन की कृषि भूमि उपयोग पद्धति –

वानथ्यूनेन के कृषि भूमि उपयोग पद्धति की प्रस्तुत सारिणी से स्पष्ट है कि वृत्त खण्ड 0 में नगरीय औद्योगिक भूमि उपयोग का प्रकार है। यहाँ पर औद्योगिक वस्तुएँ विपणन की मुख्य वस्तुएँ हैं, उत्पादन पद्धति प्रदेश का व्यापारिक नगर है। वृत्तखण्ड–1 में जो नगर से 0.1 से 0.6 की सापेक्षिक दूरी पर है, यहाँ भूमि उपयोग गहन कृषि के रूप में हो रहा है। विपणन की मुख्य वस्तु साग–सब्जी एवं दूध है, उत्पादन पद्धति अति गहन है, जिसमें खाद आदि का प्रयोग किया जा रहा है। वृत्तखण्ड–2 की केन्द्रीय नगर से सापेक्षिक दूरी 0.6 से 3.5 है, यहाँ पर भूमि वन के रूप में उपयोग की जा रही है, यहाँ पर विपणन की मुख्य वस्तु ईधन व इमारती लकड़ी है, उत्पादन पद्धति सुव्यवस्थित, वानिकी है। वृत्तखण्ड–3, जो केन्द्रीय नगर से 3.6 से 4.6 सापेक्षिक दूरी पर है, इसका भूमि उपयोग विस्तृत कृषि भूमि के रूप में विपणन की वस्तु राई और आलू है। 6 वर्षीय फसल चक्र राई दो बार, आलू एक बार, बेंच एक और क्लोवर एक, जौ एक बार पैदा किया जाता है। वृत्तखण्ड–4, जो केन्द्रीय नगर से 4.7 से 34 सापेक्षिक दूरी पर है, इसका भूमि उपयोग विस्तृत कृषि का है, विपणन की प्रमुख वस्तु राई है, सात वर्षीय फसल चक्र अपनाया जाता है। इस फसल चक्र में चारागाह–3 राई–1, जौ–ओट एक, परती आदि अपनाया जाता है। वृत्तखण्ड–5 में केन्द्रीय नगर से सापेक्षिक दूरी 34 से 44 के बीच है, इसका भूमि उपयोग विस्तृत कृषि का है और विपणन की वस्तु राई और पशुउत्पाद से सम्बन्धित है, यहाँ उत्पादन पद्धति 3 खेत प्रणाली अपनायी गयी है, जिसमें राई, चारागाह और परती शामिल हैं। वृत्तखण्ड 6, जो केन्द्रीय नगर से 45 से 100 इकाई सापेक्षिक दूरी पर है, में भूमि का उपयोग पशुपालन के रूप में किया जाता है। यहाँ का विपणन की मुख्य वस्तु पशु उत्पाद से सम्बन्धित है। उत्पादन पद्धति पशुपालन और कुछ भाग राई से सम्बन्धित है। वृत्तखण्ड–7 केन्द्रीय नगर से 100 इकाई सापेक्षिक दूरी पर है। भूमि बंजर के रूप में पायी जाती है। यहाँ पर किसी भी प्रकार की कृषि सम्भव नहीं है, इसलिए विपणन की कोई वस्तु उपलब्ध नहीं है और न ही कोई उत्पादन पद्धति है।

1.2.5 वानथ्यूनेन के सिद्धान्त में संशोधन –

विद्वान वानथ्यूनेन के सिद्धान्त की मान्यतायें अवास्तविक, अव्यवहारिक होने के कारण समय के अनुसार अप्रासंगिक होने लगी। इसलिए इनके सिद्धान्त में समय–समय पर संशोधन विद्वानों ने किया, क्योंकि विश्व के सभी भागों में मैकलेनवर्ग ने स्थित फार्महाउस जैसी भौगोलिक परिस्थितियाँ विद्यमान नहीं हैं। मृदा की उर्वरता भूमि की समतलता भौगोलिक वातावरण की समानता, परिवहन लागत, उत्पादन लागत, बाजार मूल्य, किसान की रुचि, उसकी मनोदशा व्यवहारिक पक्ष पूरे विश्व में मैकलेनवर्ग जैसी नहीं थी। अतः यह सिद्धान्त धीरे–धीरे परिवर्तित होता चला गया। विद्वान डन, हुबर, इजार्ड, मारबुल, लाश, हीरवर्थ, एलान्सो ने इस सिद्धान्त को पुनर्विश्लेषित किया, नवीन विचारों द्वारा संशोधित किया और पुनः प्रतिपादित करने का प्रयास किया, जिससे विद्वान वानथ्यूनेन के मौलिक सिद्धान्त का स्वरूप धीरे–धीरे पूर्णतः परिवर्तित होता चला गया।

1.2.6 वानथ्यूनेन के सिद्धान्त की आलोचना –

वानथ्यूनेन के सिद्धान्त एक निश्चित समय, निश्चित क्षेत्र पर ही उपयुक्त था, क्योंकि उनकी मान्यतायें सर्वत्र अवास्तविक हैं। अतः इनकी आलोचनायें विद्वान डन, लाश, मारबुल, गैरिसन, चिसोल्म ने किया।

1. इनका सिद्धान्त प्राचीन समय के नगरों के लिए ही उपयुक्त है। वर्तमान काल में परिस्थितियाँ बदल चुकी है। घोड़ा गाड़ी का स्थान तीव्रगामी परिवहन साधनों, जैसे– रेलगाड़ी, मोटरगाड़ी, वायुयान, पाइ लाइन परिवहन ने ले लिया है।
2. अब न तो दूरी के अनुपात में समान रूप में परिवहन व्यय बढ़ता है।
3. ईंधन के रूप में लकड़ी का स्थान कोयले एवं गैस ने ले लिया है।
4. व्यावहारिक रूप में संकेन्द्रीय पेटियाँ समान रूप से सर्वत्र नहीं मिलती है।

5. थ्यूनेन के आर्थिक लगान के विचार को अनेक आधुनिक विद्वानों ने मान्यता दी है और अपने लेखों में शामिल किया है।
6. लॉश ने लगान पर उत्पादन मूल्य, कीमत तथा पैदावार जैसे अन्य परिवर्तन की खोज की और अवस्थिति सम्भावनाओं को निश्चित करने का प्रयत्न किया तथा बताया कि शहर से दूर कृषि क्षमता में हमेंशा ह्रास होता है, जो काल्पनिक है।
7. हाल एवं चिशोल्म तथा डन थ्यूनेन के इस विचार की आलोचना की कि शहर से दूर कृषि क्षमता में ह्रांस होता है।
8. गैरिसन और मार्बुल ने सिद्धान्त में प्रयुक्त समीकरण को अपूर्ण बताया है।

1.2.7 वानथ्यूनेन के सिद्धान्त की प्रासंगिकता –

विद्वान वानथ्यूनेन का कृषि भूमि उपयोग सिद्धान्त जिन मान्यताओं पर आधारित है, वे सारी मान्यताएं उस समय भी सर्वत्र नहीं थी, इसलिए उनकी मान्यतायें अवास्तविक थीं एवं उनकी क्रमबद्ध पेटियाँ विश्व के अन्य क्षेत्रों में अवास्तविक अप्रासंगिक थीं, इन्होंने अपने सिद्धान्त में तकनीकी विकास और भूमि उपयोग के स्वरूप में आने वाले परिवर्तन को शामिल नहीं किया था। आधुनिक विकसित अर्थव्यवस्था में सिद्धान्त तथ्यहीन हो गया। इनकी पेटियां यूरुग्वे ने अपवाद स्वरूप देखने को मिलती हैं। मोण्टेविडियो नगर के पास कुछ पेटियां मिलती हैं। इसी तरह उपनिवेशी मैक्सिको में कृषि मेखलायें सिद्धान्त के अनुसार पायी गयीं। वर्तमान में परिवहन द्रुतगामी होने, कृषि में यन्त्रीकरण, फसल संयोजन, फसल सन्तुलन, हरित क्रान्ति, शोधा अनुसंधान, जलवायु परिवर्तन, अन्य भौगोलिक कारणों से वानथ्यूनेन से समय से आज तक पर्यावरणीय दशाओं में अनेक परिवर्तन हुआ है। भारत जैसे सघन बसे क्षेत्र में जीवन–निर्वाहन कृषि होने से इनकी पेटियां सन्दर्भहीन हो गयीं। एक नगर, एक बाजार, एक तरह की भौगोलिक परिस्थितियां और उनके कृषि फार्म जैसी व्यवस्था धरातल पर अन्यत्र असम्भव है। इसलिए यह

सिद्धान्त वर्तमान समय में अप्रासंगिक तो है, लेकिन आने वाले विद्वानों के लिए एक नयी विचार प्रस्तुत करता है।

1.3 कृषि अवस्थिति के आधुनिक सिद्धान्त –

कृषि अवस्थिति (कृषि भूमि उपयोग) का आधुनिक सिद्धान्त वास्तविक जगत् में व्याप्त चरों पर आधारित है। आधुनिक सिद्धान्तों में प्राकृतिक वातावरण तथा भूमि संसाधन की क्षेत्रीय विभिन्नताओं को अधिक महत्व दिया गया है इसके अनुसार विभिन्न फसलों के उत्पादन के लिये अनुकूलतम प्राकृतिक और आर्थिक क्षेत्रों को सीमांकित किया जा सकता है। इस आधुनिक सिद्धान्त में दो प्रमुख आधुनिक सिद्धान्त सम्मिलित हैं –

1.3.1 अनुकूलतम भौतिक दशाओं एवं सीमाओं का सिद्धान्त –
(Theory of Physical Limits and Optimum Canditions)

प्रत्येक फसल के उत्पादन के लिये कुछ विशेष प्राकृतिक दशाओं की आवश्यकता होती है जैसे– अनुकूल तापमान, वर्षा, आर्द्रता, मृदा के पोषक तत्व इनकी उपलब्धता के आधार पर ही किसी विशेष फसल का सीमांकन किया जाता है। एक ऐसा क्षेत्र जहाँ इन सभी अनुकूल दशाओं का आदर्श सम्मिश्र पाया जाता है और उत्पादन की सम्भावना अधिक होती है, इस क्षेत्र को अनुकूलतम प्राकृतिक दशाओं वाला क्षेत्र (Optimum Area) कहते हैं। प्रायः ऐसी दशाएँ सर्वत्र नहीं पायी जाती और परिस्थितियाँ भी बदलती रहती है। विभिन्न प्रकार की भूमि अलग–अलग फसलों के उत्पादन के लिए अनुकूल होती है। सबसे पहले यह देखा जाता है कि कौन–सा भूखण्ड किस फसल के उत्पादन के लिए सर्वाधिक अनुकूल होगा। प्रत्येक फसल के लिए निर्धारित प्राकृतिक सीमाओं के अन्तर्गत अनुकूलतम् दशाओं का सीमांकन किया जाता है। अनुकूलतम प्राकृतिक दशाओं का क्षेत्र को चित्र 11.4 में स्पष्ट प्रदर्शित किया गया है। किसी फसल के उत्पादन के प्राकृतिक सीमाएँ,

अनुकूलतम दशायें बदलती रहती हैं। जिससे विभिन्न फसलों के उत्पादन की प्राकृतिक सीमाओं एवं अनुकूलतम दशाओं में भी परिवर्तन होता रहता है। जैसे–अब गेहूँ की कम समय में तैयार होने वाली किस्मों के आविष्कार से गेहूँ अधिक ठण्डे प्रदेशों में भी उगाया जाता है। यू.एस.ए. की कपास पेटी कपास उत्पादन हेतु प्राकृतिक सीमायें एवं अनुकूलतम दशायें स्पष्टतः देखने को मिलती है।

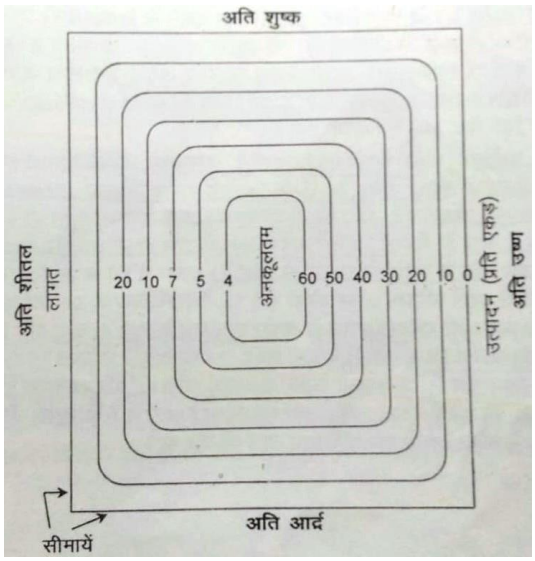

चित्र संख्या–11.4 प्राकृतिक सीमायें एवं अनुकूलतम दशाओं का सिद्धांत

1.3.2 अनुकूलतम आर्थिक दशाओं एवं सीमाओं का सिद्धान्त – (Theory of Optimum Economic Conditions and Limits)

आर्थिक दशाओं से तात्पर्य उन स्थिति से है, जिनसे किसी क्षेत्र की उत्पादकता, भौतिक कारकों के संयोग से निर्धारित होती है। परिवहन व्यवस्था बाजार, मांग और सरकारी नीति ऐसे प्रमुख आर्थिक कारक हैं, जो प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कृषि की उत्पादकता को प्रभावित करते हैं। भौतिक कारकों की अपेक्षा आर्थिक कारक अधिक परिवर्तनशील होता है।

एक काल अवधि में किसी क्षेत्र में इनकी स्थितियाँ अनुकूल होती है, जिससे वहाँ कृषि उत्पादकता अधिकतम होती है, जिस क्षेत्र में ऐसी अनुकूल दशायें

उपलब्ध होती हैं, उन्हें 'अनुकूलतम आर्थिक दशाओं का क्षेत्र' कहा जाता है। इस क्षेत्र से दूरी बढ़ने पर आर्थिक दशाओं की अनुकूलता कम होती जाती है और उत्पादन लागत बढ़ता जाता है जिससे कई मेखलायें बन जाती है।

सर्वप्रथम मैकार्टी एवं लिण्डबर्ग (1966) ने अनुकूलतम आर्थिक दशाओं की सीमा कहाँ तक और कैसे निर्धारित होगी' का अध्ययन किया और अनुकूलतम आर्थिक दशाओं और सीमाओं का नियम प्रस्तुत किया, इनके सिद्धान्त का आधार डेविड रिकार्डो का आर्थिक लगान का सिद्धान्त था। इस सिद्धान्त को 14.5 से स्पष्ट समझा जा सकता है।

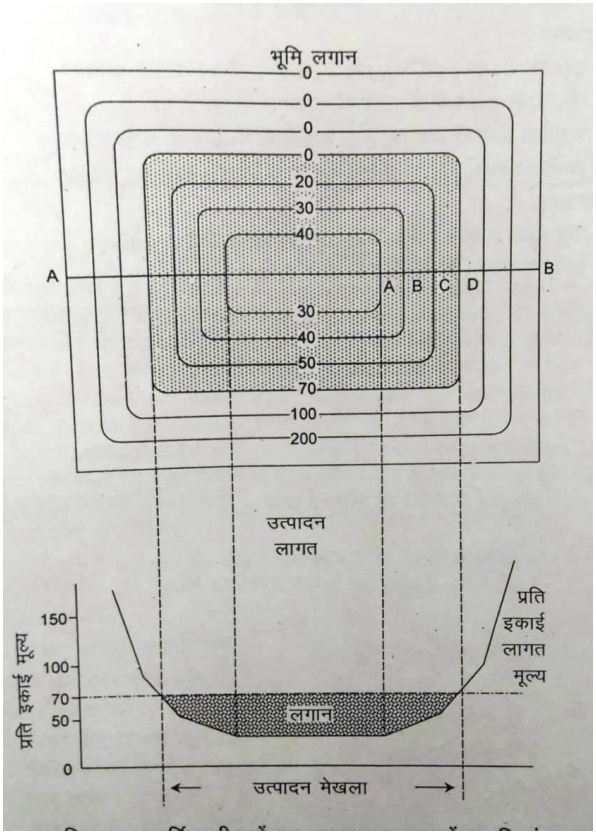

चित्र संख्या–11.5 आर्थिक सीमाओं एवं अनुकूलतम दशाओं का सिद्धांत

मैकार्टी एवं लिण्डबर्ग ने अपने सिद्धान्त की व्याख्या दुग्ध उत्पादन, कृषकों की उत्पादन लागत और भूमि लगान से किया। यदि अन्य भौतिक दशायें समान हों तो परिवहन लागत द्वारा ही निर्धारित होगा कि बाजार में कृषक द्वारा

दूध की आपूर्ति सीधे तौर पर या उसका रूपान्तरण (पनीर, आईसक्रीम, मक्खन, दही आदि) करके विक्रय किया जायेगा। इसके लिए मैकार्टी एवं लिण्डबर्ग ने बाजार से बढ़ती दूरी के अनुसार परिवहन लागत के आधार पर क्षेत्र को 4 भागों में A, B, C, D में बाँटा और बताया कि बाजार के लिए दुग्ध आपूर्ति A और B मेखला वाले किसान करेंगे C मेखला के किसान दूध के किसी भी रूप में आपूर्ति जबकि D मेखला के दूरी बाजार से अधिक होने के कारण दूध से रूपान्तरित वस्तुओं की आपूर्ति बाजार D मेखला के दूरी बाजार से अधिक होने के कारण दूध से रूपान्तरित वस्तुओं की आपूर्ति बाजार की होगी क्योंकि दूध के बने उत्पादन के खराब होने की सम्भावना कम होगी और लाभ भी अधिक होगा। हालांकि इसमें उत्पादन लागत अधिक आती है परन्तु परिवहन व्यय बहुत कम पड़ता है और काल अवधि अधिक होती है।

मैकार्टी एवं लिण्डबर्ग ने अपने सिद्धान्त में समस्त आर्थिक कारकों से उत्पन्न दशाओं से कम बल्कि इसके एक अवयव परिवहन को आधार माना।

1.3.3 आलोचना –

वर्तमान तकनीकी विकास युग में मात्र परिवहन व्यवस्था ही कृषि के इस प्रकार के प्रतिरूप को जन्म देगी, इसकी सम्भावना बहुत कम है।

2.0 सारांश –

कृषि अवस्थित सिद्धान्त अथवा मॉडल मान्यताएं, कृषि भूमि उपयोग की विषमताओं, विविधताओं, जटिलताओं को समझने, वर्णन करने में अत्यन्त उपयोगी है। विद्वानों ने अनेक प्रकार के मॉडल सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर उनमें विभिन्न वर्गों में रखा, जिसमें प्रस्तुत इकाई में कृषि अवस्थित सिद्धान्त एवं आधुनिक कृषि अवस्थित सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन किया गया। वानथ्यूनेन का सिद्धान्त, मैकार्टी एवं लिण्डवर्ग का सिद्धान्त अत्यन्त रुचिपूर्ण है और आज भी कृषि भूगोलवेत्ताओं के बीच परिचर्चा का विषय बना रहता है। यह मॉडल नियोजकों के लिए एक मार्गदर्शक का कार्य करेगा और लोगों को नये मॉडल परिचिन्तन मनन के लिए प्रेरित करेगा।

2.1 बोध प्रश्न –

निम्नलिखित वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के सही विकल्प चुनिए –

1. वानथ्यूनेन का सिद्धान्त किस वर्ष प्रतिपादित हुआ – क. 1825, ख. 1826, ग. 1827, घ. 1828.
2. वानथ्यूनेन के सिद्धान्त में द्वितीय कृषि पेटी में क्या शामिल है – क. जलाऊँ लकड़ी, ख. दूध उत्पादन, ग. सब्जी उत्पादन, घ. उपरोक्त में कोई नहीं।
3. वानथ्यूनेन के सिद्धान्त के आलोचक निम्न में कौन नहीं थे– क. डन, ख. लाश, ग. इजार्ड, घ. डब्ल्यू०एम० डेविस।

4. उत्पादन की लागत को किस वर्णाक्षर से इंगित किया गया है– क. A., ख. V., ग. E., घ. T.
5. अनुकूलतम आर्थिक दशाओं एवं सीमाओं का सिद्धान्त दिया है– क. डन, ख. लाश, ग. इजार्ड, घ. मैकार्टी एवं लिण्डवर्ग।

2.2 शब्दावली –

1. **उत्पादन लागत** – वस्तु के उत्पादन में खर्च होने वाला व्यय, जिसमें फसल का पारिश्रमिक, लागत, मिट्टी तैयार होने में लगने वाला खर्च व अन्य निराई, गुड़ाई शामिल होता है।
2. **आर्थिक लगान** – किसी भूमि से उत्पादित फसल के विक्रय मूल्य से उत्पादन लागत और परिवहन दोनों के सम्मिलित योगों को घटाने से जो परिणाम आता है, उसे आर्थिक लगान या आर्थिक लाभ कहते हैं।
3. **समांगी प्रदेश** – ऐसा भूभाग, जहाँ पर समस्त भौतिक व मानवीय परिस्थितियाँ एक समान हों।
4. **परिवहन लागत** – उत्पादित वस्तु को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में मालभाड़ा के रूप में किया जाने वाला खर्च, जिसमें माल को उतारने, लादने का भी व्यय शामिल होता है।

2.3 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कुमार, प्रमीला एवं श्रीकमल शर्मा : कृषि भूगोल, मध्य प्रदेश, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भेपाल, 2006.
2. तिवारी, आर०सी० तथा सिंह, बी०एन० : कृषि भूगोल प्रयाग पुस्तक सदन, इलाहाबाद।
3. Hussain
4. Singh

2.4 बोध प्रश्न के उत्तर –

1. ख, 2. क, 3. घ, 4. ग, 5. घ।

2.5 अभ्यासार्थ प्रश्न –

1. वानथ्यूनेन के सिद्धान्त का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।
2. वानथ्यूनेन के सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए उसकी प्रासंगिकता बताइये।
3. वानथ्यूनेन के सिद्धान्त के प्रमुख कृषि पेटियों का उल्लेख कीजिए।
4. वानथ्यूनेन के सिद्धान्त की मान्यताओं का वर्णन कीजिए।
5. कृषि अवस्थित के आधुनिक सिद्धान्त का सविस्तार वर्णन कीजिए।
6. कृषि आधुनिक सिद्धान्त के प्राकृतिक सीमाओं तथा अनुकूलतम् दशाओं का सिद्धान्त कैसे है, सिद्ध कीजिए।
7. मैकार्टी एवं लिंण्डवर्ग के मॉडल की व्याख्या कीजिए।
8. आधुनिकीकरण के सिद्धान्त आर्थिक सीमाओं तथा अनुकूलतम दशाओं का सिद्धान्त का परीक्षण कीजिए।

सन्दर्भ सूची

1. कुमार, प्रमीला एवं श्रीकमल शर्मा : कृषि भूगोल, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 2006.
2. तिवारी आर०सी० तथा बी०एन० सिंह कृषि भूगोल प्रयास पुस्तक सदन इलाहाबाद।
3. Hussain Majid, Agricultural Geography, Inter India Publications, New Delhi, 1919.
4. Singh, J.and S.S. Dhillon, agricultural Geography. Tatas Mc Graw Hill Pub. New Delhi, 1988.
5. Chishilm, M (1957) Regional variations in road transport cost of milk collection from framers in England and Wales, farm Economist,3pp 30-38.
6. Chisholm, M. (1962) Rural Settlement and landuse: An Essay in Location.London, Hutchinson Library.
7. Chisholm, M. (1966) Geography and Economics. London. Hutchinsn Library publication.
8. Dunn,E.S. (1954) The Location of Agricultural Production. Gainesville : University of Florida.
9. Found. W.C. (1971) A Theoretical Approach to Rural Landuse Patterns. London: Edware Arnold.
10. Garrison,W.L. and D.F. Marble (1957) The Spatial Structure of Agricultural activities,ann. Ass. Am. Geog.52, pp 290-297.
11. Haggett,p. et. al(1977) Locational analysis in Humna Geography. London: Edward Arnold.
12. Thunen, J.H. von (1826) Der Isolierate Staut in Beziehung and Landwirtschaft and Nationalkonomie, pt,1 Rostock.Collected edition, pt.I,ll and III ,1876, Berlin.

13. Thoman, R.S. and P.B. Corban.(1962-1974) The Geography of Economick Activity. 3r^{d} ed. With p.B. Corbin New York: McGraw Hill Books Co.

14. Van, Valkenburg.S. and (1952) Europe. Europe. New York: john Willy.

इकाई 10 कृषि प्रदेश, परिभाषा, सीमाकंन के आधारतत्व, उद्भव एवं विकास के कारण

रूपरेखा

1.0 प्रस्तावना

1.1 **उद्देश्य**

1.2 **कृषि प्रदेश (Agriculture Region)**

1.3. परिभाषा –

1.4 कृषि प्रादेशिकरण के उपागम

1. परम्परागत उपागम (Traditional Approach)
2. फार्मिंग पद्धति उपागम अथवा कृषिगत–आर्थिक संगठनात्मक उपागम (Farming System Approach or Agro-economic organizational Approach)
3. बहुकारक उपागम (Multifactor Analysis Approach)
4. शस्य–संयोजन उपागम (Crop Combination Approach)
5 .तकनीकी–ज्ञान उपागम (Technical Know-how Approach)

1.5 समग्र कृषि–प्रदेश उपागम –

1.भौतिक उपागम

2.आर्थिक उपागम

3.सांस्कृतिक उपागम

1.6 कृषि प्रदेशों का सीमांकन

1.7 कृषि–प्रदेशों के उद्भव–विकास के कारण

1.8..0.साराश

1.9.बेाध प्रश्न

1.10.बेाध प्रश्न के उत्तर

1.11.सदर्भ ग्रन्थ सूची

1.12.. अभ्यास के प्रश्न

1.0 प्रस्तावना –

प्रदेश (Region) शब्द की लैटिन भाषा के Regio शब्द से उत्पत्ति हुई है। इसका तात्पर्य सीधी रेखा है, इसका प्रयोग खगोलशास्त्रियों ने आकाशीय पिण्ड़ो के क्षेत्रों के सीमांकन में किया था। भूगोल में प्रदेश की संकलपना एक महत्वपूर्ण संकलपना के रूप है प्रदेश की संकलपना पर भूगोल वेताओं में मत वैविध्यता है भूगोल वेताओं में कुछ लोग सम्पूर्ण प्रदेश और कुछ लोग एक भौगोलिक इकाई के रूप में स्वीकार करते हैं। यदि सभी विद्वानों के मत का विश्लेषण किया जाय तो यह स्पष्ट होता है कि 'प्रदेश भूतल का वह क्षेत्र है जो कुछ विशिष्ट चरों/मापदण्डों/कारकों में आपस में समान होता है तथा अपने आस–पास अथवा अपने चारों ओर के क्षेत्रों से इन्हीं कारकों/मापदण्डों/चरों के आधार पर भिन्न होता है' जितने भू–भाग पर इन प्राकृतिक व सांस्कृतिक मापदण्डों में समानता पायी जाती है उस सम्पूर्ण क्षेत्र को एक प्रदेश के अन्तर्गत शामिल करते है। इस तरह मृदा प्रदेश, जलवायु प्रदेश, भू–आकृति प्रदेश, वनपति प्रदेश, भाषा प्रदेश, औद्योगिक प्रदेश आदि निर्मित होते हैं।

उद्देश्य –

कृषि प्रदेश के अध्ययन का उद्देश्य है कि आप निम्नलिखित तथ्यों को आसानी से समझ सकते हैं।

1. प्रदेश क्या है?
2. कृषि प्रदेश की संकलपना क्या है?
3. कृषि प्रदेश के सन्दर्भ में विद्वानों का क्या मत है?
4. कृषि प्रादेशीकरण के उपागम क्या है?
5. कृषि प्रदेश के सीमांकन के आधार तत्व क्या है?
6. कृषि प्रदेश के सीमांकन के आधार तत्वों का प्रोदेशीककरण में क्या भूमिका है?
7. कृषि प्रदेश के अद्भव तथा विकास के कारण क्या हैं?

इस इकाई के अध्ययन से कृषि प्रदेश और उससे सम्बन्धित अनेक प्रश्नों के समुचित उत्तर एवं समझ निःसंदेह विकसित होगी।

कृषि प्रदेश (Agriculture Region) –

कृषि कार्य सदैव परिवर्तनशील है, इसलिए कृषि प्रदेश की संकल्पना भी गतिशील है। कृषि के सम्पूर्ण इतिहास के विश्लेषण से स्पष्ट है कि कृषि एवं कृषि प्रदेश दोनों सदैव परिवर्तनशील रहा। इसी परिवर्तन के परिणामस्वरूप अनेक विचारधाराएँ विरोधास्वरूप पायी जाती हैं। कृषि प्रदेश का निर्धारण अत्यन्त जटिल है, फिर भी भूगोलवेत्ताओं द्वारा अनेक मानकों के आधार पर कृषि प्रदेश के निर्धारण का प्रयास किया गया है। सम्पूर्ण विश्व में क्षेत्रीय विभिन्नता पायी जाती है। यह विविधता भौतिक एवं मानवीय सभी चरों में विद्यमान है। भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक कारकों के कारण कृषि की प्रणाली में भिन्नता के साथ प्रादेशिक समरूपता और सम्बद्धता पायी जाती है। कृषि प्रदेश भूमि का एक विस्तृत क्षेत्र है, जिसमें कृषि करने की दशाओं और प्रतिरूप में व्यापक रूप से समानता मिलती है तथा जो समीपवर्ती क्षेत्रों से विशिष्ट रूप से भिन्न होता है, कृषि प्रदेश कहलाता है अर्थात् धरातल का वह भाग जो कृषि के विशिष्ट गुणों से युक्त हो, कृषि प्रदेश है।

कृषि प्रदेश की विशिष्टतायें निम्नलिखित हैं।

1. इनकी अपनी अवस्थिति होती है।
2. कृषि प्रदेश की सीमायें संक्रमणीय होती हैं।
3. कृषि प्रदेश कार्यात्मक एवं आकारात्मक होता है।
4. कृषि प्रदेश सोपानाक्रम में होता है।

परिभाषा –

कृषि प्रदेश के निर्धारण में विभिन्न विद्वानों द्वारा समय–समय पर दी गयी परिभाषाएँ अग्रांकित हैं।

1 **बुचानन** (1959) के अनुसार, "शस्य, शस्य–साहचर्य, शस्य पशुपालन साहचर्य तथा फार्म क्रियाप्रविधियों आदि मापदण्डों के आधार पर कृषि प्रदेश मानचित्रों का निर्माण होता है।"

2. **गिलवर्ट** (1960) के अनुसार, "प्रदेश की व्याख्या करना उतना ही कठिन है, जितना व्यक्ति विशेष के व्यक्तित्व की चर्चा।"

3. **डी० ह्वीटलसी** (1936) के अनुसार, "कृषि प्रदेश ऐसे विस्तृत क्षेत्र होते हैं, जहाँ फसलों की किस्मों और उनकी उत्पादन विधि में समरूपता मिलती है। साथ ही कृषि भूमि उपयोग में विशिष्टताजन्य सम्बद्धता मिलती है।" कृषि प्रदेश में इस सम्बद्धता का आधार निम्न है –

1. फसल और उत्पादन विधि
2. कृषि में प्रयुक्त उपकरण
3. कृषक आवास
4. रहन–सहन का ढंग
5. जीवन स्तर के माध्यम

4– अमेरिकी भूगोल वेत्त संघ के गार्नियर द्वारा ह्वीटलसी द्वारा दी गयी प्ररिभाषा का उल्लेख अनेक सन्र्दभो में उपयोगी एवं महत्वपूर्ण बताया गया है "उस निश्चित मापदण्डों के आधार पर समरूप क्षेत्र को जो दूसरे से भिन्न क्षेत्र है जिसका कोई भी आकार प्रकार हो लेकिन धरातल पर कुछ जटिलताओं के साथ सुस्पष्ट क्षेत्र के रूप में उभरा हो उसे प्रदेश कहते हैं।"

5– **नूर मोहम्मद के अनुसार–** कृषि प्रदेश पृथ्वी के वे भू–भाग है जहाँ कृषि के प्रारूपों में समानता पायी जाती है और यह अपने निकटवर्ती क्षेत्रों से भिन्न होता है।

6 रोकेटनिकवि के अनुसार – कृषि प्रदेश ऐसा विस्तृत क्षेत्र है जहाँ फसलों की किस्में तथा उनकी उत्पादकता विधि में एकरूपता मिलती है साथ ही साथ कृषि भूमि उपयोग में विशिष्टता एवं सम्बद्धता पाई जातीह है।

7– प्रो० आर०सी० तिवारी एवं बी०एन० सिंह के अनुसार कृषि प्रदेश स्थल का वह भाग है जहाँ कृषि विशेषताओं विशेष कर पैदा कि जाने वाली फसलों में समानता होती है और आस–पास के क्षेत्रों से प्रयास विषमता मिलती है।

कृषि प्रादेशिकरण के उपागम –

कृषि प्रादेशिकरण हेतु अपनाये गये उपागमों को निम्न पांच वर्गो में रखा गया है।

1. परम्परागत उपागम (Traditional Approach)

2. फार्मिंग पद्धति उपागम अथवा कृषिगत–आर्थिक संगठनात्मक उपागम (Farming System Approach or Agro-economic organizational Approach)
3. बहुकारक उपागम (Multifactor Analysis Approach)
4. शस्य–संयोजन उपागम (Crop Combination Approach)
5. तकनीकी–ज्ञान उपागम (Technical Know-how Approach)

1. परम्परागत उपागम –

कृषि प्रदेश के अध्ययन के उपागमों में यह सर्वप्राचीन है इसमें भूतल को प्राकृतिक चरों जैसे–उच्चावच, जलवायु, मिट्टी आदि के आधार पर प्रदेशों में विभाजित किया जाता है। परम्परागत उपागम में एक ही फसल के वर्णन को आधार माना जाता है इस उपागम का प्रयोग ब्रिटिश विद्वानों ने सर्वप्रथम किया था। 1940 के पहले इसी उपागम के आधार पर कृषि प्रदेश के सीमांकन में धरातलीय विशेषताओं को आधार रूप में स्वीकारा जाता था। अमेरिकी और भारतीय विद्वानों ने इस आधार पर कृषि प्रदेश का सीमांकन किया है।

2. फार्मिंग पद्धति उपागम अथवा कृषिगत–आर्थिक संगठनात्मक उपागम –

इस उपागम के माध्यम से कृषि की परम्परागत प्रणाली के स्थान पर एक उद्यम के रूप में अध्ययन किया जाता है कृषि को एक उद्योग के रूप में अथवा आर्थिक संगठन के रूप में स्वीकार किया जाता है। कृषि फार्मिंग को एक अद्योगिक इकाई के रूप में स्वीकार करते हैं इस प्रकार के कृषि प्रदेश विकसित राष्ट्रों में सम्पादित कि जाती है। प्रमुख देश कनाड़ा, यू०एस०ए०, न्यूजीलैन्ड़, आस्ट्रेलिया, पश्चिमी यूरोपीय राष्ट्रों में यह कृषि सम्पादित कि जा रही है। यह कृषि आर्थिक कार्यों को बड़े पैमाने पर सम्पादित करती है इस उपागम में मुद्रादायिनी फसलों, दूध उत्पादन एवं पशुपालन कार्य के आधार पर कृषि प्रदेशों में विभाजित किया जाता है।

3. बहुकारक उपागम –

कृषि कार्य विभिन्न प्राकृतिक और मानवीय कारकों से प्रभावित होती है ये कारक आपस में अर्न्तसम्बन्धित होते हैं। इन कारकों के आधार पर कृषि क्षेत्र को कृषि प्रदेशों

में विभाजित किया जाता है एवं सभी कारकों के आपसी अर्न्तसम्बन्धों अन्तर एवं प्रभावों का विश्लेषण एवं संश्लेषण भी किया जाता है। विद्वान कोस्ट्रोंबिकी ने इस उपागम का प्रयोग पोलैन्ड़ के कृषि प्रदेशों के निर्धारण में किया है विश्व स्तर पर कृषि प्रदेश के निर्धारण के लिए अर्न्तराष्ट्रीय भौगोलिक परिषद ने कोस्ट्रोंबिकी की अध्यक्षता में समिति का गठन कर कार्य को सम्पादित किया। इस कार्य में सामाजिक, सांस्कृतिक मानको को विशेष महत्व दिया गया

4– शस्य संयोंजन उपागम –

अनेक विद्वानों ने इस उपागम के प्रयोग द्वारा कृषि प्रदेशों का निर्धारण किया है इस उपागम की विशेष उपयोगिता जीवन निर्वाहक कृषि व्यवस्था वाले क्षेत्र में है। इसमें फसलों को वरीयता दी जाती है भारतीय विद्वानों ने इस कृषि प्रदेश के निर्धारण में खाद्यान्न फसलों को महत्व दिया है और अन्य कृषि सम्बद्ध कार्यो जैसे– दूग्ध उत्पाद, मुर्गी पालन, पशुपालन से सम्बन्धि कार्यों को महत्व नहीं दिया। विद्वान कुमारी पी० सेन गुप्ता, एन०पी०अय्यर०, एस०एस० भाटिया, एम०एन० सिद्दीकी, प्रो० जसवीर सिंह, प्रो० बी०एन० सिंह ने शस्य सयोंजन के आधार पर कृषि प्रादेशीकरण कार्य किया।

5– तकनीकी ज्ञान उपागम –

कृषि में निरन्तर विकास हो रहा है इसलिए भूगोल वेताओं ने तकनीकी ज्ञान के आधार पर प्रादेशीकरण हेतु इस उपागम को अंगीकार किया है विद्वान एबलर ने कृषि उत्पादकता में सहायक उच्च तकनीकी ज्ञान संसाधनों की प्रतिव्यक्ति उपलब्धता के आधार पर विश्व का कृषि प्रादेशीकरण किया। इन दोनों कारकों पर विश्व के विभिन्न देशों में विभिन्नता पायी जाती है जैसे–विकसित राष्ट्रों रूस, यू०एस०ए०, कनाड़ा, जापान आदि देशों में प्राविधिकी तथा संसाधन प्रचुरता है जबकि अनेक प्राकृतिक संसाधनों में पीछे हैं और अनेक देश जैसे– भारत, चीन, पाकिस्तान, बाग्लादेश आदि में तकनीकी विकास न होने से उत्पादकता बहुत कम है इस दृष्टिकोण से विश्व को चार वर्गो में रख सकते हैं और उसका वर्गीकरण प्रतिनिधि देशों के नाम पर किया गया है जैसे–यूरोपीय प्रकार, मिश्र प्रकार, ब्राजील प्रकार, यू०एस०ए० प्रकार।

कृषि भूगोलवेताओं ने स्वरूप (Eeacline) प्रधांनता के आधार पर कृषि प्रादेशीकरण में अपनाये गये उपागमों को तीन वर्गों में रखा है।

एक रूपक प्रदेश उपागम –

इस उपागम में किसी एक महत्वपूर्ण फसल के वितरण के आधार पर अध्ययन किया जाता है। इसी उपागम के आधार पर संयुक्त राज अमेरिका की कृषि पेटियों का निर्धारण कर पशुओं और फसलों का अलग–अलग मानचित्र तैयार किया गया है।

बहुस्वरूप उपागम –

इस उपागम में कृषि विशेषताओं से सम्बन्धित अनेक कारकों का तुलनात्मक विश्लेषण एवं संश्लेषण किया गया है। इस उपागम के आधार पर विश्व में कृषि प्रादेशीकरण करने में कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं क्योंकि प्रादेशीकरण के अनुरूप आँकड़े उपलब्ध नहीं है। इस उपागम को चार वर्गो में रखा गया है।

1. भूमि सामर्थ्य प्रदेश
2. खेत पद्धति प्रदेश
3. फार्मिंग प्रदेश
4. कार्यात्मक कृषि प्रदेश

3– समग्र कृषि–प्रदेश उपागम –

भूगोलवेताओं ने कृषि प्रादेशीकरण की सुगमता के लिए सम्पूर्ण उपागमों को तीन भागों में रखा है।

1. भौतिक उपागम
2. आर्थिक उपागम
3. सांस्कृतिक उपागम

1– प्राकृतिक उपागम या भौतिक उपागम –

कुछ विद्वानों ने कृषि प्रादेशीकरण अथवा परिसीमन के लिए भौतिक तत्वों जैसे– उच्चावच, तापमान, वर्षा, आर्द्रता, मिट्टी आदि भौतिक कारक को आधार माना है क्योंकि भौतिक कारक ही कृषि को प्रभावित ही नहीं बल्कि नियंत्रित करते हैं। विद्वान हंटिगटन, जोनासन, जोन्स, वेकर, टेलर, बालकेनवर्ग ने भौतिक कारकों के आधार पर वर्गीकरण किया है।

हंटिंगटन ने प्राकृतिक पर्यावरण विशेषतः जलवायु के आधार पर विश्व को चार कृषि परिमंडलों में विभक्त किया है, जो इस प्रकार है –

(1) कृषि के लिए सर्वथा अनुपयुक्त क्षेत्र – जिसके अन्तर्गत टुण्ड्रा तथा अन्य हिमाच्छादित क्षेत्र, उच्च पर्वत, मरुस्थल आदि आते हैं।

(2) कृषि के लिए अनुपलब्ध क्षेत्र – जो कृषि योग्य हैं किन्तु कृषि के लिए उपलब्ध नहीं है, जैसे भूमध्यरेखीय वर्षा वन, टैगा वन आदि।

(3) अनिश्चित कृषि वाले क्षेत्र – जिसके अन्तर्गत निम्न अक्षांशों में स्थित आर्द्र प्रदेश, शुष्क प्रदेश, मानसूनी प्रदेश और शीतोष्ण कटिबंधीय अर्द्ध शुष्क प्रदेश सम्मिलित है।

(4) कृषि के लिए अनुकूल दशाओं वाले क्षेत्र – जिसके अन्तर्गत पश्चिमी यूरोपीय जलवायु, यूरोपीय तथा अमेरिकी महाद्वीपीय जलवायु, मध्य अक्षांशीय पूर्वी तटीय जलवायु और भूमध्य सागरीय जलवायु प्रदेशों को सम्मिलित किया जाता है।

जोनासन का वर्गीकरण –

जोनासन महोदय ने विश्व को अनुकूल, प्रतिकूल एवं मृत प्रदेश के आधार पर पांच वृहत कृषि प्रदेश में वर्गीकृत किया है।

(1) उष्ण कटिबन्धीय जीवन प्रदेश (Tropical Life Zone)

(2) उष्ण या उपोष्ण कटिबंधीय मृत्यु प्रदेश या मरूस्थल (Tropical or Subtropical Death Zone or Deset)

(3) उपोष्ण कटिबंधीय जीवन प्रदेश या भूमध्य सागरीय प्रदेश (Sub-Temperate Life Zone or the Mediterranean)

(4) शीतोष्ण कटिबंधीय जीवन प्रदेश (Temperate Life Zone)

(5) ध्रुवीय मृत्यु प्रदेश (Polar Death Zone)

जोनासन के अनुसार उपरोक्त तीन जीवन प्रदेश विश्व के तीन वृहत् कृषि प्रदेश हैं –

(1) उष्ण कटिबन्धीय फसलों का प्रदेश

(2) उपोष्ण कटिबन्धीय या भूमध्य सागरीय फसलोंत्पादन का प्रदेश

(3) शीतोष्ण कटिबंधीय या छोटे दाने वाली फसलों का प्रदेश।

विद्वान वेकर ने बताया कि कृषि प्रादेशीकरण में प्राकृतिक वातावरण के तत्वों की प्राधानता है इनके अनुसार कृषि प्रदेश ऐसा क्षेत्र है जहां कृषि सम्बन्धी विशेषकर, पैदा की जाने वाली फसले समरूप हों यह समरूपता जलवायु द्वारा निर्धारित होती है।

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि हंटिंगटन वेकर और जोनासन ने कृषि प्रदेशों के निर्धारण का आधार केवल प्राकृतिक पर्यावरण को माना है और कृषि के लिए महत्वपूर्ण मानवीय पक्ष पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया है। अतः उनके द्वारा कृषि प्रदेशों का निर्धारण अत्यन्त स्थूल तथा त्रुटिपूर्ण है।

2– आर्थिक उपागम –

आर्थिक उपागमों के आधार पर कुछ भूगोलवेताओं ने कृषि प्रादेशीकरण का कार्य किया है आर्थिक क्रियाकलाप जैसे–मशीनीकरण, बाजार, यातायात, श्रम आर्थिक एवं प्रशासनिक नीति आदि का उपयोग किया है। इसके अन्तर्गत हवीटलसी, एबलर एडम्स एवं गोल्ड, कैरियल एवं कैरियल, हेलबर्न, कवाची, रैकटी नोकोव, थोमन और कार्बिन, कोस्टोविस्की आदि विद्वान है।

डी० ह्वीटलसी का वर्गीकरण –

डी० ह्वीटलसी (D. Whitlesey) ने 1936 में कृषिगत विशेषताओं के आधार पर विश्व के कृषि प्रदेशों का सीमांकन किया। उन्होंने कृषि प्रदेशों के सीमांकन हेतु निम्नांकित 5 मापदण्डों का प्रयोग किया –

(1) फसल तथा पशुपालन का संयोजन,

(2) कृषि की उत्पादन विधि,

(3) कृषि भूमि में श्रम, पूँजी आदि के विनियोग की मात्रा,

(4) कृषि उत्पादों के उपयोग का ढंग और

(5) कृषि में सहायक यंत्र एवं उपकरण तथा आवासीय दशाएँ।

डी० ह्वीटलसी ने उपर्युक्त 5 मापदण्डों (आधार तत्त्वों) का उपयोग करते हुए विश्व को निम्नलिखित 13 कृषि प्रदेशों में विभक्त किया है –

(1) चलवासी पशुचारण प्रदेश,

(2) व्यापारिक पशुपालन प्रदेश,

(3) स्थानान्तरणशील कृषि प्रदेश

(4) प्रारम्भिक स्थाई कृषि प्रदेश

(5) चावल प्रधान गहन निर्वाहन कृषि प्रदेश

(6) चावल विहीन गहन निर्वाहन कृषि प्रदेश,

(7) व्यापारिक बागानी कृषि प्रदेश,

(8) भूमध्य सागरीय कृषि प्रदेश,

(9) व्यापारिक अन्न उत्पादक कृषि प्रदेश,

(10) निर्वहन फसल एंव पशु उत्पादक कृषि प्रदेश,

(11) व्यापारिक दुग्ध पशुपालन कृषि प्रदेश,

(12) व्यापारिक फसल एवं पशु उत्पादक कृषि प्रदेश,

(13) विशिष्ट बागवानी प्रदेश।

विश्व स्तर पर कृषि प्रदेशों के निर्धारण में ह्वीटलसी के कृषि प्रदेशीकरण का कार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं मान्य है। ह्वीटलसी के कृषि प्रदेश आर्थिक विकास से सम्बद्ध है क्योंकि आर्थिक विकास प्रक्रिया में एक प्रकार का कृषि प्रदेश दूसरे अपेक्षाकृत विकसित कृषि प्रदेश में परिवर्तित हो सकता है। स्थानीय तथा प्रादेशिक विशेषताओं के आधार पर ह्वीटलसी के वृहत् कृषि प्रदेशों को मध्यम तथा लघु कृषि प्रदेशों में विभक्त किया जा सकता है। ह्वीटलसी के कृषि प्रादेशीकरण की आलोचना करते हुए अनेक विद्वानों ने उसमें कुछ संशोधन करके अपने कृषि प्रदेश प्रस्तुत किये विद्वान फ्रायर के अनुसार निम्नलिखित कृषि प्रदेश हैं–

1. आदि कालीन निर्वाहक कृषि प्रदेश।
2. धान प्रधान कृषि अथवा सावाह कृषि प्रदेश।
3. सघन शुष्क–क्षेत्र कृषि प्रदेश।
4. बागाती कृषि प्रदेश।
5. पशुचारण चलवासी कृषि प्रदेश।

6. व्यापारिक पशुपालन कृषि प्रदेश
7. व्यावसायिक अनाज कृषि प्रदेश।
8. फसल कृषि तथा गौण रूप में पशुपालन के साथ फलोत्पादन कृषि प्रदेश।
9. फसल तथा पशुपालन (मिश्रित) कृषि प्रदेश।
10. व्यावसायिक दुग्ध उत्पादन कृषि प्रदेश।
11. विशिष्ट फलोत्पादन कृषि प्रदेश।

विद्वान एबलर गोल्ड ने बताया कि ह्वीटलसी का कृषि प्रदेश चार घटको पर निर्भर है –

1. गतिशीलतत।
2. शस्य विशिष्टता
3. व्यापारिकता
4. तीव्रता

कैरियल एवं कैरियल –

इन्होंने हवीटलसी के सिद्धान्त में संशोधन किया है जिसमें हवीटलसी द्वारा दिये गये 5 आधारों में 2 और जोड़कर (तकनीकी स्तर एवं भूमि उपयोग क्षमता) कृषि प्रदेशों का सीमांकन किया। इन द्वैविद्वानो ने कृषि प्रदेश के प्रमुख 2 विभाग और इसके उपविभाग किये जो निम्नवत् है–

1. जीवन निर्वाहन कृषि (निम्न तकनीक)

(A) विस्तृत भूमि उपयोग

(i) आखेट एवं संग्रहण

(ii) चलवासी पशुचारण

(iii) स्थानान्तरणशील कृषि

(iv) प्रारम्भिक स्थायी कृषि

(B) गहन भूमि उपयोग

(v) गहन जीवन निर्वाहन कृषि

2. मुद्रादायिनी कृषि (उच्च तकनीक)

(A) विस्तृत भूमि उपयोग

(vi) व्यापारिक पशुपालन

(ii) व्यापारिक अन्नोत्पादन

(B) गहन भूमि उपयोग

(viii) बागाती कृषि

(ix) निर्वहन शस्य एवं पशु उत्पादन कृषि

(x) व्यापारिक शस्य एवं पशु उत्पादन कृषि

(xi) व्यापारिक दुग्ध उत्पादन

(xii) विशिष्ट बागानी कृषि

इन्होंने सर्वप्रथम आधुनिकीकरण/तकनीकी के आधार पर दो विभागों और भूमि उपयोग के आधार पर दो वर्गों में बांटा पुनः 6 विस्तृत भूमि उपयोग और 6 गहन भूमि उपयोग के प्रकारों में बांटा अर्थात् विश्व को कुल 12 कृषि प्रदेशों बांटा। इन्होंने भूमध्य सागरिय कृषि को इसमें शामिल नहीं किया है क्योंकि यह कृषि भूमि उपयोग विशेषताओं पर आधारित न होकर जलवायु और क्षेत्रीय विशेषताओं पर आधारित है।

कवाची (1959) इन्होंने विश्व के कृषि प्रादेशीकरण हेतु 3 आधारभूत मापदण्डों के आधार पर 18 कृषि प्रदेशों में सीमांकित किया जो संख्या में सबसे अधिक है। प्रमुख 3 मापदण्ड है–

1. उत्पादित फसलों के प्रकार
2. व्यापार की मात्रा
3. तकनीकी गहनता

रेक्टिनीकोव –

इन्होंने 3 मापदण्डों के आधार पर विश्व का कृषि प्रादेशीकरण (1962 में) किया जो निम्न है –

1. उत्पादन का संयोजन
2. कृषि गहनता
3. भूमि की प्रति इकाई पर उत्पादन की मात्रा।

थोमन एवं कार्विन (1974) इन्होंने 4 विभाग 27 उपविभाग में बांटा, इन्होंने 4 विचारकों (Variables) को कृषि का प्रमुख अंग माना है–

1. सामाजिक
2. संक्रियात्मक
3. उत्पादन
4. संरचनात्मक

कोस्ट्रोविस्की ने 1972 में कृषि प्रदेश के विभाजन के लिए 4 विचरक का चयन किया था और इन विचरकों को 27 उपभागों में वर्गीकृत किया था 4 विचरक निम्न हैं –

(A) सामाजिक विचरक

(B) संक्रियात्मक विचरक

(C) उत्पादन विचरक

(D) संरचनात्मक विचरक

विद्वान कोस्ट्रोविस्की 4 मुख्य और 27 उपक्त कृषि प्रदेश में विश्व को विभाजित किया।

1. प्राचीन कृषि
2. जीवन निर्वाहन कृषि
3. लैटफेण्डियम कृषि
4. बाजारोन्मुख कृषि

प्रो० कोस्ट्रोविस्की अन्तर्राष्ट्रीय भूगोल संघ (आई.जी.यू.) के तत्वावधान में गठित कृषि प्रकारिकी आयोग Commission on Agricultural Typology के चेयरमैन थे। इन्होंने 1964–76 के वर्षों में अथक् प्रयास के बाद एक ऐसी पद्धति जिसके द्वारा किसी भी क्षेत्र की कृषि प्रकारिकी ज्ञात की जा सकती है, की वृहद् रूपरेखा प्रस्तुत कर एक नयी पद्धति/प्रविधि का सूत्रपात किया, जो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सर्वोपयुक्त है, यह वैज्ञानिक, व्यावहारिक और सम–सामयिक भी है।

कृषि प्रदेशों का सीमांकन –

कृषि प्रदेशों के सीमांकन के भौतिक एवं आर्थिक तत्वों के आधार पर विभिन्न विद्वानों ने अलग मानदण्डों का प्रयोग कर सीमांकित करने का प्रयास किया है– विश्व के कृषि प्रदेशों की पहचान तथा उनके सीमांकन का प्रयास कई विद्वानों ने किया है, जिनमें हंटिंगटन, जोनासन, बेकर, हीटलसी आदि के कार्य अधिक महत्वपूर्ण है। हेलबर्न ने सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर कृषि प्रदेशों का सीमांकन करने के लिए निम्नलिखित तत्वों को अपनाने का सुझाव दिया।

1. फसलों एवं पशुओं का संतुलन
2. विशिष्टीकरण की मात्रा
3. भूमि उपयोग की गहनता
4. श्रम पूँजी की सापेक्षिक मात्रा एवं भूमि के सम्बन्ध में उनका अनुपात।
5. व्यापार का स्तर
6. स्थायित्व बनाम स्थानान्तरण
7. कृषि प्रदेश का स्तर
8. भू–स्वामित्व
9. जीवन स्तर
10. भूमि का मूल्य
11. उत्पादन की मात्रा

कृषि के मुख्य प्रकार जो विभिन्न कृषि प्रदेशों को सीमांकित करते हैं–

1. रोपण कृषि
2. वाणिज्यिक बागवानी
3. वाणिज्यिक दुग्ध उद्योग
4. वाणिज्यिक फसलें, पशुपालन
5. वाणिज्यिक फसलें
6. भूमध्य सागरीय
7. सघन निर्वाह कृषि
8. आदिम प्रकार की कृषि
9. वाड़ों में पशुचारण
10. चलवासी

11. अल्पल्प कृषि या कृषि रहित

स्पष्टतः कृषि प्रदेशों के सीमांकन के लिए उन्हीं तत्वों का सहारा लिया जा सकता है जिससे कृषि की समरूपता तथा सम्बद्धता की प्रादेशिक भिन्नता समझने में सहायता मिल सके अर्थात् जो कृषि प्रदेशों के उद्‌भव विकास एवं कार्यशीलता को प्रकट करते हों। सर्वप्रथम 1936 ई0 में डी० ह्वीटलसी ने विश्व के कृषि प्रदेशों का सीमांकन इस प्रकार के आधार तत्वों की सहायता से किया उनके अनुसार निम्नलिखित तत्वों के आधार पर कृषि प्रदेशों का सीमांकन किया जा सकता है –

1. फसलों एवं पशुओं का साहचर्य।
2. कृषि उत्पादन विधि।
3. कृषि–भूमि में श्रम, पूंजी, संगठन आदि के विनियोग।
4. कृषि से उत्पादित पदार्थों के उपयोग का ढंग।
5. कृषि कार्य में सहायक यन्त्रों, उपकरणों अथवा आवास आदि सम्बन्धी दशायें।

1. फसलों एवं पशुओं का साहचर्य –

कृषि के अन्तर्गत फसल उत्पादन के साथ ही पशुपालन को भी समाहित किया जाता है क्योंकि दोनों ही भूमि तथा मिट्‌टी की उत्पादन क्षमता पर निर्भर होते हैं। फसलों और पशुओं का घनिष्ठ सम्बन्ध भी होता है। किसी प्रदेश में प्राकृतिक तथा मानवीय दशाओं के अनुसार यह निश्चित किया जाता है कि वहाँ केवल फसलें उगायी जायें, केवल पशुपालन किया जाय अथवा फसल उत्पादन के साथ ही पशुपालन भी किया जाय। कुछ प्रदेशों में विविध प्रकार के कृषि कार्यों के लिए पशुओं का उपयोग किया जाता है। पशु मुख्यतः घास (चारागाह) तथा फसलों पर निर्भर होते हैं। अतः अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए फसलों तथा पशुओं का साहचर्य लगभग अनिवार्य सा हो जाता है। इस प्रकार विश्व के अनेक भागों में फसल उत्पादन और पशुपालन में घनिष्ठ सम्बन्ध देखने को मिलता है।

भारत और बांग्लादेश जैसे अनेक विकासशील देशों में फसल उत्पादन के साथ–साथ पशुपालन भी किया जाता है तथा पशुओं का उपयोग कई प्रकार के कृषि कार्यों–जुताई, पानी खींचने, बोझा ढोने आदि में किया जाता है। पाश्चात्य विकसित देशों में मांस तथा दूध देने वाले पशुओं (गाय, सुअर आदि) को पालने के लिए कृषि भूमि पर घास

तथा चारे वाली फसलें उगाई जाती है। इस प्रकार विश्व के विभिन्न भागों में फसलों तथा पशुओं का सहसम्बन्ध भिन्न–भिन्न प्रकार का होता है। जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न प्रदेशों की कृषिगत दशाओं की समरूपता एवं सम्बद्धता में भी भिन्नता मिलती है।

2. कृषि की उत्पादन विधि –

कृषिगत समरूपता में कृषि की उत्पादन विधि की भिन्नता के अनुसार भी अन्तर मिलता है। यदि किन्हीं दो क्षेत्रों में फसल एवं पशु सह–सम्बन्ध की समरूपता मिलती हो तब भी वहां उत्पादन विधि भिन्न–भिन्न प्रकार की हो सकती है जैसे, एक ही फसल उगाने के लिए कहीं साधारण हल से जुताई की जाती है तो कहीं ट्रैक्टर से कहीं पशु प्रधानतया हल चलाने के लिए पाले जाते हैं तो कहीं फसलों का सर्वोत्तम उपयोग एवं उनसे अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए कहीं खेती सिंचाई की सहायता से की जाती है, वहीं बिना सिंचाई के, तथा कहीं दो–तीन साल की वर्षा से प्राप्त नमी को संरक्षित करके। अतः कृषि उत्पादन विधि भी कृषिगत दशाओं की समरूपता एवं प्रादेशिक सम्बद्धता की द्योतक है।

3. कृषि – भूमि में श्रम, पूंजी, संगठन आदि के विनियोग –

कृषि में इकाई क्षेत्रफल पर श्रम, पूंजी, संगठन आदि की विनियोग की सापेक्षिक मात्रा में अन्तर के कारण भी भिन्नता मिलना स्वाभाविक है। कहीं अपेक्षाकृत बहुत अधिक पूंजी अथवा श्रम अथवा दोनों का उपयोग होता है तो कहीं कम। जहाँ अपेक्षाकृत अधिक पूंजी लगती है वहां की कृषि अपेक्षाकृत अधिक श्रम के उपयोग वाली कृषि से सर्वथा भिन्न हो जाती है। इस प्रकार इसका भी कृषि की समरूपता एवं सम्बद्धता निर्धारित करने में अधिक महत्व है।

4. कृषि से उत्पादित पदार्थों के उपभोग का ढंग –

कृषि के उद्देश्य के अनुसार भी कृषिगत दशायें एवं विशेषतायें भिन्न हो जाती है। जहां कृषि उत्पादन प्रधानतः व्यापार के लिये होता है अर्थात् उत्पादन का अधिकांश बेच दिया जाता है वहां किसी फसल विशेष पर अधिक बल दिया जाता है परन्तु जहां कृषक अपने

भरण–पोषण के लिये खेती करता है वहां जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक कई फसलें उपजाने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार कृषिगत विशेषताओं में बहुत अन्तर हो जाता है।

5. कृषि कार्य में सहायक यन्त्रों, उपकरणों अथवा आवास आदि सम्बन्धी दशायें –

कृषिगत सम्बद्धता एवं सह सम्बद्धता में व्यवहृत विविध उपकरणों एवं कृषक के आवास, रहन–सहन, जीवन स्तर आदि में परिलक्षित होती है। वास्तव में इनसे कृषि भूदृश्य का अनुमान लगता है जो वस्तुतः कृषिगत सम्बद्धता का सर्वोत्तम द्योतक है।

कृषि–प्रदेशों के उद्‌भव–विकास के कारण –

उपर्युक्त विभिन्न तत्व किसी कृषि प्रदेश में विशेष ढंग से अन्तर्सम्बन्धित होकर विशिष्ट सम्बद्धता उत्पन्न करते हैं और इसी के अनुसार कृषिगत दशाओं की सहायता मिलती है। इसका विशेष ढंग का अन्तर्सम्बन्ध विभिन्न क्षेत्रों के प्राकृतिक एवं मानवीय वातावरण की भिन्नता के अनुसार भिन्न–भिन्न होता है। कृषिगत दशाओं पर प्राकृतिक पर्यावरण का अपेक्षाकृत अधिक प्रभाव पड़ता है। किसी फसल तथा उसकी उत्पादन विधि में जलवायु, धरातल तथा मिट्‌टी की विभिन्नता का प्रभाव होता है। परन्तु कृषि में श्रम एवं पूंजी के सापेक्षिक विनियेाग, उत्पादन की खपत सम्बन्धी दशाओं तथा उपकरणों आदि में मानवीय वातावरण के अनुसार भिन्नता मिलती है। अतः प्राकृतिक एवं मानवीय वातावरण के विविध तत्व, कृषि प्रदेशों के उद्‌भव, विकास एवं विशेषताओं के कारक होते हैं।

कृषिगत विशेषतायें निम्न प्राकृतिक तत्वों से प्रभावित होती है –

जलवायु –

जैसे पहले बताया गया है, विभिन्न फसलों के लिये भिन्न–भिन्न प्रकार की जलवायु अपेक्षित है। फसलों के लिये विशेषतः ताप तथा नमी सम्बन्धी दशायें अधिक महत्वपूर्ण है। प्रत्येक फसल के लिये उसके उगने, बढ़ने तथा काटने के समय विशेष तापमान की आवश्यकता होती है। उच्च एवं मध्य अक्षांशों में फसल उगाने की अवधि का बहुत अधिक प्रभाव होता है। यह अवधि वस्तुतः फसल उगाने के लिये पर्याप्त समय तक समुचित तापमान की उपलब्धता पर ही निर्भर रहती है। उसी प्रकार वर्षा की मात्रा, वृद्धि का प्रकार, धूप या

बादल सम्बन्धी दशाएँ, वर्षा का समय तथा मिट्टी में उपलब्ध नमी की मात्रा, हिम, पाला, ओला इन सबका सीधा प्रभाव फसलों पर पड़ता है।

मिट्टी –

फसलों के उत्पादन पर मिट्टी का प्रभाव जलवायु से कम नहीं पड़ता। फसलों का उत्पादन मिट्टी की भौतिक संरचना, गठन तथा उसमें खनिज एवं जैव पदार्थों की उपलब्धता तथा पी.एच. मान पर बहुत अधिक निर्भर है।

धरातल –

फसलों पर धरातल स्वरूप का भी बहुत प्रभाव पड़ता है। भौम्याकार, ढाल की मात्रा एवं दिशा तथा धरातल की बीहड़ता अथवा समतलता के अनुसार फसलों की किस्में तथा अन्य विशेषतायें भिन्न होती है।

कृषिगत विशेषताओं को प्रभावित करने वाले प्रमुख मानवीय तत्व जनसंख्या घनत्व, कृषि की प्राविधिकी, संस्कृति की अवस्था, अन्य परम्परागत विशेषतायें एवं सामाजिक आर्थिक–राजनीतिक वातावरण है।

जनसंख्या का घनत्व –

जहाँ जनसंख्या का घनत्व अधिक है वहां कृषि में स्थानीय उपभोग के लिए उत्पादन की अधिक प्रवृत्ति होती है क्योंकि अपेक्षाकृत अधिक लोगों के भरण–पोषण की समस्या रहती है। अधिक जनसंख्या होने के कारण कृषि में श्रम विनियोग पूंजी की अपेक्षा अधिक होता है। फलस्वरूप मशीनों का कम उपयोग होता है। क्योंकि अधिक कार्य हाथ से ही अपेक्षाकृत कम खर्च में हो जाते हैं। कृषि गहन उधम है पर उसमें कृषक अपनी आत्मनिर्भरता के लिए विविध आवश्यक फसलें पैदा करता है। कुल उत्पादन का अल्पांश ही विक्रय के लिए उपलब्ध होता है तथा जितना किसान बेचता है, उसकी भी खपत स्थानीय होती है।

मानसून एशिया के अधिक जनसंख्या घनत्व वाले देशों जैसे भारत, चीन में यही स्थिति पाई जाती है।

प्राविधिकीय उन्नति की अवस्था –

किसी क्षेत्र में कृषि की विशेषतायें उस क्षेत्र की तकनीक उन्नति की अवस्था पर भी निर्भर है। व्यापारिक कृषि में मशीनों, रासायनिक उर्वरक आदि का पर्याप्त उपभोग होता है। ऐसे क्षेत्र में ही कृषक बड़े पैमाने पर किसी विशिष्ट फसल या फसल–समूह का उत्पादन कर सकता है।

सांस्कृतिक/परम्परागत विशेषतायें –

प्राचीन काल से ही प्रचलित परम्परायें, भोजन सम्बन्धी आदतें, धार्मिक विश्वास, रुढ़िवादिता आदि का भी कृषि की विशेषताओं पर प्रभाव पड़ता है। भारत में किसान आधुनिक युग में उसी ढंग से खेती करने के अभ्यस्त है, जैसे उसके पूर्वज किया करते थे। इसमें पीढ़ी–दर–पीढ़ी संचित ज्ञान एवं अनुभव का उपयोग अवश्य होता है परन्तु आधुनिक युग की तकनीकों उपयोग तथा प्रयोग के प्रति अधिक उत्साह नहीं रह जाता। धार्मिक विश्वासों एवं रुढ़िवादिता के कारण भी कुछ देशों में कृषि की विशेषतायें विशेष प्रकार की होती है।

सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक वातावरण –

विभिन्न क्षेत्रों में विशेष प्रकार की फसलों का उत्पादन, उनकी उत्पादन विधियाँ तथा अन्य विशेषतायें उनकी सामाजिक–आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों से भी प्रभावित होती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कृषि प्रदेशों में प्राकृतिक तत्वों के साथ–साथ विभिन्न मानवीय तत्वों का भी बहुत प्रभाव पड़ता है।

अतः कृषि प्रदेश अथवा कृषि–भूदृश्य वस्तुतः मानव निर्मित होते हैं। कृषि प्रदेश मानव के विभिन्न प्रकार के मानवीय तत्वों से प्रभावित सामूहिक चयन की अभिव्यक्ति होते हैं।

संराश –

कृषि भूगोल के अध्ययन में कृषि प्रदेश की परिभाषा उसके सीमांकन के आधार तत्व, कृषि प्रदेश के उद्भव एवं कारण का विशिष्ट महत्व है कृषि प्रदेश भूतल पर एक ऐसा क्षेत्र होता है जो कृषि के गुणों में समान होता है परन्तु आप–पास के क्षेत्र से भिन्न होता है कृषि प्रदेश के 5 उपागम हैं इन उपागमों को के आधार पर विश्व के अनेक विद्वानों ने कृषि प्रदेश निर्धारित करने का प्रयास किया है। जिसमें हंटिगटन, जोनासन, वेकर, ह्वीटलसी कैरियल आदि विद्वानों ने कृषि प्रदेश का निर्धारण करने का प्रयास किया विद्वान कोट्रोंविस्की ने कृषि प्रादेशीकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

बोध प्रश्न –

प्रश्न–1 कृषि प्रदेश के कितने उपागम।

(क)– 1 (ख)– 2 (ग)– 3 (घ)– 5

प्रश्न–2 ह्वीटलसी का कृषि प्रादेशीकरण किस वर्ष प्रस्तुत हुआ।

(क)– 1936 (ख)– 1972 (ग)– 1956 (घ)– 1946

प्रश्न–3 निम्न में कौन आर्थिक उपागम नहीं है।

(क)– बाजार (ख)– उच्चावच (ग)– पूजी (घ)– मशीन

प्रश्न–4 ह्वीटलसी के अनुसार कुल कितने कृषि प्रदेश हैं।

(क)– 11 (ख)– 12 (ग)– 13 (घ)– 14

प्रश्न–5 विद्वान थामन कार्बिन ने कृषि प्रादेशीकरण के हेतु कितने चर को आधार बनाया।

(क)– 3 (ख)– 4 (ग)– 5 (घ)– 6

शब्दावली –

प्रदेश – भूतल का वह क्षेत्र है, जिसमें भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तत्वों में आपस में सम्बद्धता होती है। आस–पास के क्षेत्रों से इन्हीं तत्वों के कारण भिन्नता होती है।

रूपक – किसी क्षेत्र विशेष में पाया जाने वाला स्वरूप।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. प्रो० आर०सी० तिवारी, प्रो० बी०एन० सिंह : कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद।
2. ब्रज भूषण सिंह : कृषि भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
3- Symon, L. : Agricultural Geography, Bell & Sons, London, 1967.
4- Kostrowicki, J : World Types of Agricuture, Polish Academy, Warsaw, Poland.
5- Noor Mohd. : New Dimensions in Agriculture, Concept, New Delhi, 1991.
6- Singh & Dhillon : Agricultural Geography, TATA Mc Graw Hill, New Delhi.
7- Whittlesey, D. : Major Agricultural Regions of the Earth, A.A.A.G. Vol 26.

बोध प्रश्न के उत्तर –

1. घ, 2. क, 3. ख, 4. ग, 5. क।

अभ्यासार्थ प्रश्न –

1. कृषि प्रदेश क्या है?
2. कृषि प्रदेश के प्रमुख उपागमों का वर्णन करिये।
3. कृषि प्रदेश के सीमांकन में आर्थिक उपागम की व्याख्या कीजिए।
4. कृषि प्रदेश के सीमांकन में भौतिक उपागम की व्यख्या कीजिए।
5. कृषि प्रदेश के उद्‌भव विकास के कारक की व्याख्या कीजिए।
6. कृषि प्रदेश के सीमांकन में डी० ह्वीटलसी के आधार तत्व की व्याख्या कीजिए।

इकाई 11__विश्व के कृषि प्रदेश, कृषि प्रदेशों का सीमांकन तथा विशेषताएं

1.0 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3.विश्व के कृषि प्रदेश
1.3.1चलवासी बस चारण प्रदेश
1.3.2.व्यापारिक पशुपालन प्रदेश
1.3.3 स्थानांतरण शील कृषि व्यवस्था
1.3.4 प्रारंभिक स्थाई कृषि
1.3.5. चावल प्रधान जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्था
1.3.6. चावल विनीत जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्था
1.3.7 व्यापारिक पादप रोपण कृषि
1.3.8. भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेश
1.3.9 व्यापारिक खाद्यान्न उत्पादन कृषि प्रदेश
1.10. व्यापारिक शस्त्र एवं पशु उत्पाद मिश्रित कृषि प्रदेश
1.11.व्यापारिक दूध पशुपालन कृषि प्रदेश
1.12. जीविकोपार्जन एवं उत्पाद कृषि प्रदेश
1.13. विशिष्ट कृत्य प्रधान उद्यान कृषि प्रदेश
1.4. सारांश
1.5. बोध प्रश्न
1.6 शब्दावली
1.7 संदर्भ ग्रंथ
1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.9 अभ्यास प्रश्न

प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में विश्व के कृषि प्रदेश का वर्णन किया गया है किसी प्रदेश का उद्‌भव सीमांकन सामान्यतः उसकी विशेषताओं पर ही निर्भर होता है कृषि प्रदेश का निर्धारण अनेक चरों पर ही निर्भर है जैसे कृषि पद्धति फसलों की बुवाई फसलों के चयन में रुचि जुताई का प्रतिरूप फसल प्रतिरूप फसल चक्र सिंचाई की प्रविधि कृषकों की मनोदशा कृषक की सूची प्रशिक्षण कृषकों की धार्मिक मान्यताएं बाजार सरकारी नीति सामाजिक आर्थिक विकास प्राकृतिक कारक जैसे संरचना उच्चावच मृदा ढाल सूर्यातप तापमान पवन चक्रवात वर्षा मेघ कोहरा आदि अनेक ऐसे कारक हैं जिस पर कृषि कार्य निर्भर है इन्हीं कारकों के आधार पर उसी प्रदेश का सीमांकन भी किया जाता है विश्व कृषि प्रदेश का सीमांकन हंटिंगटन एलबम धामन कोस्टरोविकी ऐडम्स रैकेट कवाची गोल्ड टेबलेट आदि विद्वानों ने किया है विद्वान हिव्टीलसी ने 1936 में पांच आधार पर विश्व को 13 कृषि प्रदेशों में विभाजित किया है चलवासी पषुचारण प्रदेश व्यापारिक पशुपालन प्रदेश स्थानांतरण शील कृषि पशु चारण प्रदेश व्यापारिक पशुपालन प्रदेश स्थानांतरणशील कृषि प्रदेश प्रारंभिक स्थाई

कृषि प्रदेश चावल प्रधान गहर्न जीविकोपार्जन कृषि प्रदेश व्यापारिक पादप रोपण कृषि प्रदेश भूमध्यसागरीय कृषि व्यवस्था व्यापारिक खाद्यान्न उत्पादन कृषि प्रदेश व्यापारिक एवं पशु उत्पाद अथवा मिश्रित कृषि प्रदेश जीविकोपार्जन एवं उत्पाद कृषि प्रदेश व्यापारिक दुग्ध पशुपालन कृषि प्रदेश विशिष्ट उद्यान कृषि प्रदेश इस इकाई के अध्ययन से इस बात की समझ विकसित होती है कि विश्व के किस किस क्षेत्र में कौन–कौन सी फसलों को उगाया जाता है और यह भी ज्ञान हो जाता है कि वहां का आर्थिक स्तर क्या है वहां पर निवास करने वाले जनता की आर्थिक सामाजिक राजनीतिक मनोदशा कैसी है और वहां पर जीवन स्तर क्या है मध्यम स्तर निम्न स्तरीय उच्च स्तर का जीवन है या नहीं है और किस क्षेत्र में कौन सी फसल उगाई जाती है वहां के लोगों का भोजन में उस फसल की उपयोगिता क्या है इस आधार पर उनका स्वास्थ्य उनका शारीरिक संरचना शारीरिक सौष्ठव कार्यक्षमता भी स्पष्ट हो जाती है इस इकाई के अध्ययन से हम किसी क्षेत्र की अन्य तत्वों की जानकारी प्राप्त कर लेते हैं

उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित बिंदुओं को समझा जा सकता है ....

1 यह जान सकेंगे कि विश्व में कृषि प्रदेश कितने हैं
2 इकाई के धन से आपको व्यापारिक पशुपालन कृषि प्रदेश का ज्ञान होगा
3 स्थानांतरण कृषि व्यवस्था को आप समझ सकेंगे
4 चावल प्रधान एवं चावल विहीन जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्था की विशेषताओं को आप समझ सके
5 भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेश की विशेषताओं को समझ सकेंगे
6 व्यापारिक खाद्यान्न उत्पादन कृषि प्रदेश को समझ सकेंगे
7 विशिष्टीकृत उद्यान कृषि क्या है इसको आप हल कर सकेंगे
8 विश्व के किन किन भागों में कौन सी खेती की जाती है वहां का आर्थिक स्तर क्या है इसका ज्ञान होगा

विश्व के कृषि प्रदेश

1. चलवासी पशुचारण प्रदेशः–

इस प्रदेश को खानाबदोश की अर्थव्यवस्था या घुमक्कड़ी अर्थव्यवस्था के नाम से भी जानते हैं ऐसी अर्थव्यवस्था उन क्षेत्रों में पाई जाती है जहाँ पर भौगोलिक दशाएँ सघन उत्पादन के लिए अनुकूल नहीं होती हैं। यहाँ पर प्राकृतिक रूप से पशुओं के लिए चारे की उपलब्धता अधिक होती है। ऐसे क्षेत्र प्रायः शुष्क होते हैं या प्राकृतिक रूप से विलक्षण होते हैं जहाँ पर उच्चावच, जलवायु, जल की उपलब्धता, उपजाऊ मिट्टी आदि की विषम परिस्थितियाँ पाई जाती हैं। सहारा से लेकर अरब के शुष्क भाग तक एवं तिब्बत, मंगोलिया, टुण्ड्रा, मध्य एशियाई देश जहाँ पर ऐसी

अर्थव्यवस्था पाई जाती है वहाँ के लोगों का जीवन पूरी तरह से पशु पर ही आश्रित होता है। ऐसे लोग पशुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर के चराने का कार्य करते हैं। इनके पशुओं में बकरी, ऊँट, भेंड़, रेनडियर प्रमुख हैं। यहाँ की प्राकृतिक दशाएँ भेड़ पालन, बकरी पालन के लिए अधिक अनुकूल होती हैं यहाँ ऊन, मांस, दूध, चमड़ा आदि कच्चे पदार्थ आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। इस अर्थव्यवस्था की धुरी पशुपालन है क्योंकि यहाँ रहने वाले लोगों के जीवन यापन का मूल आधार पशु होते हैं यहाँ पर अर्थव्यवस्था का दूसरा महत्वपूर्ण अंग स्थानांतरणशील खेती ही है चारे के लिए पशुओं के साथ चाय की कृषि करना इन लोगों के लिए एक आवश्यकता भी है इसलिए चारे का उत्पादन आवश्यक होता है। प्राकृतिक उपचार एवं जल द्वारा इनके स्थान का निर्धारण होता है प्रायः कबीलाई समाज होता है ऐसी कृषि या अर्थव्यवस्था जनजातियों से सम्बन्धित है इस कृषि कार्य में शामिल जनजातियाँ जैसे कज्जाक, खिरगिज, कालमैक्स, मंगोल आदि जनजातियाँ शामिल हैं। यह लोग अपने निवास स्थान को गुफा या हिम, झोपड़ी या तंबू के रूप में विकसित करते हैं। इनके आवास निर्माण की सामग्री अत्यन्त हल्की होती है इससे यह सरलतापूर्वक एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सकता हैं। वर्तमान समय में ऐसी अर्थव्यवस्था का दिन प्रतिदिन ह्रास हो रहा है। सरकारें, लोकतंत्र सदैव बदलती रहती हैं साम्यवादी सरकारों ने इन खानाबदोश जनजातियों की जीवनशैली को स्थाई एवं नियंत्रित करने का प्रयास किया, उन्हें भूभाग पर स्वामित्व प्रदान किया। अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया में व्यापारिक पशुपालन वर्तमान समय में विकसित हो गया है। इन भागों में जल वर्षा कम होती है इसलिए सीमित संसाधनों के साथ स्थान परिवर्तन आवश्यक है। चलवासी कृषि अर्थव्यवस्था की आधुनिक प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित हैं–

प्रथम– चलवासी पशुचारण क्षेत्र में निवास करने वाली जनसंख्या तेजी से घट रही है।

द्वितीय– समशीतोष्ण घास के मैदान धीरे–धीरे व्यापारिक पशुपालन की अर्थव्यवस्था में परिवर्तित हो रहे हैं शीतोष्ण कटिबंधीय घास के मैदान का विस्तार अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका।

तृतीय– चलवासी पशुचारण वाले क्षेत्र की खानाबदोश जनजातियां अब धीरे–धीरे स्थायी खेती प्रारंभ कर दी हैं और उनके स्थानीय जनजीवन में स्थायित्व देखने को मिल रहा है। अस्थायी चलवासी खेती धीरे–धीरे समाप्त प्राय हो रहा है।

चतुर्थ– खानाबदोश जनजातियां आधुनिक सभ्यता–संस्कृति के संपर्क में शामिल हो रही हैं जिससे उनकी जीवनशैली, सोच, संस्कृति, व्यवहार में परिवर्तन हो रहा है। यह जनजातियां साइबेरिया, टुंड्रा, उत्तरी अफ्रीका, संयुक्त अरब गणराज्य, टर्की, ईरान, सऊदी अरब के क्षेत्र में स्थाई कृषि व्यवस्था का कार्य प्रारम्भ कर दी हैं।

(2) व्यापारिक पशुपालनः–

व्यापारिक पशुपालन का कार्य उन क्षेत्रों में सम्पन्न किया जा रहा है जहाँ पर पशुपालन के लिए अनुकूल चारे की व्यवस्था एवं जलवायु हो। ऐसे क्षेत्रों जहाँ विश्व के अर्द्ध शुष्क भाग हैं वहाँ पर पशुपालन का कार्य अर्थ उपार्जन अथवा व्यापारिक दृष्टिकोण से सम्पन्न किया जा रहा है। व्यापारिक पशुपालन कार्य की शुरूआत का श्रेय यूरोपीय प्रवासियों को जाता है यह लोग नई दुनिया में घास के क्षेत्रों में भू स्वामित्व का अधिकार प्राप्त करके अस्थाई रूप से निवास करने लगे, अपने निजी चरागाह का विकास किए और जो चारों ओर से घेरे रहते थे ऐसे चरागाह को रेंच कहते हैं। व्यापारिक पशुपालन केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में ही नहीं बल्कि दक्षिण अफ्रीका, न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, अर्जेंटीना आदि देशों में बड़े पैमाने पर किया जाता है इस प्रकार भौगोलिक दृष्टिकोण से व्यापारिक पशुपालन कार्य के क्षेत्रों को 2 वर्ग में विभाजित कर सकते हैं–

1. उष्णकटिबंधीय घास मैदान
2. समशीतोष्ण घास मैदान क्षेत्र

उष्णकटिबंधीय घास के मैदान प्रायः 10 से 20 डिग्री अक्षांश के मध्य विस्तृत हैं। इसमें सबसे बड़ा क्षेत्र अफ्रीका महाद्वीप में है जिसे सवाना कहते हैं यह सवाना सूडान देश में विस्तृत भू–भाग पर फैला है। समशीतोष्ण घास क्षेत्र का विस्तार न्यूजीलैंड, ऑस्ट्रेलिया, मध्य एशिया, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, उत्तरी अमेरिका, दक्षिण अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका के क्षेत्र में विस्तृत पाया जाता है।

दक्षिण अमेरिकाः–

दक्षिणी अमेरिका में दक्षिणी ब्राजील, युरूग्वे, अर्जेंटीना आदि देशों में घास क्षेत्र का विस्तार पाया जाता है यह घास क्षेत्र व्यापारिक पशुपालन के लिए विश्व प्रसिद्ध है यहाँ पर पशुपालन का कार्य अत्यन्त विकसित अवस्था में है।

युरूग्वे और दक्षिण ब्राजील की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार पशुपालन और युरूग्वे की 60% भूमि और 60% निर्यात इन्हीं पशुपालन से सम्बन्धित उत्पादों से होता है। युरूग्वे की अर्थव्यवस्था पूरी तरह से अर्जेंटीना से मिलती जुलती है। युरूग्वे और ब्राजील फिर भी अर्जेंटीना के पंपास की तुलना में कम विकसित है क्योंकि यहाँ पर जलवायु अर्जेंटीना की तरह अनुकूल नहीं है। दक्षिणी ब्राजील में संपूर्ण देश की लगभग 75% भेड़ तथा 13% पशु पाले जाते हैं अर्जेंटीना की तरह यहाँ पर भी पशुओं के पोषण की क्षमता सीमित पाई जाती है।

अर्जेंटीनाः–

अर्जेंटीना का पंपास घास मैदान अत्यन्त उपजाऊ है। प्राकृतिक चारागाह के लिए विश्व प्रसिद्ध है। यहाँ पर देश की एक तिहाई भेड़ पाली जाती है। यह क्षेत्र गौ मांस उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ पर सर्वाधिक गौ मांस उत्पादन होता है। अर्जेंटीना व्यापारिक पशुपालक देश है, यह विश्व का लगभग एक तिहाई गौ मांस निर्यात करने वालादेश है। विश्व के समस्त ऊन निर्यात का 9% अर्जेंटीना द्वारा किया जाता है। यहाँ से भेड़ एवं मेंमना की दृष्टि से अर्जेंटीना देश में चौथे स्थान पर है।

अर्जेंटीना में बड़े स्तर पर बाजार की उपलब्धता है जिससे मांस उद्योग व पशुपालन उद्योग को अधिक बढ़ावा मिलता है। पंपास के अतिरिक्त यहाँ पर पराना पराम्वे, युरूग्वे नदियों के मध्यवर्ती भाग या पर्वतीय क्षेत्र, शुष्क मैदान, पेंटागोनिया तथा तिएरा, डेल फ्यूगो तक विस्तृत भू–भाग है। भेड़ पालन अर्जेंटीना के सुदूर दक्षिण भाग तक विशेष रूप से किया जाता है यह दक्षिणी भाग अर्जेंटीना के समस्त ऊन निर्यात का 50% उत्पाद उत्पन्न करता है।

उत्तरी अमेरिका का व्यापारिक पशुपालन क्षेत्रः–

उत्तरी अमेरिका के अन्तर्गत कनाडा, संयुक्त राज्य अमेकिरा के प्रेयरी प्रदेश को शामिल करते हैं इसके साथ ही साथ उत्तरी मेक्सिको के मांस प्रदेश को भी व्यापारिक पशुपालन के अन्तर्गत शामिल किया गया है। यहाँ का भौगोलिक वातावरण व्यापारिक पशुपालन के लिए अत्यंत अनुकूल वृहत बाजार है, तकनीकी विकास हुआ है, मांस का व्यवसाय बड़े पैमाने पर विकसित हुआ है, यहाँ पर यूरोप से आने वाले प्रवासियों के इस प्रदेश में जंगली भैंसे स्वच्छंद रूप से विचरण करते थे जो रेड इंडियन जो यहाँ के मूल निवासी थे उनका मुख्य संसाधन था।

सर्वप्रथम स्पेनिश लोगों ने अपने साथ में गाय, बैल, घोड़े ले आए और इन लोगों ने कैलिफोर्निया, मैक्सिकों में पशुपालन कार्य का विकास किया क्योंकि यहाँ पर घास पूरे साल भर उपलब्ध रहती थी। पशुओं के बड़े हो जाने पर व परिपक्व हो जाने पर वे अमेरिका के पूर्वी बाजार क्षेत्र अटलांटिक तट पर लाए जाते थे और उसके बाद वहाँ से कनाडा के पर्वतीय चरागाही प्रदेशों में पश्चिमी राकी की पर्वतश्रेणियों के आस पास के क्षेत्रों में पशुचारण का कार्य प्रारंभ किया गया। संयुक्त राज्य अमेरिका के व्यापारिक पशुपालन कार्य के लिए न केवल प्राकृतिक कारक बल्कि मानवीय कारक भी अत्यधिक उत्तरदायी हैं वहाँ सामाजिक–सांस्कृतिक रूप से पशुपालन कार्य को बढ़ावा मिला है। रेल यातायात की सुविधा, विस्तृत मक्का की खेती, विस्तृत बाजार क्षेत्र, प्रशीतक की व्यवस्था, मांस के लगातार बाजार में खपत और मांस को दूर तक भेजने के लिए व्यवस्था, अच्छे व बड़े–बड़े कंटेनर, वैज्ञानिक शिक्षण प्रशिक्षण की सुविधा, संरक्षण, सरकारी सुविधा व सरकारी नीति, अमेरिका में व्यापारी पशुपालन कार्य के लिए उत्तरदायी हैं यहाँ पर रेंच वृहत मैदान में राकी की घाटियों में शुष्क प्रदेश के सिंचित क्षेत्रों में बहुतायत पाए जाते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में 40% मानव पार्षद परिषद हेड पाई जाती है। मांस भेड़ों और पशुओं के अलावा बकरियों से भी प्राप्त होता है। पशुपालन दूध के लिए विशेष करके गायों का सिंचित क्षेत्रों में किया जाता है।

आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंडः–

आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड में यूरोपीय आप्रवासी जब गए तो अपने साथ अनेक जानवर भी ले गए थे इन क्षेत्रों में भेड़ों की संख्या वहाँ की जनसंख्या से अधिक है। भेड़ आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड की अर्थव्यवस्था का आधार है। आस्ट्रेलिया न्यूजीलैंड में प्रति व्यक्ति 2 पशु, 16 से अधिक भेड़ें पाई जाती हैं संपूर्ण निर्यात में 60%

योगदान पशुपालन का इसमें 12% मांस, 40% ऊन का योगदान है। विश्व निर्यात पर 29% गोमांस एवं 46% ऊन केवल आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड से निर्यात किया जाता है। यहाँ के रेंच बड़े आकार के हैं। पशुपालन का कार्य पूरी तरह से वैज्ञानिक और आधुनिक है। चारागाह को बाड़ों में विभाजित किया गया है और विभिन्न प्रकार के जानवरों को उनकी आयु के अनुसार अलग–अलग बाड़े में वैज्ञानिक पशुपालन के लिए रखा जाता है। इनके पशुपालन कार्य में बड़े पैमाने पर पूँजी का निवेश होता है। व्यापारिक पशुपालन उद्योग का विकास क्वींसलैंड दक्षिणी बेस, विक्टोरिया आदि प्रांतों में हुआ है। वर्षा और तापमान के आधार पर भेड़ों का प्रादेशिक वितरण पाया जाता है। 50 से 75 सेंटीमीटर वर्षा वाले क्षेत्र पशुपालन कार्य के लिए सर्वोत्तम माने जाते हैं और भेड़ पालन के लिए 21 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान भी सर्वोत्तम माना जाता है।

प्रारंभिक जीवन निर्वाह कृषि व्यवस्थाः–

इस कृषि व्यवस्था में उत्पादन कम होता है, यह विस्तृत कृषि व्यवस्था है, यह कृषि कार्य उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में की जाती है। इस कृषि व्यवस्था के अन्तर्गत अमेजन मैदान से एंडीज पर्वत सहित प्रशांत महासागर का तटवर्ती क्षेत्र, मैक्सिको का क्षेत्र, मध्य अमेरिका का तटवर्ती क्षेत्र, दक्षिणी पूर्वी एशिया, मेडागास्कर, पूर्वी अफ्रीका, सहारा के दक्षिण मध्य एवं पश्चिमी अफ्रीका आदि क्षेत्र इस कृषि व्यवसाय में शामिल हैं इस जीवन निर्वाहन कृषि व्यवस्था तीन रूप में पाई जाती है जो इस प्रकार है–

1. स्थानांतरणशील कृषि व्यवस्था
2. प्रारंभिक स्थाई कृषि व्यवस्था
3. गहन जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्था

(3) स्थानांतरणशील कृषि व्यवस्थाः–

स्थानांतरणशील कृषि व्यवस्था वास्तव में स्थाई नहीं होती है इसे कई नामों से जानते हैं इसे Slash and Burn खेती कहते हैं। इसे आदिम जनजातियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इस कृषि कार्य में कृषि यंत्र का उपयोग नहीं होता है। यह कृषि अमेरिका के अमेजन बेसिन क्षेत्र में, दक्षिण पूर्वी एशिया, पूर्वी द्वीप समूह, अफ्रीका के कांगो बेसिन क्षेत्र में, दक्षिणी एशिया में की जाती है इस कृषि को भिन्न–भिन्न नाम से भी जानते हैं जैसे श्रीलंका में चेना, फिलीपींस में कैनजिंग, हिंद चीन में लदांग, सूडान में नगासू, अमेरिका में मिल्पा इसी तरह से आसाम में झूम, भारत में इसके अनेक नाम हैं जैसे भारत के विभिन्न क्षेत्रों में वालरा, खील, कुमारी, पोदू आदि नाम हैं। यह कृषि प्राकृतिक रूप से विषम परिस्थितियों वाले क्षेत्रों में सम्पन्न की जाती है। उष्णकटिबंधीय प्रदेश में यह कृषि कार्य आदिम जनजातियों द्वारा होती है जहाँ पर अत्यधिक जल वर्षा, वर्षभर ऊँचा तापमान पाया जाता है। किसान सबसे पहले जंगल को काटकर या जलाकर साफ करते हैं और इसके बाद उन सघन वनों के स्थान पर क्षेत्र का चयन करते हैं और दो–तीन वर्ष तक इसी प्रकार खेती का कार्य करते हैं आग द्वारा जंगल को जलाकर खेत तैयार किया जाता है, खेत का आकार छोटा

होता है लगभग 2 हेक्टेयर तक होता है। खेती में मानव श्रम का उपयोग अधिक होता है। खाद और पूंजी का निवेश ना के बराबर होता है। खेत व्यक्तिगत नहीं होते बल्कि पूरे समुदाय का होता है ये किसी स्थान पर या किसी खेत में लगभग 2 वर्ष तक खेती का कार्य करते हैं उसके बाद यह खेती छोड़ कर चले जाते हैं तथा अन्यत्र दूसरा कृषि क्षेत्र तैयार कर लेते हैं क्योंकि वर्षा के कारण मिट्टी का लगातार कटाव होता रहता है इसलिए मृदा की उर्वरता तीव्रता से घट जाती है उत्पादन कम होने लगता है परिश्रम अधिक करना पड़ता है, उत्पादित फसलों की मांग अधिक होती है और यह लोग जीवन निर्वाहन का कार्य करते हैं। खाद्यान्न फसलों का ही उत्पादन करते हैं जिससे किसी तरह यह अपना जीवन यापन कर सके। इनके प्रमुख फसलों में ज्वार, बाजरा, धान, मक्का, गन्ना, पाम, मूंगफली, मोनिया, सेम, केला, टमाटर आदि फसलों की खेती करते हैं क्योंकि यह कृषि आदिवासी लोग करते हैं। यह आदिवासी लोग कृषि के साथ–साथ मुर्गी पालन तथा अन्य पशु का भी पालन करते हैं कृषि के अलावा शिकार करना, वन्य वस्तु का संग्रह करना, मछली मारना इनके जीवन का एक महत्वपूर्ण उद्यम है। यह आदिवासी लोग विषम जलवायु में कृषि कार्य सम्पन्न करते हैं जलवायु के ही कारण इनके अर्थव्यवस्था में पशुओं का अभाव है। यह लोग रूढ़िवादी होते हैं, इनकी जनसंख्या बहुत कम है, जनघनत्व बहुत कम है यह अपनी परम्परागत कृषि कार्य को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होते हैं।

(4) प्रारंभिक स्थाई कृषिः–

प्रारंभिक स्थाई कृषि व्यवस्था अनुकूल स्थानों पर सम्पन्न की जाती है यह कृषि स्थानांतरणशील खेती करने वाले आदिवासियों के अस्थाई बसने से अथवा चलवासी पशुचारण का कार्य करने वाले आदिवासियों के अस्थाई रूप से बस जाने पर सम्पन्न की जाती है। यह कृषि स्थानांतरणशील कृषि और चलवासी पशुचारण कृषि व्यवस्था का विकसित रूप है। यह कृषि व्यवस्था पश्चिमी द्वीप समूह, मध्य अमेरिका के पहाड़ी और पठारी भूभाग पर, एंडीज श्रेणी के उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में, पूर्वी अफ्रीका के पठारी भूभाग में, कीनिया, नाइजीरिया, घाना के उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में पूर्वी द्वीप समूह, हिंद चीन के भाग में जहाँ पर जनजातियाँ अस्थाई रूप से बस गई हैं वहाँ पर की जाती हैं यह कृषि भी आदिम प्रकार की है। उर्वरकों की कमी होती है इसलिए मृदा की उर्वरता को संतुलित रखने के लिए खेत को परती छोड़ा जाता है। उष्णकटिबंधीय आर्द्र क्षेत्र, ऊँचे पठार, पहाड़ी भाग उष्णकटिबंधीय मौसमी जलवायु वाले मैदानी क्षेत्र जहाँ पर जनसंख्या घनत्व तुलनात्मक रूप से अधिक है वहाँ पर भी यह कृषि कार्य किया जाता है। उन भागों में भी जहाँ पर शुष्कता अधिक है, जल वर्षा कम होती है वहाँ पर भी इस प्रकार की कृषि की जाती है। उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में विशेष करके पठारी भागों में बागाती कृषि बड़े पैमाने पर की जा रही है। इस कृषि में कोको, खजूर, रबर की कृषि सुगमता पूर्वक की जा रही है। स्थानीय किसानों की कृषि पद्धति में भी परिमार्जन हुआ है यह कृषि स्थानांतरित कृषि एवं चलवासी पशुचारण कृषि की तुलना में अधिक गहन है। यहाँ पर इस कृषि का विकास खान के आसपास

तीव्र गति से हो रहा है। कृषक कृषि कार्य के अलावा पशुपालन का कार्य भी करते हैं इनके द्वारा पाले जाने वाले पशुओं में गाय, बकरी, घोड़ा, खच्चर, भेंड़ प्रमुख हैं।

गहन निर्वाहन कृषिः–

यह कृषि व्यवस्था मानसून एशिया के देशों में पाई जाती है जहाँ पर भौगोलिक दशाएं कृषि कार्य संपादित करने के लिए अनुकूल होती हैं इस कृषि व्यवस्था में स्थानीय उपयोग के लिए खाद्यान्न फसलों का उत्पादन किया जाता है। विश्व की अधिकांश जनसंख्या इस कृषि कार्य में लगी हुई है। लगभग एक तिहाई जनसंख्या गहन निर्वाह कृषि कार्य करती हैं जनसंख्या अधिक और कृषि भूमि कम होने से लोगों के भरण–पोषण के लिए गहन कृषि को अपनाना अनिवार्य हो जाता है गहन निर्वाह कृषि व्यवस्था की विशेषताएं निम्नांकित हैं–

1. निर्वाहन कृषि व्यवस्था में चावल की खेती की प्रधानता है
2. यहाँ पर पशुपालन का कार्य गौण है
3. जनसंख्या अधिक है लिहाजा भरण–पोषण के लिए यह कृषि अपनायी जाती है।
4. मानव श्रम की अधिक आवश्यकता एवं उपयोगिता होती है।
5. कृषि क्षेत्र छोटे–छोटे और बिखरे रूप में पाये जाते हैं।
6. किसान अपने गांव में ही अस्थाई निवास बनाकर रहते हैं।

इस कृषि व्यवस्था में आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग अत्यन्त कम किया जाता है, उन्नतशील बीज, प्रौद्योगिकी, रेलवेज, कीटनाशक दवाओं, रसायनों, रासायनिक उर्वरकों आदि का प्रयोग अत्यन्त कम होता है।

गहन निर्वाहन कृषि व्यवस्था में प्रति व्यक्ति उत्पादन अत्यन्त कम होता है इसलिए किसान बाजार में अपने उत्पाद को बेचने में असमर्थ होता है लिहाजा कृषकों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती है। आवश्यकताओं की पूर्ति अत्यन्त मुश्किल से हो पाती है। यहाँ के कृषक जो भी अनाज पैदा करते हैं उसी पर उनका जीवन निर्भर करता है वे लोग उसका स्वयं उपभोग कर लेते हैं जिससे उत्पादन बाजार में नहीं पहुंच पाता।

भोजन में सब्जी, दाल आदि का प्रयोग अत्यन्त कम होता है जनसंख्या अधिक होने से उत्पादन की खपत स्थानीय स्तर पर ही हो जाती है। इस कृषि व्यवस्था में बाजार के लिए उत्पादन नहीं हो पाता इस कारण यहाँ पर बड़े–बड़े बाजार, हाट, मण्डियों का अभाव होता है। गहन निर्वाह कृषि व्यवस्था को फसलों की प्रधानता के आधार पर दो भागों में विभाजित करते हैं–

1. चावल प्रधान गहन जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्था
2. चावल विहीन गहन जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्था

(5) चावल प्रधान गहन जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्थाः–

चावल प्रधान गहन जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्था विश्व के उन क्षेत्रों में अपनाई जाती है जहाँ पर वर्ष भर ऊँचा तापमान पाया जाता है, वार्षिक वर्षा 200 सेंटीमीटर

से अधिक पाई जाती है यहाँ पर भौगोलिक दशाएं चावल की कृषि के लिए उपयुक्त होती हैं इसीलिए यहाँ पर वर्ष में तीन बार चावल की खेती की जाती है, चावल की इसी कृषि व्यवस्था को 'सावाह' (Sawah) कृषि के नाम से भी जाना जाता है। मानसून एशियाई देशों में विश्व का लगभग संपूर्ण चावल उत्पादन होता है। इन चावल उत्पादक देशों में चीन, भारत, इंडोनेशिया, बांग्लादेश, थाईलैंड, वियतनाम, म्यानमार, जापान आदि प्रमुख हैं यह सभी देश मिलकर विश्व के लगभग 90% चावल का उत्पादन करते हैं इन देशों में चावल की कृषि का कार्य डेल्टाई भागों में, बाढ़ के मैदानी क्षेत्र में या सीढ़ीदार, निम्नवर्ती भागों में सुगमतापूर्वक की जाती है। चावल की खेती के लिए गंगा, ब्रह्मपुत्र, मीनांग, इरावदी, सीक्यांग, यांग्टीसीक्यांग, कृषि भूमि उपयोग की दृष्टि से दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में चावल के अन्तर्गत सर्वाधिक कृषि भूमि का उपयोग किया जाता है जिसमें लाओस के संपूर्ण कृषि भूमि पर 95% पर चावल की खेती, थाईलैंड के संपूर्ण कृषि भूमि के 65% पर खेती, म्यानमार के सम्पूर्ण कृषि भूमि के 60% पर इसी तरह से जापान में 42%, भारत और चीन के 25% से अधिक भाग पर धान की खेती की जाती है। धान या चावल के कृषि क्षेत्र में जनसंख्या का बसाव अधिक पाया जाता है, मानसूनी एशियाई देशों में जनघनत्व अधिक है, चावल उत्पादन के अधिकांश भाग का स्थानीय खपत है। मानसून एशियाई देशों में उत्पादन का अधिकांश भाग इन्हीं मानसूनी एशियाई देशों में कुछ देश जैसे कंबोडिया, थाईलैंड, ताइवान, दक्षिणी वियतनाम, म्यानमार आदि चावल का निर्यात भी करते हैं दक्षिणी पूर्वी एशिया के वही देश जहाँ पर जनसंख्या का बसाव अधिक है एवं जनघनत्व अधिक है, चावल का अधिक उत्पादन भी करते हैं इस तरह जनसंख्या घनत्व और चावल उत्पादन क्षेत्र में धनात्मक सहसम्बन्ध पाया जाता है।

(6) चावल विहीन जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्थाः–

मानूसन एशिया के अधिकांश भूभाग में जल वर्षा कम होती है, तापमान भी कम होता है वहाँ पर चावल की खेती प्रमुखता से नहीं की जाती है। मानसून एशिया के वे भाग जहाँ पर औसत वार्षिक वर्षा 100 सेंटीमीटर से कम एवं निम्न तापमान होता है वहाँ पर चावल के अतिरिक्त अन्य फसलों की कृषि की जाती है ऐसे क्षेत्रों में शुष्क कृषि की विशेषताएं पाई जाती हैं और ज्वार–बाजरा, अरहर, मक्का, तिलहन जैसी फसलें उगाई जाती हैं जहाँ कहीं भी सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है वहाँ पर गेहूँ और कपास का भी उत्पादन किया जाता है तापमान और वर्षा के आधार पर गेहूँ, ज्वार, बाजरा आदि किसी एक फसल की प्रधानता होती है। दक्षिणी पूर्वी एशिया विश्व का लगभग 60% से अधिक पीनट, 57% ज्वार बाजरा, 40% सोयाबीन, 20% गेहूँ और 16% से अधिक जौ का उत्पादन करता है। मौसमी परिवर्तन अनवरत् होता रहता है इसी मौसमी परिवर्तन के परिणामस्वरूप जीविकोपार्जन कृषि को हम तीन वर्गों में विभाजित करते हैं–

प्रथम– ग्रीष्मकालीन मौसम की फसलें

द्वितीय– वर्षाकालीन मौसम की फसलें

तृतीय– शुष्क मौसम की फसलें

ऐसी कृषि व्यवस्था वाले भाग में जनघनत्व अधिक पाया जाता है, जनसंख्या का बसाव अधिक है, यहाँ पर कृषक वर्ष में दो या तीन फसलें उत्पन्न करता है। किसान वर्षा काल में ज्वार, बाजरा, मक्का, गन्ना, चावल; शीतकाल में गेहूँ, जौ, चना, मटर; ग्रीष्मकाल में जायद की फसलें, सब्जियां जैसे तोरई, भिण्डी, लौकी, कद्दू, पालक के अलावा मूंग, हरे चारे की खेती का कार्य करता है जहाँ कृषि हेतु सिंचाई की सुविधा अधिक है वहाँ पर ग्रीष्मकालीन कृषि की जाती है। इस कृषि व्यवस्था में दुग्ध और मांस के लिए पशुपालन का भी कार्य किया जाता है। जनसंख्या की अधिकता के कारण कृषक खाद्यान्न फसलों को प्रमुखता से उत्पन्न करना आवश्यकता समझता है पशुपालन के कार्य तो होते हैं बस उसके लिए चरागाह बिल्कुल नगण्य होता है। निम्न आय वाले परिवार के लोग बकरी, भेड़, सूअर, मुर्गी आदि पालते हैं और इस भाग के अधिकांश लोग शाकाहारी भी होते हैं, कृषक हल जोतने के लिए पशुओं विशेषकर के बैल का पालन कार्य करते हैं, दूध के लिए गाय और भैंस प्रमुखता से पालते हैं पिछले कुछ वर्षों से भारत सरकार, राज्य सरकार द्वारा दूध, पशुपालन के लिए पशुओं गाय, भैंस, सूअर, भेड़, मुर्गी, मत्स्य, रेशम के कीड़ों के लिए रेशम कीट आदि के पालन के लिए विशेष प्रोत्साहन का कार्य किया जा रहा है। ऐसे पशुपालकों को फौरी या तत्काल सरल बैंकिंग व्यवस्था, सस्ते ब्याज पर रेड सब्सिडी तथा उत्पादन के विक्रय की गारंटी जैसे अनेक योजनाओं के माध्यम से विकास के पथ पर पशुपालन को बढ़ाया जा रहा है।

(7) व्यापारिक पादप रोपण कृषिः–

व्यापारिक पादप रोपण कृषि व्यवस्था वास्तव में विदेशी कृषि प्रणाली है इस कृषि का इतिहास लगभग 100 वर्ष पुराना माना जाता है इस कृषि व्यवस्था में कहवा, नारियल, चाय, कोको, रबर, मसाले, केला, गन्ना आदि की खेती बागानों में व्यापारिक उद्देश्य से सम्पन्न की जाती है इस कृषि का विकास एवं प्रोत्साहन समशीतोष्ण कटिबंधीय देशों को उत्पाद का निर्यात करने के उद्देश्य से अनेक उष्णकटिबंधीय देशों में उपनिवेशवाद के दौरान सम्पन्न किया गया। उपोष्ण कटिबंधीय देशों में चाय, कपास, तंबाकू की भी खेती की जाती है, खाद्यान्न फसलों का उत्पादन वहाँ के आस–पास के श्रमिकों और पशुओं के लिए किया जाता है। बागाती या रोपण कृषि के विकास में प्रारम्भ में यूरोप और उत्तरी अमेरिका द्वारा पूंजी लगाई गयी थी, श्रमिक स्थानीय होते थे, प्रशासनिक और कुशल तकनीकी श्रमिक, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाएं, कृषि यंत्र, कल कारखाने, मशीन के पुर्जे, यातायात के साधन आज सभी यूरोप और उत्तरी अमेरिका अथवा समशीतोष्ण देशों से ही आयात किया जाता था। विश्व के बाद आधी खेती के प्रमुख क्षेत्रों में अफ्रीका, दक्षिण पूर्वी एशिया, लैटिन अमेरिका प्रमुख थे बागाती कृषि की विशेषताएं अनेक हैं जो निम्नांकित हैं–

1. बड़े पैमाने पर कृषि
2. एक फसल की कृषि पद्धति

3. रोपण कृषि और श्रमिक
4. बागाती कृषि तथा बाजार
5. बागाती कृषि में यातायात के साधनों का महत्व
6. बागाती कृषि में विदेशी पूंजी और प्रबंध
7. बागाती कृषि और औद्योगिक प्रक्रिया

बड़े पैमाने की कृषिः–

व्यापारिक पादप रोपण कृषि बड़े–बड़े कृषि फार्म पर की जाती है इसलिए सामान्य भू–जोत की तुलना में इसका आकार अधिक होता है यह बागाग 15 से 20 हेक्टेयर से लेकर सैकड़ों हेक्टेयर के आकार में विस्तृत पाए जाते हैं, किसान 1200 तक के क्षेत्र अधिक पसंद करते हैं कहीं–कहीं पर बागान 40 हेक्टेयर तक विस्तृत पाये जाते हैं भारत देश में अधिक विस्तृत बागान नहीं मिलते। लाइबेरिया के हर्बल नामक स्थान पर फायर स्टोन कंपनी का बागान लगभग 64001 हेक्टेयर क्षेत्रफल का है। भारत देश में चाय, कहवा, अन्य फसलों की बागाती खेती की जाती है लेकिन चाय बागानों का क्षेत्रफल 120 से 140 हेक्टेयर पाया जाता है।

एक फसल की कृषि

व्यापारिक पादप रोपण कृषि में फसलों का विशिष्टीकरण पाया जाता है। इस क्षेत्र में केवल एक ही वस्तु का उत्पादन होता है जैसे–असम में चाय, मलाया में रबर, ब्राजील में कहवा, क्यूबा में गन्ना की खेती प्रमुख है। इस कृषि में भौतिक, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कारक महत्वपूर्ण प्रभावित करने वाले कारक होते हैं। इसके अलावा प्रबंध तंत्र, श्रमिक, बाजार आधिकारिक भी प्रभावित करते हैं। यह सारे कार्य केवल सभी फसलों के लिए उत्तरदायी होते हैं। बागाती खेती में कोको, केला, मसाले, कहवा, चाय, नारियल, गन्ना, रबर आदि फसलों को सुगमतापूर्वक उगाया जाता है। इन फसलों के कृषि किन–किन क्षेत्रों में की जाती है उसे निम्न पंक्तियों में समझा जा सकता है रबर मलेशिया, हिंद एशिया मे; चाय श्रीलंका, भारत में आसाम, नीलगिरी की पहाड़ी, चीन की पहाड़ी; नारियल, फिलिपिन, दक्षिण भारत में, पश्चिमी अफ्रीका, ब्राजील; कपास, पीरू, कहवा, ब्राजील, कोलंबिया, दक्षिणी भारत; गन्ना, क्यूबा, पीरू, वेनेजुएला, पूर्वी अफ्रीका, मेडागास्कर, ब्राजील, भारत; केला पश्चिमी द्वीप समूह, मध्य अमेरिका, भारत आदि देशों में सफलतापूर्वक उगाया जाता है।

कृषि पद्धतिः–

व्यापारिक पादप रोपण कृषि पद्धति बागाती खेती की एक प्रमुख विशेषता है यहाँ पर गेहूँ, धान अथवा अन्य फसलों की तरह बीज को बोकर नहीं उगाते हैं बल्कि उसका रोपण किया जाता है इसमें निम्नलिखित दो प्रकार से उपजें उत्पन्न की जाती हैं प्रथम अनेक बार रोपड़ वाली फसलें जैसे गन्ना, कपास; वृक्ष युक्त फसलें जैसे रबर, कहवा, चाय, कोको।

रोपण कृषि और श्रमिकः–

रोपण कृषि पूरी तरह से श्रमिकों पर आधारित है। इस कृषि की सबसे बड़ी समस्या प्रशिक्षित श्रमिकों की है इसीलिए सघन आबादी वाले देशों से रोपण कृषि करने वाले क्षेत्र में श्रमिकों का आयात किया जाता है। भारत, अफ्रीका आदि अनेक देश हैं जहाँ से भारी संख्या में श्रमिक विभिन्न देशों में प्रवास किए हैं मारीशस, क्यूबा, ब्रिटिश गियाना, फिजी, नेपाल, श्रीलंका, मलाया में अनेक श्रमिक भारतीय मूल के श्रीलंका और मलेशिया के चाय बागानों में आज भी भारतीय मूल के तमिल लोग श्रमिक के रूप में कार्य करते हैं। हवाई द्वीप में जापान, फिलीपींस के श्रमिकों की संख्या अधिक पाई जाती है। सुमात्रा और बोर्नियो में चीनी देश के निवासी श्रमिक के रूप में कार्य करते हैं बागाती खेती में खेत को तैयार करने, रोपण करने, पौधों का निरीक्षण, पत्तों की छटाई, फसलों की चुनाई, उर्वरकों के प्रयोग, दवाओं के छिड़काव, खरपतवार, देखरेख, उत्पादित वस्तुओं के बाजार तक परिवहन आदि अनेक कार्य के लिए कुशल श्रमिकों की आवश्यकता होती है। आज भी ऐसी मशीनों का आविष्कार नहीं हो पाया है जिससे बागाती खेती में किए जाने वाले कार्य जैसे गन्ने को काटने, छीलने, ट्रैक्टर ट्राली, ट्रक में लादने, कहवा को इकट्ठा करने, पौधों की देखरेख, कपास चाय को चुनने, रबर के वृक्षों से लेटेक्स निकालने का कार्य कर सके इसीलिए रोपण कृषि में समस्त कार्य का सम्पादन इन्हीं श्रमिकों द्वारा ही सम्पन्न किया जाता है।

रोपण कृषि तथा बाजारः–

रोपण कृषि का विकास यूरोपीय लोगों द्वारा गर्म प्रदेशों में किया गया। इस कृषि का मुख्य उद्देश्य यूरोपीय देशों को उत्पाद का निर्यात करना था जैसे–जैसे उपनिवेशवाद के दौरान बाजार प्राप्त होता गया वैसे वैसे रोपण कृषि का विस्तार और विकास हुआ। आज अनेक देश उपनिवेशवाद की सत्ता से मुक्त होकर स्वतंत्र देश हो गए और अब यह बागाती खेती उन देशों से होने वाले निर्यात के लिए महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में है इससे बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा प्राप्त हो रही है।

रोपण कृषि और परिवहनः–

रोपण कृषि में परिवहन के साधनों का अधिक महत्व है क्योंकि उत्पादित माल को बाजार तक पहुंचाने के लिए सस्ते और सुविधायुक्त साधन की आवश्यकता होती है क्योंकि बाजार एक कृषि फार्म से दूर होते हैं और कृषि फार्म हजारों एकड़ क्षेत्रफल में फैला होता है इसलिए कृषि फार्म के मध्य सड़कें भी होती हैं जिससे उत्पादित सामान आसानी से एकत्र किया जा सकता है बागान से बाजार, बंदरगाह तक सस्ते एवं सुविधायुक्त परिवहन के साधन की आवश्यकता होती है।

बागाती खेती पूँजी एवं प्रबन्धः–

रोपण खेती में पूँजी की आवश्यकता बड़े पैमाने पर होती है। यह खेती उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंध क्षेत्रों में यूरोपीय देशों द्वारा प्रारंभ किया गया था। डच, अंग्रेज, पुर्तगाल, फ्रांसीसी आदि उपनिवेशवाद के दौरान पूर्वी द्वीप समूह, भारत, श्रीलंका, पश्चिमी द्वीप समूह, अफ्रीका में घाना, नाइजीरिया व अन्य देशों में अपने उपनिवेश

स्थापित किए और यह लोग वहाँ पर अपने कुशल प्रबंधन द्वारा स्थानीय कृषकों को रोपण कृषि करना सिखाया। यूरोपीय लोग वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग भी करते थे। बागाती खेती में अधिक पूंजी भी लगी हुई थी एशिया महाद्वीप के या अन्य देशों के उपनिवेश धीरे–धीरे स्वतंत्र होते गए और वहाँ के प्रादेशिक विकास संस्थाओं ने बागाती खेती का प्रबंधन अपने हाथ में ले लिया, आज भी अफ्रीका के कुछ देशों में विदेशी पूंजी द्वारा रोपण खेती की जा रही है।

बागाती खेती एवं औद्योगिक प्रक्रियाः–

रोपण कृषि की सभी फसलों का परिष्करण आवश्यक होता है कृषि फार्म पर जिस तरह से उत्पाद प्राप्त होते हैं वे उसी रूप में उपभोक्ताओं तक बाजार में नहीं भेजे जाते क्योंकि परिवहन के दौरान इनके नष्ट होने की संभावना बनी रहती है, रखरखाव का खर्च भी अधिक होता है इसीलिए इसका परिशोधन आवश्यक होता है जैसे लेटेक्स, हरी चाय, गन्ना, परिष्करण एवं औद्योगिक परिशोधन के बाद उत्पाद का वजन और मात्रा घट जाता है इसीलिए आर्थिक लाभ की दृष्टि से कृषि फार्म के पास ही उत्पाद के परिशोधन हेतु संयंत्र लगाए जाते हैं विश्व के लगभग सभी देशों में रोपण कृषि की ओर रूचि बढ़ी है और मशीनों के सहयोग से गर्म जलवायु वाले क्षेत्रों में ऊँचे स्थानों पर खेतों को तैयार करके फसलों की रोपाई, उसकी कटाई आदि का कार्य कुशलता पूर्वक किया जा रहा है। अनेक उन्नतशील प्रजातियां विकसित कर ली गई हैं वह कम समय में उत्पाद देना शुरू कर देती हैं अब दिन प्रतिदिन इसका विस्तार और विकास तीव्रगति से बढ़ रहा है।

(8) भूमध्यसागरीय कृषि व्यवस्थाः–

भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेश में भौगोलिक और प्राकृतिक विशेषताओं का महत्वपूर्ण योगदान है इस प्रदेश का नामकरण किसी फसल विशेष पर निर्भर नहीं करता है यह कृषि दोनों गोलार्द्धों में 30 से 45 डिग्री अक्षांश के मध्य महाद्वीपों के पश्चिमी किनारे पर की जाती है इस कृषि का सर्वाधिक विस्तार भूमध्य सागर के तटवर्ती देशों में है इसीलिए इसे भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेश के नाम से जानते हैं। भूमध्य सागर के चारों ओर फैले देश जैसे पुर्तगाल, स्पेन, दक्षिणी फ्रांस, यूनान, इटली, सीरिया, जॉर्डन, लेबनान, इजरायल, ट्यूनीशिया, मोरक्को, अल्जीरिया आदि देश हैं इसके अलावा उत्तरी अमेरिका में मध्यम दक्षिणी कैलिफोर्निया दक्षिण अमेरिका में मध्यवर्ती चिल्ली का पश्चिमी भाग दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका ऑस्ट्रेलिया में दक्षिण ऑस्ट्रेलिया का मरे डार्लिंग प्रदेश कृषि प्रदेश के अन्तर्गत शामिल है। भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेश के अन्तर्गत निर्वाहन कृषि व्यापारिक कृषि पशुपालन और ग्रीष्मकाल में सिंचाई सुविधा पर आधारित कृषि उत्पादन और शीतकाल में वर्षा पर आधारित फसल का उत्पादन खाद्यान्न, साग–सब्जी, फल आदि उगाया जाता है यहाँ की कृषि में अनेक प्रणालियां हैं क्योंकि यह ऐसा कृषि प्रदेश है जहाँ पर पर्वत, तटीय मैदान, घाटी, बड़े मैदान, छोटे मैदान अनेक धरातलीय स्वरूप एक साथ पाए जाते हैं। यहाँ पर क्षेत्रीय भिन्नता पाई जाती है इन क्षेत्रों में कृषि से सम्बन्धित अनेक कार्य बड़ी सरलता पूर्वक किए

जाते हैं यहाँ पर फल उत्पादन, खाद्यान्न उत्पादन, भेड़, बकरी का पालन प्रमुख रूप से किया जाता है। भूमध्यसागरीय जलवायु में ऐसी कृषि का विस्तार है जहाँ भूमध्यसागरीय जलवायु में शीतकाल में वर्षा होती है, ग्रीष्मकाल शुष्क होता है। वायुदाब पेटी, पवन पेटी, के खिसकाव का प्रभाव होता है यहाँ पर पर्वतीय ढाल पर अधिक वर्षा होती है लगभग 100 सेंटीमीटर होती है जबकि निचले भाग पर लगभग 25 सेंटीमीटर वर्षा होती है। धरातलीय विषमता, जलवायुगत विषमता के कारण यहाँ पर फसल उत्पादन और पशुपालन में विविधता पाई जाती है। कृषि व्यवस्था में प्राकृतिक कारकों के साथ सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यक्रम का भी योगदान है। यहाँ पर यातायात साधनों की सुलभता, जनसंख्या के दबाव, सरकारी नीति, बाजार, सागर तट की स्थिति, विपणन व्यवस्था आदि के कार्य यहाँ पर कृषि अधिक विकसित रूप में की जाती है। भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेश प्राचीन सभ्यता का केन्द्र रहा और यहाँ पर जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है यह कृषि व्यवस्था जीवन निर्वाह एवं व्यापारिक दोनों प्रकार से सम्पन्न की जाती है। व्यापारिक कृषि एवं जीवन निर्वाह कृषि दोनों व्यवस्था यहाँ की वर्षा, बाजार, जनसंख्या, कृषि, तकनीक, पूंजी, प्रबन्ध, सरकारी नीति द्वारा निर्धारित और नियंत्रित होती है। अफ्रीकी देशों में वर्षा कम होती है यहाँ पर गेहूँ से शराब और जैतून का तेल विश्व प्रसिद्ध उत्पाद माना जाता है। कैलिफोर्निया में अंगूर की खेती, सानज्वेकिन की घाटी में प्रसिद्ध है यहाँ पर साग–सब्जी, कपास का उत्पादन किया जाता है। यूनान में गोद एवं शराब; स्पेन में संतरा, जैतून, शराब; कैलिफोर्निया में संतरे, अंगूर शीतकालीन सत्र में बहुलता से उगाई जाती है इस कृषि व्यवस्था में उष्ण, शुष्क, ग्रीष्मकाल, मृदुल और नम शीतकाल में पर्वतीय समीपता, छोटी पृथक घाटियां, पर्वतपदीय मैदान आदि अनेक विविधतापूर्ण धरातलीय स्वरूप है जिस कारण से यहाँ पर कृषि की निम्नलिखित चार व्यवस्था पाई जाती है।

(1) ग्रीष्मकाल में सिंचाई से पैदा होने वाली फसलें:–

ग्रीष्मकाल में बर्फ पिघलकर नदियों में प्रवाहित होती है, यह जल मैदानों और निम्न भागों में आसानी से पहुंच जाता है, नदियों में प्रवाहित जल से सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होती है और इससे किसान चारा की फसलें, फल की खेती, सब्जी की खेती सरलतापूर्वक सम्पन्न करते हैं। फल और सब्जी के उत्पादन के लिए यह मैदान अत्यन्त उपयुक्त होता है, यहाँ पर सभी समशीतोष्ण जलवायु की सब्जियां सफलतापूर्वक उगाई जाती हैं। यहाँ पर चारा फसल, अल्फाल्फा, क्लोवर, कूपाइन, वर्च सफलतापूर्वक उगाया जाता है इन्हीं चारा फसलों पर दुधारू जानवर पाले जाते हैं और दुग्ध डेयरी उद्योग यहाँ का प्रसिद्ध उद्योग है।

(2) बिना सिंचाई के सहयोग से फल का उत्पादन:–

इस कृषि पद्धति के द्वारा खजूर, अंगूर, अंजीर और जैतून की खेती की जाती है यहाँ पर लताएं और वृक्षों का रोपण कर किया जाता है सिंचाई की सुविधा, उबड़

खाबड़ भूभाग में नहीं उपलब्ध हो पाती है जहाँ पर 25 से 75 सेंटीमीटर वर्षा होती है वहाँ जैतून प्रमुख रूप से उगाया जाता है यहाँ पर जैतून की खेती के लिए सभी पर्यावरण दशाएं सुलभ हैं इसीलिए विश्व का 90% जैतून का उत्पादन भूमध्यसागरीय जलवायु प्रदेश में किया जाता है। भूमध्यसागरीय जलवायु प्रदेश को जैतूनी जलवायु प्रदेश के नाम से भी जानते हैं। जैतून की विशिष्टता भूमध्यसागरीय जलवायु के प्रमुख देश मोरक्को, पुर्तगाल, ट्यूनीशिया, ग्रीस, स्पेन, इटली आदि प्रमुख देश जैतून उत्पादन के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं। असिंचित क्षेत्रों में दूसरी महत्वपूर्ण फसल अंगूर है जहाँ पर वार्षिक वर्षा 35 सेंटीमीटर से अधिक होती है उन क्षेत्रों में अंगूर की खेती सफलतापूर्वक उगाई जाती है भूमध्यसागरीय बेसिन में दक्षिण अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका के मध्य, चिली के पश्चिमी भाग में, आस्ट्रेलिया में अधिक मात्रा में अंगूर की खेती शुष्क कृषि के रूप में संपादित की जा रही है।

चारागाही एवं पशुपालन व्यवस्थाः–

यह प्रणाली पूरी तरह से जलवायु पर निर्भर है चरागाह थोड़े समय के लिए उपलब्ध हो पाता है क्योंकि निचले भाग में गर्मी अधिक होती है और पर्वतीय भाग पर शीतकालीन वर्षा होती है जिससे चरागाह के विकास के लिए अल्प समय मिल पाता है। उबड़–खाबड़ धरातलीय स्वरूप जलवायु अभिक्षमता, मौसम की वनस्पतियों और जटिल परिस्थितियों के कारण यहाँ की कृषि व्यवस्था के पशुपालन को दो वर्गों में रखा गया है।

(a) बड़े पशुओं का पालनः–

इस व्यवस्था में मिश्रित कृषि विशिष्ट रूप में पाई जाती है भौगोलिक दशाएं पशुपालन उद्योग में सहायक हैं यहाँ पर सिंचाई के आधार पर ग्रीष्मकाल में अल्फाल्फा, वर्च, ब्लू पाइन आदि चारा फसलों के आधार पर पशुओं को पाला जाता है नगर के समीपवर्ती क्षेत्रों में दूध, पशुपालन एक महत्वपूर्ण व्यापारिक उद्यम है। कहीं–कहीं पनीर और मक्खन का उत्पादन भी किया जाता है, ताजे दूध की आपूर्ति स्थानीय भागों के लिए की जाती है। ताजे दूध की आपूर्ति में परिवहन साधनों का योगदान प्रमुख होता है।

(b) भेड़ बकरी व छोटे पशु का पालनः–

भूमध्यसागरीय कृषि व्यवस्था में भेड़, बकरी, सूअर व अन्य छोटे पशुओं को अधिकाधिक संख्या में पालन किया जाता है, यहाँ पर मुर्गी पालन एक प्रमुख व्यवसाय के रूप में सम्पन्न होता है, कुछ क्षेत्रों में मधुमक्खी पालन का कार्य सफलतापूर्वक किया जाता है। मधुमक्खी पालन का कार्य फलों के क्षेत्रों में ज्यादा अनुकूल सिद्ध होता है।

शीतकालीन वर्षा पर आधारित फसल उत्पादनः–

भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेश में शीतकालीन वर्षा के सहयोग से खाद्यान्न फसल व सब्जियों का उत्पादन किया जाता है। कैलिफोर्निया को छोड़कर सभी भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेशों में गेहूँ की खेती सफलतापूर्वक की जाती है कुछ विद्वान भूमध्यसागरीय

कृषि प्रदेश को गेहूँ का उद्‌भव क्षेत्र मानते हैं। कैलिफोर्निया में बड़े पैमाने पर सब्जी की खेती, अंगूर की खेती की जाती है, कैलिफोर्निया से सब्जी को पश्चिमी यूरोप, पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका के बड़े जनसंख्या वाले क्षेत्रों को भेजा जाता है। इस तरह से कैलिफोर्निया में अंगूर, गेहूँ, साग–सब्जी के द्वारा बड़े पैमाने पर मुद्रा अर्जन का कार्य सम्पन्न होता है।

(9) व्यापारिक खाद्यान्न उत्पादन कृषिः–

कृषि व्यवस्था तकनीकी उपयोगिता और तकनीकी विकास का प्रतिफल है मध्य अक्षांशीय क्षेत्र में शुष्क प्रदेश एवं आर्द्र प्रदेश के मध्य विस्तृत घास के मैदान पाए जाते हैं जहाँ पर मिट्‌टी, वनस्पति और हिम युग के निक्षेपण से अधिक उपजाऊ है इस कृषि में सीमित क्षेत्र सम्मिलित किए गए यह कृषि शीतोष्ण कटिबंधीय घास के मैदान जैसे उत्तरी अमेरिका में प्रेयरी प्रदेश, दक्षिणी अमेरिका में पंपास, ऑस्ट्रेलिया में डाउन्स, ईस्ट एशिया के घास क्षेत्र में यह कृषि सफलतापूर्वक सम्पन्न हो रही है। इस कृषि व्यवस्था में निम्नलिखित विशेषताएं विद्यमान हैं–

1. कृषि क्षेत्र विस्तृत भू–भाग पर है
2. कृषि में उच्च स्तर के यंत्रों का उपयोग होता है
3. कृषि में फसल का विशिष्टीकरण पाया जाता है
4. कृषि क्षेत्र में पूँजी का अधिकतम निवेश भी किया जाता है।

व्यापारिक खाद्यान्न उत्पादन कृषि की प्रमुख फसल गेहूँ है, गेहूँ की खेती इन घास के मैदानी क्षेत्रों में बड़े–बड़े कृषि फार्म पर सम्पन्न की जाती है यह कृषि फार्म 200 से 400 हेक्टेयर तक के विस्तृत आकार के होते हैं कुछ कृषि फार्म 800 हेक्टेयर तक के भी पाए जाते हैं इस प्रदेश में मशीनें ही मुख्य हैं जिसके आधार पर अनेक प्रकार के कृषि कार्य सरलतापूर्वक सम्पन्न किए जाते हैं। यहाँ पर ट्रैक्टर, ड्रिल, हल, कंबाइन ट्रक, मालगाड़ी एक अनिवार्य घटक है मशीनों के आविष्कार और उपयोग के फलस्वरूप इस कृषि प्रणाली का विकास हुआ है। मशीनों के अभाव में इतने बड़े पैमाने पर यह कृषि कार्य संभव नहीं हो सकता है। यहाँ पर जनसंख्या कम पाई जाती है इसलिए प्रति व्यक्ति फसल उत्पादन की मात्रा बहुत अधिक होती है जनसंख्या कम होने से स्थानीय स्तर पर फसल उत्पादन की खपत भी बहुत कम अथवा सीमित होती है इसीलिए यहाँ पर उपज का अधिकार सभी व्यापार के लिए उपलब्ध हो पाता है चावल उत्पादन कृषि क्षेत्र और व्यापारिक खाद्यान्न उत्पादन कृषि क्षेत्र की व्यवस्थाओं और विशेषताओं में विभिन्नता पाई जाती है। दोनों में अन्तर पाया जाता है चावल का उत्पादन अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों में किया जाता है चावल का उत्पादन प्रायः उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सम्पन्न होता है चावल के उत्पादन वाले क्षेत्रों में चावल की स्थानीय खपत अधिक होती है वहाँ पर सस्ता श्रम उपलब्ध होता है भूमि मंहगी होती है जबकि व्यापारिक खाद्यान्न उत्पादन वाले क्षेत्र में कृषि कार्य यंत्रीकृत होता है कृषि फार्म बड़े आकार के होते हैं, जनसंख्या कम होती है, स्थानीय खपत कम होती है, उपज का अधिकांश भाग व्यापार के लिए उपलब्ध हो जाता है।

चावल के क्षेत्रों में कृषि कार्य में मानव श्रम का उपयोग अधिक होता है जबकि विस्तृत कृषि क्षेत्र में जहाँ पर गेहूँ की विशिष्टता है वहाँ पर अधिकांश कार्य मशीनों के द्वारा सम्पन्न किया जाता है गेहूँ यहाँ का प्रमुख उपज है, बाजार के मुख्य निर्यातक फसल के रूप में माना जाता है विश्व के प्रमुख खाद्यान्न उत्पादन क्षेत्र में संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा का बसंतकालीन गेहूँ, मध्य संयुक्त राज्य अमेरिका और कोलम्बिया के पठार का शीतकालीन गेहूँ, अर्जेंटीना के पंपास क्षेत्र में गेहूँ प्रदेश, आस्ट्रेलिया में मरे डार्लिंग नदी घाटी क्षेत्र, दक्षिणी पश्चिमी भूमध्यसागरीय जलवायु प्रदेश का गेहूँ क्षेत्र, यूक्रेन और रूस का गेहूँ क्षेत्र के समस्त गेहूँ प्रदेश में बड़े पैमाने पर खाद्यान्न का उत्पादन निर्यात सुगमतापूर्वक होता है इसके लिए यहाँ पर भौतिक और मानवीय दोनों ही कारक अनुकूल हैं।

(10) व्यापारिक शस्य एवं पशु उत्पाद अथवा मिश्रित कृषि प्रदेशः–

मिश्रित कृषि प्रदेश के अन्तर्गत पशुपालन का कार्य व्यापारिक स्तर पर फसल उत्पादन के साथ किया जाता है अर्थात् मिश्रित कृषि में फसल उत्पादन और पशुपालन दोनों कार्य एक साथ सम्पन्न होते हैं इस व्यवस्था का भी विकास और जन्म यूरोप में ही हुआ, यह कृषि व्यवस्था नार्वे, स्वीडन अर्थात् पश्चिमी यूरोप से लेकर नाइजीरिया के क्षेत्र तक एक लंबी पेटी के रूप में विस्तृत रूप से पाई जाती है जैसे–जैसे हम इस पेटी के पूर्व बढ़ते हैं यह पेटी अत्यन्त संकीर्ण होती जाती है एवं सर्वाधिक चौड़ाई लगभग 1200 किलोमीटर पाई जाती है। यह कृषि संयुक्त राज्य अमेरिका में इंडियाना, नेब्रास्का, वर्जीनिया, ओकलाहोमा, टेनेसी में सम्पन्न की जाती है इसके अलावा मेक्सिको के मध्य भाग, दक्षिणी अमेरिका में अर्जेंटीना, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका के पूर्वी भागों में यह खेती सुगमतापूर्वक की जा रही है। मिश्रित कृषि प्रदेश की विशेषताएं निम्नलिखित हैं।

1. मिश्रित कृषि फार्म अपेक्षाकृत बड़े–बड़े होते हैं औसत कृषि फार्मों का क्षेत्रफल 60 हेक्टेयर तक विस्तृत क्षेत्र पर पाए जाते हैं कहीं–कहीं पर यह 800 हेक्टेयर तक के क्षेत्र पर भी विस्तृत हैं जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका में मिश्रित कृषि फार्म 450 से 800 हेक्टेयर तक के आकार के पाए जाते हैं। यूरोपीय क्षेत्रों में मिश्रित कृषि फार्म का औसत क्षेत्रफल 30 हेक्टेयर का है, यूरोप और संयुक्त राज्य अमेरिका में जनसंख्या इन कृषि फार्म पर बिखरे रूप में पाई जाती है। कृषक मजदूरों के मकान, उनके पशुओं के लिए आवास, चारा इत्यादि उसी कृषि फार्म पर बनाए जाते हैं, जानवरों के लिए बाड़े और चारा आदि का भंडारगृह कृषि फार्म पर विकसित कर लिया जाता है।
2. मिश्रित कृषि पद्धति में फसल चक्र एक प्रमुख विशेषता पाई जाती है। मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बनाए रखने में फसल चक्र सहयोग करता है जैसे एक बार में 6 वर्ष के आवर्तन की प्रणाली अपनाई जाती है, जिसमें पहले वर्ष ओट्स, दूसरे वर्ष टर्निप या आलू, तीसरे साल पुनः ओट्स तथा अन्य 3 वर्षों में घास की खेती की जाती है। चार या पांच वर्ष के आवर्तन पद्धति में पहले वर्ष

चरागाह, दूसरे वर्ष गेहूँ, तीसरे वर्ष में आलू, और चौबे वर्ष में अनाज या ओट्स, 5 वर्ष में जौ बोये जाने की परम्परा है।

3. मिश्रित कृषि व्यवस्था यानी पशुपालन और कृषि जहाँ पर एक साथ सम्पन्न की जाती है इस कृषि व्यवस्था में अधिक पूँजी और श्रम दोनों की आवश्यकता होती है इसी व्यवस्था में 80% से अधिक कार्य मशीनों के द्वारा सम्पन्न किया जाता है अब सघन कृषि फार्म पर अधिकांश कार्य मशीनों के सहयोग से सम्पन्न हो रहा है कृषि फार्म को तैयार करने, फसलों की बुवाई करने, फसलों की कटाई करने, फसलों की मड़ाई करने का कार्य मशीनों के द्वारा सम्पन्न हो रहा है, रासायनिक खादों का छिड़काव भी मशीनों से, कीटनाशक खरपतवार नाशक दवाओं का प्रयोग भी मशीनों से सम्पन्न हो रहा है इसलिए उन्नत किस्म की मशीनों, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक दवाइयों, खरपतवार नाशी रसायनों आदि के लिए अधिक पूँजी की आवश्यकता होती है।
4. इस कृषि में फसल और पशुपालन दोनों कार्य साथ–साथ होते हैं इन फसलों का उत्पादन पशुओं के खिलाने के लिए भी किया जाता है इस तरह से यहाँ पर एक ही चारे के रूप में पशुओं को खिलाने की दृष्टि से, अन्न का उत्पादन एवं व्यापार के लिए भी उत्पादित किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में इस कृषि व्यवस्था में मक्का और गेहूँ का उत्पादन बड़ी सफलतापूर्वक किया जाता है विभिन्न रूप से पशुपालन के लिए उपयोगी होती है। उत्पादन बहुत अधिक होता है जिसकी पूरी खपत बाजार में नहीं हो पाती है जबकि पशु उत्पादन के विक्रय हेतु बाजार सुलभ है। यहाँ के उत्पादित पदार्थ को संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी क्षेत्रों को परिवहन के माध्यम से भेजा जाता है, कृषि फार्म को अधिकांश आय पशुओं के व्यापार से ही हो जाती है। यहाँ के प्रमुख पशु सूअर, भेड़, मुर्गी, घोड़ा, गाय आदि हैं। पशुओं का उत्पादन मुख्य रूप से मांस प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इसके अलावा पशुओं से यहाँ पर चमड़ा, अंडा, दूध का उत्पादन भी बड़े पैमाने पर होता है। गाय का पालन मांस और दूध दोनों उद्देश्यों की पूर्ति हेतु होती है जबकि सूअर का पालन केवल मांस के लिए ही किया जाता है।

मिश्रित कृषि के कारण किसान को कुछ न कुछ लाभ हमेशा उपलब्ध होता है इसीलिए मिश्रित कृषि कभी घाटे का सौदा नहीं होती है एक फसल के नष्ट होने पर दूसरी फसल और दोनों फसल के नष्ट होने पर पशु उत्पाद किसानों को उपलब्ध होता रहता है।

यूरोप के पश्चिमी भाग में, सोवियत रूप में, संयुक्त राज्य अमेरिका में मिश्रित कृषि का स्वरूप स्पष्ट दिखाई देता है भौगोलिक दशाएँ फसल और पशुपालन दोनों के लिए बेहद अनुकूल है। सामान्य तापमान और सामान्य वर्षा इस कृषि प्रदेश की प्रमुख विशेषता है यहाँ की कृषि मिट्टी भी हिमोढ़ प्रकार की है। पूरा कृषि प्रदेश शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात से प्रभावित रहता है, वर्षा बहुत हल्की होती है, बौछारों

से युक्त होती है यह वर्षा वर्षभर होती रहती है जो कृषि के लिए अत्यन्त अनुकूल होती है।

(11) जीविकोपार्जन एवं पशु उत्पादक कृषिः–

इस कृषि का जन्म क्षेत्र उत्तरी यूरोप है जहाँ पर जीविकोपार्जन फसल और पशु उत्पादन दोनों का कार्य एक साथ किया जाता है। इस कृषि व्यवस्था की अनेक विशेषताएँ मिश्रित कृषि व्यवस्था की विशेषताओं से मिलती है क्योंकि इसमें भी कुछ फसलों का उत्पादन कृषि फार्म पर किया जाता है अंतर इतना है कि यहाँ का उत्पादन का आधा भाग ही बाजार में उपलब्ध हो पाता है जबकि विस्तृत कृषि व्यवस्था में अधिकांश उत्पादन बाजार में उपलब्ध होता है। जीविकोपार्जन फसल और पशु उत्पादन के नाम से ही स्पष्ट है कि इस कृषि क्रियाकलाप का मुख्य उद्देश्य जीवन यापन के लिए ही है कुछ क्षेत्रों में बाजार के लिए कुछ भी उत्पाद प्राप्त करना संभव नहीं होता ऐसी कृषि विश्व के बहुत कम क्षेत्रों में की जाती है। विद्वान व्हिटलसी महोदय जब इस कृषि व्यवस्था का विश्लेषण कर रहे थे उस समय रूस के क्षेत्र में कृषि सुधार के कारण कृषि कार्य में ह्रास की स्थिति देखी जा रही थी और यह कृषि विश्व के अन्य देशों में भी बहुत कम क्षेत्रों पर सम्पन्न हो रही थी आज विकास के मापक बदल रहे हैं। कृषि क्षेत्र में तेजी से परिवर्तन हो रहा है अब यह जीविकोपार्जन और पशु उत्पादन कृषि व्यवस्था, व्यापारिक फसल और पशु उत्पादन कृषि में बदलती जा रही है ऐसी खेती एशिया के पश्चिमी भागों के उत्तर में उत्तरी ईरान, मध्यवर्ती एशिया, उत्तरी साइबेरिया में जहाँ पर भौगोलिक दशाएं अनुकूल नहीं हैं वहाँ पर येन केन प्रकारेण की जा रही हैं जीवन यापन के लिए फसल का उत्पादन और पशुपालन दोनों कार्य का सहयोग लेना पड़ रहा है। यहाँ पर मौसम या तो शुष्क है या तो अति शीतल है इस कारण से वर्ष में बड़ी मुश्किल से एक फसल का उत्पादन होता है इसीलिए लोगों को पशुपालन के फसल उत्पादन के साथ–साथ इस पशुपालन का कार्य भी करना होता है जिससे उनका जीवन यापन सरलतापूर्वक हो सके।

(12) व्यापारिक दुग्ध पशुपालन कृषिः–

व्यापारिक दूध पशुपालन कृषि का मुख्य लक्ष्य दूध और दूध से निर्मित होने वाले पदार्थों जैसे पनीर, मक्खन, दही आदि का व्यापारिक उत्पादन के लिए कृषि कार्य करना है, यह उत्तम कृषि व्यवस्था है इस कृषि व्यवस्था में पूंजी, श्रम, कृषि की मशीनों, प्रबंधन कौशल प्रशिक्षण आदि की नितान्त आवश्यकता होती है। यह कृषि व्यवस्था उन्हीं क्षेत्रों में अधिक सफल देखी जाती है जहाँ पर बाजार की निकटता हो। मक्खन, पनीर, दूध, क्रीम, मांस बेचने की सुविधा भी उपलब्ध हो, परिवहन के लिए विशेष रूप से साधन भी सुगमता से सुलभ हो, ऐसी कृषि व्यवस्था के लिए प्रशीतक की भी सुविधा होनी चाहिए। ऐसी कृषि समशीतोष्ण जलवायु प्रदेश में विशेष रूप से बड़े पैमाने पर की जा रही है। उष्ण प्रदेशों में बाजार के निकट दुग्ध पशुपालन का कार्य किया जाता है यह कृषि व्यवस्था 3 प्रदेशों में सम्पन्न की जा रही

है। प्रथम उत्तरी अमेरिका में सुपीरियर, मिशिगन, ह्यूरन इरी, ओण्टोरियो जैसी बड़ी झीलों के पश्चिमी भाग के प्रेयरी प्रदेश में यह कृषि कार्य सम्पन्न किया जा रहा है। पश्चिमी यूरोप के उत्तरी भाग में अंध महासागर के तटवर्ती क्षेत्रों से लेकर रूस की राजधानी मास्को तक यह कृषि कार्य कुशलतापूर्वक सम्पन्न किया जा रहा है। तीसरा क्षेत्र आस्ट्रेलिया के दक्षिणी पूर्वी भाग में और तस्मानिया, न्यूजीलैंड में भी यह कृषि उन्नत तरीके से सफल रूप से सम्पन्न की जा रही है। इन महत्वपूर्ण क्षेत्रों के अलावा दक्षिणी अमेरिका में अर्जेंटीना और अफ्रीका में दक्षिण अफ्रीका देश, साथ ही एशिया में पूर्वी जापान में भी यह कृषि व्यापारिक स्तर पर बड़े पैमाने पर सम्पन्न की जा रही है। इस कृषि में दुग्ध उत्पादन के संदर्भ में सोवियत रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत, जर्मनी, फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन, नीदरलैंड, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, अर्जेंटीना, न्यूजीलैंड, डेनमार्क, ब्राजील, पाकिस्तान, पोलैण्ड, इटली, जापान, चीन विश्व के महत्वपूर्ण देश हैं जो व्यापारिक दूध पशुपालन का कार्य करते हैं। प्रति गाय प्रतिवर्ष उत्पादन होने वाले दूध में अंतर पाया जाता है। पश्चिमी यूरोपीय देश की गाय और ग्रेट ब्रिटेन, अमेरिका, जापान, हालैण्ड, की गायें दूध का उत्पादन अधिक करती हैं या दूध अधिक देती हैं जबकि भारत, पाकिस्तान की गायें दूध कम देती हैं। भारत की गाय को पिकअप काऊ कहा जाता है। दूध से बने पदार्थ जैसे पनीर, पाउडर, दूध, मिल्क,कंडेंस, मिल्क, मक्खन आदि के उत्पादन में भी क्षेत्रीय प्रादेशिक स्तर पर अंतर पाया जाता है। कुछ देश दूध के पदार्थों के उत्पादन के लिए विश्वविख्यात हैं जैसे डेनमार्क, हालैण्ड, न्यूजीलैंड, मक्खन और पनीर के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका सूखा दूध के लिए विश्व प्रसिद्ध है। दूध एवं दूध से उत्पादित पदार्थों की प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा में भी राष्ट्रीय स्तर पर अंतर पाया जाता है। यूरोपीय देश जैसे आयरलैंड, स्वीडन, फिनलैंड, पोलैंड में दूध की प्रति व्यक्ति खपत अधिक है उसके बाद न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, संयुक्त राज्य अमेरिका में भी दूध की प्रति व्यक्ति खपत उच्च स्तर की है लेकिन दक्षिणी एशियाई राष्ट्र, पूर्वी एशियाई राष्ट्र, दक्षिण पश्चिम एशिया में दूध के प्रति व्यक्ति उपलब्धता अत्यन्त दयनीय स्थिति में है विश्व के निर्यातक देशों में न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया का महत्वपूर्ण स्थान है जबकि रूस, ब्रिटेन आदि देश मक्खन के अच्छे निर्यातक हैं, पनीर निर्यातक देशों में न्यूजीलैंड, नीदरलैंड, स्विट्जरलैंड, डेनमार्क, फ्रांस आदि का नाम विश्व में सर्वोपरि है जबकि पनीर के आयातक देशों में बेल्जियम, जर्मनी, ब्रिटेन आदि देशों का नाम पहले आता है आज विश्व के अनेक देशों में जीवन स्तर ऊँचा उठने के साथ–साथ डेरी उत्पादन वस्तुओं की मांग तेजी से बढ़ी है। इस कृषि में मांग को देखते हुए पशुओं की नस्लों, यंत्रों, पशुपालकों के प्रशिक्षण और प्रशीतक की सुविधा, पशुओं के रख–रखाव, उनकी चिकित्सा, उन पर अन्वेषण, अनुसंधान कार्य लगभग सभी देशों में तेजी से बढ़ा है। रेफ्रिजरेटर के विकास के फलस्वरूप डेयरी उद्योग वैज्ञानिक स्तर पर किया जा रहा है इस व्यवस्था में तीव्र वेग वाले परिवहन साधनों की भी आवश्यकता होती है जो

वर्तमान समय में लगभग सभी देशों में यह उपलब्ध है अब कई देशों में पाइप लाइन के द्वारा भी दुग्ध परिवहन कार्य पर विचार किया जा रहा है।

(13) विशिष्ट कृत उद्यान कृषिः–

इस कृषि के अन्तर्गत साग–सब्जी, फल–फूल की खेती की जाती है यह कृषि लगभग सभी देशों में शहरी क्षेत्रों में और औद्योगिक क्षेत्रों में कुशलतापूर्वक की जा रही है। नगरों में मकानों के पीछे, ग्रामीण क्षेत्रों में गांव के चारों तरफ फल–फूल, साग–सब्जी आसानी से उगाया जाता है और यह एक सामान्य बात भी है। बड़े–बड़े नगरों के सीमांत क्षेत्रों पर या रूरल अर्बन फ्रिंज, ग्रामीण क्षेत्र में साग–सब्जी और फूल–फूल की खेती व्यापारिक दृष्टि से भी की जाती है। यह कृषि संयुक्त राज्य अमेरिका, उत्तरी पश्चिमी यूरोप, डेनमार्क, ग्रेट ब्रिटेन, बेल्जियम, जर्मनी, फ्रांस आदि देशों में घनी आबादी के भाग में कुशलतापूर्वक की जा रही है। भारत में भी यह कृषि बड़े–बड़े नगरों के चारों तरफ आसानी से देखी जा सकती है इस कृषि प्रदेश में साग–सब्जी, फल–फूल आदि को उगाया जाता है। खेत का आकार बहुत छोटा होता है इसमें पूंजी और श्रम की अधिक आवश्यकता होती है उत्पादन अधिक होता है, उत्पादित वस्तुओं या पदार्थों को बाजार तक ले जाने के लिए परिवहन साधन की सुलभता होनी चाहिए। कृषि पद्धति में गहनता सबसे अधिक पाई जाती है आस्ट्रेलिया और संयुक्त राज्य अमेरिका में इसे ट्रक फार्मिंग के नाम से भी जाना जाता है। आस्ट्रेलिया और संयुक्त राज्य अमेरिका में यह कृषि बड़े–बड़े फार्म में की जाती है। वहाँ पर वर्ष में एक और कुछ विशिष्ट क्षेत्रों में दो फसलें उगाई जाती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा देशों में वैज्ञानिक प्रगति के कारण से इस कृषि का विकास अधिक हुआ है। इस व्यवस्था में द्रुतगामी परिवहन साधन, रेफ्रिजरेटर आदि की व्यवस्था से और मशीनीकरण के कारण एक क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिलता है। रेफ्रिजरेटर, रेलगाड़ी, ट्रक, छोटी चार पहिया साधन के द्वारा हरी ताजी साग–सब्जी, फल–फूल दूर तक के नगरों को सरलतापूर्वक पहुंचाई जाती है इस कृषि फार्म में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के उद्देश्य से उचित मात्रा में उर्वरक, सिंचाई के साधन, कीटनाशक, खरपतवारनाशी दवाओं, निराई–गुड़ाई, देखरेख, कुशल श्रम, उन्नतिशील बीज की आवश्यकता होती है भारत देश में इस कृषि व्यवस्था के लिए प्राकृतिक और मानवीय कारक अनुकूल हैं यहाँ पर पर्याप्त तापमान, सूर्य का प्रकाश, पौधों के विकास के लिए उचित और पर्याप्त वर्द्धन काल, उपजाऊ मिट्टी, श्रमिकों की उपलब्धता के कारण अब यह खेती छोटे–छोटे खेतों में, बाग बगीचों में आवासीय क्षेत्रों के पास सफलतापूर्वक की जा रही है। भारत में लगभग सभी प्रकार की सब्जी जैसे आलू, टमाटर, प्याज, शलजम, गोभी, बैंगन, भिंडी, परवल, तोरई, लौकी, कद्दू, सेम, पालक, मेथी, लहसुन, धनिया, सोयाबीन आदि की खेती बड़ी ही सफलतापूर्वक सम्पन्न हो रही है। भारत देश में दिन–प्रतिदिन बढ़ते नगरीकरण, औद्योगीकरण के कारण से साग–सब्जी, फल आदि की मांग भी बढ़ी है इसीलिए साग–सब्जी, फल–फूल की खेती में क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिलता है वर्तमान

समय में कीटाणुनाशक, खरपतवारनाशक रसायनों के बाजार में उपलब्धता के कारण प्रति हेक्टेयर उत्पादन भी बढ़ा है। अब भारत देश साग–सब्जी, प्याज, आलू, टमाटर का अन्य एशियाई देशों में निर्यात भी करता है।

विद्वान होवार्थ एवं स्पेंसर ने एतदर्थ छः प्रकार की सांस्कृतिक प्रक्रियाओं का उल्लेख किया है जिसमें मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक, तकनीकी एवं कृषि आर्थिकी महत्वपूर्ण है इन्होंने देश को निम्नलिखित कृषि प्रदेशों में रखा है–

1. उष्णकटिबंधीय रोपण कृषि प्रदेश
2. व्यापारिक बागाती कृषि प्रदेश
3. व्यापारिक दूध उत्पादक कृषि प्रदेश
4. व्यापारिक फसल एवं पशुपालन प्रदेश
5. विस्तृत व्यापारिक फसल एवं उत्पादक कृषि प्रदेश
6. भूमध्यसागरीय कृषि प्रदेश
7. प्राच्य निर्वाह कृषि प्रदेश
8. उष्णकटिबंधीय आदिम प्रकार की निर्वाह कृषि प्रदेश
9. पशुधन उत्पादन कृषि प्रदेश
10. चलवासी पशुचारण कृषि प्रदेश
11. अकृष्य प्रदेश

विश्व को उपयुक्त कृषि प्रदेशों के विवेचन के उपरान्त सरल रूप में 10 कृषि प्रदेशों में रखा जा सकता है जो प्रस्तुत चित्र से स्पष्ट है। कृषि प्रकार के निर्धारण एवं सीमांकन में प्राकृतिक पर्यावरण के साथ–साथ सांस्कृतिक पर्यावरण को भी सम्मिलित किया गया है इसका कृषि के उद्‌भव, विकास, परिवर्तन और हर ओर से अधिक महत्व है।

सारांश

इस इकाई में विश्व के कृषि प्रदेश का वर्णन किया गया है जैसा कि आपको जानकारी है कि इसके पूर्व के इकाई में विश्व के कृषि प्रादेशीकरण की योजना का सविस्तार वर्णन किया गया कि विश्व में किन किन विद्वानों ने किन किन कृषि प्रदेशों को किन किन आधारों पर निर्धारित किया है इस इकाई में अध्ययन की सुविधा को ध्यान में रखते हुए विद्वान व्हिटलसी द्वारा निर्धारित 13 कृषि प्रदेश का वर्गीकरण संक्षिप्त में किया गया है इन 13 कृषि प्रदेश में चलवासी पशुचारण व्यापारिक पशुपालन स्थानांतरण शील कृषि प्रारंभिक स्थाई कृषि चावल प्रधान जीविकोपार्जन कृषि व्यवस्था व्यापारिक पादप रोपण कृषि चावल गहन जीवन निर्वाहन कृषि व्यवस्था भूमध्यसागरीय कृषि व्यवस्था व्यापारिक एवं पशु उत्पादक कृषि व्यवस्था अथवा मिश्रित कृषि व्यवस्था जीविकोपार्जन फसल एवं पशु उत्पादक कृषि व्यवस्था व्यापारिक दूध पशुपालन कृषि व्यवस्था विशिष्टीकृत उद्यान कृषि व्यवस्था आदि 13 कृषि प्रदेश में विभाजित किया गया है कृषि प्रदेशों के माध्यम से यह विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है कि कृषि कृषि प्रदेश में किस विभाग में वहां के तापमान वर्षा

आर्द्रता स्थलों के आधार पर किन फसलों का चयन किया जा सकता है वहां के किसानों के सामाजिक आर्थिक राजनीतिक सरकारी नीति और लोगों के प्रकृति के आधार पर फसलों का चयन करते हुए एक कषि प्रदेश का निर्धारण करने का प्रयास किया गया जैसे यह भी देखा गया है कि कहां पर फसल के साथ पशुपालन का कार्य भी सफलतापूर्वक किया जा रहा है फसलों की प्रमुखता है और किन फसलों को गौंड रूप में कृषि कार्य में शामिल किया गया है इतना ही नहीं कहां पर बागवानी की जा रही है इस आधार पर कृषि प्रदेश का निर्धारण उनकी समग्रता को ध्यान में रखते हुए किया गया है कृषि प्रदेश के अध्ययन कर लेने से विद्यार्थी को इस बात की जानकारी हो जाएगी कि विश्व में कृषि क्षेत्र में कितनी विविधता है और विश्व के किस भाग में कौन सी फसल उगाई जाती है और वहां पशु और फसल संयोजन की क्या अंतर है आज ऐसे अनेक प्रश्न है जिनका उत्तर इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आसानी से दिया जा सकता है

बोध पश्न

1.चलवासी प्रसारण किया जाता है चलवासी पशुचारण किया जाता है
क मंगोलिया तिब्बत
ख मध्य एशियाई देश
ग सऊदी अरब अफ्रीका उत्तरी अफ्रीका
घ उत्तरी भारत राज्य

2. व्यापारिक पशुपालन का कार्य निम्न में किस देश में नहीं है
क अर्जेंटीना
ख ऑस्ट्रेलिया
ग न्यूजीलैंड
घ बांग्लादेश

3.चेना क्या है
क चावल
ख पशु
ग खिसकती खती
घ कुछनही

4.फजेंडा किसे कहते हैं
क चाय बागान
ख कहवा बागान
ग आम बागान
घ कुछनही

5.कहवा की खेती के लिए कौन सा देश विश्व प्रसिद्ध है
क बाजील
ख नेपाल

ग पीरु
घ चीन

सन्र्दभ ग्रन्थ सूची –

1. प्रो० आर०सी० तिवारी, प्रो० बी०एन० सिंह : कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद।
2. ब्रज भूषण सिंह : कृषि भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
3- Symon, L. : Agricultural Geography, Bell & Sons, London, 1967.
4- Kostrowicki, J : World Types of Agricuture, Polish Academy, Warsaw, Poland.
5- Noor Mohd. : New Dimensions in Agriculture, Concept, New Delhi, 1991.
6- Singh & Dhillon : Agricultural Geography, TATA Mc Graw Hill, New Delhi.
7- Whittlesey, D. : Major Agricultural Regions of the Earth, A.A.A.G. Vol 26.

अभ्यास के लिए प्रश्न

1.विश्व को कृषि प्रादेशिक करण निर्धारण की योजना को समझाते हुए किसी एक विषय प्रदेश का सविस्तार वर्णन कीजिए
2.विद्वान लिटिल से द्वारा वर्गीकरण की योजना को समझाइए
3. स्थानांतरण सेट करें की प्रमुख विशेषताओं को समझाते हुए यह बताइए कि यह कृषि आज विश्व में कहां कहां की जाती है
4 चावल प्रधान जीविकोपार्जन कृषि का मुख्य क्षेत्र कहां है उसका सविस्तार वर्णन कीजिए
5.ग्रहन निर्वाहन कृषि की प्रमुख विशेषताएं बताइए
6.भूमध्यसागरीय कृषि व्यवस्था की प्रमुख विशेषता बताते हुए उसके क्षेत्र का निर्धारण कीजिए
7. जीविकोपार्जन फसल उत्पादन कृषि व्यवस्था का सविस्तार वर्णन कीजिए
8 विशिष्ट उद्यान कृषि की प्रमुख विशेषता समझाते हुए यह बताइए यह कृषि कहां की जाती है

इकाई 12 – यू.एस.ए. के कृषि प्रदेश, चीन के कृषि प्रदेश एवं नवीनतम वैज्ञानिक कृषि प्रदेश

1.0 प्रस्तावना

1.1 **उद्देश्य**

1.2 संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेश

1.3 कृषि प्रादेशीकरण

1.3.1मक्का पेटी

1.3.2 तंबाकू पेटी

1.3. 3. गेहूँ पेटी

1.4.4. कपास पेटी

1.3.5. घास एवं दुग्ध पेटी

1.4 चीन का कृषि प्रदेश

1.5 कृषि प्रादेशीकरण

1.5.1 सोयाबीन प्रदेश

1.5.2 चावल प्रदेश

1.5.3 गेहूं तथा चावल प्रदेश

1.5.4 गेहूं तथा ज्वार बाजरा प्रदेश

*1.5.6.**शीतकालीन गेहूं एवं कॉयोलिंग प्रदेश***

1.5.7.शीतकालीन गेहूं एवं ज्वार बाजरा प्रदेश

1.5.8.बसंत कालीन गेहूं प्रदेश

1.6.0.चीनी वैज्ञानिक अकादमी द्वारा कृषि प्रादेशिकरण

1.7.0.साराश

1.8.बेाध प्रश्न

1.9.बेाध प्रश्न के उत्तर

2.0 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.1 अभ्यास के प्रश्न

प्रस्तावना

इकाई 12 में संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन के कृषि प्रदेश का वर्णन किया गया है। संयुक्त राज्य अमेरिका में वहां उस संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन दोनों का क्षेत्रफल अधिक है। दोनों विशाल और विषम आप आकृति वाले देश हैं धरातलीय क्षमता जलवायु इतनी क्षमता के कारण से धरातलीय विषमता और जन्म स्थान यहां पर यहां पर अनेक प्रदेश पाए जाते हैं क्योंकि कृषि जलवायु और धरातल मूल रूप से प्रभावित करते हैं इसके साथ साथ चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका का विकास के लिए आधारभूत संरचना सरकारी नीति वहां के लोगों का कर्तव्य निष्ठा वहां की परंपरा लोगों के आर्थिक समृद्धि की भावना ऋषि को परंपरागत तरीके से उद्योग की ओर अग्रसर करने का प्रयास किया है संयुक्त राज्य अमेरिका में कृषि का कार्य न केवल उत्पादन के लिए किया जाता है बल्कि कृषि से हमकैसे हम अधिक आय का आयोजन कर सकते हैं संयुक्त राज्य अमेरिका में औद्योगिक क्रांति के परिणाम स्वरूप विकास के कारण कृषि कार्य में मशीनों का प्रयोग तेजी से बढ़ा है यहां पर कृषि वैज्ञानिक विधि द्वारा संपन्न की जाती हैयहां पर कीटनाशक दवाएं खरपतवार नाशक दवाएं रासायनिक उर्वरक सरकारी प्रोत्साहनआदि के कारण कृषि समुन्नत दशा में है यहां पर गेहूं कपास मक्का तंबाकू दूध दूध से निर्मित अनेक प्रकार के पदार्थ मान का उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाता हैसंयुक्त राज्य अमेरिका आज कृषि के क्षेत्र में खाद्य खाद्य फसलों के उत्पादन में पशु उत्पाद के उत्पादन मेंविश्व में सर्वोपरि स्थान पर है संयुक्त राज्य अमेरिका की तरह चीन भी कृषि के क्षेत्र में विकास के पथ पर अग्रसर है चीन मिनी भी कृषि वैज्ञानिक आधार पर की जाती है यह क्षेत्रफल के दृ ष्टिकोण से विश्व का तीसरा सबसे बड़ा राष्ट्र है यहां पर गेहूं चावल सोयाबीन और कॉलिंग ज्वार बाजरा आलू मक्का चाहे रवाद की खेती अत्यंत कुशलतापूर्वक की जाती है चीन की कृषि प्रदेश में चावल और गेहूं की प्रधानता पाई जाती है चीन के कृषि प्रदेश को विभाजित करने में विद्वान प्ले स्टोर प्रोफेसर यलबक डेडली स्टांप जेल पक का महत्वपूर्ण योगदान है चीनी वैज्ञानिक अकादमी ने भी वहां कृषि प्रादेशिक का कार्य किया है विषम जलवायु धरातलीय क्षमता के कारण चीन के कृषि उत्पाद में भी विषमता पाई जाती है चीन की प्रमुख फसल चावल है क्योंकि मानसूनी जलवायु के कारण चावल की खेती सफलतापूर्वक की जा रही है इसकी जनसंख्या विश्व में सर्वाधिक है इसलिए यहां पर जीवन यापन का निर्वाहन गण जीवन निर्वहन खेती का महत्व अधिक है किसान अपनी जमीन पर वर्ष में अधिक से अधिक फसल का उत्पादन करने के लिए तत्पर रहता है चीन में वैज्ञानिक और औद्योगिक प्रगति के कारण से की खरपतवार नाशी रसायन का प्रयोग बीज का प्रयोग और सुधरे हुए कृ षि यंत्रों का प्रयोग के साथ रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग वृद्धि हुई है चीन में इन्हीं वैज्ञानिक प्रयोग के कारण से श्रम खेती तीव्र होने लगी है और आज चीन मक्का

चावल गेहूं आदि सब्जी फल आदि के उत्पादन में विश्व में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है

उद्देश्य

प्रस्तुति इकाई के अध्ययन का उद्देश्य निम्नवत है

1 आप यह जान सकेंगे कि संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेश का निर्धारण किन आधारों पर किया गया है

2 इस इकाई में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि संयुक्त राज्य अमेरिका को किन–किन विद्वानों ने किस कितने कृषि प्रदेशों में विभाजित किया है

3 संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेशों को समझ सकेंगे

4 इस इकाई के अध्ययन से चीन के समस्त कृषि प्रदेशों का विशद वर्णन किया जा सकेगा

5 चीन को किन–किन विद्वानों ने कृषि प्रदेशों में विभाजित किया है और कितने प्रदेश बनाए हैं इसकी जानकारी होगी

6 संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन के कृषि प्रदेश की तुलना भी कर सकेंगे

संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेश

संयुक्त राज्य अमेरिका में कृषि कार्य को व्यवस्थित ढंग से प्रारंभ करने का श्रेय यूरोप से आने वाले प्रवासियों को दिया जाता है यूरोपीय प्रवासियों के आने से पहले संयुक्त राज्य अमेरिका का कृषि स्वरूप केवल जीवन निर्वाहन प्रकार का ही था, यहाँ पर कृषि कार्य से अनाज, भेड़ों के ऊन से बनाए गए वस्त्र, सूअर से मांस एवं अन्य पशुओं से दूध प्राप्त किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रारंभिक समय में जीवन निर्वाह कृषि सम्पन्न की जाती थी धीरे–धीरे यहाँ के कृषि पर उद्योग धन्धों का प्रभाव पड़ा, यातायात के साधनों का विकास हुआ, कृषि कार्य में उन्नत किस्म के मशीनों का प्रयोग किया जाने लगा। संयुक्त राज्य अमेरिका में नवीन प्रौद्योगिकी के विकास के कारण कृषि प्रतिरूप में स्पष्ट परिवर्तन दिखाई देने लगा। यहाँ पर बड़े–बड़े कृषि फार्म पर बड़े पैमाने पर कृषि कार्य यूरोपीय लोगों द्वारा किया जाने लगा। संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग द्वारा नवीनतम शोध उन्नत कृषि यंत्र, अधिक उत्पादन देने वाले उन्नतशील बीज, कीटनाशक दवाई, रासायनिक उर्वरक आदि के द्वारा कृषि विकास को विशेष प्रोत्साहन मिला। परिणामतः संयुक्त राज्य अमेरिका में दूध, दूध से बने उत्पादन एवं मक्का, गेहूँ, तंबाकू व पशुओं के उत्पाद, मांस आदि का उत्पादन आज बड़े पैमाने पर हो रहा है और इसी कारण से

संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व में प्रथम और द्वितीय स्थान पर कृषि उत्पादन के प्रत्येक उत्पाद में अपना स्थान बनाए हुए है। यहाँ पर 48 करोड़ हेक्टेयर भूमि कृषि योग्य है जिसमें 14 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर खाद्य व अखाद्य फसलों को उगाया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका क्षेत्रफल की दृष्टि से रूस, कनाडा, चीन, के बाद चौथा सबसे बड़ा देश है किन्तु कृषि योग्य भूमि के मामले में यह सोवियत रूस के बाद विश्व का दूसरा सबसे बड़ा राज्य है। यहाँ प्रति व्यक्ति कृषि भूमि की उपलब्धता अधिक पाई जाती है। आस्ट्रेलिया और सोवियत रूस के बाद चरागाह की दृष्टि से यह तीसरा बड़ा देश है यहाँ के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 45% भूभाग फार्म के अन्तर्गत शामिल है इस कृषि फार्म के अन्तर्गत 17% क्षेत्रफल शस्य व 25% क्षेत्रफल कृषि फार्म, 7% क्षेत्र पर वनस्पति का उत्पादन किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका का 27% क्षेत्र वनाच्छादित है और 14% खुला क्षेत्र या चरागाह के रूप में है 2% क्षेत्र पर जल का विस्तार है 8% भाग पर अन्य प्रकार की क्रिया संपादित की जाती है। भूमि उपयोग के संदर्भ में क्षेत्रीय भिन्नता पाई जाती है जैसे इयोवा प्रांत में 63% भूभाग पर कृषि की जाती है, 31% भूभाग पर चरागाह है, 5% भूभाग अकृष्य क्षेत्र के अन्तर्गत शामिल है। न्यू इंग्लैंड राज्य में केवल 6% भाग पर खेती की जाती है। 13% भाग पर चरागाह है, 78% भूभाग पर गैर कृषि कार्य के रूप में शामिल है यहाँ पर क्षेत्रीय भिन्नता अधिक पाई जाती है। इन्हीं क्षेत्रीय विषमताओं के आधार पर विद्वान ड्यूरी महोदय ने 1979ई0 में संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि भूमि उपयोग को 9 प्रदेशों में विभाजित किया था। आपने भूमि उपयोग के विभाजन का आधार प्राकृतिक कारकों को चुना था आपके विभाजन के आधार में उच्चावच, मिट्टी, जलवायु, वनस्पति और भूमि की सक्षमता प्रमुख है–

1. फसल उत्पादन एवं चरागाह प्रदेश
2. फसल उत्पादन चरागाह एवं वनस्पति प्रदेश
3. घास चरागाही प्रदेश
4. वन एवं चरागाह प्रदेश
5. झाड़ी चरागाह प्रदेश
6. दक्षिणी पश्चिमी झाड़ी चरागाही प्रदेश
7. वन प्रदेश
8. उत्तरी टुंड्रा प्रदेश
9. दलदल प्रदेश

कृषि उत्पादकता के दृष्टिकोण से, प्रदेश फसल उत्पादन, चरागाह एवं वनस्पति प्रदेश सभी कृषि प्रदेशों में अत्यन्त महत्वपूर्ण है आपके दृष्टिकोण से तीसरा, चौथा और पांचवां भूमि उपयोग का प्रकार आर्थिक दृष्टिकोण से गौण है और शेष छठा, सातवाँ, आठवाँ, नवाँ भूमि उपयोग के दृष्टिकोण से अनुपयुक्त प्रदेश के रूप में

पाया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका को कृषि प्रदेशों में विभाजित करने का प्रथम प्रयास विद्वान बेकर महोदय ने किया था आपने 1926 से 33ई0 के मध्य संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेशों पर अनेक सारगर्भित लेख लिखे थे वह ''इकोनॉमिक ज्योग्राफी'' नामक पत्रिका में प्रकाशित होता रहा। वहीं बेकर महोदय ने संयुक्त राज्य अमेरिका को निम्नलिखित कृषि प्रदेशों में विभाजित किया है–

1. मध्य अंध महासागर तटीय ट्रक कृषि प्रदेश
2. मक्का एवं शीतकालीन गेहूँ कृषि प्रदेश
3. मक्का कृषि प्रदेश
4. कठोर शीतकालीन गेहूँ की पेटी
5. बसंत कालीन गेहूँ की पेटी
6. घास एवं डेयरी कृषि प्रदेश
7. पशुचारण एवं सिंचित कृषि प्रदेश
8. कोलंबिया पठार का गेहूँ उत्पादक प्रदेश
9. प्रशांत तटीय उपोष्ण कृषि प्रदेश
10. उत्तरी प्रशांत घास, चरागाहों और वनों का प्रदेश
11. उत्तरी वन एवं घास प्रदेश

इस तरह से आपने 12 कृषि प्रदेश बनाया है।

विद्वान हार्टशोर्न एवं डिकेन ने बेकर के कृषि प्रदेश के बाद उत्तरी अमेरिका को कृषि प्रदेशों में विभाजित करने का प्रयास किया। विद्वान हार्टशोर्न और डिकेंस का कृषि प्रदेश मुख्य रूप से सांख्यिकीय विधियों पर आधारित है। इन्होंने अपने कृषि प्रदेश के सीमांकन में प्रमुख फसलों के साथ–साथ अन्य फसलों को भी ध्यान में रखा है और उन्हें शामिल किया है। प्रदेश के निर्धारण में फसलों के क्षेत्र के प्रतिशत को मूल आधार माना है। इनके द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेश बताए गए जो इस प्रकार से हैं–

1. भूमध्यसागरीय प्रकार की कृषि
2. मक्का, गेहूँ, पशु प्रकार की कृषि
3. छोटे अन्न एवं पशु प्रकार की कृषि
4. घास, चरागाह, पशु प्रकार की कृषि
5. विस्तृत व्यापारिक अन्न प्रकार की कृषि
6. व्यापारिक फलोद्यान एवं ट्रक फार्मिंग कृषि

विद्वान डिकेन और हार्टशोर्न का कृषि प्रादेशीकरण का सीमांकन सांख्यिकीय विधियों पर आधारित है इसलिए कृषि प्रदेशों का आकार अधिक बड़ा है। इन वृहद प्रदेशों को सूक्ष्म कृषि प्रदेशों में विभाजित करके व्यवस्थित अध्ययन किया जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में नवीन प्रौद्योगिकी के विकास में सरकारी प्रोत्साहन के

कारण भूमि उपयोग प्रतिरूप में तेजी से परिवर्तन देखा गया है। कृषि की नवीनतम प्रवृत्तियों के आधार पर संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग ने देश को 12 कृषि प्रदेशों में विभाजित करने का प्रयास किया जो निम्नवत् है–

1. दक्षिणी–पूर्वी अंध महासागर तट और खाड़ी तट के ट्रक फार्मिंग कृषि प्रदेश
2. कपास पेटी
3. गेहूँ एवं छोटे अनाज के क्षेत्र
4. मिश्रित कृषि पेटी
5. मध्य अटलांटिक महासागरीय तटीय ट्रक फार्मिंग कृषि पेटी
6. चारे वाले और पशुओं का प्रदेश अथवा मक्का पेटी
7. डेरी प्रदेश
8. सिंचित फल और साग सब्जी का कृषि प्रदेश
9. डेरी और फलों का कृषि प्रदेश
10. पशुचारण कृषि प्रदेश
11. सिंचित कृषि
12. तंबाकू और सामान्य कृषि प्रदेश

इस तरह से संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग ने अपने प्रदेश को कुल 12 कृषि प्रदेश में बाँटा। संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि मानचित्र से भी स्पष्ट है कि इसके पूर्वी और पश्चिमी भागों में तलीय विषमता पाई जाती है जलवायुगत भी विषमता पाई जाती है, पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी क्षेत्र में आर्द्रता के कारण चारा खाद्यान्न फसलें घास और पशुपालन का कार्य प्रमुख रूप से किया जाता है जबकि पश्चिमी भाग में जलवायु अर्द्ध शुष्क एवं शुष्क है इसलिए घास के लिए बड़े–बड़े चारागाह, पशुचारण, सिंचित एवं शुष्क कृषि का कार्य संपादित किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी और पश्चिमी भाग में 100 डिग्री पश्चिमी देशांतर रेखा एक विभाजक रेखा के रूप में कृषि प्रदेशों को विभाजित करती है इसके साथ ही साथ संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेशों के निर्धारण में 62.5 सेंटीमीटर दक्षिण में एवं उत्तर में 37.5 सेंटीमीटर वर्षा रेखा द्वारा भी कृषि प्रदेश का निर्धारण किया जाता है। तापमान और वर्धन काल का प्रभाव यहाँ पर अक्षांशीय विस्तार पर स्पष्ट देखा जाता है उत्तर से दक्षिण जाने पर तापमान क्रमशः बढ़ता जाता है और पौधों के विकास का समय भी बड़ा हो जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी भाग में लगभग 85% फसल क्षेत्र एवं 85% उत्पादन भी प्राप्त होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में कृषि प्रदेश का विस्तार दक्षिण उत्तर दिशा में है इसका मुख्य कारण यहाँ की प्राकृतिक दशाएँ हैं इस भाग का अधिकांश भाग पर्वतीय और पठारी भी है यहाँ पर फसल उत्पादन और पशुपालन दोनों प्रमुख रूप से किया जाता है। मुद्रा दायिनी फसलों में कपास, तंबाकू, साग–सब्जी, फल इसके साथ तिलहन एवं खाद्यान्न फसलें

प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। कुल कृषि भूमि के लगभग एक चौथाई भाग पर खाद्यान्न फसलों का उत्पादन किया जाता है। यहाँ पर गेहूँ सर्वाधिक विस्तृत क्षेत्र पर उगाया जाता है खाद्यान्न फसलों के लगभग आधे भाग पर मक्का की खेती की जाती है पशुओं को खिलाने के लिए मक्का का उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाता है विश्व का लगभग 10% गेहूँ और 44% मक्का का उत्पादन संयुक्त राज्य अमेरिका में किया जाता है। फसल उत्पादन की तरह पशुपालन को भी यहाँ पर कृषि क्षेत्र में अधिक महत्व दिया गया है विश्व का लगभग 50% मांस पशु संयुक्त राज्य अमेरिका में पाले जाते हैं यहाँ पर दुग्ध पशु तथा सूअर और भेड़ पालन का कार्य कृषि के साथ किया जाता है पशुपालन और फसल उत्पादन दोनों व्यवस्थाएँ एक साथ की जाती हैं और देश की अर्थव्यवस्था में दोनों का अपना महत्वपूर्ण योगदान है देश के कुछ विशेष भागों में महत्वपूर्ण फसलें उगाई जाती हैं इसीलिए उन फसलों के नाम पर उनके विस्तृत क्षेत्र को पेटी कहा जाता है जैसे गेहूँ पेटी, मक्का पेटी, कपास पेटी इत्यादि इन कृषि पेटी में प्रमुख फसलों के साथ–साथ अन्य फसलों की भी खेती की जाती है। आर्थिक दृष्टिकोण से सर्वाधिक लाभ वाली फसलों के आधार पर संयुक्त राज्य अमेरिका में निम्नलिखित 5 कृषि पेटियाँ भी पाई जाती हैं जैसे–

1. मक्का पेटी
2. तंबाकू पेटी
3. गेहूँ पेटी
4. कपास पेटी
5. घास एवं दुग्ध पेटी

1. मक्का पेटीः–

संयुक्त राज्य अमेरिका की मक्का पेटी सबसे ज्यादा उपजाऊ और विकसित है मक्का पेटी का विस्तार मध्य पश्चिमी तथा महान झीलो वाले प्रदेश के दक्षिणी भाग में पाई जाती है मक्का पेटी का विस्तार मिशिगन, विस्कांसिन, मिनीसोटा, डकोटा, उत्तरी मिसौरी, नेब्रास्का, ओहियो, इंडियाना, इयोवा आदि राज्य में सफलतापूर्वक की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका की मक्का पेटी का विस्तार पश्चिम से पूर्व 1450 किलोमीटर और उत्तर से दक्षिण 250 किलोमीटर से 500 किलोमीटर के लगभग है। यह पेटी सामान्य रूप से आयताकार आकृति में पाई जाती है यहाँ पर कृषि फार्म लगभग 80 हेक्टेयर के आसपास होते हैं। फार्मस्टेड के कृषि फार्म पर ही वहां के प्रबंधक या मालिक का आवास, वहां पर श्रमिक आवास, उसका कार्यालय और अन्नागार, डेयरी, पशुगृह, कुक्कुट का उद्यम, सुअरबाड़ा आदि बनाया जाता है। मक्का कृषि के अन्तर्गत देश का 80% क्षेत्र शामिल है यह मक्का संयुक्त राज्य अमेरिका के समस्त कृषि उत्पाद का 28% और समस्त कृषि आय का 25% योगदान देता है। यहाँ पर पशुपालन और फसल की सघनता विश्व में सबसे अधिक पाई जाती है यहाँ पर

65% मक्का, 25% से अधिक गाय तथा भेड़ें, 80% से अधिक सूअर, 20% मुर्गी व अन्य पक्षी, गेहूँ अल्फाल्फा उत्पादन समस्त संयुक्त राज्य अमेरिका का किया जाता है। विद्वान बेकर महोदय ने इससे प्रदेश की विशिष्टता को देखकर कहा ''द हर्ट ऑफ अमेरिकन एग्रीकल्चर एंड द मोस्ट इंपोर्टेंट एग्रीकल्चर रीजन इन द वर्ल्ड फार इट्स साइज'' मक्का उत्पादन के लिए इस कृषि पेटी में आदर्श भौतिक दशाएं पाई जाती हैं। इस भाग में वर्षा 50 से 100 सेंटीमीटर और ग्रीष्मकाल का तापमान 21 से 27 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। वर्षा अधिकांशतः बसंत अर ग्रीष्म ऋतु में होती है, 140 दिन पाला युक्त रेखा मक्का पेटी की उत्तरी सीमा का निर्धारण करती है जबकि 60 सेंटीमीटर की वर्षा रेखा मक्का पेटी की पश्चिमी सीमा का निर्धारण करती है। मक्का का वृद्धि और विकास के लिए लगभग 120 से 170 दिन का समय यहाँ पर आसानी से उपलब्ध हो जाता है। मक्का पेटी की पूर्वी सीमा अप्लेशियन पर्वत द्वारा निर्धारित की जाती है मक्का उत्पादन तथा सूअर पालन पर मक्का कृषि प्रदेश की अर्थव्यवस्था निर्धारित है। मक्का क्षेत्र में मक्का उत्पादन चारा की उपलब्धता, पशुओं की न्यूनतम देखभाल, सूअर का जल्दी से तैयार होना, उन्नत किस्म की मशीनों आदि की सुविधा विद्यमान है। मांस वाले पशु और मक्का का उत्पादन यहाँ की मिश्रित कृषि की सबसे प्रमुख विशेषता है। गौण रूप से यहाँ पर घास, गेहूँ, जई, राई, सोयाबीन की फसलें भी उगाई जाती हैं। प्रादेशिक स्तर पर इन फसलों के क्षेत्रों में विविधता पाई जाती है। मक्का के बाद द्वितीय स्तर पर सबसे महत्वपूर्ण फसल सोयाबीन की खेती है। इलिनॉइस क्षेत्र में मक्का से अधिक क्षेत्र पर सोयाबीन की खेती की जाती है इसीलिए इसे 'मक्का सोयाबीन पेटी' के नाम से भी जाना जाता है। मक्का पेटी के फसल सम्मिश्रण को तीन प्रकार में रखा गया है जो निम्नलिखित है– 1. दक्षिणी पश्चिमी भाग में मक्का, घास, गेहूँ क्षेत्र, 2. दक्षिणी पूर्वी भाग में मक्का, सोयाबीन क्षेत्र, 3. उत्तरी भाग में मक्का, जई, घास क्षेत्र इन तीन क्षेत्र फसल सम्मिश्रण का मूल आधार यहाँ की प्राकृतिक विभिन्नता, जलवायु की विविधता है। मक्का उत्पाद पर यहाँ का पशुपालन आधारित है मक्का को गायों, सूअरों, कुक्कुट के चारे के रूप में खिलाया जाता है सूअर पालन यहाँ का सबसे लाभदायक पशुपालन है सभी पशुओं में सूअर का प्रतिशत 60% तक है। आय का प्रमुख स्रोत सूअर ही है यहाँ पर पशु सम्मिश्रण और शस्य सम्मिश्रण में क्षेत्रीय विभिन्नता पाई जाती है। क्षेत्रीय विभिन्नता के आधार पर पशु सम्मिश्रण को निम्नलिखित चार भागों में रखा गया है। पहला मिलवाउकी नगर के निकटस्थ भाग में कुक्कुट की प्रधानता, दूसरा मध्य आहियो में भेंड़, तीसरा दक्षिणी पश्चिमी भाग में गाय–मांस पशु, चौथा उत्तरी सीमान्तीय भाग में सूअर के साथ दूध पालन पशु मिश्रण की तरह मक्का पेटी को फसल एवं पशु मिश्रण के आधार पर चार भागों में रखा गया है–

1. मक्का, गेहूँ, घास, सूअर, मांस पशु

2. मक्का, सोयाबीन, सूअर, दुधारू पशु
3. मक्का, जई, घास, सूअर, डेयरी पशु
4. मक्का, सोयाबीन, सूअर, गाय

इस तरह से 4 वर्गों में विभाजित किया गया है।

प्रथम सम्मिश्रण दक्षिणी पश्चिमी शुष्क भाग में पाया जाता है। जिसके अन्तर्गत उत्तरी पूर्वी कंसास, उत्तरी मिसौरी, दक्षिणी पूर्वी नेब्रास्का राज्य में विस्तृत है। द्वितीय फसल पेटी या सम्मिश्रण पेटी का विस्तार उस दक्षिण मध्य भाग में है इसके अन्तर्गत आहियो, पश्चिमी इंडियाना, मध्य इलीनोइस, आदि राज्य शामिल हैं। तीसरे वर्ग के अन्तर्गत दक्षिणी विस्कांसिन, मिशिगन, उत्तरी इंडियाना आदि शामिल हैं। चतुर्थ सम्मिश्रण का विस्तार पूरब में प0 ओहियो राज्य से लेकर के प0 में इओवा तक पाया जाता है। विश्व का चौथा सबसे बड़ा मक्का उत्पादक राज्य संयुक्त राज्य अमेरिका है। विश्व का लगभग 46% मक्का का उत्पादन यहाँ पर होता है। प्रति हेक्टेयर उपज 250 बसल से अधिक है। यहाँ का अधिक उत्पादन का मूल कारण उन्नत तकनीक, ट्रैक्टर, कंबाइन हार्वेस्टर, ट्रक, वायुयान, कीटनाशक दवा, खरपतवार नाशक, दवा छिड़कने की मशीन अनेक तरह के जल पंप, पवनचक्की, उन्नतिशील बीज, रासायनिक उर्वरक, कृषक प्रशिक्षण, सरकारी प्रोत्साहन आदि महत्वपूर्ण हैं। कुल उत्पादन का लगभग 98% भाग पशुओं को खिलाने के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। इस तरह से 2% शेष मक्का विदेशों को निर्यात किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका अपने समस्त मक्का उत्पादन का अधिकांश भाग स्वयं उपभोग कर लेता है, मक्का पेटी में ही सूअर का पालन होता है और समस्त मक्का उत्पादन का 42% भाग सूअर को खिलाया जाता है। मक्का खाने से सुअर शीघ्र मांसल हो जाते हैं और वहां से बूचड़खाने में इनको भेज दिया जाता है, मांस का डिब्बाबंदी की जाती है और सूअर के मांस का निर्यात संयुक्त राज्य अमेरिका विभिन्न देशों को करता है। मक्का अप्रत्यक्ष रूप से मांस के रूप में निर्यात किया जाता है इसके लिए "Corn travels on hogs" जैसे वाक्य प्रासंगिक हैं। शिकागो 'विश्व की सबसे बड़ी मांस मंडी' इसी पेटी में स्थित है। कंसास, ओमाह, सैंट लुइ यहाँ के महत्वपूर्ण मक्का इकट्ठा करने वाले केन्द्र बने हुए हैं और यह मांस के केन्द्र भी हैं यहाँ पर बड़े–बड़े बूचड़खाने पाए जाते हैं। मक्का को मॉन्ट्रियल, शिकागो, नारकोफ आदि बंदरगाहों से अनेक देशों को निर्यात किया जाता है।

2. तंबाकू की पेटीः–

तंबाकू के उत्पादन, उपभोक्ता और निर्यातक देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका शीर्षस्थ है। यहाँ के तम्बाकू उत्कृष्ट कोटि की पाई जाती है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में संयुक्त राज्य अमेरिका के तंबाकू की सर्वाधिक मांग रहती है, संयुक्त राज्य अमेरिका में तंबाकू की खेती अटलांटिक तट पर लगभग 400 साल पहले प्रारंभ की गयी थी।

वर्जीनिया और मैरीलैंड राज्य में मांग की अधिकता के कारण इसका कृषि उपनिवेश इस दौर में प्रारंभ किया गया था। दिन प्रतिदिन तंबाकू की मांग बढ़ती गई, सिगरेट, पाइप के उत्पादन में मांग बढ़ने के साथ तंबाकू के उत्पादन के लिए भूमि बढ़ाई गई, तंबाकू यहाँ के प्रमुख फसलों में शामिल है तंबाकू उत्पादन के तीन महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

1. मैरीलैंड वर्जीनियां कैरोलीना प्रदेश
2. कनेक्टीकट घाटी प्रदेश
3. केंटकी टेनेसी प्रदेश

1. मैरीलैंड वर्जीनियां कैरोलिना प्रदेशः–

इस प्रदेश का विस्तार दक्षिणी कैरोलिना से लेकर दक्षिणी मैरीलैंड तक फैला है। यह प्रदेश पूरी तरह से पर्वतपदीय और सागर तट तक है। संयुक्त राज्य अमेरिका का लगभग 40% से अधिक उत्पादन इन्हीं राज्यों में होता है। यहाँ का प्रमुख उत्पादक राज्य उत्तरी कैरोलिना है जहां पर तंबाकू के अनेक विश्व प्रसिद्ध केन्द्र भी हैं। यहाँ पर तम्बाकू की प्रमुख मण्डियों में पिट्सबर्ग, विल्सन, डरहम, सेलम, रिचमंड आदि हैं।

2. कनेक्टीकट घाटी प्रदेशः–

इंग्लैंड में फैला है यहाँ पर सिगार बांधने वाली और सुमात्रा किस्म की लपेटने वाली तंबाकू पैदा की जाती है।

3. केंटकी टेनेसी प्रदेशः–

केंटकी टेनेसी प्रदेश अप्लेशियन पर्वत के पश्चिम में फैला है इस प्रदेश का विस्तार नेशविल बेसिन, ब्लूग्रास क्षेत्र में है यहाँ की मिट्टी उपजाऊ है मिट्टी में फास्फोरस और चूना विद्यमान है। यहाँ पर तंबाकू की खेती आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त लाभदायक है। वर्ली किस्म की तंबाकू का उत्पादन किया जाता है कृषि का उत्पादन बटाईदार व्यवस्था के अन्तर्गत भी किया जा रहा है यहाँ की महत्वपूर्ण राष्ट्रीय स्तर की मंडियों में लेक्सिंगटन, लुइसविले प्रमुख हैं।

4. उत्तरी फ्लोरिडा व जार्जिया प्रदेश
5. लुइसियाना प्रदेश
6. दक्षिणी विस्कांसिन प्रदेश

3. कपास पेटीः–

कपास पेटी संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी भाग में फैली है इस पेटी का विस्तार मैक्सिको की खाड़ी के तटवर्ती क्षेत्रों में हैं कपास पेटी का सीमांकन भी मक्का पेटी की तरह जलवायु पर और अक्षांश रेखाओं पर निर्भर है कपास पेटी की उत्तरी सीमा का निर्धारण 200 दिन पाला रहित अथवा 37 डिग्री अक्षांश द्वारा होता है पश्चिमी सीमा का निर्धारण 100 डिग्री पश्चिमी देशांतर द्वारा किया जाता है जबकि पूर्वी और दक्षिणी सीमा का निर्धारण अटलांटिक महासागर व मेक्सिको की खाड़ी के

द्वारा किया गया है। बीसवीं सदी के सातवें दशक से संयुक्त राज्य अमेरिका की कपास पेटी में अत्यन्त विविधता और जटिलता आई, कपास का महत्व अत्यधिक बढ़ गया जिसके कारण कपास की खेती के लिए वर्तमान समय में संयुक्त राज्य अमेरिका में कपास पेटी शब्द प्रासंगिक नहीं रहा है। सन् 1945 ईस्वी तक संयुक्त राज्य अमेरिका के कपास पेटी में लगभग 40% कृषि भाग शामिल था रोजगार में भी इसका आधा हिस्सा था लेकिन धीरे–धीरे 1967 ईस्वी में इसमें काफी परिवर्तन आया आज कपास पेटी कृषि प्रदेश का 30% और रोजगार का 40% का ही अंशदान हो गया। यह कपास पेटी बीसवीं सदी के प्रथम दो–तीन दशकों तक कैरोलिना, जार्जिया, अल्बामा, मिसीसिपी, लुजियाना, अरकंसास 6 राज्यों में फैली थी और लगभग 40% भाग कृषि क्षेत्र का कपास कार्य में लगा था, 1970 के बाद इसमें तेजी से कमी आई और यह घटकर 16% से भी कम हो गया। कपास की खेती का महत्व दिन प्रतिदिन ह्रास बढ़ता जा रहा है इसके लिए कोई एक कारण जिम्मेदार नहीं है बल्कि इसके लिए अनेक कारक उत्तरदाई हैं यहाँ पर मिट्टी की उर्वरता में दिन प्रतिदिन कमी आई है, मशीनीकरण बढ़ा है और अन्य फसलों से यहाँ पर कड़ी प्रतिस्पर्धा भी कपास को करनी पड़ रही है इस कारण से यहाँ पर कपास की खेती में कमी आई। आज इस क्षेत्र में कपास के अलावा तंबाकू, गन्ना, चावल, सोयाबीन, अखरोट की खेती का महत्व बढ़ गया है संयुक्त राज्य अमेरिका की कपास पेटी को परंपरागत प्रदेशों में विभक्त किया गया है जो निम्नलिखित हैं–

पूर्वी प्रदेश
दक्षिणी प्रदेश
पश्चिमी प्रदेश

पूर्वी प्रदेशः–

इस प्रदेश के अन्तर्गत कैरोलिना राज्य का उत्तरी और दक्षिणी भाग, अलबामा, जार्जिया आदि को शामिल किया गया है। इस पूरे क्षेत्र में कपास के उत्पादन में लगातार गिरावट अंकित की गई है। 1939 के पहले यह क्षेत्र कपास उत्पादन में पूरे संयुक्त राज्य अमेरिका का 27% अंशदान देता था लेकिन धीरे–धीरे इसका अंशदान घटता चला या और आज इसका अंशदान 10% से भी कम है। कैरोलिना के उत्तरी और दक्षिणी भाग में कपास 'किंग क्रॉप' (फसलों का राजा) कहा जाता था लेकिन आज स्थिति बिल्कुल इसके विपरीत है।

दक्षिणी प्रदेशः–

दक्षिणी प्रदेश के अन्तर्गत अरकंसास, मिसीसिपी का क्षेत्र, टेनेसी, लूसियाना आदि राज्यों के भाग को शामिल किया गया है। कपास की सबसे बड़ी मंडी मैफिस नगर है जहां पर कपास फाउण्डेशन और राष्ट्रीय कपास परिषद का कार्यालय स्थापित किया गया है इस क्षेत्र में कपास की खेती के स्थान पर सोयाबीन और

चावल की खेती का महत्व बढ़ा है जिससे लोग कपास की खेती से अब दूरी बना रहे हैं। अरकंसास आज संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रमुख चावल उत्पादक राज्य के रूप में वर्तमान समय में देखा जा रहा है।

पश्चिमी प्रदेशः–

पश्चिमी प्रदेश के अन्तर्गत ओकलाहोमा, एरीजोना, न्यू मैक्सिको, कैलिफोर्निया, टैक्सास आदि राज्यों को शामिल किया गया है। वर्तमान समय में अनेक अनुकूल भौगोलिक व अन्य कारणों से यह कृषि क्षेत्र कपास के लिए अत्यन्त अनुकूल माना जा रहा है। यहाँ पर कपास का अंशदान अनवरत् बढ़ता जा रहा है और वर्तमान समय में संयुक्त राज्य अमेरिका के समस्त कपास उत्पादन में इसका अंशदान 40% से अधिक अंकित किया गया है। यहाँ पर सिंचाई की सुविधा की उपलब्धता के कारण टेक्सास में कपास की भूमि का विस्तार अनवरत् हुआ है लेकिन सिंचाई के एक नकारात्मक परिणाम भी सामने आए हैं अधिक भूगर्भ जल के दोहन से जल तल में गिरावट अंकित की जा रही है और इस कारण से दिन प्रतिदिन यहाँ पर सिंचाई लागत बढ़ती जा रही है और इसका परिणाम कपास से प्राप्त होने वाले लाभ पर नकारात्मक हो रहा है क्योंकि धीरे–धीरे लागत बढ़ने से उसका लाभ घट रहा है।

कपास पेटी का सीमांकनः–

कपास की कृषि मुख्य रूप से मृदा, आर्द्रता, जलवायु, पाला रहित दिन, तापमान के कारण निर्धारित की जा सकती है कपास मूलतः उष्णकटिबंधीय पौधा है इसके लिए खुली धूप, मध्यम औसत वर्षा की आवश्यकता होती है। कपास की अच्छी खेती के लिए 200 दिन पाला मुक्त होना चाहिए और सामान्य औसत वार्षिक वर्षा 75 से 100 सेंटीमीटर होनी चाहिए। ग्रीष्म काल का तापमान लगभग 22 डिग्री सेंटीग्रेड तक होना चाहिए। संयुक्त राज्य अमेरिका में यह सीमा लगभग 70 डिग्री उत्तरी अक्षांश से समायोजित हो जाती है इसलिए इस पेटी की हम लोग व्याख्या करते हैं। तटवर्ती क्षेत्रों में औसतन वार्षिक वर्षा 150 सेंटीमीटर से अधिक होती है जो कपास की खेती के लिए हानिकारक मानी जाती है जहां कहीं भी 100 सेंटीमीटर से अधिक वर्षा होती है वहां पर कपास की खेती का उत्पादन का कार्य अत्यन्त मुश्किल होता है इसी कारण से इस पेटी की दक्षिणी सीमा का निर्धारण अत्यन्त कठिन कार्य है। प्रत्येक वर्ष मौसमी परिवर्तन होता रहता है और इस कारण से कपास पेटी में कभी विस्तार और कभी संकुचन क्षेत्र में कमी आने लगती हैं। कपास मेखला की उत्तरी सीमा मेसाबी की उत्तरी सीमा की खाड़ी से शुरू होती है और यहीं से दक्षिण पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है और इस तरह से ब्लूरिज तथा रिचमाण्ड से दक्षिण की ओर होते हुए आगे बढ़ती है तथा अप्लेशियन के दक्षिणी सिरे से होती हुई उत्तर दक्षिण की ओर मुड़ जाती है पर्वत श्रेणी के दक्षिण से आगे बढ़ने के बाद यह कृषि पेटी ओहियो और मिसीसिपी अमेरिका के दो महत्वपूर्ण नदियों के संगम स्थल तक पहुंचती

है यहाँ से यह ओजार्क के दक्षिणी भाग से उत्तर पश्चिम की ओर मुड़ती है और ओकलाहोमा सीमा तक पहुंचने के बाद पुनः दक्षिण पश्चिम की ओर मुड़ जाती है।

कपास उत्पादक क्षेत्रः–

कपास उत्पादक क्षेत्र के अन्तर्गत ऑक्लाहोमा, कैरोलिना और अरकंसास राज्य महत्वपूर्ण हैं, कपास उत्पादन और उसकी गहनता में प्रायः परिवर्तन देखने को मिलता है। कपास उत्पादन में विभिन्नता पाई गई है, उसके गहन क्षेत्र में परिवर्तन आया है। वर्तमान समय में संयुक्त राज्य अमेरिका में कपास उत्पादन के पाँच क्षेत्र निम्नलिखित हैं:–

1. मिसीसिपी घाटी
2. टैक्सास का तटीय मैदान प्रदेश
3. उत्तरी पश्चिमी टैक्सास का रेड प्रेयरी प्रदेश
4. टैक्सास का ब्लैक प्रेयरी प्रदेश
5. उत्तरी दक्षिणी कैरोलिना का आंतरिक प्रदेश

इस तरह से कुल 5 कपास क्षेत्र हैं।

4.संयुक्त राज्य अमेरिका का घास और डेयरी (दुग्ध) पेटीः–

वर्तमान समय में संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश के रूप में जाना जाता है, यहाँ प्रति व्यक्ति प्रतिदिन दूध और दूध से बनी सामग्री का उपभोग विश्व में शीर्ष स्थान पर है संयुक्त राज्य अमेरिका के डेयरी प्रदेश में लगभग 500000 डेरी फार्म शामिल हैं, यहाँ पर डेयरी फार्म का औसत आकार 40 से लेकर 80 हेक्टेयर के मध्य है। डेयरी फार्म का कुल क्षेत्रफल 38 करोड़ हेक्टेयर है लेकिन नगरीय क्षेत्रों के आसपास डेयरी फार्म के आकार छोटे और नगर से जैसे–जैसे दूरी बढ़ती जाती है डेयरी फार्म के आकार प्रायः बड़े होते जाते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में डेयरी प्रदेश का विस्तार ओहियो से पूरब में मेन राज्य से लेकर मिशिगन मिनेसोटा तक विस्तृत है। मिनेसोटा से लेकर मेन राज्य तक के प्रदेश को दूध उत्पादक प्रदेश के नाम से जाना जाता है। यहाँ पर बसने वाली अधिकांश जनसंख्या का मुख्य व्यवसाय कृषि के साथ–साथ पशुपालन और दूध उत्पादन है, इससे यहाँ पर बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर उपलब्ध हैं। इस पेटी की उत्तरी सीमा का निर्धारण 110 दिन पाला मुक्त रेखा तथा ग्रीष्म ऋतु के 17 डिग्री सेंटीग्रेड के समताप रेखा द्वारा निर्धारित होती है जबकि दक्षिणी सीमा का निर्धारण बलुई मिट्टी, उर्वर दोमट मिट्टी और देश में ग्रीष्म ऋतु 21 डिग्री सेंटीग्रेड के समताप रेखा द्वारा होता है इसके पूर्वी सीमा कृषि व्यवसाय अटलांटिक महासागर तक विस्तृत हैं जबकि पश्चिमी सीमा का सीमांकन 50 सेंटीमीटर औसत वार्षिक वर्षा रेखा द्वारा की जाती है। यहाँ पर वर्षा की मात्रा 50 से 125 सेंटीमीटर के मध्य पाई जाती है।

दुग्ध उत्पादन व्यवसाय के लिए यहाँ पर अनेक भौगोलिक कारक उत्तरदायी हैं जो निम्नलिखित हैंः–

प्रथम– इस प्रदेश में सड़कों और रेल मार्गों का जाल पाया जाता है, दूध को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए रेलगाड़ी और ट्रक का प्रयोग किया जाता है। दूध और दूध के उत्पाद को रखने के लिए इस क्षेत्र में प्रशीतक की अच्छी व्यवस्था पाई जाती है, दूध का वितरण 150 से 200 किलोमीटर तक आसानी से किया जाता है, यहाँ पर दूध की खपत के लिए डेट्रायट, क्लीवलैंड, फिलाडेल्फिया, न्यूयॉर्क, शिकागो जैसे बड़े नगर स्थापित हैं। इन नगरों में दूध के आपूर्ति 200 से लेकर के 300 किलोमीटर तक के दूर दराज के क्षेत्रों से की जाती है। बंदरगाह के निकट स्थापित होने से दूध और दूध से बनाए गए सामग्री के निर्यात के लिए उत्तम व्यवस्था भी प्राप्त है। इस क्षेत्र में प्रशीतन, पास्तुरीकरण, संग्रह, वितरण की अच्छी सुविधा है जिससे डेयरी उद्योग को प्रोत्साहन मिलता है।

द्वितीय– संयुक्त राज्य अमेरिका में इस समय दो लाख से अधिक डेयरी फार्म स्थापित किए गए हैं प्रत्येक फार्म पर सैकड़ों दूध देने वाली गाय पाली जाती हैं यहाँ पर पाई जाने वाली गाय अधिक दूध प्रदान करती हैं औसतन प्रत्येक गाय 1 वर्ष में 15000 पौंड से अधिक दूध प्रदान करती है डेयरी फार्म पर अधिकांश कार्य उत्तम स्तर के मशीनों से संपादित किया जाता है। गाय पालन और आसपास के क्षेत्रों में गेहूँ, मक्का और घास की खेती की जाती है।

तृतीय– संयुक्त राज्य अमेरिका की परंपरा का भी अधिक प्रभाव है जो कि दूध, पशुपालन उद्योग पर देखा जाता है। यूरोप के प्रवासी संयुक्त राज्य अमेरिका की डेयरी फार्म पर आते समय अपने साथ यूरोप से अनेक उत्तम नस्ल की गाय भी साथ लाए तथा वे कुशल श्रमिक भी थे, अपने निर्माण कार्य में निपुण थे। प्राकृतिक दृष्टि से यहाँ की जलवायु और मिट्टी भी अनुकूल पाई गई इस कारण से यहाँ पर दुग्ध उत्पादन का व्यवसाय तीव्र गति से विकास के पथ पर अग्रसर हुआ।

चतुर्थ– संयुक्त राज्य अमेरिका में झीलें, नदियाँ और झरने चरागाह के साथ पाए जाते हैं जिस कारण से दूध और पशुपालन पेटी के लिए स्वच्छ जल की समस्या नहीं होती हैं। अनुकूल मौसमी वातावरण में चरने और स्वच्छ जल पीने से गाय अधिक दूध प्रदान करती है। यहाँ पर शीत ऋतु नम और ठंडी होती है जिस कारण से डेयरी उद्योग अधिक प्रभावी रहता है। डेयरी उद्योग के विकास के लिए एक और अनुकूल स्थिति यह है कि यहाँ पर मौसम के कारण उद्यम विकसित नहीं हो पा रहे हैं यहाँ की दूध देने वाली गायों में

उत्पादकता भी अधिक पाई जाती है विस्कांसिन राज्य की प्रति गाय लगभग 32 क्विंटल से अधिक दूध प्रतिवर्ष प्रदान करती है।

पाचवाँ– घास और डेयरी प्रदेश में गर्मी कम होती है जिस कारण से पशुपालन के लिए उपयुक्त मौसम पाया जाता है। यहाँ का तापमान ग्रीष्म काल में 17 डिग्री सेंटीग्रेड से लेकर 22 डिग्री सेंटीग्रेड तक पाया जाता है, ग्रीष्म ऋतु के कारण ग्रीष्मकालीन वर्षा काफी प्रभावशाली होती है, यहाँ पर वाष्पीकरण भी कम पाया जाता है, गायें अधिक दूध देती हैं।

छठवाँ– घास और डेयरी प्रदेश में अधिकांश वर्षा अप्रैल से सितंबर के माह में पाई जाती है, यह वर्षा घास के वृद्धि और विकास के लिए अत्यन्त अनुकूल होती है क्योंकि यही समय यहाँ पर ग्रीष्मकाल का होता है और ग्रीष्मकाल की वर्षा का वितरण समान होने के कारण चरागाह में घास का विकास अच्छी तरह से होता है जिससे पशुओं के लिए हरे चारे की कोई समस्या नहीं होती है।

सातवाँ– यहाँ धरातल में विषमता व्याप्त है, उच्चावच के दृष्टिकोण से असमान है, मिट्टी भी उपजाऊ नहीं है, खेती का कार्य करना अत्यन्त मुश्किल है इसलिए भूमि का सर्वोत्तम उपयोग दूध उत्पादन और पशुपालन है।

आठवाँ– यह एक प्रधान औद्योगिक प्रदेश के रूप में जाना जाता है। यहाँ पर अनेक प्रकार के उद्योग स्थापित हैं जहां पर देश की लगभग अधिकांश जनसंख्या निवास करती है इसलिए दूध और दूध से बनाए गए उत्पाद की खपत भी आसानी से हो जाती है। दूध की खपत के लिए स्थानीय बाजार भी उपलब्ध हैं जो दूध व्यवसाय के लिए सर्वोत्तम कारक माना जाता है इससे दूध के रखरखाव और परिवहन में खर्च कम पड़ता है परिणामतः दूध उत्पादक को अधिक लाभ प्राप्त हो जाता है, स्थानीय खपत होने से दूध पशुपालन क्षेत्र का विकास होता है।

इस तरह से डेयरी विकास और दूध उत्पादन उद्योग के विकास के लिए अनेक भौगोलिक कारक हैं जो प्रोत्साहित करते हैं, अनुकूल परिस्थितियों के कारण से इस पेटी का विकास हुआ है इसके बारे में विद्वान रसेल स्मिथ ने भी अपना विचार व्यक्त किया था।

5.गेहूँ की पेटीः–

संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का चीन के बाद दूसरा गेहूँ उत्पादक देश है यहाँ पर 35 डिग्री उत्तरी अक्षांश से लेकर 49 डिग्री उत्तरी अक्षांश के बीच गेहूँ की खेती की जाती है, 1980 में दो लाख 87 हजार हेक्टेयर पर गेहूँ की खेती की गई थी, जिससे 645 लाख टन गेहूँ का उत्पादन किया गया था, यह उत्पादन विश्व के

कुल उत्पादन का लगभग 15% से अधिक था जैसे–जैसे उपनिवेश पश्चिम दिशा की ओर बढ़ते गए वैसे–वैसे गेहूँ की खेती भी पश्चिम दिशा की ओर विस्तृत होती गई, गेहूँ की खेती औद्योगिक क्रांति से सम्बन्धित है जैसे–जैसे आंतरिक मैदानी भाग में यातायात के साधनों से पूर्वी भाग आपस में जुड़ते गए वैसे वैसे गेहूँ की खेती पश्चिम दिशा में स्थानांतरित होती चली गई और गेहूँ का विस्तार पश्चिम मध्य प्रदेश, उत्तर के प्रेयरी प्रदेश, मिसीसिपी के पश्चिमी दक्षिण क्षेत्र में फैल गया आंतरिक जलमार्ग, रेलमार्ग, उत्तम सुविधा के कारण गेहूँ की खेती व्यापारिक दृष्टिकोण से की जाने लगी और यह एक महत्वपूर्ण व्यापारिक खाद्यान्न बना और उत्पादन क्षेत्र में तेजी से विस्तार हुआ यह विस्तार अनेक कारणों से हुआ जिसमें उच्च क्षमता की मशीन का प्रयोग, रासायनिक उर्वरक, उत्कृष्ट बीज, प्राविधिक एवं वैज्ञानिक विधियों, सुविधाओं का उपयोग, आयात निर्यात की सुविधा जिसके कारण उत्पादन अन्य देशों की तुलना में बहुत अधिक होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में गेहूँ की खेती का लगभग समस्त कार्य मशीनों द्वारा किया जाता है गेहूँ की खेती पर जलवायु कारकों का महत्व स्पष्ट परिलक्षित होता है। जलवायु के कारण से गेहूँ की खेती भिन्न–भिन्न क्षेत्र में भिन्न–भिन्न क्रियाओं द्वारा की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका गेहूँ के गुणवत्ता पर वहां के जलवायु का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। यहाँ पर सफेद, कठोर, लाल बसंत कालीन; कठोर और लाल शीतकालीन; मुलायम लाल शीतकालीन गेहूँ की खेती की जाती है यहाँ के कुल गेहूँ के उत्पादन में 57% कठोर लाल शीतकालीन गेहूँ, 12% शीतकालीन गेहूँ, 21% कठोर लाल बसंत कालीन गेहूँ, 10% सफेद गेहूँ का उत्पादन होता है गेहूँ के उत्पादक क्षेत्रों को 5 भागों में बांटा गया है।

1. बसंत कालीन गेहूँ की खेती
2. शीतकालीन गेहूँ की खेती
3. शीतकालीन मुलायम गेहूँ की खेती
4. कोलंबिया पठार की पेटी
5. कैलिफोर्निया गेहूँ की पेटी

1. बसंत कालीन गेहूँ की पेटीः–

बसंतकालीन गेहूँ की खेती का विस्तार उत्तरी डकोटा, मोंटाना, नेब्रास्का, मिनेसोटा राज्यों में की जाती है। यहाँ पर व्यापारिक तथा मशीनीकृत खेती की जाती है इस गेहूँ पेटी का विस्तार पश्चिम में राकी पर्वत प्रदेश से लेकर रेड नदी घाटी तक विस्तृत है जो लगभग 4000 किलोमीटर लंबाई में और 160 किलोमीटर की चौड़ाई में विस्तृत है। इस पेटी को विश्व की 'रोटी की टोकरी' के नाम से जाना जाता है। 'ब्रेड बास्केट ऑफ द वर्ल्ड' बसंत कालीन गेहूँ की पेटी के क्षेत्र में चेस्टनट मिट्टी, काली मिट्टी पाई जाती है। यह मिट्टी गेहूँ की खेती के लिए उत्तम है लेकिन जलवायु दशायें अनिश्चित एवं अविश्वसनीय हैं। यहाँ पर आर्द्रता कभी–कभी

अधिक होती है जिस कारण बसंत काल में खेत की जुताई देर से प्रारंभ हो जाती है लेकिन कभी–कभी ग्रीष्मकाल जल्दी आ जाता है जिससे फसलें सूख जाती है। यहाँ की फसलें ओला से नष्ट भी होती रहती हैं इस प्रकार स्पष्ट है कि यहाँ की फसलें मौसमी दशाओं पर पूरी तरह से निर्भर होती हैं। इस पेटी की सीमा 90 दिन की फसल रेखा अथवा 13.8 डिग्री सेंटीग्रेड की जुलाई की समताप रेखा द्वारा और पश्चिमी रेखा राक पर्वत द्वारा, पूर्वी सीमा रेखा 98 डिग्री पश्चिमी देशांतर द्वारा निर्धारित होती है। यहाँ पर मिनियोपोलिस, बफेलो महत्वपूर्ण आटा मिल केन्द्र हैं। आटा मिल का निर्यातक प्रमुख बंदरगाह डुलुथ और सुपीरियर है यहाँ से गेहूँ आटा का निर्यात बड़ी मात्रा में किया जाता है। बसंत कालीन गेहूँ की पेटी क्षेत्र से लगभग 26% गेहूँ का उत्पादन किया जाता है।

2. शीतकालीन कठोर गेहूँ की पेटीः–

शीतकालीन कठोर गेहूँ की पेटी संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्यवर्ती समतल उपजाऊ भाग में विस्तृत है इस पेटी के अन्तर्गत नेब्रास्का, ओकलाहोमा, टैक्सास, पश्चिमी कोलारेडो, अरकंसास के राज्य के अधिकांश भाग शामिल हैं। राकी पर्वत पदीय क्षेत्र के मिसीसिपी नदी के भाग में लगभग 125 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में शीतकालीन कठोर गेहू की पेटी का विस्तार पाया जाता है। बृहद मैदान क्षेत्र का भाग है उपज के दृष्टिकोण से अत्यन्त उपजाऊ मिट्टी, काली मिट्टी पाई जाती है यहाँ पर तापमान अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है और ग्रीष्मकाल आने के पूर्व ही गेहूँ की फसल लगभग तैयार हो जाती है। इस पेटी की पश्चिमी सीमा का निर्धारण 25 सेंटीमीटर वार्षिक वर्षा रेखा द्वारा किया जाता है। दक्षिणी सीमा का निर्धारण 75 सेंटीमीटर की अधिक वर्षा द्वारा होती है वहां पर तापमान भी ऊँचा पाया जाता है जिस कारण से गेहूँ के स्थान पर लोग कपास की खेती करना अत्यधिक उपयुक्त समझते हैं और धीरे–धीरे पूर्व की ओर बढ़ने पर मक्का फसल अधिक प्रभावी रहती है। शीतकालीन कठोर गेहूँ की पेटी का उत्पादन में योगदान पूरे राष्ट्र का 40% है। यहाँ पर गेहूँ के भण्डार के लिए बड़े–बड़े गोदाम निर्मित हैं। यहाँ के प्रमुख निर्यातक बंदरगाह गालवेस्टन, न्यूआर्लियन्स एवं मोबाइल हैं।

3. शीतकालीन मुलायम गेहूँ की पेटीः–

शीतकालीन मुलायम गेहूँ की पेटी का विस्तार इलीनोइस, मिशिगन, पेंसिलवेनिया, आहियो, इंडियाना आदि राज्यों में है। सबसे पहले खेती का विकास इसी राज्य में कृषि की शुरूआत से हुई। इस कृषि पेटी में कपास और गेहूँ की खेती में प्रतिस्पर्धा थी। कपास का क्षेत्र दक्षिण की ओर स्थानांतरित होता गया और इस भाग में कपास का गेहूँ के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और गेहूँ के उत्पादन को प्रमुखता मिलती गई। आज गेहूँ की कृषि पश्चिमी मैदान में केन्द्रित होने के कारण तथा औद्योगिक विस्तार के कारण इससे प्रदेश में गेहूँ का महत्व घटता जा रहा है

यहाँ पर संयुक्त राज्य अमेरिका का मात्र 13% गेहूँ का उत्पादन किया जाता है। बफेलो एवं शिकागो इस प्रदेश की प्रमुख गेहूँ की मंडियाँ हैं।

4. कोलंबिया पठार की गेहूँ पेटीः–

कोलंबिया पठार गेहूँ की पेटी का विस्तार प्रशांत महासागर के तटवर्ती क्षेत्रों में पाया जाता है। कोलंबिया पठार पर काली मिट्टी पाई जाती है यह मिट्टी ज्वालामुखी से निकले मैग्मा के ठंडा होने से बनी हुई है। यहाँ अर्धचंद्राकार रूप में पहाड़ियाँ पाई जाती हैं, जिनके एक और हल्के ढाल पर गेहूँ की खेती की जाती है, यहाँ पर बसंतकालीन, शीतकालीन दोनों प्रकार की खेती का कार्य होता है। कोलंबिया पठार गेहूँ प्रदेश अत्यन्त छोटा गेहूँ प्रदेश है इसमें औरेगन, वांशिंगटन आदि राज्य शामिल हैं देश का लगभग 8% गेहूँ का उत्पादन कोलंबिया पठार पर किया जाता है।

5. कैलिफोर्निया गेहूँ पेटीः–

कैलिफोर्निया गेहूँ पेटी का विस्तार कैलिफोर्निया राज्य की कैलिफोर्निया घाटी में पाया जाता है यहाँ पर सोन्जीक्विन एवं सैक्रामेंटो की घाटी में गेहूँ की खेती सफलतापूर्वक की जाती है यहाँ की जलवायु भूमध्यसागरीय है, भूमध्यसागरीय जलवायु के कारण शीतकालीन गेहूँ उत्पन्न होता है। सैनफ्रांसिस्को यहाँ का प्रमुख निर्यातक बंदरगाह है। यहाँ पर शीतकाल में वर्षा होती है ग्रीष्मकाल शुष्क होता है इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए कृषिकार्य सम्पन्न करता ळें

चीन का कृषि प्रदेश

चीन पूर्वी एशिया का सबसे प्रमुख कृषि प्रधान देश के रूप में जाना जाता है यहां की लगभग 75 परतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से अपनी जीविका के लिए कृषि संसाधन पर ही आधारित है कुल भौगोलिक क्षेत्रफल के लगभग 10 % से भी कम ही भाग पर खेती की जाती है जहां पर साम्यवादी सरकार और किसानों के परिश्रम के कारण 2% कृषि भूमि का विस्तार एक विस्तार वादी योजना के द्वारा किया गया है यहां पर कुल कृषि भूमि का क्षेत्रफल लगभग 13 करोड हेक्टेयर पाया जाता है प्रति व्यक्ति कृषि भूमि की उपलब्धता ऑस्ट्रेलिया और कनाडा के तुलना में अत्यंत कम है यहां पर प्रति व्यक्ति कृषि भूमि लगभग 0.2 हेक्टेयर ही उपलब्ध हो पाई है और 5 लोगों के परिवार में मिला देने पर मात्र 1 हेक्टेयर से कम ` ही उपलब्ध हो पाती है चीन में किसानों के पास भूमि की उपलब्धता कम है इसलिए किसान अपनी फसलों के उत्पादन के लिए एक साथ अनेक फसलों का उत्पादन करते हैं जैसे उनके इच्छा अनुसार अनाज की आपूर्ति हो सके तथा खाद्यान्न के लिए भारी जनसंख्या को खाद्यान्न संकट का सामना न करना

हो यह चीनी कृषि की अपनी एक विशेषता है चीनी कृषि की विशेषताएं निम्नलिखित हैं

1. चीनी कृषक एक ही फार्म पर अनेक फसलों को एक समय सात सात उगाता है जैसे एक समय गेहूं जौ हरी सब्जी सोयाबीन आदि फसलों की खेती करता है
2. यहां पर गहन कृषि की जाती है कम से कम भूमि पर अधिक से अधिक उत्पादन को प्राप्त करना इनका प्रमुख उद्देश्य होता है
3. यहां पर कृषि भूमि की उर्वरता बनी रहे इसलिए ये लोग कंपोस्ट की खादों का अधिक प्रयोग करते हैं रासायनिक खादों पर उनकी निर्भरता कम होती है
4. इनकी सबसे बड़ी और प्रमुख विशेषता यह है कि वर्ष में तीन फसलों की खेती करते हैं और एक फसली समय में या मौसम में एक साथ कई फसलों को उगाते हैं यह इनकी एक बड़ी विशेषता है

5. वृक्ष परती भूमि बंजर भूमि पर लगाए जाते हैं और शहतूत की खेती भी यहीं पर की जाती . है

6. कृषि भूमि के विस्तार की भावना से और मृदा संरक्षण के उपायों के कारण से चीन के किसान ढालू भूभाग में सीढ़ीनुमा खेत बनाकर अपनी खेती करते हैं जिससे उनको कुछ अतिरिक्त भूमि भी प्राप्त हो जाती है

7 . चीनी कृषक अनउपजाउे क्षेत्रों में जैसे दलदली भूमि हो या अन्य कोई अनउूपजाउे या बंजर परती उसर आदि भूमि पर उपजाऊ मिट्टी फैला देते हैं जिससे उस पर भी कृषि कार्य सफलता पूर्वक किया जा सके

8. मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के लिए चीनी किसान आज भी प्राचीन कृषि प्रणाली को अपनाता है मशीनों के साथ–साथ मानवीय श्रम एवं हल बैल का प्रयोग प्रमुखता से करता है क्योंकि यहां पर गहन कृषि की जाती है।

चीन का कृषि प्रादेशीकरण

चीन विस्तृत भू–भाग का देश है इसलिए भौगोलिक परिस्थितियां भी प्रत्येक प्रांत में अलग–अलग पाई जाती है फसलों में क्षेत्रीय विभिन्नता मिलती है दक्षिण में चावल की प्रधानता होती है उत्तर में गेहूं की प्रधानता है यहां पर खाद्यान्न फसलों के साथ–साथ कपास चाय तंबाकू रेशम जैसे व्यापारिक फसलों की भी खेती की जाती है चीन की कृषि का प्रादेशिकरण के अध्ययन का विश्लेषण करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यहां पर दो फसलों की प्रमुखता है गेहूं की फसल और चावल

की फसल यह दोनों फसलें चीन के अधिकांश भूभाग पर उगाई जाती हैं इसलिए सामान्य रूप से फसलों के आधार को ध्यान में रखकर चावल कृषि प्रदेश और गेहूं कृषि प्रदेश वर्गीकृत किया जा सकता है लेकिन चीन के कृषि की एक प्रमुख विशेषता है कि एक साथ एक ही फसल क्षेत्र में कई फसलों को उग़ाया जाता है इसलिए सोयाबीन ज्वार बाजरा कपास चाय तंबाकू की फसलों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है

विद्वान डडले स्टांप ने सबसे पहले 1918 में चीन को फसलों के वितरण के आधार पर निम्नलिखित 4 कृषि प्रदेशों में विभाजित किया था

1 सोयाबीन प्रदेश
2 चावल प्रदेश
3 गेहूं तथा चावल प्रदेश
4 गेहूं तथा ज्वार बाजरा प्रदेश

विद्वान स्टाम्प महोदय के द्वारा किया गया उपरोक्त वर्गीकरण में चीन के कृषि प्रदेश की विशेषताओं और उसके वितरण की स्पष्ट प्रतिनिधित्व नहीं होता है सन 1929 से 33 में प्रमुख विद्वान प्रोफेसर जे एल बक ने चीन को 168 क्षेत्रों के 15786 कृषि फार्म का विस्तृत अध्ययन और विश्लेषण किया जे एल बक ने भौतिक सांस्कृतिक आधार पर चीन को दो बृहद आठ उप कृषि प्रदेशों में विभाजित किया है

1. गेहूं प्रदेश
2. चावल प्रदेश

1.गेहूं प्रदेश

उत्तरी चीन की प्रमुख फसल गेहूं है उत्तरी चीन की लगभग 39% भूमि कृषि योग्य है यह भूमि चीन देश के कुल कृषि भूमि की लगभग 51% है उत्तरी चीन में लगभग 68 % भूभाग पर खाद्यान्न फसलों को सफलतापूर्वक उगाया जाता है यहां पर गेहूं के अंतर्गत 40.2:% कॉयोलिंग के अंतर्गत 15:% मक्का के अंतर्गत 13. 4:% उत्पादन शामिल है अर्थात कुल फसलों के खाद्यान्नों के उत्पादन में गेहूं कायोलिंग मक्का तीन फसलें प्रमुखता से उगाई जाती है दाल और अन्य फसल के अंतर्गत कृषि भूमि मात्र 13:% ही शामिल है उत्तरी क्षेत्र में चावल की खेती नगण्य है चावल और रेशेदार फसलों के अंतर्गत बहुत ही कम भूभाग शामिल है प्रोफेसर जे एल बक ने उत्तरी गेहू प्रदेश को 3 उप प्रदेशों में विभाजित करने का प्रयास किया है जो निम्नलिखित है

1.शीतकालीन गेहूं एवं कॉयोलिंग प्रदेश
2.बसंत कालीन गेहूं एवं ज्वार बाजरा प्रदेश
3.बसंत कालीन गेहूं

2.चावल प्रदेश

चीन के दक्षिणी क्षेत्र में चावल की प्रमुखता से खेती की जाती है चीन के दक्षिणी भाग की मात्र 18:% भूमि कृषि योग्य है यह 18:% भूमि चीन के कुल कृषि भूमि का लगभग 49%: है यहां पर खाद्यान्न फसलों की प्रधानता है दक्षिणी चीन के कृषि योग्य भूमि के 69:% भाग पर चावल की खेती की जाती है उत्तरी और दक्षिणी चीन के कुल खाद्यान्न फसलों की खेती 68.7:% कृषि भूमि पर की जाती है यहां पर चावल के साथ गेहूं जो फली आदि महत्वपूर्ण फसलें भी हैं गेहूं की खेती 17.1:% जौ 11.7: भूभाग पर उगाई जाती है विद्वान प्रोफेसर वर्क महोदय ने चावल के वृहद प्रदेश को अध्ययन की सुविधा हेतु 5 भागों में विभाजित किया है

1. दक्षिणी पश्चिमी चावल प्रदेश
2.. दो फसली चावल प्रदेश
3.. जेचवान बेसिन चावल प्रदेश
4.चावल चाय प्रदेश
5.. यांग्टिसीक्याग घाटी चावल गेहूं प्रदेश

प्रोफेसर जे एल बक महोदय द्वारा प्रस्तावित 8 उप कृषि प्रदेश के विशेषताएं निम्नलिखित हैं

1.दक्षिणी पश्चिमी चावल प्रदेश

दक्षिण पश्चिमी चावल प्रदेश के अधिकांश भूभाग उबड़ खाबड़ है कहीं पर धरातल 300 मीटर से अधिक ऊंचा भी पाया जाता है यहां पर कृषि योग्य भूमि अत्यंत सीमित क्षेत्र में फैली है यहा केवल नदी घाटियों में ही कृषि योग्य भूमि पाई जाती है यहां के समस्त क्षेत्र का 7%: भाग कृषि योग्य है चीन के समस्त कृषि भूमि का मात्र 5:% भाग दक्षिणी पश्चिमी चावल प्रदेश में विस्तृत है यहां पर खाद्यान्न फसलों को प्रमुखता से उगाया जाता है खाद्यान्न फसलों की खेती कुल फसल की खेती के पास 65%: भाग पर की जाती है इस कृषि प्रदेश में चावल की प्रमुखता है इसीलिए इसका नाम दक्षिणी पश्चिमी चावल प्रदेश रखा गया है खाद्यान्न फसलों के समस्त क्षेत्रफल के 58.7:% भूभाग पर चावल की खेती की जाती है दूसरी महत्वपूर्ण फसल मक्का है जो 13.6:% भाग पर उगाया जाता है तीसरे महत्वपूर्ण फसल जौ है जो 23% भाग पर उगाया जाता है

2.दो फसली चावल प्रदेश

दो फसली चावल प्रदेश का विस्तार दक्षिणी पूर्वी चीन मैं और उसकी सहायक नदियों के मैदानी क्षेत्र में विस्तृत है यहां पर औसत वार्षिक वर्षा 150 सेंटीमीटर से अधिक होती है दो फसलें चावल प्रदेश में वर्ष भर वर्षा प्राप्त होती है चावल की खेती के लिए दीर्घकाल तक बना रहता है इसलिए यहां पर वर्ष में चावल के दो फसलों की खेती आसानी से की जा सकती जाती है दो फसलें चावल

प्रदेश के समस्त भूभाग का मात्र 13%: भाग कृषि योग्य जो संपूर्ण चीन देश के सकल कृषि क्षेत्र का 6:% है दो फसलेी चावल प्रदेश के अधिकांश भूमि कृषि के कार्य करने के लिए उपयुक्त नहीं है यहां पर वर्ष भर वर्षा होती रहती है जिस कारण से मिट्टी का अपरदन अधिक होता है किसान यहां पर सघन खेती करते हैं इस क्षेत्र में जनसंख्या का भार अधिक है संपूर्ण फसलों के क्षेत्र में खाद्यान्न फसलों के अंतर्गत चावल की खेती लगभग 59:% भूभाग पर की जाती है यहां पर गन्ना तंबाकू चाय शकरकंद शहतूत आलू आदि फसलों की खेती सफलतापूर्वक की जाती है

3.जेचवान चावल प्रदेश

जेचवान बेसिन में चावल की खेती प्रमुखता से की जाती है जिसमें चावल शकरकंद वाला क्षेत्र अत्यंत महत्वपूर्ण है यहा पर चावल और शकरकंद की खेती ग्रीष्मकाल में सफलतापूर्वक की जाती है यह अत्यंत प्रसिद्ध फसल है जेचवान चावल प्रदेश में यांग्टिसीक्याग बेसिन या लाल बेसिन मूल रूप से शामिल है इस प्रदेश का 32%: भूभाग कृषि योग्य है जो चीन के कुल कृषि भूमि का 14:% है जेचवान चावल प्रदेश की जलवायु सामान्य है यहां पर औसत वार्षिक वर्षा 100 सेंटीमीटर से अधिक पाई जाती है यहां पर चावल फसल के अंतर्गत सर्वाधिक क्षेत्र लगभग 41-37% संलग्न है जेचवान बेसिन में शीतकालीन गेहूं मक्का सोयाबीन आलू तंबाकू अन्य फसलों की खेती भी सफलतापूर्वक की जाती है इस बेसिन में सिंचाई की सुविधा भी उपलब्ध है लेकिन अभी तक चीन के विकास तथा विकास के बावजूद भी 100 % सिंचाई की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाई है यहां पर लगभग 75:% से अधिक भूभाग सिंचित हैं

4. चावल चाय प्रदेश

चीन का अधिकांश भूभाग उबड खाबड पर्वती पठारी है पर्वती पठारी क्षेत्र में चाय की खेती के लिए अनुकूल परिस्थितियां पाई जाती है दक्षिणी पूर्वी एशिया के प्रति और पठारी भाग में फैले चीन में चावल चाय का संयोजन अच्छा पाया जाता है इस प्रदेश में पहाड़ियां उबड़ खाबड़ लगभग 1500 से 1800 मीटर तक ऊंची पाई जाती है पहाड़ी क्षेत्रों के समतल भूमि का अभाव पाया जाता है यहां की समस्त भौगोलिक क्षेत्रफल के मात्र 18:% भूमि पर कृषि का कार्य किया जाता है जो सकल कृषि भूमि का मात्र 12%: है यहां पर क्यागसी फूकाइन और हुनान राज्य के तटीय भागों में चावल की खेती 67.7% भाग पर चावल की खेती की जाती है क्योंकि जनसंख्या का भार यहां पर अधिक पाया जाता है पहाड़ी भागों में सभी जगह पर चावल चाय की खेती के लिए अनुकूल परिस्थितियां होने से चाय उगाया जाता है यह चाय निर्यात के लिए भी प्रसिद्ध है तुंग वक्ष हुनान प्रांत के पश्चिमी और उत्तरी

क्षेत्र में पहाड़ी विभागों में लगाया गया है तुग वृक्ष का तेल उद्योग अत्यंत प्रसिद्ध है चावल चाय प्रदेश में औसत वार्षिक वर्षा 150 सेंटीमीटर से अधिक अंकित की जाती है

5.यांगटीसीक्याग घाटी चावल गेहूं प्रदेश

घाटी चावल गेहूं प्रदेश उत्तरी और दक्षिणी चीन के मध्य एक संक्रमणीय पेटी के रूप में प्रसिद्ध है इस कृषि प्रदेश के अंतर्गत हुपेइ आनहुई चयांशु आदि प्रमुख प्रांत शामिल हैं यहां के समस्त भौगोलिक क्षेत्रफल के मात्र 35:% भूभाग कृषि योग के रूप में पाया जाता है यहां पर चीन के संपूर्ण कृषि क्षेत्र का मात्र 12%: भूभाग ही उपलब्ध हो पाता है यहां की मिट्टी अत्यंत उर्वर और जलोढ़ है सिंचाई की विशेष सुविधा उपलब्ध है औसत वार्षिक वर्षा 150सेंटीमीटर अंकित की जाती है यहां पर ग्रीष्म काल में चावल और शीतकाल में गेहूं को प्रमुखता से उगाया जाता है अन्य महत्वपूर्ण फसलों में जौ और सोयाबीन है कपास और रेशम की खेती वस्त्र उद्योग के लिए सफलतापूर्वक की जा रही है

6.**शीतकालीन गेहूं एवं कॉयेालिंग प्रदेश**

इस प्रांतों में शीतकालीन गेहूं एवं कालीन खेती की जाती है यहां पर संपूर्ण चीन की कुल कृषि भूमि का 35% भाग कृषि भूमि के रूप में उपलब्ध है शीतकालीन गेहू कायेालिग प्रदेश के समस्त भौगोलिक क्षेत्रफल का 68:% भाग कृषि भूमि के रूप में पाया जाता है यहां पर वर्षा मध्यम स्तरीय होती है लगभग 50 से 60 सेंटीमीटर वर्षा पाई जाती है यहां की मिट्टी चुना प्रधान है पीली पाडजोल मिट्टी की प्रमुखता है यहां पर ग्रीष्म काल में कॉयेालिंग और शीतकाल में गेहूं प्रमुख रूप से उगाया जाता है अन्य फसलों में सोयाबीन आलू मक्का शकरकंद की खेती भी की जाती है इस प्रदेश में जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है जनसंख्या का कृषि पर भार अधिक है यहां अनेक प्रकार के प्राकृतिक आपदाएं भी आती रहती हैं इसलिए इन प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़ अकाल आदि का सामना भी यहां के किसानों को करना होता है यहां पर भी जीवन निर्वाह सघन कृषि कार्य की जाती है

7.शीतकालीन गेहूं एवं ज्वार बाजरा प्रदेश

शीतकालीन गेहूं ज्वार बाजरा प्रदेश लोयस मिट्टी प्रदेश के क्षेत्र में विस्तृत है लोएस मिट्टी प्रदेश के लगभग 80 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर इस कृषि प्रदेश का विस्तार पाया जाता है यहां पर फेन वाई दो नदियां प्रमुख रूप से प्रवाहित होती है इस कारण से इस कषाी प्रदेश का विस्तार इन नदी घाटियों में है यहां के

संपूर्ण भौगोलिक क्षेत्रफल के 22:% भूभाग पर खेती की जाती है यह चीन के कुल कृषि भूमि का मात्र 9:% भूभाग है यहां की मिट्टी उपजाऊ है क्योंकि नदियों द्वारा लाए गए जलोढ़ से निर्मित है सिंचाई की सुविधा भी यहां पर सुलभ है शीतकाल में गेहूं और ग्रीष्म काल में ज्वार बाजरा मक्का यहां की प्रमुख फसल है इसकी खेती की जाती है व्यापारिक फसलों में कपास की खेती प्रमुखता से की जाती है इस कृषि प्रदेश में शांसी शेंसी उत्तरी पूर्वी कांसू प्रांत में खेती का विस्तार कृषि का विस्तार पाया जाता है

8.बसंत कालीन गेहूं प्रदेश

बसंत कालीन गेहूं प्रदेश का विस्तार मंचूरिया राज्य में मूल रूप से है यहां पर

लिआओ और सुंगारी नदी बेसिन में लगभग 50 हजार हेक्टेयर खेत पर क्षेत्रफल पर बसंत कालीन गेहूं की खेती की जाती है यहां पर भूमि अधिक विस्तृत है संपूर्ण चीन यहां के संपूर्ण क्षेत्रफल के लगभग 18% पर खेती की जाती है चीन के कुल कृषि भूमि का 7% भाग यहां पर पाया जाता है बसंत कालीन गेहूं प्रदेश में गेहूं सोयाबीन कॉयेालिंग प्रमुख रूप से पाया जाता है इससे प्रदेश की मिट्टी चरनेाजम में और चेस्टनट प्रकार की है गेहूं की वृद्धि और विकास के लिए 200 दिन मिल जाते हैं अन्य महत्वपूर्ण कृषि फसलों में मक्का और जौ की खेती की जाती है

प्रोफेसर बुचानन महोदय 1956 मे चीन के कृषि प्रदेश का विश्लेषण करते हुए कृषि प्रदेश का एक व्यवस्थित मानचित्र बनाया विद्वान बुचानन महोदय का कृषि प्रदेश का निर्धारण फसल संयोजन के आधार पर किया गया है इन्होंने चीन को 22 कृषि प्रदेशों में वर्गीकृत किया है

1. सोयाबीन कॉलिंग प्रदेश
2. पश्चिमी चीनी नखलिस्तान कृषि प्रदेश
3. पर्वतीय चरागाह प्रदेश
4. मरू चरागाही कृषि प्रदेश
5. अर्ध कृषि पशुपालन कृषि प्रदेश
6. रबर उष्णकटिबंधीय फसल प्रदेश
7. चावल गन्ना उष्णकटिबंधीय फसल प्रदेश
8. चाय कृषि प्रदेश
9. चावल गेहूं रेशम कृषि प्रदेश
10. कपास कृषि प्रदेश
11. चावल कपास कृषि प्रदेश
12. चावल कृषि प्रदेश

13. चावल मक्का लकड़ी कृषि प्रदेश
14. चावल गेहूं कृषि प्रदेश
15. आलू खाद्यान्न कृषि प्रदेश
16. मक्का ज्वार बाजरा कृषि प्रदेश
17. मक्का कृषि प्रदेश
18 कपास गेहूं कृषि प्रदेश
19 गेहूं विविध खाद्यान्न कृषि प्रदेश
20 गेहूं तिलहन प्रदेश
21 कॉयेालिंग प्रदेश
22. कपास का कायोलिंग कृषि प्रदेश

विद्वान जी बी केसी महोदय ने जे एल बक के आधार पर चीन को कृषि प्रदेशों में विभाजित करने का प्रयास किया है विद्वान जी बी केसी ने विद्वान जीबी महोदय के उत्तरी पूर्वी मंचूरिया प्रांत के सोयाबीन प्रदेश को एक अलग कृषि प्रदेश के रूप में विभाजित किया जिस कारण से विद्वान जे एल बक के 8 कृषि प्रदेश 9 कृषि प्रदेश में बन गए

1 दक्षिणी पश्चिमी चावल प्रदेश
2. दो फसली चावल प्रदेश
3. चावल चाय प्रदेश
4 .जेचवान चावल प्रदेश
5 यांगटीसीकियांग चावल गेहूं प्रदेश
6शरद कालीन गेहूं तथा कॉयेालिंग प्रदेश
7. शरद कालीन गेहूं तथा ज्वार बाजरा प्रदेश
8. बसंत कालीन गेहूं प्रदेश मंचूरिया सोयाबीन प्रदेश

चीनी वैज्ञानिक अकादमी द्वारा कृषि प्रादेशिक करण

चीनी वैज्ञानिक अकादमी ने संपूर्ण चीन के कृषि को चार स्तरीय प्रादेशिकरण वर्ष 1962 में किया था जिन की विशेषताएं सारिणी में दी गई है चीनी वैज्ञानिक अकादमी द्वारा प्रस्तुत कृषि प्राधिकरण के लिए निम्न तत्वों को आधार स्वरूप माना गया है

1. प्रादेशिक भूमि उपयोग एवं कृषि उत्पादन विशिष्टता
2 .प्राकृतिक आर्थिक विशेषताएं
3. भावी कृषि विकास प्रतिरूप

प्रादेशिक भूमि उपयोग एवं कृषि उत्पादन विशेषताएं

इस वर्ग के अंतर्गत निम्नलिखित महत्वपूर्ण तत्वों को समाहित किया गया है

1.प्राकृतिक तत्व जैसे धरातलीय स्वरूप उच्चावच मृदा मौसम तापमान आर्द्रता वर्षा का संपूर्ण प्रभाव

2.राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान

3.पशुपालन और फसल उत्पादन की प्रमुख विधियां

4.प्रति हेक्टेयर उत्पादन

प्राकृतिक आर्थिक विशेषताये

प्राकृतिक आर्थिक विशेषताएं निम्नलिखित है जिसके आधार पर कृषि प्रादेशिकरण करने का प्रयास किया गया इसके अंतर्गत निम्न तत्व शामिल हैं

1.वर्षा और भूमिगत जल की उपलब्धि और फसलों का वर्धन काल

2. धरातल मृदा तथा वनस्पति आदि भूमि संसाधन

3. मानव श्रम जातीय समूह आर्थिक विकास कृषि का उद्‌भव और विकास तथा जनसंख्या विशेषताएं

भावी कृषि विकास प्रतिरूप

इस वर्ग के अंतर्गत निम्नलिखित तत्व शामिल है

1. वर्तमान भूमि उपयोग की क्षमता
2. ऐतिहासिक विकास कार्यक्रम
3. भविष्य में विकास की रूपरेखा

चीनी वैज्ञानिक अकादमी ने उपरोक्त तथ्यों के आधार पर चीन को 4 वृहद स्तर 12 द्वितीय स्तरीय 51 तृतीय श्रेणी और 129 चतुर्थ श्रेणी के कृषि प्रदेश में चीन को विभाजित किया है

चीनी वैज्ञानिक अकादमी द्वारा प्रस्तावित वृहद स्तरीय कृषि प्रदेश चीनी वैज्ञानिक अकादमी ने वृहद स्तरीय 4 कृषि प्रदेश का निर्धारण किया है

1.उत्तरी पूर्वी कृषि प्रदेश

2. दक्षिणी पूर्वी कृषि प्रदेश

3. उत्तरी पश्चिमी कृषि प्रदेश

4 तिब्बत शंघाई कृषि प्रदेश

चीनी वैज्ञानिक अकादमी ने उपरोक्त कृषि प्रदेशों का निर्धारण इन को प्रभावित करने वाले कारकों जैसे कृषि गहनता

ऐतिहासिक विकास उत्पादन का प्रतिरूप गहनता प्राकृतिक सांस्कृतिक परिस्थितियां आदि को आधार मानते हुए 2 श्रेणीं 12 उप .कृषि प्रदेश का निर्धारण किया है

1.दक्षिणी पूर्वी तिब्बत पठार का तुलनात्मक दृष्टि से गर्म और आर्द कृषि एवं वन उद्योग प्रदेश

2. शंघाई तिब्बत पठार का मिश्रित कृषि प्रदेश

3. उत्तरी तिब्बत का उच्च भूमि कृषि प्रदेश

4.. दक्षिणी सियांग बहु फसली कृषि प्रदेश

5..उत्तरी सिक्याग का एक फसली प्रदेश

6. आंतरिक मंगोलिया सिक्याग का पशुपालन और एक फसली कृषि प्रदेश

7. दक्षिणी चीन का तीन फसली कृषि प्रदेश

8. दक्षिणी पश्चिमी उच्च भूमि कर दो फसली प्रदेश

9. मध्य और पूर्वी चीन का दो फसली चावल प्रदेश

10.उत्तरी चीन का शुष्क कृषि प्रदेश

11. मंगोलिया शुष्क कृषि एवं पशुपालन प्रदेश

12 उत्तरी पूर्वी चीन का शुष्क कृषि प्रदेश

चीनी वैज्ञानिक अकादमी तृतीय स्तरी कृषि प्रदेश के निर्धारण में कृषि पद्धति शस्य संयोजन फसल पशुपालन साहचर्य उद्योग फसल पशु संयोजन के आधार पर कृषि प्रदेश का निर्धारण करने का प्रयास किया है

इस प्रकार चीनी वैज्ञानिक अकादमी ने प्रस्तावित कृषि प्रदेश योजना चीन के वर्तमान कृषि समस्या के समाधान तथा विकास योजनाओं के क्रियान्वयन में चीन के कृषि के विकास में अधिक उत्पादन की प्राप्ति में क्षेत्र की समस्याओं के निराकरण में विशेष लाभदाई रही है चीनी वैज्ञानिको ने अपने प्राधिकरण का स्वरूप अत्यधिक वैज्ञानिक गत्यात्मक एवं प्रासंगिक बनाया है संपूर्ण सामाजिक आर्थिक राजनीतिक प्राकृतिक आधार का कृषि प्रदेश के निर्धारण में विशेष ध्यान दिया

सारांश

इकाई 14 में संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन के कृषि प्रदेश का वर्णन किया गया है इसमें संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेशों के निर्धारण करने में संयुक्त राज्य अमेरिका के पास कृषि प्रदेश गेहूं की पेटी मक्का की पेटी कपास की पेटी तंबाकू की खेती घास एवं कृषि घास एवं दूध पेटी का वर्णन विस्तार पूर्वक किया गया है संयुक्त राज्य अमेरिका में गेहूं की खेती मैं अत्यंत विविधता पाई जाती है यहां पर बसंतकालीन गेहू शीतकालीन गेहूं में भी शीतकालीन मुलायम मे कोलंबिया पठार की कैलिफोर्निया जैसी अनेक प्रजातियों की खेती की जाती है संयुक्त राज्य अमेरिका की जलवायु गेहूं के लिए अधिक अनुकूल है इसीलिए यहां पर वर्ष में दो बार गेहूं

की खेती सफलतापूर्वक की जाती है यहां पर मक्का की पेटी विश्व प्रसिद्ध है यहां पर मक्का का उत्पादन विशेष करके पशुओं को खिलाने के लिए किया जाता है इससे पशु तेजी से मांसल युक्त हो जाते हैं और फिर इन पशुओं को बूचड़खाने में भेज दिया जाता है वहां से मांस की पैकेजिंग की जाती है और उसको निर्यात भी किया जाता है कपास की खेती भी अत्यंत उन्नत , दशा में है यहां पर कपास की खेती के पूर्वी क्षेत्र और पश्चिमी क्षेत्र क्षेत्र की अलग–अलग विशेषता है कपास की खेती के साथ यहां पर तंबाकू की पेटी के भी दो महत्वपूर्ण क्षेत्र है मैरीलैंड वर्जीनिया कैलिफोर्निया तंबाकू क्षेत्र कनेक्टीकट क्षेत्र महत्वपूर्ण है घास एवं डेयरी यहां की अत्यंत महत्वपूर्ण कृषि पेटी है चीन में गेहूं के बजाय चावल की प्रधानता पाई जाती है चीन की कृषि में चावल के 5 पेटियां पाई जाती हैं जिसमें जेचवान चावल प्रदेश चावल चाय प्रदेश दो फसली चावल प्रदेश यागटीसीक्याग घाटी चावल प्रदेश दक्षिणी पश्चिमी चावल प्रदेश प्रमुख है चीन में गेहूं के तीन प्रदेश मौसम के कारण विकसित हुए हैं बसंत कालीन गेहूं प्रदेश बसंत कालीन गेहूं ज्वार बाजरा प्रदेश शीतकालीन गेहूं एवं कॉयेालिंग प्रदेश महत्वपूर्ण है चीन में विद्वान बुचानन ने 22 कृषि प्रदेश बताएं प्रोफेसर ⁄ केसी महोदय ने 8 प्रदेशों में विभाजित किया है चीन को कृषि प्रदेशों में विभाजित करने का एक आधुनिक प्रयास चीनी वैज्ञानिक अकादमी द्वारा भी किया गया है चीन में आधुनिक वैज्ञानिक अकादमी ने 1962 में चीन को कृषि प्रदेशों में विभाजित किया 4 कृषि प्रथम स्तर के बनाएं चीनी वैज्ञानिक अकादमी ने कृषि पशु संपदा और को प्रभावित करने वाले प्राकृतिक आर्थिक सांस्कृतिक ऐतिहासिक समग्र पक्षेा को आधार के रूप में स्वीकार किया इस तरह से संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन का कृषि प्रदेश कोई एक दिन का प्रयास नहीं रहा बल्कि यह अनेक विद्वानों का सतत प्रयास जारी रहा कि उसे उन लोगों ने प्रदेश में विभाजित किया चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि प्रदेश पर प्राकृतिक मानवीय कारर्को के साथ सरकारी नीतिे वहां की परंपरा वहां की विरासत वहां की भारी–भरकम जनसंख्या का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जाता है

बोध प्रश्न

1. विद्वान डयूरी ने भूमि उपयोग के आधार संयुक्त राज्य अमेरिका को कितने प्रदेशों में विभाजित किया

क. 8 ख. 9 ग. 10 घ. 11

2 विद्वान बेकर ने संयुक्त राज्य अमेरिका कितने प्रदेशों में विभाजित किया

क. 4 ख. 7 ग. 12 घ. 3

3 विद्वान हार्टशोर्न और डिकेन संयुक्त राज्य अमेरिका कितने कृषि प्रकार में विभाजित किया है

क. 3 ख. 6 ग. 8 घ. 11

4. संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग ने अभिनव प्रवृत्तियों के आधार पर संयुक्त राज्य अमेरिका कितने कृषि प्रदेश में विभाजित किया

क. 11 ख. 12 ग. 13 घ. 14

5.कैरोलिना में किस फसल को किंग क्राफ्ट कहा जाता है

क. कपास ख. जौ ग. गेहू घ. चावल

6.कपास की पेटी का निर्धारण कितने दिन पाला रहित दिनों से किया जाता है

क. 200 ख. 150 ग. 300 घ. 400

7.विद्वान बक ने चीन को मूल रूप से भौतिक एवं सांस्कृतिक कारकों के आधार पर चीन को कितने प्रमुख कृषि प्रदेश में विभाजित किया

क. 1 ख. 2 ग.5 घ. 3

8. केसी महोदय ने चीन कितने कृषि प्रदेशों में विभाजित किया था

क. 9 ख. 3 ग. 8 घ. 11

9 .बुचानन महोदय ने चीन को फसल संयोजन के आधार पर कितने उप प्रदेश बनाएं

क. 45 ख. 48 ग. 90 घ. 22

10.चीनी वैज्ञानिक अकादमी ने वृहद स्तर पर चीन को कितने कृषि प्रदेश में विभाजित किया था

क. 11 ख. 12 ग. 14 घ. 4

सन्र्दभ ग्रन्थ सूची –

1. प्रो० आर०सी० तिवारी, प्रो० बी०एन० सिंह : कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद।
2. ब्रज भूषण सिंह : कृषि भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
3- Symon, L. : Agricultural Geography, Bell & Sons, London, 1967.

4- Kostrowicki, J : World Types of Agricuture, Polish Academy, Warsaw, Poland.
5- Noor Mohd. : New Dimensions in Agriculture, Concept, New Delhi, 1991.
6- Singh & Dhillon : Agricultural Geography, TATA Mc Graw Hill, New Delhi.
7- Whittlesey, D. : Major Agricultural Regions of the Earth, A.A.A.G. Vol 26.

बोध प्रश्न के उत्तर

1.ख 2.ग 3.ख 4.ख 5.क 6.क 7.ख 8.क 9.घ 10.घ

अभ्यास के लिए प्रश्न

1 .संयुक्त राज्य अमेरिका को कृषि प्रदेशों में विभाजित करते हुए किसी एक कृषि प्रदेश का सविस्तार वर्णन कीजिए

2. संयुक्त राज्य अमेरिका को कृषि विभाग में कितने कृषि प्रदेश में विभाजित किया है उसमें से किसी दो कृषि प्रदेश का वर्णन कीजिए

3. संयुक्त राज्य अमेरिका की बेटी का सविस्तार वर्णन कीजिए

4 संयुक्त राज्य अमेरिका की कपास बेटी का सविस्तार वर्णन कीजिए

5 संयुक्त राज्य अमेरिका की मक्का पेटी के आर्थिक महत्व को बताते हुए सविस्तार वर्णन कीजिए

6 .चीन के कृषि प्राधिकरण की योजना को समझाते हुए किसी एक ऋषि प्रदेश का वर्णन कीजिए

7. चीन के कृषि प्रदेश का वर्गीकरण करते हुए दो कृषि प्रदेश का वर्णन करिए

8. चीन के कृषि प्रदेश के वर्गीकरण की योजना को समझाइए

9. चीनी वैज्ञानिक अकादमी द्वारा प्रस्तावित चीन के कृषि प्रदेश की योजना और उसके आधार को समझाइए

इकाई –13 वस्तु निर्माण उद्योग, लघु पैमाने के उद्योग, वृहद उद्योग, उद्योगो का स्थानीयकरण

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उददेश्य

13.3 वस्तु निमार्ण उद्योग

13.3.1 वस्तु–निमार्ण उद्योगों का वर्गीकरण

13.3.1.1 उत्पादों के आधार पर

13.3.1.2 श्रमिकों की संख्या के आधार पर

13.3.1.3 कच्ची सामग्री के आधार पर

13.3.1.4 स्वामित्व के आधार पर

13.3.1.5 निर्मित वस्तु के आधार पर

13.3.1.6 उत्पादन प्रक्रिया के आधार पर

13.4 कुटीर उद्योग

13.5 लघु पैमाने का उद्योग

13.6 वृहत् पैमाने के उद्योग

13.6.1 उत्पादक वस्तुएं

13.6.2 उपभोग की वस्तुएं

13.7 उद्योग का स्थानीयकरण

13.8 सारांश

13.9 बोध प्रश्न

13.10 सन्दर्भ पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

अभी तक आपने आर्थिक भूगोल में विभिन्न संसाधनों के बारे पढ़ा है। अब आप इस इकाई के अन्तर्गत वस्तु निमार्ण उद्योग को परिभाषित किया गया है। हम यह भी जान सकेगें कि वस्तु निमार्ण उद्योग में कौन–कौन से आर्थिक क्रियायें आती है। विभिन्न आधारों पर उद्योगों के वर्गीकरण के बारे में भी विस्तृत रूप से जान सकेगें। कुटीर उद्योग, लघु पैमाने के उद्योग एवं वृहत् उद्योग से आप परिचित हो सकेगें।

13.2 उददेश्य

इस इकाई में हम वस्तु निमार्ण उद्योग के विभिन्न आयामों के बारे में चर्चा करके अप जान सकेगें किः

- भारत में वस्तु निमार्ण उद्योग के विकास के बारे में जान सकेगें।
- प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक उद्योग के बारे मे समझ विकसित कर सकेगें।
- विविध प्रकार के उद्योगों के महत्व को जान सकेगें।
- उत्पादक एवं उपभोग की वस्तुओं की जानकारी कर सकेगें।

13.3 वस्तु निमार्ण उद्योग

किसी भी देश की देश की अर्थव्यवस्था में वस्तुनिमार्ण उद्योग की महत्वपूर्ण भूमिका है।मनुष्य को अपने जीवनयापन करने में भोजन, वस्त्र एवं मकान प्राप्त करने के लिए प्राविधिकी की आवश्यकता होती है। क्योंकि पृथ्वी पर प्राप्त सभी वस्तुओं का वह सीधे उपयोग नहीं कर सकता। इसके लिए उसे प्राप्त वस्तुओं के रूप एवं गुणधर्म में संवर्धन करके नई वस्तु का निमार्ण करना पड़ता है।यह कार्यउद्योग के अन्तर्गत आता है, जिसका तात्पर्य ऐसे क्रियाकलाप से है, जिसमें प्राथमिक उत्पाद से प्राप्त कच्ची सामग्री को शारीरिक या यांत्रिक विधि द्वारा उसके गुण–धर्मो परिवर्तन कर नवीन वस्तु का निमार्ण किया जाता है।इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को ही वस्तुनिमार्ण उद्योग कहते है

वस्तुनिमार्ण में साधारण वस्तुओं जैसे मिट्टी के बर्तन, लकड़ी के सामान आदि के निमार्ण से लेकर वृहद् स्तर के वस्तुओं एवं मशीनरी के उद्योग आते है।उद्योग शब्द का प्रयोग वस्तु–निमार्ण उद्योग के अर्थ में ही किया जाता है। इन उद्योगों को उनके स्तर के अनुसार कुटीर उद्योग, लघु उद्योग, मध्यम उद्योग और वृहद उद्योगों में विभक्त किया जाता है। प्राचीन काल में वस्तुनिमार्ण उद्योग कुटीर एवं लघु उद्योग के रूप मेंसमाज के अभिन्न अंग के रूप में विकसित था। परन्तु आधुनिक युग में कुटीर एवं लघु उद्योग की जगह मध्यम और वृहद उद्योग का बड़े स्तर पर विकास हो रहा है। देश की विशाल जनसंख्या का भरण–पोषण वस्तु–निमार्ण उद्योग द्वारा होता है।

हम वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखते है कि वस्तुनिमार्ण का अर्थ बहुत व्यापक और संलिष्ट हो गया है। वर्ष 1940 के बाद इसके अर्थ में व्यापक परिवर्तन आया है, क्योंकि पहले वस्तुनिमार्ण का तात्पर्य तकनीकी प्रक्रिया द्धारा वस्तु के गुणधर्म में परिवर्तन करके उसके मूल्य में वृद्धि से लगाया जाता था।इसके अन्तर्गत पाँच प्रधान पक्ष थे – गुणात्मक रूप परिवर्तन, उद्योग की संचालन प्रक्रिया, श्रम विभाजन, शक्ति संचालित यंत्रों का प्रयोग और उत्पादित वस्तु का गुणात्मक स्तर। उद्योगों की स्थापना इन्हीं के आधार पर और सहयोगी पक्षों की भूमिका गौण रहती थी। आज के समय में वस्तुनिमार्ण प्रक्रिया अधिक संलिष्ट हो गयी है। अब उद्योगों की स्थापना में उत्पादन को प्रभावित करने वाले तत्वों कच्ची सामग्री, पूँजी, श्रम आदि की तुलना में बाजार, यातायात, संचार, तकनीक, शोध और राजनीतिक पक्षों की भूमिका अधिक प्रभावशाली हो गयी है।

13.3.1वस्तु–निमार्ण उद्योगों का वर्गीकरण

आधुनिक युग में उद्योग का अर्थ बहुत व्यापक हो गया है। अनेक देशों में उद्योग की संश्लिष्टता इतनी अधिक बढ़ गयी है कि वहाँ के राष्ट्रीय उत्पादन में आधी से अधिक हिस्सेदारी हो गयी है। उद्योगों का वर्गीकरण विविध आधारों पर किया जाता है जिनमें मुख्यतः अधोलिखित है –

13.3.1.1 **उत्पादों के आधार पर**

13.3.1.2 **श्रमिकों की संख्या के आधार पर**

13.3.1.3 **कच्ची सामग्री के आधार पर**

13.3.1.4 **स्वामित्व के आधार पर**

13.3.1.5 **निर्मित वस्तु के आधार पर**

13.3.1.6 **उत्पादन प्रक्रिया के आधार पर**

13.3.1.1 उत्पादों के आधार पर उद्योगों का वर्गीकरण –

उद्योगों से उत्पादित सामग्री और उनकी प्रकृति के आधार पर उद्योग को मुख्यतः तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है–

1. **प्राथमिक उद्योग** –ऐसे उद्योग जिसमें प्रकृति प्रदत्त संसाधनों को कच्ची सामग्री के रूप में संशोधित कर माल तैयार किया जाता है। उदाहरण स्वरूप मिट्टी से बर्तन बनाना, गन्ने से गुड़ का उत्पादन, खनिज उत्खनन आदि।
2. **द्वितीयक उद्योग** –जिन उद्योगों में प्राथमिकउद्योग से प्राप्त सामग्री को कच्ची सामग्री के रूप में प्रयुक्त कर वस्तुओ का उत्पादन किया जाता है, द्वितीयक उद्योग के अन्तर्गत आता है जैसे– कागज उद्योग, मशीनी औजार आदि।
3. **तृतीयक उद्योग** –इसके अन्तर्गत वे उद्योग रखे जाते है जो सीधे उत्पादन प्रक्रिया में शमिल नहीं होते परन्तु प्राथमिक एवं द्वितीयक उद्योग के संचालन सहायता प्रदान करते है। उदाहरण के रूप में यातायात साधन, संचार साधन, बैकिंग क्षेत्र आदि।

13.3.1.2 श्रमिकों की संख्या के आधार पर उद्योगों का वर्गीकरण

उद्योगों को सुचारू रूप से संचालित करने में श्रमिकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उद्योगों में श्रमिकों की सहभागिता समान नहीं होती है। किसी उद्योग में श्रमिकों की अधिक संख्या में आवश्यकता होती है, तो किसी में कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है। इसलिए श्रमिकों की संख्या के आधार पर उद्योंगों को तीन वर्गों में विभक्त किया जाता है–

1. **छोटे पैमानें के उद्योग** –छोटे पैमाने के उद्योग में स्थानीय स्तर की आवश्यकता के अनुसार स्थानीय संसाधनों से कम पूँजी और श्रमिकों द्वारा वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है। ऐसे उद्योग कम जगह में भी खुल जाते है। इन उद्योगों का संचालन एक परिवार के सदस्यों द्वारा अपने घर में

हो जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे उद्योग अधिक पाये जाते है। इसके अन्तर्गत बीड़ी उद्योग, बेकरी उद्योग, मिट्टी के बर्तन के उद्योग, खिलौना आदि उद्योग आतें है।

2. **मध्यम पैमाने के उद्योग** –ऐसे उद्योग जिनमें अपेछाकृत कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है, उन्हें मध्यम पैमाने का उद्योग कहा जाता है। कम्प्यूटर, टेलीविजन, साइकिल आदि जैसे उद्योग इसके अर्न्गत आते है।

3. **बड़े पैमाने के उद्योग**–इस प्रकार के उद्योग मेंअधिक संख्या में मानव श्रम की आवश्यकता होती है। अधिक संख्या में मशीन भी लगे रहते है जिसको संचालित और वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए श्रमिकों की आवश्यकता होती है। काफी संख्या में श्रमिक पालियों में काम करते रहते है। इन उद्योगों से बड़ी मात्रा में वस्तुओं का भी उत्पादनहोता है। ऐसे उद्योग की स्थापना में अधिक पूँजी और जगह की भी आवश्यकता होती है। इस्पात उद्योग, एल्यूमीनियम उद्योग, वस्त्र उद्योग आदि इस श्रेणी में आते है।

13.3.1.3 कच्ची सामग्री के आधार पर उद्योगों का वर्गीकरण

उद्योगों से वस्तुओं के उत्पादन में विभिन्न प्रकार की कच्ची सामग्री प्रयुक्त की जाती है। कच्ची सामग्रीयों को उद्योग स्थल तक लाने में अधिक परिवहन खर्च पड़ता है। कुछ कच्ची सामग्रियां ऐसी होती है जिनका भार उत्पादन प्रक्रिया में कम हो जाता है, जिससे कारण इससे सम्बन्धित उद्योग कच्ची सामग्री के स्रोत के आस–पास स्थापित किये जाते है जैसे गन्ना, कपास, कोयला, लौह अयस्क आदि। इसके अलावा कई कच्ची सामग्रियां ऐसी होती है, जो हल्की तथा मूल्यवान होती है तथा उनका परिवहन व्यय भी कम आता है। कच्ची सामग्री के आधार पर उद्योग को दो मुख्य वर्गो में रखा जाता है–

1. **भारी उद्योग** –बहुत सी कच्ची सामग्रियां ऐसी है जो अधिक स्थान घेरती है एवं जिसका भार भी अधिक होता है। इन कच्ची सामग्रियों को दूर तक परिवहन करने पर खर्च भी अधिक आता है, जिसके कारण इन पर आधारित उद्योग को कच्ची सामग्री के स्रोत के निकट ही स्थापित किया जाता है। ऐसे उद्योग को भारी उद्योग कहते है। कागज उद्योग, चीनी उद्योग,लोहा–इस्पात उद्योग आदि भारी उद्योग के अन्तर्गत आते है।

2. **हल्के उद्योग** –इस प्रकार केउद्योग में हल्के एवं कीमती कच्ची सामग्रीका उपयोग होता है। कच्ची सामग्री एवं उत्पादित वस्तु का वजन हल्का होने के कारण परिवहन खर्च भी कम पड़ता है और दूर तक आसानी से परिवहन भी हो जाता है।

13.3.1.4 स्वामित्व एवं प्रबन्ध के आधार के आधार पर उद्योगों का वर्गीकरण –

स्वामित्व और प्रबन्धन के आधार पर उद्योगों को चार वर्गो में बाँटा जाता है–

1. **सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग**–जिनउद्योगों कास्वामित्व एवं प्रबन्धन का अधिकार देश या राज्य की सरकार के हाथ में होता है तो ऐसे उद्योग को सार्वजनिक क्षेत्र का उद्योग कहते है। इसकी स्थापना सरकार अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करने के लिए करती है। स्वतन्त्रता के बाद भारत में अनेक

सार्वजनिक उद्योगों की स्थापना की गयी है। जैसे हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड, स्टील ऑथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड आदि सार्वजनिक का संचालन सरकार द्वारा होता है।

2. **निजी क्षेत्र के उद्योग** –किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह द्वारा जब उद्योगों की स्थापना एवं संचालन किया जाता है तो उसे निजी क्षेत्र का उद्योग कहते है।भारत में औद्योगिक नीति में परिवर्तन के कारण वर्ष 1990 के बाद तेजी से निजी क्षेत्र के उद्योगों का विकास हुआ है। वस्त्र, दवा, खाद्य सामग्री, चीनी आदिक्षेत्रों में निजी क्षेत्र के उद्योग उत्पादन कर रहे है।

3. **सम्मिलित क्षेत्र के उद्योग** –सामूहिक रूप से जब सरकार और निजी क्षेत्र उद्योग को स्थापित और संचालित करते है तो इसे सम्मिलित क्षेत्र का उद्योग कहते है। जैसे ऑयल इंडिया लिमिटेड, मारूति मोटरगाड़ी आदि इसके अन्तर्गत आते है।

4. **सहकारी क्षेत्र के उद्योग** –जब उद्योगों का स्वामित्व प्रजातांत्रिक ढ़ग से चुने हुए सहकारी समिति द्वारा स्थापित एवं संचालित होता है तो उसे सहकारी क्षेत्र का उद्योग कहते है। चीनी उद्योग, नारियल पर आधारित उद्योग, खाद्य–सामग्री पर आधारित उद्योग सहकारी क्षेत्र के उद्योग के अन्तर्गत स्थापित किये गए है।

13.3.1.5 निर्मित वस्तु की प्रकृति के आधार पर उद्योगों का वर्गीकरण –

उद्योगों से विविध प्रकार की वस्तुएँ उत्पादित की जाती है, जिसका रूप, प्रकृति और गुणवत्ता भिन्न–भिन्न होती है।निर्मित वस्तुओं की प्रकृति के आधार पर उद्योगों को तीन वर्गो में बाँटा जा सकता है–

1. **बुनियादी उद्योग** –इसके अन्तर्गत ऐसे उद्योग आते है जिनसे उत्पादित सामग्री अन्य उद्योग के लिए कच्चा माल, मशीनरी एवं आधारभूत संरचना प्रदान करते है। इन उद्योगों के सहारे ही अन्य उद्योगों का विकास होता है। औद्योगिक विकास में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। लौह–इस्पात, एल्यूमिनियम उद्योग, विद्युत उपकरण आदि इसके उदाहरण है।

2. **उपभोक्ता उद्योग** –ऐसे उद्योग जिनसे उत्पादित वस्तुओं का सीधे उपयोग उपभोक्ता द्वारा किया जाता है, उपभोक्ता उद्योग कहते है। जैसे7 वस्त्र, चीनी, दंतमंजन, कागज, पंखे, सिलाई मशीन आदि उपभोक्ता उद्योग के उदाहरण है।

3. **सेवा उद्योग** –सेवा उद्योग के अन्तर्गत वे उद्योग आते है जो सीधे किसी वस्तु का उत्पादन नहीं करते अपितु उपभोक्ता एवं उद्योग की सेवा करते है। ये उद्योग अन्य उद्योग को प्रबन्धन, परिवहन, बैकिंग, संचार, विधिक सहायता आदि के रूप में सेवा प्रदान करते है।

13.3.1.6 उत्पादन प्रक्रिया के आधार पर उद्योगों का वर्गीकरण –

आपने देखा होगा कि उद्योगों से मानवोपयोगी अनेक वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है। इन उद्योगों में किसी का संचालन केवल मानव श्रम से तो किसी का संचालन मशीनो, विद्युत एवं मानव श्रम के द्वारा होता

है। वस्तुओं के उत्पादन में कई प्रक्रियाओं का सहारा लेना पड़ता है। इन प्रक्रियाओं के आधार पर उद्योगों को चार वर्गो में विभाजित किया जाता है–

1. **निष्कर्षणीय उद्योग** –मनुष्य अपने आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पृथ्वी पर पाये जाने वाले संसाधनों का जब सीधे दोहन करता है तो ऐसे आर्थिक क्रियाकलाप को निष्कर्षणीय उद्योग कहते है। जैसे लकड़ी काटना, मछली पकड़ना, वन–वस्तुओं का संग्रहण खनिज उत्खनन आदि।

2. **पुनरूत्पादक उद्योग** –ऐसे उद्योगों द्वारा उत्पादित सामग्री जब किसी अन्य वस्तुओं के उत्पादन में प्रयुक्त होती है तो उसे पुनरूत्पादक उद्योग कहते है। जैसे कृषि यंत्र, कीटनाशक, विविध उद्योगों में प्रयुक्त यंत्र आदि।

3. **वस्तुनिमार्ण उद्योग** –जिन उद्योगों द्वारा कच्ची सामग्री के रूप एवं गुण–धर्म में परिवर्तन करके मानव उपयोगी गुणवत्तापूर्ण वस्तुओ का निमार्ण किया जाता है उसे वस्तुनिमार्ण उद्योग कहा जाता है। इसे द्वितीयक उद्योग भी कहते है।वस्त्र, लोहा, सीमेंट, कागज उद्योग आदि इसके उदाहरण है।
4. **सहायक उद्योग** –बहुत से आर्थिक क्रियाकलाप ऐसे होते है जिनसे प्रत्यक्ष कोई उत्पादन नहीं होता अपितु वे उद्योगों के विकास एवं उत्पादन में सहायता करते है। इनके बिना उद्योगों की स्थापना एवं उत्पादन सम्भव नहीं है। जैसे– तकनीकी सहायता, बैकिंग, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, प्रबन्धन, प्रशासन, स्वास्थ्य आदि तृतीयक एवं चतुर्थक क्रियाएं आती हैं।

उक्त विवेचन में आपने देखा कि विभिन्न आधारों पर उद्योगों को वर्गीकृत किया गया है।इन वस्तु–निमार्ण उद्योगों में किसी में छोटे पैमाने पर तो किसी में बड़े स्तर पर वस्तुओं का निमार्ण हो रहा है। कई उद्योग ऐसे है जिनकी भूमिका वस्तुओं के उत्पादन में सीधे तौर पर नहीं है परन्तु अप्रत्यक्ष तौर पर उद्योगों को संचालित करने में बड़ी भूमिका होती है। उद्योगों में मिट्टी के बर्तन से लेकर रेलवे, जलयान एवं रक्षा सामग्रीतक का उत्पादन किया जाता है, जिसका किसी देश के विकास में महत्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार उद्योग छोटे रूप से लेकर वृहत्तम पैमाने तक होता है। विभिन्न आधारों पर विभाजित किये गए उद्योगों को सामान्यीकृत करते हुए उत्पादन के पैमाने के आाधार पर तीन वर्गो में विभक्त किया जाता है–

1. कुटीर उद्योग
2. लघु पैमाने का उद्योग
3. वृहत् पैमाने का उद्योग

13.4 कुटीर उद्योग

उद्योगों का विकास कुटीर उद्योग के रूप में ही प्रारम्भ हुआ था। प्राचीन काल में लोग कृषि के साथ–साथ कुटीर उद्योग में भी संलग्न रहते थे। कुटीर उद्योग से वस्तुओं का निर्माण लघु पैमाने पर होता है, क्योंकि यह उद्योग मानवीय श्रम प्रधान है। पहले के समय में जब मशीनों एवं शक्ति के साधन उपलब्ध नहीं थें तब लोगों को अपने परिवार की आवश्यकता पूर्ति के लिए विभिन्न वस्तुओं का उत्पादन स्वयं करना पड़ता था। तब कुटीर उद्योग बहुत विकसित और प्रचलित था। प्राचीन काल में कुटीर उद्योग अर्थव्यवथा की रीढ़ था। खाद्य सामग्री, वस्त्र, गृह निमार्ण सामग्री, कृषि उपयोग यंत्र आदि का उत्पादन कुटीर उद्योग द्वारा ही होता था। इस उद्योग का संचालन एक परिवार के लोगों द्वारा हो जाता है। कुछ परिवार के लोग ऐसे होते है, जो केवल इसी उद्योग में संलग्न रहते है। कच्चें माल को एकत्रित करना, उनसे वस्तुओं को बनाना और बाजार में ले जाकर बेचने तक का कार्य एक परिवार के लोग मिलकर कर लेते है।

कुटीर उद्योग को स्थापित करने में अधिक पूँजी और जगह की आवश्यकता नहीं होती है। कम पूँजी और अपने घर पर ही लोग इस उद्योग स्थापित कर लेते है। जिसके कारण इसे गृह उद्योग भी कहते है। अधिकतर लोग कृषि एवं अन्य कार्य के साथ अतिरिक्त आय एवं खाली समय का उपयोग करते हुए कुटीर उद्योग के माध्यम से वस्तुओं का निर्माण करते रहते है। कुटीर उद्योग में कच्ची सामग्री स्थानीय संसाधन एवं कृषि तथा वनोत्पाद से प्राप्त वस्तुओं का उपयोग होता है। यही कारण है कि विलग–विलग क्षेत्रों में वहाँ के स्थानीय संसाधनों के अनुरूप कुटीर उद्योगों का विकास होता है। जैसे जिन वन्य क्षेत्रों में तेंदू के पेड़ पर्याप्त मात्रा में पाये जाते है, वहाँ अधिक संख्या में कुटीर उद्योग के रूप में बीड़ी का निमार्ण किया जाता है। ऐसे ही जहाँ जंगली क्षेत्र है वहाँ लकड़ियों से बनने वाले वस्तुओं के उद्योगों का भरपूर विकास होता है। जिन क्षेत्रों चलवासी पशुचारण एवं शिकार अधिक होता है वहाँ के लोग पशुओं के चमड़ों एवं हड्डियों से जूते, वस्त्र, तम्बू आदि विविध प्रकार की वस्तुओं का निमार्ण करते है।

प्राचीन काल से ही भारत में कुटीर उद्योग के रूप में वस्तु विशेष का निमार्ण कार्य कुछ विशेष प्रकार के परिवार द्वारा होने लगा जैसे जुलाहों द्वारा कपड़ा बुनना, कुम्हार के द्वारा मिट्टी के बर्तन का निमार्ण करना आदि। यांत्रिक शक्तियों का प्रयोग वर्तमान समय में तीव्र औद्योगीकरण के कारण आधुनिक तकनीकि युक्त मशीनरी एवं विविध ऊर्जा के साधनों के उपयोग से आधुनिक उद्योगों से सस्ते वस्तुओं के निमार्ण से कुटीर उद्योग का मार्ग अवरूद्ध हो गया है। अब इन उद्योगों से कुटीर उद्योग को कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है।

13.5 लघु पैमाने का उद्योग

लघु पैमाने के उद्योग कुटीर उद्योग की अपेछा बड़े होतें है। जब उद्योगों में वेतनभोगी श्रमिको का उपयोग वस्तु निर्माण में किया जाने लगे तथा इनकी संख्या 50 से कम हो तो ऐसे उद्योग लघु पैमाने के उद्योग कहलाते है। इन उद्योगों में मशीन का उपयोग सीमित होता है। जिन उद्योगों में मशीन के उपयोग के साथ श्रमिकों की संख्या 20 से कम होती है वे उद्योग भी लघु उद्योग के अन्तर्गत आतें है।लघु उद्योग को स्थापित में कम पूँजी की आवश्यकता होती है। इन उद्योग के लिए पर्याप्त मात्रा में कच्चे माल एवं श्रमिक स्थानीय तौर मिल जाते है। इस प्रकार से लघु पैमाने के उद्योग उत्पादन प्रक्रिया में कुटीर उद्योग से भिन्न होते है। इन उद्योगों में स्थानीय स्तर पर उपलब्ध कच्ची सामग्री, साधारण मशीनों एंव अर्द्ध कुशल श्रमिकों का उपयोग किया जाता है। भारत, चीन, बांगलादेश, इण्डोनेशिया आदि विकासशील देशों में लघु पैमाने के उद्योग का अपेछाकृत अधिक विकास हुआ है।

13.6 वृहत् पैमाने के उद्योग

औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप वृहत् उद्योगों का विकास प्रारम्भ हुआ है। शक्ति चालित मशीनों के आविष्कार के बाद बड़े स्तर पर उद्योग स्थापित होने लगे और उनसे कम समय में अधिकाधिक मात्रा में वस्तुओं का निमार्ण होने लगा। आगे चलकर तकनीकी विकास और वैज्ञानिक ज्ञान में वृद्धि के साथ–साथ हर प्रकार की वस्तुओं के उत्पादन के उद्योग स्थापित होने लगे।लघु उद्योगों में जहाँ कारीगरों को शारीरिक श्रम अधिक करना पड़ता था वहीं अब वृहत् पैमाने के उद्योगों में स्थापित मशीनों को कारीगरों द्वारा संचालित करना होता है। इस प्रकार के उद्योगों में अब स्वचालित मशीनों द्धारा कार्य करने की प्रवृति बढ़ती जा रही है। विविध उद्योगों में प्रयुक्त कच्ची सामग्री एवं उनसे उत्पादित वस्तुके आधार पर श्रमिकों एवं शक्ति का अनुपात भिन्न–भिन्न होता है। कई उद्योग में मशीनों के साथ श्रमिकों की अधिक संख्या में आवश्यकता होती है, तो बहुत से स्वचालित उद्योग ऐसे है कि जिनमें कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है। इस कारण से अब श्रमिकों के कार्य में विशिष्टता मिलने लगी है। उद्योगों में उत्पादन प्रक्रिया कई चरणों में होती है। हर चरण

में कार्य करने वाले कारीगरों की विशेषज्ञता अलग–अलग होती है। एक कारीगर जिस कार्य का विशेषज्ञ होता है वह सिर्फ वही कार्य करता है।

वृहत् पैमाने के उद्योगों को स्थापित करने में पूँजी की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। उद्योग हेतु विभिन्न प्रकार की मशीनों, भवन, यातायात के साधन आदि पर बड़ी मात्रा में पूँजी खर्च होती है। मशीनरी को स्थापित करने, कच्चे माल को इकट्ठा करने, उत्पादित वस्तुओं की पैकिंग एवं भण्डारण, श्रमिकों के लिए आवास आदि के लिए पर्याप्त जगह की भी आवश्यकता होती है। इन उद्योगों को सुचारू रूप से संचालित करने में उच्च प्रबन्धकीय क्षमता वाले लोंगों एवं आवश्यकतानुसार तकनीकि में परिवर्तन के लिए विशेषज्ञों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। करीगरों से अधिक महत्व नीति नियोजकों का होता है। अधिक मात्रा में विविध प्रकार की कच्ची सामग्रीयां, विद्युत शक्ति, विशिष्टीकृत श्रमिक, उन्नत प्रौद्यौगिकी आदि के उपयोग के द्वारा वृहद् मात्रा में वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है। वृहत् पैमाने के उद्योगों का विकास उन्नीसवीं शताब्दी में यूरोप से प्रारम्भ होकर आज विश्व के अनेक देशों में स्थापित हो चुके है। विकसित देशों में वृहत् पैमानें के उद्योगों का ही अधिक विकास हुआ है।

भारत में भी स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद योजनाबद्व तरीके से वृहत् पैमानें के उद्योगों का विकास हुआ है। लोहा–इस्पात उद्योग, मोटर उद्योग, जहाजरानी उद्योग, सीमेंट उद्योग, चीनी उद्योग, तेलशोधन उद्योग आदि के क्षेत्र वृहत् मात्रा में वस्तुओं का निमार्ण हो रहा है।

किसी भी देश के आर्थिक विकास एवं उच्च जीवन स्तर के लिए वृहत् पैमानें के उद्योगों का विकास अत्यावश्यक है। किसी भी देश का विकास तभी होता है जब वहाँ प्राप्त संसाधनों का सम्यक उपयोग हेतु वृहत् पैमानें के उद्योगों का विकास हुआ हो। वृहत् पैमानें के उद्योग देश की अर्थव्यवस्था के रीढ़ होते है, क्योंकि जहाँ इनकी स्थापना होती है वहाँ अनेक सहायक उद्योगों भी स्थापित होने लगते है। बिजली, सड़क, यातायात के साधन, अस्तपाल, स्कूल कालेज आदि नगरीय सुविधाओं का विकास होने लगता है, जिससे उस क्षेत्र का विकास होने लगता है।इस प्रकार के उद्योग से दो प्रकार की वस्तुएं निर्मित होती है –

13.6.1 **उत्पादक वस्तुएं–**ऐसी उत्पादक वस्तुएं जो अन्य उद्योगों में वस्तु उत्पादन के काम आती है उत्पादक वस्तुओं के अन्तर्गत आती है। मशीनरी, लोहा–इस्पात, एल्युमीनियम आदि वस्तुएं अन्य उद्योगों में उत्पादन हेतु प्रयुक्त होती है। उद्योगों में जितनी मशीनें लगी होती है उनमें सबसे अधिक लोहा–इस्पात का उपयोग होता है। वस्तुओं के उत्पादन के लिए उत्पादक वस्तुओं की एक श्रृंखला की आवश्यकता होती है। जैसे पोशाक बनाने के लिए कपास को साफ करने, धागा बनाने की मशीने, कपड़ा बुनने की मशीन एवं कपड़े से पोशाक बनाने के लिए सिलाई मशीन की आवश्यकता होती है। इन सभी कार्यो के लिए अलग–अलग प्रकार की मशीन की आवश्यकता होती है तथा इन मशीनों में लगे कल–पुर्जे विभिन्न आकार प्रकार के होते है। इन मशीनों में लगने वाले कल–पुर्जों के निमार्ण के लिए लोहा एवं शक्ति के साधन की आवश्यकता होती है। इस प्रकार किसी भी सामान्य वस्तु के उत्पादन के लिए उद्योगों की एक श्रृंखला बन जाती है। अतः स्पष्ट है उत्पादकजन्य वस्तुएं के द्वारा ही मनावोपयोगी वस्तुओं का निमार्ण होता है।

13.6.2 उपभोग की वस्तुएं

उद्योगों द्वारा उत्पादित ऐसी वस्तुएं जिनका उपयोग आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होता है, उपभोग की वस्तुएं के अन्तर्गत आता है। खाद्य पदार्थ, वस्त्र, कागज, घड़ी, टीवी आदि वस्तुओं का

उत्पादन उपभोग के लिए होता है। उत्पादक उद्योग के वस्तुओं की सहायता से ही इन वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है।

13.7 उद्योग का स्थानीयकरण –

आपने देखा होगा कि किसी भी देश या क्षेत्र के आर्थिक विकास में उद्योगों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। किसी भी बड़े पैमाने के उद्योग की स्थापना सर्वत्र नहीं हो सकती, क्योंकि उद्योगों के लिए जिन सामग्रियों एवं सुविधाओं की आवश्यकता होती है वह हर जगह सुलभ नहीं होता तथा सभी आवश्यक तत्व किसी एक स्थान पर नहीं मिलते है।इसलिए उद्योगों के स्थानीयकरण का अधिक महत्व है। उद्योगों को स्थापित करने के लिए कुछ ही ऐसे स्थल होते है जहॉ कम खर्च में सभी आवश्यक सामग्रियां एवं सुविधाएं मिल पाती है। पर दूसरी समस्या यह होती है कि उद्योगों में उत्पादित वस्तुओं का खपत एक ही स्थान पर नहीं होता अपितु उसका क्षेत्रीय विस्तार होता है। अब समस्या यह होती है कि उद्योग की स्थापना इस प्रकार की जाय जिससे क्षेत्र की मांग की पूर्ति हो सके। लेकिन मांग हेतु विभिन्न उद्योगों में प्रतिस्पर्धा होगी तथा उत्पादित पदार्थ की बाजार में न्यूनतम लागत पर वितरण की समस्या होगी।

अतः किसी उद्योग की स्थापना अन्य उद्योगों की अवस्थिति एवं वितरण को ध्यान में रख कर करना पड़ेगा। इस प्रकार से उद्योग की स्थापना किस स्थान पर किया जाय, इसका चुनाव करना बहुत कठिन समस्या है। इसके निवारण के लिए विभिन्न विद्वानों ने उद्योग के स्थानीयकरण के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है, जिसका हम अध्ययन इकाई 16 में करेगें।

13.8 सारांश

इस इकाई में हमने भारत में वस्तु निमार्ण उद्योग के विकास के बारे समझा। हमने यह समझा कि उद्योग की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान होता है। विश्व के सभी देश उद्योग के माध्यम से ही अपने संसाधनों का उपयोग कर वस्तु निमार्ण करते है। उद्योगों का चयन उसमें प्रयुक्त कच्ची सामग्री की उपलब्धता और तकनीक के आधार पर करते है। वर्तमान समय में अत्याधुनिक तकनीकी के विकास के कारण वस्तुनिमार्ण उद्योग का श्रृखलाबद्ध विकास हुआ है। हमने इस इकाई में उत्पादों, श्रमिको की संख्या,कच्ची सामग्री,प्रबन्धन एवं स्वामित्व, निर्मित वस्तु की प्रकृति और उत्पादन प्रक्रिया के आधारों पर उद्योगों के वर्गीकरण को समझा। कुटीर उद्योग, लघु पैमाने के उद्योग एवं वृहत् पैमाने के अन्तर्गत आने वाले उद्योग एवं उसके महत्व के बारे में अध्ययन किया।

13.9 बोध प्रश्न

1. **वस्तु–निमार्ण उद्योग से आप क्या समझते है ?**
2. **वस्तु –निमार्ण उद्योग के वर्गीकरण की व्याख्या कीजिए।**
3. **भारत में कुटीर उद्योग के महत्व की विवेचना कीजए।**
4. **निम्नलिखित पर टिप्पणी कीजिएः**

- भारी उद्योग
- सेवा उद्योग
- निजी उद्योग

5. उद्योग के स्थानीयकरण पर संक्षेप लिखिए।

13.10 सन्दर्भ पुस्तकें

- सिंह, जगदीश, एवं सिंह, के.एन.(2010) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
- मौर्य, एस. डी. (2022), आर्थिक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, प्रयागराज।
- श्रीवास्तव, वी.के. एवं राव, बी.पी. (2002), आर्थिक भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर।
- गौतम, अलका, (2019) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
- अलेक्जेंडर, जे.डब्लू. (1979) इकोनॉमिक ज्योग्राफी, प्रेंटिस हाल,
- लांगमैन, जी.सी. एण्ड मार्गन, जी.सी. (1982) हयूमन एण्ड इकोनॉमिक ज्योग्राफी,आक्सफोर्ड प्रेस.

इकाई –14 उद्योग स्थानीयकरण के सिद्धान्त–बेवर का सिद्धान्त, बेवर के सिद्धान्तों में परिष्कार, बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त, समन्वित सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14.3 उद्योग स्थानीयकरण के सिद्धान्त
14.3.1 बेबर का सिद्धान्त
14.3.1.1 वेबर के सिद्धान्त की मान्यताएं
14.3.1.2 परिवहन लागत
14.3.1.3 श्रम की लागत
14.3.1.4 एकत्रीकरण का प्रभाव
14.3.2 वेबर के सिद्धान्त की आलोचना
14.3.3 वेबर के सिद्धान्त में परिष्कार
14.3.3.1 परिवहन लागत का प्रभाव
14.3.3.2 बाजार बिन्दु पर उद्योग की स्थापना
14.3.3.3 कच्ची सामग्री या वस्तु का प्रतिस्थापन
14.3.3.4 उत्पादन प्रक्रिया लागत तथा उद्योग का स्थानीयकरण
14.3.4 हूवर के सिद्धान्त की आलोचना
14.4 बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त
14.5 समन्वित सिद्धान्त
14.6 सारांश
14.7 बोध प्रश्न
14.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

14.1 प्रस्तावना

इकाई 15 में हमने वस्तु–निमार्ण उद्योग के बारे में समझा है। अब हम इस इकाई में यह समझेगें कि उद्योग की स्थापना किस स्थान पर करना लाभप्रद रहेगा। उद्योग के लिए स्थान का चयन उसके आवश्यक तत्वों के समुचित मूल्यांकन के बाद ही किया जाता है।अधिकतम लाभ के लिए उद्योग की स्थापना किस स्थान पर स्थापित किया जाए इसके लिए वेबर महोदय ने उद्योग अवस्थिति सिद्धान्त

का प्रतिपादन किया है। इस सिद्धान्त के माध्यम से वेबर महोदय ने उद्योग की आदर्श स्थिति के लिए परिवहन लागत, श्रम लागत तथा एकत्रीकरण के लाभ को महत्वपूर्ण माना है। हूबर महोदय नेवेबर के सिद्धान्त में परिमार्जन कर न्यूनतम लागत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। उन्होनें किसी उद्योग में लगने वाली लागत में कच्ची सामग्री को एकत्रित करने, उत्पादन प्रक्रिया लागत एवं उत्पादित पदार्थ को बाजार तक लगने वाली लागत सम्मिलित रूप शामिल है। फेटर एवं होटलिंग ने उद्योग की अवस्थिति के लिए बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। ग्रीनहट महोदय ने न्यूनतम लागत एवं स्थनीयकरण अन्योन्याश्रित सैद्धान्तों का समन्वयन करते हुए समिन्वत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस प्रकार से इस इकाई का अध्ययन कर हम समझ सकेगें कि उद्योग की स्थापना के आदर्श स्थान का चयन कैसे किया जाता है।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- उद्योग स्थनीयकरण के सिद्धान्तों को समझ सकेगें।
- उद्योग की स्थापना पर परिवहन लागत, कच्चे माल एवं बाजार के महत्व को समझ सकेगें।
- हम यह भी जान सकेगें कि उद्योग की स्थापनाक्यों सभी जगह नहीं हो सकती।

14.3 उद्योग स्थानीयकरण के सिद्धान्त

अभी तक हमने इकाई 15 में उद्योग एवं उद्योगों के स्थानीयकरण के बारे में पढ़ा है। उद्योग की स्थापना में स्थान का चयन बहुत महत्वपूर्ण होता है। स्थान निर्धारण में प्रमुख समस्या उद्योग के आवश्यक तत्वों को एक स्थान पर एकत्र करना है।सभी तत्वों की विशेषतायें अलग–अलग और उद्योगों के लिए उसका सापेक्षिक आकर्षण भिन्न–भिन्न प्रकार का होता है। अतः उद्योगों के स्थानीयकरण के लिए अनिवार्य तत्वों के सापेक्षिक आकर्षण की समस्या का समाधान विभिन्न सिद्धान्तों के माध्यम से हल किया जाता है। उद्योग स्थानीयकरण के लिए परिवहन लागत की समस्या का समाधान न्यूनतम लागत सिद्धान्त के द्वारा, क्षेत्रीय मांग की आपूर्ति का समाधान बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त एवं अधिकतम लाभ प्राप्ति सिद्वान्त से किया जाता है। उद्योग स्थानीयकरण के प्रमुख सिद्धान्तों की व्याख्या अधोलिखित हैः

14.3.1 बेबर का सिद्धान्त

प्रख्यात जर्मन अर्थशास्त्री अल्फ्रेड नें उद्योग के स्थानीयकरण का सिद्धान्त प्रतिपादन का प्रथम विद्वान थे। अल्फ्रेड वेबर ने 1909 ई0 में जर्मन भाषा'Uber den Standort den Industrien' में किया था। दुरूह जर्मन भाषा में होने के करण प्रारम्भ में उनके सिद्धान्त को अधिक क्ष्याति नहीं मिल सकी। इनके सिद्धान्त को प्रसिद्धि तब मिली जब सन 1929 इसका अंग्रेजी में अनुवाद'Theory of Location of Industries'नाम से प्रकाशित हुआ।

वेबर ने अपने सिद्धान्त को समझाने के लिए परिभाषित शब्दों एवं मान्यताओं का सहारा लिया, जो अधोलिखित है–

परिभाषिक शब्द

- **सर्वत्र सुलभ पदार्थ**

ऐसे पदार्थ जो सभी स्थानों पर सुगमता से प्राप्त हो जाते है तथा जिनके लिए सभी जगह एक ही मूल्य चुकाना पड़ता है। इन पदार्थ को सर्वत्र सुलभ पदार्थ कहते है। जैसे– मिट्टी, जल, वायु इत्यादि।

- **स्थानीय पदार्थ**

वे पदार्थ जो किसी क्षेत्र विशेष या किसी स्थान में ही प्राप्त होते है, हर जगह नहीं स्थानीय पदार्थ कहलाते है।

- **शुद्ध पदार्थ**

कुछ कच्ची सामाग्री ऐसी होती है जिनका वजन वस्तु के निमार्ण में घटता नहीं है, शुद्ध पदार्थ कहलाते है। उदाहरण स्वरूप सूत से धागा बनाते समय कपड़े का वजन सूत के भार के बराबर होता है।

- **मिश्रित पदार्थ**

वे स्थानीय पदार्थ जिनका भार वस्तु उत्पादन प्रक्रिया में कम हो जाता है, मिश्रित पदार्थ कहलाता है। जैसे बाक्साइट से एल्युमिनियम बनाने की प्रक्रिया में उत्पादित वस्तु कच्ची सामाग्री के भार की अपेछा हल्की होती है।

- **पदार्थ सूचकांक**

पदार्थ सूचकांक ,उत्पादित वस्तु एवं कच्ची सामग्री के वजन अनुपात को कहते है। शुद्ध पदार्थ का पदार्थ सूचकांक 1 होता है।

- **स्थानीयकरण भार**

प्रति इकाई वस्तु उत्पादन के लिए कच्ची सामग्री और उत्पादित वस्तु दोनो मिलाकर जितने भार का परिवहन करना होता है उसे स्थानीयकरण भार कहते है। सर्वसुलभ पदार्थों का उपयोग करने वाले उद्योग का स्थानीयकरण भार 1 होता है क्योंकि केवल उत्पादित वस्तु का ही परिवहन करना पड़ता है। यदि शुद्ध पदार्थ से वस्तु निर्मित करने वाले उद्योग है तो उन्हें कच्ची सामाग्री और उत्पादित वस्तु दोनों का बराबर–बराबर भार परिवहन करना पड़ता है, इसलिए उसका स्थानीयकरण भार 2 होगा।

- **आइसोडापेन**

उस प्रदर्शित करने वाली रेखा को जो समान परिवहन लागत को दर्शाता है, आइसोडापेन कहते है।

14.3.1.1 वेबर के सिद्धान्त की मान्यताएं

वेबर ने अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन में अधोलिखित मान्यताओं का सहारा लिया है–

1. जहाँ कारखाने की स्थापना करनी हो वह एक विलग स्वतंत्र इकाई हो और एक ही प्रशासनिक व्यवस्था के अधीन हो। यहाँ सर्वत्र समान जलवायु, संस्कृति, तकनीक आदि भौगोलिक दशाओं में समानता पायी जाती है।
2. उद्योग की स्थानीयकरण का विश्लेषण एक समय में एक ही उत्पादन वस्तु के संदर्भ में किया जा रहा है। अतः एक ही प्रकार की परन्तु भिन्न गुणों वाली वस्तुएं है तो उसे भिन्न वस्तुएं मानी जायेंगी।
3. कच्ची सामाग्री के स्रोत तथा उसकी स्थिति का पूरा ज्ञान है।
4. बाजार के स्थान का भी पूरी तरह से ज्ञान हैं। बाजार एक दूसरे से पृथक बिन्दु रूप में ही है। अप्रत्यक्ष तौर पर बाजारों में वस्तुओं की आपूर्ति को लेकर पूर्ण प्रतिस्पर्धा की स्थिति विद्यमान

है। प्रत्येक उत्पादक को असीमित बाजार सुलभ है,कोई भी उत्पादक किसी स्थान पर कारखाना स्थापित करके बाजार में एकाधिकार प्राप्त नहीं कर सकता।

5. श्रम सभी जगह समान रूप से उपलब्धनहीं होते बल्कि कुछ निश्चित प्रदेशों में उपलब्ध होते हैं। कुछ स्थानों पर निर्धारित दर पर पर्याप्त संख्या में मजदूर उपलब्ध होते है।
6. कच्चामाल या उत्पादित वस्तु का परिवहन व्यय केवल भार एवं दूरी के अनुपात में ही बढ़ता है।

उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर वेबर ने बताया कि उद्योग की स्थापना कहाँ की जाय जिससे अधिकतम लाभ प्राप्त हो। इनके अनुसार उद्योग की अवस्थिति को परिवहन लागत, श्रम लागत एवं समूहन अथवा एकत्रीकरण के लाभ निर्धारित करते है। वे सर्वप्रथम यह निश्चित करते है कि किसी प्रकार न्यूनतम परिवहन लागत बिन्दु निर्धारित हो, तत्पश्चात श्रम तथा एकत्रीकरण द्वारा लाभ ध्यान दिया जाता है।

14.3.1.2 परिवहन लागत

वेबर ने उद्योग की स्थापना में परिवहन व्यय को प्रमुख स्थान दिया है। कच्चे माल एवं उत्पादित वस्तु का न्यूनतम परिवहन व्यय यह निर्धारित करता है कि उद्योग की स्थापना कच्ची सामाग्री के स्रोत पर हो या बाजार के निकट अथवा दोनों के मध्य किसी स्थान परहो। न्यूनतम परिवहन व्यय का विश्लेषण दो दशाओं के आधार पर किया गया हैः

प्रथम दशा– एक बाजार और एक कच्चा माल स्रोत

इस दशा में यदि मान लिया जाय कि उद्योग में एक ही कच्ची सामाग्री का उपयोग होता है जो स्रोत A से प्राप्त होता है तथा उत्पादित वस्तु की खपत एक ही बाजार बिन्दु B पर होती है। ऐसी स्थिति में उद्योग की स्थापना की सम्भावना चार स्थानों पर हो सकती है–

I. यदि कच्ची सामाग्री सर्वत्र सुलभ है तो उद्योग की स्थापना बाजार बिन्दु B पर होगा क्योंकि इससे कच्चे माल एवं उत्पादित वस्तु के परिवहन व्यय पर खर्च बहुत कम होगा ।

II. यदि कच्ची सामाग्री शुद्ध तथा स्थानीय है तो उद्योग बाजार या कच्ची सामाग्री अथवा उन दोनों के मध्य किसी बिन्दु पर स्थापित हो सकता है। ऐसा इसलिए क्योंकि किसी भी दशा में परिवहन लागत एक समान होता है। इसको इस प्रकार से समझ सकते है, यदि कच्ची समाग्री के स्रोत पर उद्योग स्थापित होता है तो कच्ची सामाग्री पर परिवहन व्यय कम और उत्पादित वस्तु को बाजार में पहुँचाने पर परिवहन व्यय अधिक होगा। यदि उद्योग की स्थापना बाजार बिन्दु पर किया जाय तो कच्ची सामाग्री को बाजार तक लाने में परिवहन व्यय अधिक खर्च होगा और उत्पादित वस्तु पर कम तथा उद्योग को यदि बाजार एवं कच्ची सामाग्री के स्रोत के मध्य किसी बिन्दु पर स्थापित किया जाय तो दोनो का परिवहन व्यय बराबर होगा।

III. यदि कच्चा पदार्थ मिश्रित पदार्थ है तो उद्योग की स्थापना कच्ची सामाग्री के स्रोत पर होगी। ऐसा इसलिएक्योंकि मिश्रित पदार्थ में सम्मिलित अनावश्यक भार उत्पादन

प्रक्रिया में कम हो जायेगा और कम भार वाली उत्पादित वस्तु का ही बाजार तक परिवहन खर्च पड़ेगा।

दूसरी दशा : एक बाजार और दो कच्ची सामाग्री का स्रोत

यदि किसी उद्योग में वस्तु के निर्माण में दो कच्ची सामाग्रीयों का उपयोग होता है और उस वस्तु का बाजार एक स्थान पर स्थित हो तो ऐसी दशा में उद्योग के स्थापना की निम्न सम्भावना हो सकती है–

I. यदि दोनों कच्ची सामग्रियां सर्वत्र सुलभ है तो उद्योग की स्थापना बाजार बिन्दु पर होगा क्योंकि ऐसी दशा में परिवहन व्यय न्यूनतम होगा।

II. यदि कच्ची सामग्रियां शुद्ध पदार्थ है तो उद्योग की स्थापना बाजार बिन्दु पर ही होगी। ऐसी स्थिति में दोनों कच्चे माल चित्र 14.1 के अनुसार R1 और R2 स्रोत से बाजार भेज दी जायेगी तो कुल खर्च कम पड़ेगा। यदि एक कच्ची सामग्री को दूसरे कच्ची सामग्री तक ले जाया जाय तो उत्पादित सामग्री को बाजार भेजना पड़ेगा जो दोनों कच्ची सामग्रियों के कुल भार के बराबर होगा। इस तरह से एक कच्ची सामग्री को दूसरे कच्ची सामग्री के स्रोत तक ले जाने पर अतिरिक्त परिवहन व्यय खर्च करना पड़ेगा। यदि दूसरी कच्ची सामग्री का स्रोत पहली कच्ची सामग्री और बाजार बिन्दु के मध्य में स्थित हो तो भी उद्योग की स्थापना बाजार बिन्दु पर होगी क्योंकि कच्ची सामग्री को उतारने तथा उत्पादित वस्तु को लादने का अतिरिक्त खर्च वहन करना पड़ेगा।

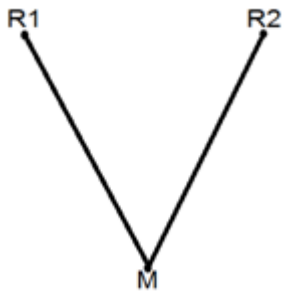

चित्र 14.1

III. उद्योग में प्रयुक्त कच्ची सामग्री यदि शुद्ध पदार्थ और सर्वत्र सुलभ पदार्थ है तो उद्योग की स्थापना बाजार बिन्दु पर होगा। ऐसी दशा में शुद्ध पदार्थ के लिए किसी भी बिन्दु उद्योग स्थापित हो परन्तु बाजार बिन्दु पर स्थापित होने पर सर्वत्र सुलभ पदार्थ के लिए अतिरिक्त परिवहन खर्च नहीं देना पड़ेगा।

IV. चित्र 14.2 के अनुसार यदि दोनों कच्ची सामग्रियां मिश्रित पदार्थ है तो उद्योग के स्थान निर्धारण का कार्य कठिन हो जाता है। ऐसी स्थिति में उद्योग की स्थापना के लिए वेबर महोदय ने स्थानीयकरण त्रिभुज का सहारा लिया। त्रिभुज के आधार के सिरों पर प्रथम कच्चे माल का स्रोंत A , दूसरे कच्चे माल का स्रोत B है और इसके शीर्ष बिन्दु पर बाजार बिन्दु Cको मान लिया जाए तो उद्योग की स्थापना निम्न आधार पर होगीः

यदि मान लिया जाय कि दोनों कच्ची सामाग्री से निर्मित वस्तु उत्पादन प्रक्रिया में 50–50 प्रतिशत कम हो जाती है और प्रत्येक की उद्योग में माँग 1000 टन प्रतिवर्ष है तथा दोनों कच्ची सामग्रियों के स्रोत्र और बाजार बिन्दु एक दूसरे से 100–100 किमी की दूरी पर स्थित है। इस स्थिति मेंउद्योग किस स्थान पर स्थापित किया जाय कि परिवहन व्यय न्यूनतम हो, अधोलिखित गणना से जान सकते हैः

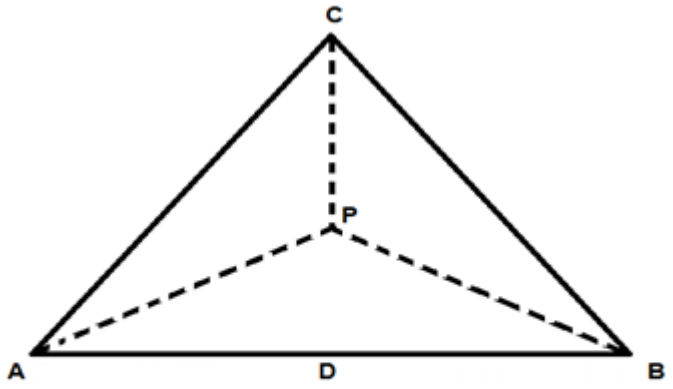

स्थानीयकरण का त्रिभुज

चित्र 14.2

- यदि उद्योग को बाजार बिन्दु C पर स्थापित किया जाय तो परिवहन व्यय होगा :

  A से बाजार बिन्दु C तक परिवहन व्यय = 1,000 टन × 100 किमी.

  = 1,00,000 टन किमी.

  B से बाजार बिन्दु C तक परिवहन व्यय = 1,000 टन × 100 किमी.

  = 1,00,000 टन किमी.

  दोनों कच्ची सामग्रियों को बाजार तक पहुँचानें का कुल परिवठन व्यय

  = 2,00,000 टन किमी.

- यदि दोनों कच्ची सामग्रियों के स्रोत में से A या B पर उद्योग को स्थापित किया जाय तो परिवहन व्यय होगा :

  यदि मान लिया जाय उद्योग A बिन्दु पर स्थापित किया गया है तो

  A से Bतक परिवहन व्यय = 1,000 टन × 100 किमी.

  = 1,00,000 टन किमी.

  Aसे बाजार बिन्दु Cतक परिवहन व्यय = 1,000 टन × 100 किमी.

  = 1,00,000 टन किमी.

कच्ची सामग्री और उत्पादित वस्तु को बाजार तक पहुँचाने का कुल परिवहन व्यय

= 1,00,000 + 1,00,000 टन किमी.

= 2,00,000 टन किमी.

यदि उद्योग को C बिन्दु पर स्थापित किया जाय तो भी कुल परिवहन व्यय 2,00,000 टन किमी. होगा।

- उक्त तीनों स्थानों से हटकर यदि उद्योग को दोनों कच्ची सामग्रियों के स्रोत Aएवं B के मध्यवर्ती बिन्दु D पर स्थापित किया जाये तो परिवहन व्यय :

  A से D तक परिवहन व्यय = 1,000 टन × 50 किमी.
  =50,000 टन किमी.

  B से D तक परिवहन व्यय= 1,000 टन × 50 किमी.
  =50,000 टन किमी.

  उत्पादित वस्तुओं के 1000 टन भार को D बिन्दु से बाजार बिन्दु C तक पहुँचानें का परिवहन व्यय = 1000 टन × 87 किमी.
  = 87,000 टन किमी.

  कुल परिवहन व्यय(A+B+C) = 50,000 + 50,000+87,000
  = 1,87,000 टन किमी.

- परन्तु यदि त्रिभुज के अन्दर इन तीनों बिन्दुओं के बीच P बिन्दु पर उद्योग को स्थापित किया जाय तो परिवहन व्यय और कम हो जायेगा। इसे इस प्रकार से समझ सकते हैः

- A से P तक परिवहन व्यय = 1,000 टन × 50 किमी.
  = 50,000 टन किमी.

  B से P तक परिवहन व्यय = 1,000 टन × 50 किमी.
  = 50,000 टन किमी.

  उत्पादित वस्तुओं के 1000 टन भार को P बिन्दु से बाजार बिन्दु C तक पहुँचानें का परिवहन व्यय = 1000 टन × 71 किमी.
  = 71,000 टन किमी.

  कुल परिवहन व्यय = 50,000 + 50,000+71,000
  = 1,71,000 टन किमी.

उपर्युक्त गणना से स्पष्ट है कि उद्योग को A,B या C स्थान पर स्थापित करने पर परिवहन व्यय अधिक होगा, जबकि इसकीतुलना में D बिन्दु पर स्थापित करने पर परिवहन व्यय कम होगा। सबसे आदर्श स्थिति त्रिभुज के अन्दर P बिन्दु होगा जहाँ परिवहन व्यय सबसे कम होगा और समय की बचत होगी। यदि किसी एक कच्ची सामाग्री का भार अधिक है और उत्पादन प्रकिया में ह्रास कम होता है तो उद्योग की स्थापना का बिन्दु उसकी तरफ आकर्षित होगा।

14.3.1.3 श्रम की लागत :

परिवहन खर्च के साथ ही वेबर ने श्रम की लागत को भी उद्योग के स्थनीयकरण में महत्वपूर्ण माना है। उनका मानना है कि श्रम की लागत स्थान–स्थान पर अलग–अलग होता है तथा कुछ निश्चित

स्थानों पर मिलता है।श्रम पर खर्च कम करने के लिए उद्योग की स्थापना उस बिन्दु से हटकर हो सकती है जो परिवहन की दृष्टि से सर्वोत्तम है, परन्तु उस बिन्दु से हटने पर परिवहन पर खर्च जितना बढ़ता है उससे अधिक या उतना श्रम के खर्च में बचत हो। परिवहन व्यय की दृष्टि से सर्वोत्तम बिन्दु से हटने पर जिन–जिन बिन्दुओं पर परिवहन खर्च में इकाई वृद्धि होती है उसको मिलाने वाली रेखा को आइसोडापेन कहते है।

इसे हम चित्र 14.3 के माध्यम से समझ सकते है। चित्र में M बाजार बिन्दु है एवं N बिन्दु पर कच्ची सामाग्री उपलब्ध है।अब यदि मान लिया जाय कि प्रति इकाई उत्पादन के लिए दुगुने वजन की कच्ची सामाग्री का उपयोग होता है। ऐसी स्थिति में उद्योग की स्थापना कच्ची सामाग्री के स्रोत्र N बिन्दु पर होगी। चित्र में M बिन्दु को केन्द्र मान कर खींचे गये वृत्त खण्ड उत्पादित वस्तु के परिवहन व्यय को प्रदर्शित करता है तथाN बिन्दु को केन्द्र मानकरखींचे गये वृत्त खण्ड कच्ची सामाग्री का परिवहन व्यय बताते है। चूंकि कच्ची सामाग्री का परिवहन व्यय, उत्पादित वस्तु के परिवहन व्यय का दूना है इसलिए M बिन्दु से खींचे गये सकेन्द्रीय वृत्त N बिन्दु से दूने के अन्तर पर दिखाये गये है।

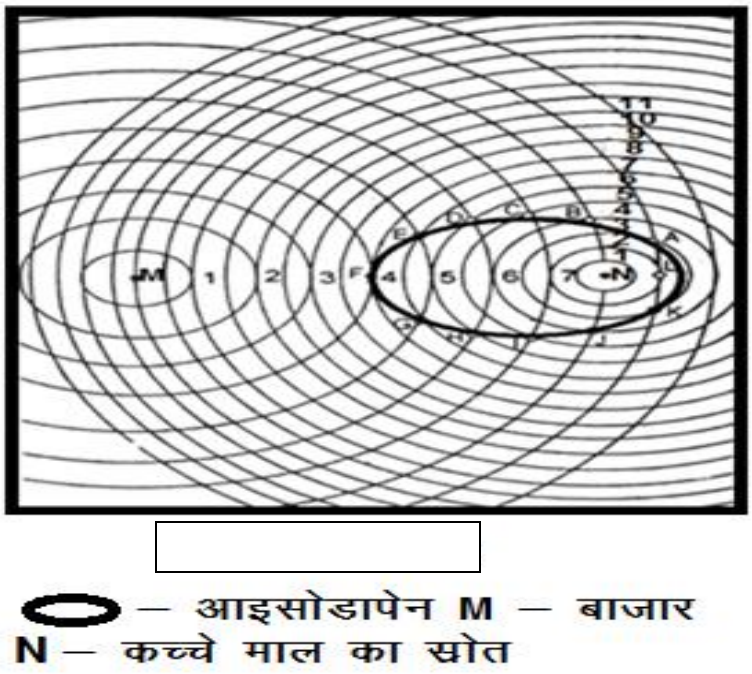

चित्र 14.3

अब यदि मान लेते है कि उद्योग को N बिन्दु पर न स्थापित करके B बिन्दु पर स्थापित करते है तो उत्पादित वस्तु का परिवहन व्यय 8 इकाई ही खर्च होगा, जितना N बिन्दु पर होता है, परन्तु कच्ची सामाग्री पर 4 इकाई का अतिरक्त खर्च आयेगा। इस प्रकार परिवहन खर्च कुल 12 इकाई होगा जो N बिन्दु की अपेछा 4 इकाई अधिक है। उसी प्रकार B के अलावा A,C,D,E,F,G,H,I,J,K,L, सभीऐसे बिन्दु है जहाँ उद्योग स्थापित करने पर N बिन्दु की तुलना में 4 इकाई अतिरिक्त परिवहन खर्च होगा।अतः इन बिन्दुओं को मिलाकर खींची गयी रेखा आइसोडापेन है जिसका मान 4 इकाई है। यदि इन बिन्दुओं पर

उद्योग को स्थापित करनेपर श्रम में लगने वाले खर्च में कम से कम 4 इकाई की बचत होती है तो उद्योग को इनमें से किसी भी बिन्दु पर स्थापित किया जा सकता है। इसके बाहर उद्योग को स्थापित करने पर हानि उठानी पड़ेगी। ऐसी स्थिति में 4 इकाई वाले मान को क्रान्तिक आइसोडापेन कहते है।

14.3.1.4 एकत्रीकरण का प्रभाव :

वेबर महोदय उद्योग को स्थापित करने में परिवहन व्यय तथा श्रम के प्रभाव की ही तरह एकत्रीकरण के प्रभाव को भी महत्व दिया है। एकत्रीकरण तीन प्रकार से होता है–

- उद्योग के विस्तार से, जिसके कारण बड़े पैमाने पर उत्पादन जन्य लाभ प्राप्त हो सके।
- बड़ी संख्या में एक ही प्रकार के उद्योग एक स्थान पर स्थापित हो, जिससे सामान्य तकनीकी सुविधायें तथा उत्पादित वस्तु के लिए विक्रय संबंधी सुविधायें प्राप्त होती है।
- एक स्थान पर विभिन्न प्रकार के उद्योगों के स्थापित होने से सामूहिक रूप से सामान्य सुविधायें जैसे परिवहन के साधन आदि पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते है।

वेबर के अनुसार यदि मान लिया जाय कि उद्योग के उत्पादन खर्च में श्रम का कोई प्रभाव नहीं है, और हम उद्योग को परिवहन खर्च की दृष्टि से सर्वोत्तम बिन्दु से एकत्रीकरण बिन्दु की ओर ले चलें तो जितना परिवहन खर्च बढ़ेगा यदि उतना लाभ एकत्रीकरण से होगा। अतः उद्योग की स्थापना परिवहन की दृष्टि से सर्वोत्तम बिन्दु से हट उतनी दूर हो सकी है जहाँ तक एकत्रीकरण से उत्पन्न लाभ परिवहन व्यय की दृष्टि से अधिक अथवा बराबर हो।

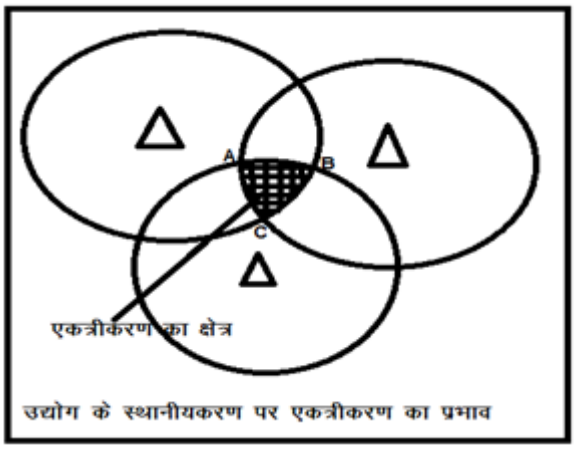

चित्र 6.4

चित्र 6.4 में तीन स्थानीयकरण त्रिभुज दिये हुए है। प्रत्येक त्रिभुज में एक ऐसा बिन्दु है जो परिवहन की दृष्टि से सर्वोत्तम है। इसे केन्द्र मानकर आइसोडापेन खींचे गये है जिनमें से प्रत्येक का मान 5 इकाई है। ऐसी स्थिति में उद्योग की स्थापना आदर्श स्थिति से हटकर 5 मान वाले तीनों आइसोडापेन के मध्यवर्ती किसी भी बिन्दु पर स्थापित किया जा सकता है,परन्तु तब जबकि एकत्रीकरण से 5 इकाई या अधिक का लाभ प्राप्त हो। एकत्रीकरण में वृद्धि होने से होने वाले लाभ में भी वृद्धि हो जाती है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर वेबर महोदय ने अधोलिखित निष्कर्ष निकाले है–

- उद्योग के स्थानीयकरण में परिवहन व्यय का सामान्य प्रभाव नहीं अपितु विभिन्न स्थानों के सापेक्षिक परिवहन व्यय का प्रभाव पड़ता है।
- उद्योग की स्थापना शुद्ध पदार्थ वाली कच्ची सामाग्री के स्रोत पर होना अनिवार्य नहीं होता है।
- उद्योग को ऐसे कच्ची सामाग्री के स्रोत्र आकर्षित करते है जो मिश्रित प्रकार के होते है। यदि उद्योग में एक से अधिक कच्ची सामाग्री का उपयोग होता है, तो उनमें से सबसे अधिक भार वाली कच्ची समाग्री की तरफ उद्योग स्थापित होगा।
- उद्योगों में प्रयुक्त कच्ची सामाग्रीयों का पदार्थ सूचकांक कम है तो वे बाजार की तरफ आकर्षित होंगे और यदि अधिक है तो कच्ची सामाग्री की तरफ।
- स्थनीयकरण त्रिभुज के भीतर उद्योग की स्थापना कच्ची सामाग्री के सापेक्षिक भार पर निर्भर करती है। यदि सापेक्षिक भार अधिक है तो उद्योग कच्ची सामाग्री के स्रोत पर स्थापित होगा। उद्योग में प्रयुक्त सभी कच्ची सामग्रियों का भार यदि कम है तो उसकी स्थापना में श्रम का प्रभाव अधिक होगा।

14.3.2 वेबर के सिद्धान्त की आलोचना :

वेबर ने इस सिद्धान्त के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि कौन सा स्थान उद्योग की स्थापना की दृष्टि से उपयुक्त है जिससे अधिक लाभ प्राप्त हो सके। इनका सिद्धान्त ऐसी मान्यताओं के आधार पर प्रारम्भ होता है जो वास्तविक जगत में प्राप्त नहीं हैं। वेबर के सिद्धान्त की आलोचनायें इस प्रकार से हैः

- वेबर ने उद्योग की स्थापना में परिवहन लागत पर आवश्यकता से अधिक ध्यान दिया है। उत्पादन प्रक्रिया एवं वस्तुओं के माँग पक्ष पर ध्यान नहीं दिया है।
- इस सिद्धान्त का सम्पूर्ण विवेचन बाजार केन्द्र तथा कच्ची सामग्री को निश्चित बिन्दु मानकर हुआ है।परन्तु कच्ची सामग्री का क्षेत्र व्यापक होता है और मांग के अनुसार कृषिगत और वन्य आधारित कच्ची सामग्री क्षेत्र का विस्तार होता है।
- परिवहन व्यय में वृद्धि कच्ची सामग्री के भार और दूरी के अनुपात में माना है, जबकि वास्तविक रूप में परिवहन खर्च बढ़ती दूरी के अनुपात में घटता है।
- वेबर न्यूनतम लागत बिन्दु को ही अधिकतम लाभ का बिन्दु मानते है परन्तु वास्तविक रूप में ऐसा नहीं पाया जाता है।

14.3.3 वेबर के सिद्धान्त में परिष्कार :

वेबर महोदय के सिद्वान्त में महत्वपूर्ण परिष्कार 1948 में हूवर महोदय ने अपनी पुस्तक ' लोकेशन आफ इकोनॉमिक एक्टिविटी' में किया। इन्होंने परिवहन लागत कोअधिक तर्क संगत बनानें का प्रयास किया तथा उत्पादन लागत पर भी ध्यान दिया। हूवर महोदय के अनुसार किसी उद्योग में आने वाली लागत तीन प्रकार की होती हैः

1. कच्चे माल को इकट्ठा करने वाली लागत।
2. उत्पादन प्रक्रिया संबंधी लागत।
3. उत्पादित सामग्री को बाजार में पहुँचाने की लागत।

उक्त तीनों लागत में से प्रथम और तृतीय लागत परिवहन पर आने वाली खर्च में सम्मिलित होती है। इस प्रकार से किसी उद्योग में तैयार वस्तु पर दो प्रकार का खर्च आता है। प्रथम परिवहन खर्च और दूसरा उत्पादन प्रक्रिया में लगने वाला खर्च। अतः उक्त दोनों लागतें जहाँ कम होगी वही स्थान उद्योग की स्थापना की दृष्टि से उत्तम होगा। इसका विवेचन उन्होंने निम्न प्रकार से किया है–

14.3.3.1 परिवहन लागत का प्रभाव :

हूवर महोदय के अनुसार किसी उद्योग को ऐसे स्थान पर स्थापित करना होगा जहाँ परिवहन पर खर्च न्यूनतम हो। यह दो प्रकार से हो सकता है– प्रथम कच्चे माल को एकत्र करने में लगने वाला न्यूनतम परिवहन व्यय, दूसरा उत्पादित वस्तु को बाजार तक पहुँचाने का न्यूनतम परिवहन व्यय। कच्ची सामग्री पर लगने वाला परिवहन व्यय तब न्यूनतम होगा जब उद्योग की स्थापना कच्ची सामग्री के स्रोत के जितना ही निकट होगा। उत्पादित वस्तु को बाजार तक पहुँचानेका परिवहन व्यय भी जहाँ से न्यूनतम हो।इन दोनों परस्पर विरोधी कारकोंके बीच उद्योग को संतुलन स्थापित करना होगा तभी आदर्श स्थान पर उद्योग को स्थापित किया जा सकेगा। यह संतुलन कच्ची सामग्री और उत्पादित वस्तु की विभिन्न गुणों के अनुसार विभिन्न दशाओं में विभिन्न स्थालों पर स्थापित होता है। उन्होंने दो दशाओं के आधार पर अपने सिद्धान्त की व्याख्या की हैः

एक कच्ची सामग्री एवं एक उत्पादित वस्तु की दशा –

यदि मान लिया जाय कि उद्योग में एक ही कच्ची सामग्री का उपयोग होता है जो किसी एक ही निश्चित स्रोत से प्राप्त है तथा उससे एक ही वस्तु का उत्पादन होता है जिसका बाजार एक स्थान विशेष पर केन्द्रित है, तब न्यूनतम परिवहन लागत किस स्थान पर होगाइसे अधोलिखित विवेचन से समझ सकते हैः

इसे हम चित्र 14.5 से समझ सकते है जिसमें कच्चे माल के स्रोत और बाजार बिन्दु को मिलाने वाली सीधी परिवहन मार्ग है। कच्चे माल को एकत्रित करने का परिवहन व्यय A वक्ररेखा तथा उत्पादित सामग्री को बाजार तक पहुँचाने का परिवहन व्यय B वक्र रेखा तथाCवक्र रेखा दोनों का कुल परिवहन व्यय प्रदर्शित कर रही है। इनके अनुसार परिवहन व्यय प्रति किमी0 या मील की दर से लगातार नहीं बढ़ता अपितु कई चरणों में बढ़ता है। इसीलिए चित्र में परिवहन व्यय की रेखा वक्रके रूप में नहीं बल्कि चरणबद्ध दिखाई गयी है। उदाहरण के लिए 1–5, 6–10, 11–20, 21–50 किमी0 के चरणों में प्रति इकाई वजन की दर से परिवहन का भाड़ा बढ़ता है। इसे हम ऐसे समझ सकतें है कि एक चरण के अन्तर्गत समान भाड़ा लगता है जैसे 1–5 के चरण में जितना भाड़ा 1 किमी0 की दूरी तय करने पर लगता है उतना ही 5 किमी0 की दूरी तय करने में भी लगता है।किसी वस्तु विशेष को अधिक दूर भेजने पर नजदीक की तुलना में परिवहन खर्च कम लगता है। उदाहरण के लिए किसी वस्तु को 50 किमी भेजने में जितना भाड़े की दर होती है, उसकी तुलना में 500 किमी0 भेजने पर भाड़े की दर कम होती है। इसी कारण से A,B वक्र रेखायें कई चरणों में उठती हुई प्रदर्शित हो रही है।

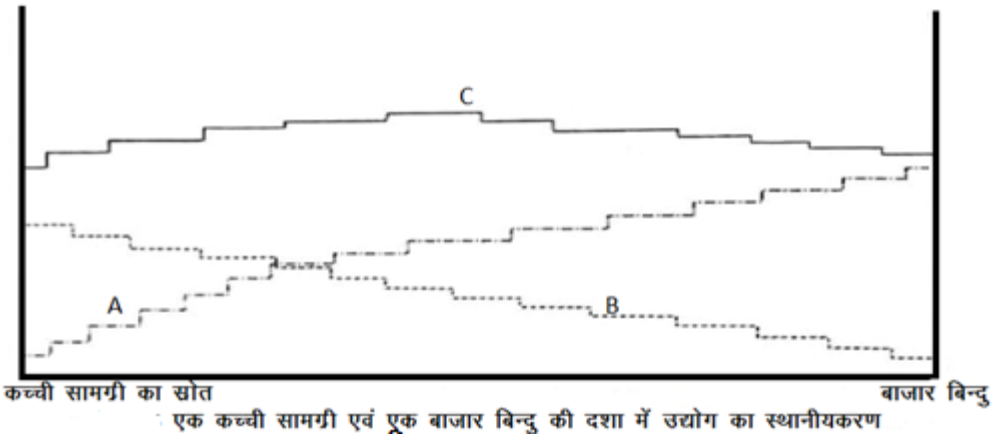

एक कच्ची सामग्री एवं एक बाजार बिन्दु की दशा में उद्योग का स्थानीयकरण

चित्र 14.5

A वक्र रेखा कच्ची सामग्री के स्रोत से बाजार बिन्दु तक जैसे–जैसे बढ़ रहा है उसकी उँचाई बढ़ रही है अर्थात उच्च परिवहन दर को प्रदर्शित कर रही है। ऐसे ही B वक्र रेखा बजार बिन्दु पर निम्नतम और दूरी के साथ कच्ची सामग्री के स्रोत की तरफ चरणबद्ध के रूप में क्रमशः बढ़ रही है।दोनो वक्र रेखाओं से स्पष्ट हो रहा है कि कच्ची सामग्री का परिवहन खर्च उत्पादित वस्तु की अपेछा अधिक है।वक्र रेखा C कच्ची सामग्री के स्रोत तथा बाजार बिन्दु के बीच कच्ची सामग्री और उत्पादित वस्तुओं का कुल परिवहन व्यय के सम्भव बिन्दुओं को दर्शा रही है। इस वक्र रेखा की न्यूनतम उँचाई कच्ची सामग्री के स्रोत पर है। ऐसी स्थिति में उद्योग की स्थापना कच्ची सामग्री के स्रोत पर लाभप्रद होगी। परन्तु यदि यह मान लिया जाय कि उत्पादित वस्तु पर परिवहन व्यय अधिक और कच्ची सामग्री पर कम लग रहा है तो न्यूनतम परिवहन लागत का बिन्दु बाजार केन्द्र पर होगा और उद्योग की स्थापना भी इसी बिन्दु पर होगी। उद्योग की स्थापना दोनो बिन्दुओं के मध्य किसी बिन्दु पर नही होगी क्योंकि वक्र रेखा Cउन्नतोदर है। अतः स्पष्ट है कि किसी उद्योग में एक कच्ची सामग्री तथा उससे उत्पादित एक ही सामग्री की दशा में परिवहन लागत की दृष्टि से उद्योग की स्थापना या तो बाजार बिन्दु पर होगी अथवा कच्ची सामग्री के स्रोत पर।

इसका एक अपवाद भी है। यदि परिवहन माध्यम एक छोर से दूसरे छोर तक समान नहीं है अर्थात बीच में किसी स्थान पर साधन बदलना पड़ता है तो ऐसी स्थिति में किस स्थान पर परिवहन लागत न्यूनतम होगा। क्योंकि दो माध्यमों का परिवहन दर भिन्न–भिन्न होता है। उदाहरण के लिए जब कच्ची सामग्री या उत्पादित वस्तु को रेल, सड़क या जल परिवहन के द्धारा ले जाया जाता है तो दो परिवहन साधनों के मिलन बिन्दु पर समान को उतारना और लादना पड़ता है। इस कारण से परिवहन व्यय के अलावा उतारने–लादनें का अतिरिक्त खर्च को भी वहन करना पड़ता है, जिससे लागत बढ़ जाती है। ऐसी दशा में यदि इस स्थान पर उद्योग की स्थापना की जाय तो अतिरिक्त खर्च से बचा जा सकता है।

दो या दो से अधिक कच्ची सामग्री एवं उत्पादित वस्तु की दशा –

यदि किसी उद्योग में दो या दो से अधिक कच्ची सामग्री का उपयोग होता है तो उद्योग की स्थापना कहाँ की जाय इसका निर्धारण कठिन हो जाता है। ऐसी स्थिति में उद्योग की स्थापना पर परिवहन

मार्गों की संरचना एवं प्रतिरूप, परिवहन मार्गों के किनारे पड़ने वाले कच्ची सामग्री के स्रोत, परिवहन मार्गों के मिलन बिन्दु एवं बाजार की क्रमिक भौगोलिक स्थिति आदि पर निर्भर करती है। इसे हम अधोलिखित उदाहरण से समझ सकते है–

चित्र 14.6 में एक कल्पित परिवहन जाल को दर्शाया गया है जिसके किनारे विभिन्न बाजार बिन्दु स्थित है। मान लिया कि किसी उद्योग में उत्पादन हेतु दो कच्ची सामग्री लोहा एवं कोयला का उपयोग होता है। लोहा A बिन्दु पर और कोयला B बिन्दु पर उपलब्ध है। यदि मान लिया जाय कि लोहा, कोयला एवं उत्पादित सामग्री का प्रति किमी0 परिवहन व्यय 2:3:4 के अनुपात में है, तो इनका आकर्षण भी उद्योग की तरफ इसी अनुपात में होगा। ऐसी स्थिति में उद्योग के स्थापना का कोई एक सर्वोत्तम स्थाननहीं होगा। अतः कच्ची सामग्री की परिवहन मार्ग के किनारे एवं बाजार की क्रमिक स्थिति के अनुसार कई स्थान उपयुक्त होंगे–

'A' बिन्दु पर उद्योग की स्थापना –

ऐसे बाजार बिन्दुओं के लिए जो A बिन्दु जहाँ पर लोहा का स्रोत उपलब्ध है, उसके आगे तथा शाखा मार्ग पर स्थित है। इनके लिए A बिन्दु पर उद्योग को स्थापित करने पर परिवहन व्यय न्यूनतम पड़ेगा। यदि उद्योग की स्थापना A तथा B के मध्य किसी स्थान पर किया जाय तो लोहा और उत्पादित वस्तु पर भी कुछ दूरी तक ढ़ोने पर परिवहन खर्च लगेगा। जबकि A बिन्दु पर उद्योग को स्थापित करने पर केवल उत्पादित वस्तु का परिवहन व्यय लगेगा।

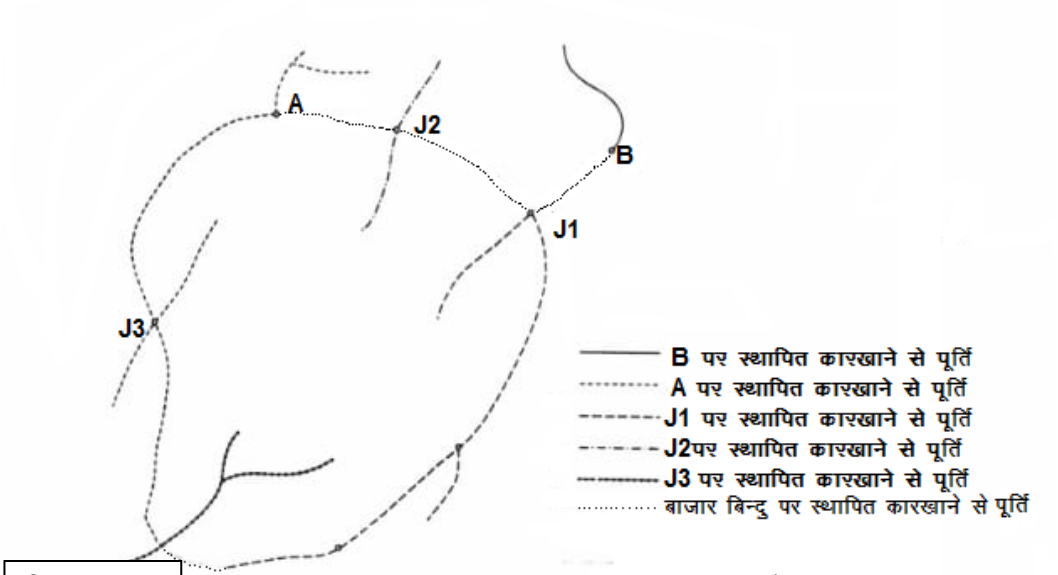

चित्र 14.6 एक से अधिक कच्ची सामग्री स्रोत, उत्पादित वस्तु तथा बाजार बिन्दु की दशा में उद्योग का स्थानीयकरण (हुवर के अनुसार)

'B' बिन्दु पर उद्योग की स्थापना –

B बिन्दु से जाने वाले शाखा मार्ग पर स्थित बाजारों के लिए यदि B बिन्दु पर उद्योग को स्थापित किया जाय तो परिवहन व्यय न्यूनतम होगा। यदि Bबिन्दु से J_1 की ओर उद्योग को स्थापित किया जाय तो कुछ दूर तक कोयला और उत्पादित सामग्री दोनों का परिवहन खर्च देना पड़ेगा।

जंक्शन बिन्दुओं J_1 ,J_2 व J_3पर उद्योग की स्थापना –

चित्र मेंJ_1 ,J_2 व J_3 जंक्शन बिन्दुओं में से किसी पर भी उद्योग की स्थापना हो सकती है। इन स्थानों में से शाखा मार्गों पर स्थित बाजारों तक सामग्री भेजनें पर न्यूनतम परिवहन भाड़ा लगेगा। इन स्थानों के अलावा किसी अन्य जगह पर उद्योग की स्थापना करने पर किसी न किसी सामग्री पर अतिरिक्त परिवहन व्यय होगा।

14.3.3.2 बाजार बिन्दु पर उद्योग की स्थापना –

चित्र में A तथा B बिन्दुओं के बीच पड़ने वाले बाजार बिन्दु पर उद्योग को स्थापित करना लाभदायक होगा। इसलिए कि यहाँ पर दोनों कच्ची सामग्रीयां विपरीत दिशाओं से आकर मिलती है, जिसके कारण परिवहन व्यय न्यूनतम होगा और उत्पादित सामग्री पर कोई परिवहन व्यय नहीं होगा। यदि बाजार के अतिरिक्त अन्य स्थान पर उद्योग को स्थापित किया जाय तो कच्ची सामग्री और उत्पादित वस्तु दोनों पर परिवहन व्यय देना पड़ेगा। बाजार केन्द्र पर उद्योग स्थापित करने पर केवल कच्ची सामग्री का ही परिवहन व्यय खर्च करना पड़ेगा।A तथा B बिन्दुओं के बीच जितने भी बाजार केन्द्र है, वहाँ परिवहन लागत की दृष्टि से उद्योग को स्थापित करना लाभप्रद होगा।

14.3.3.3 कच्ची सामग्री या वस्तु का प्रतिस्थापन

उपरोक्त विश्लेषण में कच्ची सामग्रीयों और उत्पादित वस्तु के परिवहन दरों का एक निर्धारित अनुपात है। परन्तु किसी उद्योग में उत्पादन प्रक्रिया में आवश्यक फेरबदल करके मँहगी कच्ची सामग्री का कम तथा सस्ती सामग्री का अधिक उपयोग करना संभव है। अतः कच्ची सामग्रीयों का अनुपात निर्धारित नहीं है और उनमें सापेक्षिक लागत के अनुसार उसकी मात्रा में कम–ज्यादा किया जा सकता है। इसी प्रकार से किसी उद्योग में यदि एक से अधिक वस्तुओं का उत्पादन होता है तो उनके अनुपात में परिवर्तन करके अधिक लाभदायक वस्तु का अधिक उत्पादन तथा कम लाभदायक वाली वस्तु कम उत्पादन किया जा सकता है।उद्योग में इस प्रकार के प्रतिस्थापन का प्रभाव यह होता है कि कच्ची सामग्रीयों में प्रतिस्थान की संभावना होने पर उद्योग मध्यवर्ती बिन्दुओं की अपेछा कच्ची सामग्री की स्रोत के तरफ आकर्षित होता है। जबकि उत्पादित वस्तुओं में प्रतिस्थापन की संभावना होने पर उद्योग मध्यवर्ती बिन्दुओ की अपेछा बाजार बिन्दु की तरफ आकर्षित होगा।

14.3.3.4 उत्पादन प्रक्रिया लागत तथा उद्योग का स्थानीयकरण –

अभी तक उक्त विवेचन में उद्योग के स्थानीयकरण में स्थान निर्धारण में परिवहन लागत को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। परन्तु बहुत से ऐसे उद्योग है जिनमें उत्पादन प्रक्रिया लागत का ज्यादा महत्व

होता है, जबकि उसकी तुलना में परिवहन लागत नगण्य होता है। जैसे इंजीनियरिंग उद्योग, घड़ियों एवं हीरा तराशने का काम करने वाले उद्योगों में न्यूनतम उत्पादन प्रक्रिया वाले स्थान पर इनकी स्थापना होगी क्योंकि ऐसे उद्योगों में उत्पादन प्रक्रिया पर खर्च बहुत अधिक आता है। उत्पादन प्रक्रिया लागत की तुलना में परिवहन व्यय बहुत कम होता है इसलिए इसका महत्व नगण्य होता है।

उत्पादन निमार्ण प्रक्रिया में श्रम,पूँजी,भूमि, विविध प्रकार के करआदि तत्व लागत की दर को प्रभावित करते है। ऐसे स्थान जहाँउत्पादन लागत प्रक्रिया न्यूनतम हो वहाँ पर उद्योग की स्थापना होती है। उत्पादन लागत के घटक तत्व जहाँ कम से कम मूल्य पर उपलब्ध हो वहीं पर न्यूनतम लागत आती है और घटक तत्वों की प्रति इकाई मूल्य में प्रादेशिक भिन्नता भी मिलती है। कीमत की प्रादेशिक भिन्नता घटक तत्वों की गतिशीलता पर निर्भर करता है। जैसे श्रम में पूर्ण रूप से गतिशीलता पायी जाती है एक जगह, दूसरे जगह की अपेछा अधिक मजदूरी मिलने पर श्रमिक अधिक मजदूरी वाले जगह पर चले जायेगें। इसका परिणाम यह होगा कि वहाँ अधिक श्रमिक मिलने से मजदूरी कम हो जायेगी और पहली जगह श्रमिक के अभाव में मजदूरी अधिक हो जायेगी। परन्तु विविध सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक कारणों से श्रमिक कम मजदूरी के कारण भी श्रमिक अपने घरों के नजदीक रहना चाहते है। इसी प्रकार से पूँजी और कर में भी प्रादेशिक भिन्नता बनी रहती है। अतः उत्पादन प्रक्रिया लागत के विभिन्न घटकों में प्रादेशिक भिन्नता बनी रहती है। ऐसे में अधिक उत्पादन प्रक्रिया लागत वाले उद्योगों के लिए न्यूनतम उत्पादन प्रक्रिया लागत वाले स्थान का चुनने की जरूरत होगी।

उत्पादन प्रक्रिया लागत के विभिन्न घटको की प्रादेशिक भिन्नता को इनकी मात्रा के अनुपात को घटा या बढ़ा कर अनुकूल बनाया जा सकता है। जो उत्पादन घटक अधिक महँगा अथवा दुलर्भ हो उसकी मात्रा कम तथा जो सस्ता एवं सुलभ हो उसकी मात्रा बढ़ाकर उपयोग किया जा सकता है। पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में विभिन्न उत्पादन घटकों की आदर्श स्थिति वह है कि प्रत्येक उत्पादन घटक का सीमान्त उत्पादन उसकी कीमत के अनुपात में बराबर हो। इसे हम अधोलिखित समीकरण से समझ सकते है–

A का सीमान्त उत्पादन/A की कीमत =B का सीमान्त उत्पादन/B की कीमत

यदि किसी उद्योग में वास्तविक स्थिति उक्त समीकरण के अनुसार संतुलित नहीं है तथा जिस घटक का सीमांत उत्पादन उसकी कीमत से अधिक है, तब तक बढ़ाना लाभकर होगा जब तक कि उसके मूल्य में संतुलन स्थापित न हो जाय। परन्तु वास्तविक जगत में पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति कम पायी जाती है। अतः उत्पादन प्रक्रिया लागत को कम करने के लिए उद्योग की स्थापना उस स्थान पर करनी पड़ती है जहाँ सबसे महत्वपूर्ण लागत तत्व उपस्थित है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हूवर महोदय ने वेबर के सिद्धान्त में परिमार्जन किया तथा उद्योग की स्थापना में परिवहन लागत को अधिक वास्तविक रूप में अपनाया और साथ ही उत्पादन प्रक्रिया लागत को भी महत्व दिया। उन्होनें उद्योग के स्थानीयकरण में उत्पादन लागत को संयुक्त करके इस सिद्धान्त को वास्तविकता के अधिक निकट लाने का प्रयास किया है। उत्पादन लागत को कम करने के लिए कम लागत वाले घटकों के प्रयोग पर बल दिया है। उत्पादन के कारकों को गतिशील बताया है तथा पूर्ण प्रतियोगिता की दशा में सिद्धान्त की व्याख्या की है।

14.3.4 हूवर के सिद्धान्त की आलोचना –

हूवर के सिद्धान्त की अधोलिखित आलोचना की जाती है–

- हूवर ने अपने सिद्धान्त में मांग पक्ष की क्षेत्रीय विभिन्नता पर ध्यान नहीं दिया जबकि यह उद्योग की अवस्थिति को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारण है।
- हूवर ने उद्योग के स्थानीयकरण के विश्लेषण में माना कि उत्पादन के विभिन्न घटकों में प्रादेशिक स्तर पर पूर्ण प्रतियोगिता पायी जाती है। यह विचार वास्तविकता से काफी दूर है क्योंकि यथार्थ रूप में पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति नहीं पायी जाती है।

- उद्योग में उत्पादित वस्तु के मांग में भिन्नता पाये जाने के कारण यह आवश्यक नहीं है कि न्यूनतम लागत वाला स्थान अधिकतम लाभ का भी स्थान हो, क्योंकि अधिकतम लाभ के मांग की प्रकृति संबंधी कारकों का भी प्रभाव पाया जाता है।
- विद्वानों का मानना है कि किसी उद्योग के स्थापना की सर्वोत्तम अवस्थिति वह होती है जहाँ उद्योग स्थापित होने से अधिकतम लाभ की प्राप्ति होती है।

14.4 बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त :

वेबर एवं हूवर के सिद्धान्त से भिन्न फेटर ने 1924 एवं होटेलिंग ने 1929 में बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।इन्होंने उद्योग के स्थानीयकरण में मुख्य कारक बाजार प्रतिस्पर्धा को माना है। उद्योग की स्थापना ऐसे स्थान पर होना चाहिए, जहाँ से बाजार क्षेत्र के अधिकांश भाग पर उद्योग का एकाधिकार स्थापित हो सके। होटलिंग ने इस सिद्धान्त की व्याख्या के लिए एक उदाहरण समुद्र तट पर आइसक्रीम विक्रेताओं की ली है। यदि किसी भी दर पर क्रेता निर्धारित अवधि में वस्तु विशेष की निश्चित इकाई खरीदने को तत्पर है, जैसे कि समुद्र तट पर धूप का सेवन करने वाले औसतन प्रति घण्टे एक आइसक्रीम खरीदते है।

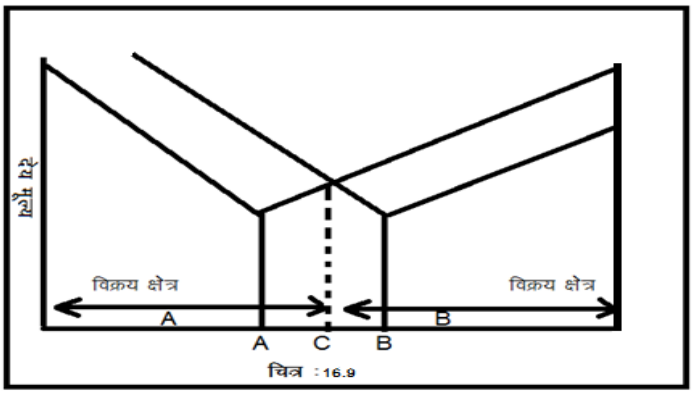

चित्र : 16.9

ऐसे में सर्वप्रथम चित्र 14.9 के अनुसार एक विक्रेता A बाजार केन्द्र में स्थापित होगा जहाँ से वह पूरे बाजार में आसानी से वस्तु को बेच सकेगा। परन्तु यदि दूसरा विक्रेता B भी प्रकट होता है तो वह

बाजार के आधे भाग पर आधिपत्य करना चाहेगा और इसके लिए वह भी बाजार केन्द्र में Aसे सटे स्थापित होगा ताकि बाजार के एक ओर अर्द्धभाग पर अधिकार कर सके।बाजार में यदि तीसरा विक्रेताC उपस्थित होता है तो उसे बाजार के केन्द्र में A और B के मध्य में स्थापित होना पड़ेगा। परन्तु उसे बाजार का कोई भी भाग उपलब्ध नहीं होगा। यदिA और Bबाजार के चतुर्थांश में स्थापित है तो तीसरे विक्रेताC को भी बाजार पर्याप्त अंश उपलब्ध हो जायेगा। होटलिंग ने सभी उत्पादको की उत्पादन लागत तथा वितरण हेतु परिवहन दर समान मानकर विश्लेषण किया है। अतः स्पष्ट है कि इस सिद्धान्त द्वारा उद्योग की स्थापना के लिए उस स्थान के चयन को बल दिया जहाँ से विस्तृत बाजार पर आधिपत्य हो सके।

14.5 समन्वित सिद्धान्त–

ग्रीनहट ने 1956 में अपनी पुस्तक 'Plant Location in Theory and Practice' में न्यूनतम लागत सिद्धान्त तथा स्थानीय अन्योन्याश्रित सिद्धान्तों का समन्वयन का प्रयास किया। किसी उद्योग के स्थानीयकरण में किसी एक कारक विशेष का निर्णायक महत्व होता है तथा गौण कारक महत्वपूर्ण कारक द्वारा इंगित कई वैकल्पिक स्थलों के चुनाव में मद्दगार होते है। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए ग्रीनहट महोदय ने उद्योगों के स्थानीयकरण में अधोलिखित सात महत्वपूर्ण कारकों को शामिल किया है–

1. स्थानीयकरण के लागत तत्व।
2. स्थानीयकरण के मांग सम्बन्धी तत्व।
3. लागत कम करने वाले तत्व।
4. मांग अर्थात आय में वृद्धि करने वाले तत्व।
5. लागत को कम करने वाले व्यक्तिपरक तत्व।
6. आय में वृद्धि करने वाले व्यक्तिपरक तत्व।
7. अत्यंत व्यक्तिपरक तत्व।

उक्त प्रथम कारक स्थानीयकरण के लागत में परिवहन तथा उत्पादन प्रक्रिया लागत तत्व सम्मिलित है। ग्रीनहट परिवहन लागत को अधिक महत्व देते है तथा इसे अन्य लागतों से विलग रखते है। उत्पादन प्रक्रिया लागत के अन्तर्गत श्रम, पूंजी आदि शामिल है। दूसरे कारक मांग सम्बन्धी तत्वों के अन्तर्गत उद्योगों के स्थानीयकरण में प्रतिस्पर्धागत व्यवस्थाओं एवं कीमत निमार्ण संबंधी कारक आते है। लागत कम करने वाले तत्वों के अन्तर्गत एकत्रीकरण जैसे कारक आते है जिनसे लागत में बचत की सम्भावना बढ़ती है। विक्रय बढ़ाने में सहायक तत्व चौथे कारक में आतें है। व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा लागत कम करने तथा विक्रय बढ़ाने में जो मदद मिलती है, वो भी उद्योग के स्थानीयकरण में महत्वपूर्ण है। उद्योग के लिए लागत कम करने में मनोवैज्ञानिक संतुष्टि प्रदान करने वाले तत्व भी महत्वपूर्ण है। इस प्रकार से उद्योग के लिए लागत को न्यूनतम करने और विक्रय को अधिकतम करने वाले की अपेछा कुल अधिकतम लाभ प्रदान करने वाले तत्वों का अधिक महत्व है।

ग्रीनहट महोदय ने आइजार्ड के आर्थिक कार्यों के स्थानीयकरण का सिद्धान्त , फान थूइनेन के कृषिगत उत्पादन सम्बन्धी सिद्धान्त तथा लॉश के षट्भुजाकार बाजार मॉडल का समन्वय करके प्रस्तुत किया है। आइजार्ड ने अपने सिद्धान्त में औद्योगिक स्थापना के लिए ऐसे बिन्दु की कल्पना करते है

जहाँ सस्तें श्रमिक, बाजार सुविधा और कम से कम चूक की सम्भावना हो। इसी प्रकार का विचार स्मिथ का भी है जिन्होंने अपनी पुस्तक औद्योगिक स्थानीयकरण (1971) में प्रतिपादित किया है। अपने सिद्धान्त के निरूपण में इन्होंने क्षेत्रीय लागत तथा आय को आधार बनाया और प्रतिपादन किया कि स्थान चयन में कुल लागत और कुल आय की क्षेत्रीय विभिन्नताओं से एक अभीष्ट बिन्दु निर्धारित होता है, जहाँ अधिकतम लाभ प्राप्त होगा।

14.6 सारांश

इस इकाई में हमने उद्योग स्थानीयकरण के सिद्धान्तों का अध्ययन किया। इमने पढ़ा कि कि वेबर महोदय ने अपने सिद्धान्त की व्याख्या परिभाषित शब्दों एवं मान्यताओं के आधार पर की है। उद्योगों की स्थापना में सर्वाधिक महत्व न्यूनतम परिवहन लागत को दिया। जिन उद्योगों में दो कच्ची सामग्रियां प्रयुक्त होती है और दोनों मिश्रित पदार्थ है तो उनके स्थान चयन के लिए स्थानीयकरण त्रिभुज का सहारा लिया।वेबर महोदय ने यह भी माना है कि उद्योग उस स्थान पर भी स्थापित हो सकता है जहां परिवहन पर खर्च जितना बढता है, उतना कम खर्च श्रम एवं एकत्रीकरण पड़ता है।

हूवर महोदय ने वेबर के सिद्धान्त में परिष्कार कर परिवहन लागत को अधिक वास्तविक रूप में अपनाया। उन्होनें बताया कि उद्योग वहां स्थापित होगा जहां परिवहन लागत एवं उत्पादन प्रक्रिया लागत न्यूनतम होगा। फेटर एवं होटलिंग ने उद्योग की स्थापना के लिए बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इनके अनुसार उद्योग को उस स्थान पर स्थापित करना लाभप्रद होगा जहां से अधिक विस्तृत बाजार पर आधिपत्य हो सके।ग्रीनहट ने समन्वित सिद्धान्त में इस तथ्य पर बल दिया कि उद्योग की स्थापना में कई तत्वों जैसे स्थानीयकरण के लागत तत्व, मांग तत्व, लागत कम करने वाले तत्व आदि का महत्व होता है। इनका यह भी मानना है कि सभी कारकों में किसी एक का विशेष महत्व होता है जबकि अन्य गौण कारक प्रमुख कारक द्वारा स्थान चयन में सहायक का काम करते है।

14.7 बोध प्रश्नः

- वेबर के उद्योग स्थानीयकरण सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।
- उद्योग स्थानीयकरण में श्रम एवं एकत्रीकरण के प्रभाव की व्याख्या कीजिए।
- हूवर के उद्योग अवस्थिति सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।
- बाजार प्रतिस्पर्धा सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।
- निम्नलिखित पर संक्षेप में लिखिए
    1. आइसोडापेन
    2. स्थानीयकरण भार
    3. सुलभ पदार्थ
    4. मिश्रित पदार्थ

14.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- सिंह, जगदीश, एवं सिंह, के.एन.(2010) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
- मौर्य, एस. डी. (2022), आर्थिक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, प्रयागराज।
- श्रीवास्तव, वी.के. एवं राव, बी.पी. (2002), आर्थिक भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर।
- गौतम, अलका, (2019) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
- अलेक्जेंडर, जे.डब्लू. (1979) इकोनॉमिक ज्योग्राफी, प्रेंटिस हाल,
- लांगमैन, जी.सी. एण्ड मार्गन, जी.सी. (1982) हयूमन एण्ड इकोनॉमिक ज्योग्राफी,आक्सफोर्ड प्रेस.

इकाई –15 स्थानीयकरण के विभिन्न तत्वों का सापेक्षिक महत्व बाजार, शक्ति, श्रम, पूंजी तथा उद्योग का स्थानीयकरण

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 उददेश्य
15.3 स्थनीयकरण के विभिन्न तत्वों का सापेक्षिक महत्व
15.4 कच्ची सामग्री का उद्योग के स्थानीयकरण पर प्रभाव
15.5 बाजार का स्थानीयकरण पर प्रभाव
15.6 उद्योगों की स्थापना पर शक्ति का प्रभाव
15.7 उद्योग के स्थानीयकरण में श्रम का प्रभाव
15.8 पूंजी तथा उद्योग का स्थानीयकरण
15.9 सारांश
15.10 बोध प्रश्न
15.11सन्दर्भ ग्रन्थ

15.1 प्रस्तावना

इस खण्ड की इकाई 13 में हमने उद्योगों के स्थानीयकरण को कौन–कौन से कारक प्रभावित करते है उनके सापेक्षिक महत्व का विवेचन किया गया है। हम पढ़गें कि कैसे कच्ची सामाग्री का स्रोत उद्योग को अपनी तरफ आकर्षित करता है। कौन सी कच्ची समाग्री पर आधारित उद्योग बाजार में स्थापित हो सकते है। हम बाजार का उद्योग के स्थानीयकरण पर प्रभाव को जान सकेगें। बाजार में कौन सी सुविधाएं है जो उद्योग की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण होती है। उद्योगों को संचालित करने में शक्ति के साधन की बड़ी भूमिका होती है इसके बारे में भी इम इस इकाई में जान सकेगें। आप यह भी पढ़गें कि श्रम की उद्योग के स्थानीयकरण में क्या भूमिका होती है। बहुत से ऐसे उद्योग है जिसमें श्रमिकों की अधिक आवश्यकता होती है ऐसे उद्योग श्रमिक बाहुल्य क्षेत्र की तरफ आकर्षित होते है। हम यह भी पढ़गें कि पूंजी का उद्योग के स्थानीयकरण में क्या योगदान है।

15.2 उददेश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेगें कि –

1. उद्योग की स्थापना में किन आधारभूत तत्वों की भूमिका होती है।
2. कच्ची सामग्री की उपलब्धता और गुण किस प्रकार से उद्योग को अपनी तरफ आकर्षित करता है।
3. बाजार एवं शक्ति के साधन की उद्योग के स्थानीयकरण में क्या भूमिका होती है।
4. श्रम और पूंजी के अनुसार कैसे उद्योग किसी प्रदेश में स्थापित होने को उन्मुख होते है।

15.3 स्थानीयकरण के विभिन्न तत्वों का सापेक्षिक महत्व

इकाई 16 में उद्योग के स्थानीयकरण के विभिन्न सिद्धान्तों के विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि उद्योगों की स्थापना में विभिन्न तत्वों की भूमिका होती है। इन तत्वों में से कुछ उद्योगों में परिवहन लागत का अधिक तो कुछ में उत्पादन प्रक्रिया लागत का प्रभाव प्रमुख रूप से पड़ता है। परिवहन लागत से अधिक प्रभावित उद्योग में कच्चे माल के स्रोत तथा बाजार के मध्यवर्ती स्थान पर जहाँ न्यूनतम परिवहन खर्च आता है, ऐसे स्थान पर उद्योग की स्थापना की प्रवृत्ति मिलती है। उत्पादन प्रक्रिया लागत से प्रभावित उद्योग ऐसे उत्पादन तत्व की तरफ आकर्षितहोते है जिस पर कुल लागत का अधिकाँश खर्च होता है। इस उद्योग के विभिन्न अनिवार्य तथा गौण तत्व विभिन्न प्रकार के उद्योगों को अपनी ओर आकर्षितकरते है।लेकिन ऐसा कोई तत्व नहीं है जो उद्योग को अपनी ओर आकृष्टि करने में सर्वथा शक्तिशाली हो। अतः उद्योग के स्थानीयकरण का सापेक्षिक महत्व समझना आवश्यक है।

15.4 कच्ची सामग्री का उद्योग के स्थानीयकरण पर प्रभाव

उद्योग की स्थापना में कच्ची सामग्री का महत्वपूर्ण स्थान होता है। उद्योग में कच्ची सामग्री का ही परिष्करण करके नई वस्तु का निमार्ण किया जाता है। कच्ची सामग्री की विशिष्टता, उत्पादन प्रक्रिया में उपयोग की विधि, उनकी प्राप्ति एवं वितरण के अनुरूप उद्योग की स्थापना होती है। कच्ची सामग्री के स्रोत की ओर उद्योग अधोलिखित दशाओं में आकर्षित होता है –

1. उत्पादन प्रक्रिया में यदि कच्ची सामग्री का वजन घट जाता है तो उद्योग की स्थापना कच्ची सामग्री के स्रोत के निकट होगी। क्योंकि कच्ची सामग्री के स्रोत पर उद्योग को स्थापित होने से अनावश्यक परिवहन व्यय खर्च नहीं करना पड़ेगा। प्राथमिक उत्पादन से प्राप्त कच्ची सामग्री जैसे कच्चा लोहा, कोयला, विभिन्न धातु खनिज, कृषि पदार्थ आदि का उपयोग करने वाले उद्योग इनके स्रोत के निकट स्थापित होते है।
2. शीघ्र नष्ट होने वाली कच्ची सामग्री का जिन उद्योगों में उपयोग होता है, ऐसे उद्योग कच्ची सामग्री के स्रोत पर स्थापित होगें। अन्यथा ऐसी सामग्री को दूर भेजने के लिए विशेष परिवहन व्यवस्था करनी पड़ती है, जिसके कारण परिवहन खर्च अधिक लगता है और लादने तथा उतारने में सामान में टूट–फूट भी हो जाता है।फल, सब्जी, दूध, गन्ना आदि पर आधारित उद्योग इनके स्रोतों के निकट ही स्थापित होते हैं।
3. ऐसी कच्ची सामग्री जिनकी प्रति इकाई कीमत कम होती है, उनका उपयोग करने वाले उद्योग स्रोत की तरफ आकर्षित होते है।कच्ची सामग्री से दूर उद्योग को स्थापित करने पर परिवहन व्यय अपेक्षाकृत अधिक पड़ता हैं। इसीलिए लोहा, तांबा, बाक्साइट आदि का उपयोग करने वाले उद्योग इनके प्राप्ति स्रोत के पास स्थापित होते है।
4. एक से अधिक कच्ची सामग्री का उपयोग करने वालेउद्योग उसमें प्रयुक्त होने वाली कच्ची सामग्री के महत्व एवं सापेक्षिक भार केअनुसार आकर्षित होगा। कच्ची सामग्री की संख्या अधिक होने से किसी एक कच्ची सामग्री कम हो जाता है। इलेक्ट्रानिक उद्योगों में कई सामग्रीयों का उपयोग होता है, जिनमें ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिसका उत्पादन प्रक्रिया भार कम होता हो। ऐसे में उद्योग कच्ची सामग्री की ओर आकर्षित नहीं होते, लेकिन यदि किसी उद्योग में एक कच्ची सामग्री के लिए सीमांत परिवहन व्यय अन्य सभी के सीमांत परिवहन व्यय से अधिक हो तो वह उद्योग उस कच्ची सामग्री की ओर आकर्षित होगा।
5. कच्ची सामग्री के स्रोत का आकर्षण किसी उद्योग के लिए उत्पादन विधि पर भी निर्भर करता है। उत्पादन विधि में परिवर्तन से उसका आकर्षण कम हो जाता है। तकनीकी प्रगति के कारण कच्ची सामग्री के स्रोत आकर्षण का उद्योगों के लिए कम होता जा रहा है। कच्चा लोहा, बाक्साइट, तांबा आदि का प्रारम्भिक परिष्कार सम्भव होने के कारण इन पर आधारित उद्योग उद्योगों का इनके स्रोतों के निकट स्थापित होना आवश्यक नहीं रहा।
6. कच्ची सामग्री के स्रोत का आकर्षण परिवहन दर की संरचना पर भी निर्भर करता है। कई भारी सामग्रियों का परिवहन दर अपेछाकृत कम होने से उनका अधिक दूर तक परिवहन सम्भव हो जाता है, जिससे उससे सम्बन्धित उद्योग स्रोत से दूर भी स्थापित हो सकते है। कोयले पर प्रति किमी0 प्रति टन

परिवहन व्यय बहुत कम होने से कोयले को अधिक दूर भेजना आसान हो जाता है। इसलिए कोयले पर आधारित उद्योग खानों से दूर स्थापित हो सकते है।

7. कच्ची सामग्री की उपयोग विधि भी उद्योग को अपनी तरफ आकर्षित करती है। तकनीकी में परिवर्तन से उत्पादन विधि में भी परिवर्तन हो जाने से कच्ची सामग्री का आकर्षण कम हो जाता है। जैसे प्राथमिक कच्ची सामग्रियों की परम्परागत परिष्कार विधि में परिवर्तन से ऐसी कच्ची सामग्रियों का आकर्षण कम हो गया है।अब लोहा, बाक्साइट, तांबा आदि का परिष्कार तकनीकी विधि से होने के कारण इनका कच्ची सामग्री के स्रोत के निकट स्थापित होना अब आवश्यक नहीं रह गया।

अतः उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उद्योग की स्थापना में किसी न किसी कच्ची सामग्री की भूमिका होती है। उद्योग के लिए कच्चे माल का सुगमतापूर्वक, कम कीमत और पर्याप्त मात्रा में अबाद रूप से आपूर्ति होना चाहिए। यही कारण है कि अधिकतर उद्योग कच्चे माल की प्राप्ति क्षेत्र में ही स्थापित होते है। जैसे जिन उद्योगों का कच्चा माल भारी एवं कीमत वजन की तुलना में कम होता है, वे कच्ची सामग्री के स्रोत्र के निकट स्थापित होते है। लौह–इस्पात, चीनी, सीमेंट आदि इसी प्रकार के उद्योग है। कीमती एवं हल्के कच्चे माल पर आधारित उद्योग को कच्चे माल के स्रोत से दूर बाजार में स्थापित किया जा सकता है।

15.5 बाजार का स्थानीयकरण पर प्रभाव

बाजार वह स्थान है जहाँ वस्तुओं का क्रय–विक्रय किया जाता है। उद्योग में उत्पादित वस्तुएँ यदि बाजार तक न पहुँचे या न खपे तो उत्पादन रूक जाता है। इसलिए उद्योगों के लिए बाजार की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। बाजारों में माँग के अनुरूप ही वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है। बाजार उद्योग को अधोलिखित दशाओं में आकर्षित करते है–

1. ऐसे उद्योग जिनसे उत्पादित वस्तु का भार व परिमाण अधिक हो या उसकी विनष्टता की संभावना अधिक होती है, तो वह बाजार की ओर अधिक आकर्षित होता है। बाजार के निकट स्थापित होने से उत्पादित वस्तु पर परिवहन व्यय की बचत होती है। शराब, कोका–कोला आदि पेय पदार्थ में पानी मिलाने के कारण भार बढ़ता है, जिसके कारण इनके उद्योग बाजार के निकट स्थापित किये जाते है।
2. उद्योगों से उत्पादित वस्तुएँ यदि सड़ने–गलने वाली हो तो ये बाजार के स्थापित किये जाते है। खाद्य–पदार्थ, आइसक्रीम आदि के उद्योग बाजार के स्थापित होते है।
3. उपभोक्ता की पसन्द एवं रीति–रिवाज से जुड़े उद्योग बाजार के निकट स्थापित होते है। उदाहरण के रूप में सिले–सिलाये कपड़ों का उद्योग में उपभोक्ताओं की पसन्द एवं बदलते फैशन का ध्यान रखना पड़ता है, जिससे ये बाजार के निकट स्थापित होते है।
4. वे उद्योग जिनसे सस्ती वस्तुओं का उत्पादन होता है, परन्तु वितरण व्यय अधिक होने के कारण कीमत बढ़ने की सम्भावना रहती है तो ऐसे उद्योग बाजार के निकट स्थापित होते है। जैसे सीमेंट के उद्योग में प्रति टन उत्पादन लागत की तुलना में वितरण व्यय अधिक होता है।
5. बाजार की भौगोलिक स्थिति के अनुरूप भी उद्योग का विकास होता है। उद्योग की स्थापना के लिए उस बाजार की क्षेत्रीय विशेषताओं को समझना आवश्यक होता है। जैसे कपड़ा बुनने वाले उद्योग की मशीनों का निमार्ण वस्त्र बुनने वाले प्रदेशों की तरफ तथा कृषि मशीनों का उद्योग भी कृषि प्रदेशों के निकट स्थापित होगा।
6. बाजार का उपभोग क्षमता भी उद्योग के स्थानीयकरण पर प्रभाव डालता है। ऐसे भी उद्योग होते है जिनसे अधिक मात्रा में ही उत्पादन लाभप्रद होता है। इनके लिए बाजार के निकट स्थापित होने पर यह ध्यान देना आवश्यक हो जाता है कि उस बाजार में कुल उत्पादन का खपत हो सकता है या नहीं।लौह–इस्पात उद्योग में यह बात लागू होती है।

अतः उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कच्ची सामग्री की तुलना में उद्योग की स्थापना पर बाजार का प्रभाव अधिक पड़ता है। क्योंकि बाजार प्रायः अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों में होते है जहाँ पूँजी, अधिक संख्या में कुशल श्रमिक एवं अन्य सुविधायें प्राप्त हो जाती है। कई उद्योगों के आस–पास स्थापित हो जाने से उद्योगों को भौगोलिक अनुसंगता तथा एकत्रीकरण–जन्य लाभ प्राप्त होता है। जिससे उद्योगों का उत्पादन लागत कम हो जाती है तथा ऐसे उद्योग के स्थापना की सम्भावना बन जाती है, जिसमें अन्य उद्योगों के अपशिष्ट वस्तुओं का कच्ची सामग्री के रूप में उपयोग होता है।यही कारण है कि कुछ

औद्योगिक नगर दिनानुदिन बड़े हो जाते है तथा कभी–कभी कई समीपवर्ती नगर मिलकर एक हो जाते है। ऐसे कुछ प्रदेश बड़े औद्योगिक प्रदेश बन गये है।

स्वतंत्रता के पूर्व भारत पहले ब्रिटेन के उद्योग का बाजार था। कच्चा माल भारत से पहले ब्रिटेन के उद्योगों के लिए जाता था और उन उद्योगों से निर्मित वस्तुएं भारत में बेंची जाती थी। लेकिन वर्तमान समय में भारत विभिन्न वस्तुओं का बड़ा उत्पादक बनता जा रहा है और यहां से उत्पादित वस्तुएं विदेशी बाजारों में अपना स्थान बना रहीं है।

15.6 उद्योगों की स्थापना पर शक्ति का प्रभाव

उद्योगों को स्थापित करने में शक्ति के स्रोत की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परन्तु उद्योगों के लिए शक्ति की मांग तथा आपूर्ति दोनों में भिन्नता मिलती है। उद्योगों में शक्ति की मांग किस रूप में तथा कितनी मात्रा में चाहिए यह उसकी आवश्यकता, शक्ति प्राप्ति की लागत तथा शक्ति स्रोत की उपलब्धता पर निर्भर करता है। कुछ उद्योग ऐसे है जिनमें केवल ताप की आवश्यकता, किसी में मशीन चलाने के लिए तो किसी में विभिन्न रासायनिक विद्युत प्रक्रिया के संचालन में जरूर पड़ती है। कोयला, पेट्रोलियम तथा जल विद्युत शक्ति प्रमुख स्रोत है जो काफी हद तक परस्पर प्रतिस्थापक भी है। लोहा–इस्पात उद्योग प्रधानतः कोयले पर निर्भर करता है। लौह इस्पात की भट्टियों के कोकिंग कोयला आवश्यक है, इसलिए इस्पात उद्योग का कोयले के निकट स्थापित होना जरूरी है। शक्ति आपूर्ति में काफी क्षेत्रीय विभिन्नता पायी जाती है। शक्ति स्रोतों का वितरण, गुणवत्ता,प्राप्ति, आपूर्ति एवं उत्पादन लागत में क्षेत्रीय भिन्नता पायी जाती है, जिसके कारण उद्योगों के स्थानीयकरण में इसका प्रभाव अलग–अलग ढ़ग से होता है।

ऐसे उद्योग जिसमें शक्ति की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है एवं उत्पादन लागत का सबसे अधिक खर्च शक्ति पर होता है तो ये शक्ति के स्रोत के पास स्थापित होते है। ताप की जिन उद्योगों में अधिक आवश्यकता होती है एवं जो इसका सीधा उपयोग करते है वे कोयला अथवा पेट्रोल के स्रोत के निकट स्थापित होते है। वे उद्योग जिनमें रासायनिक या विद्युत प्रक्रिया में शक्ति की आवश्यकता होती है उनकी स्थापना जल विद्युत स्रोत के निकट होती है। तकनीकि प्रगति एवं सड़क, रेल तथा जल परिवहन की सुविधा का विकास के कारण कोयले को दूर तक ले जाना सम्भव हुआ, जिसके कारण उद्योगों का कोयले के खानों के निकट स्थापित होना आवश्यक नहीं रहा।

तकनीकी प्रगति के कारण शक्ति के साधनों का सापेक्षिक महत्व और उनके उपयोग में परिवर्तन होता रहता है। 19वीं शदी के पूर्व शक्ति के प्रमुख साधन के रूप में लकड़ी एवं जलका उपयोग होता था। उद्योग इन्हीं स्रोतों के निकट स्थापित होते थे। 18वीं शदी के उत्तरार्द्ध में जब शक्ति के साधन के रूप में कोयले का अधिक उपयोग किया जाने लगा तो उद्योग कोयले के स्रोत के पास स्थापित होने लगे। यातायात के आधुनिक सुविधाओं के पलस्वरूप जब कोयला को दूर ले जाना सम्भव हुआ तो उद्योग का कोयले के स्रोत से दूर भी स्थापित होने लगे। बीसवीं शदी में पाइप लाईन द्धारा गैस एवं पेट्रोलियम की परिवहन सुविधा के कारण उद्योग दूर स्थापित होने लगे है। ऐसे उद्योग ही पेट्रोलियम के स्रोत के निकट स्थापित होते थे जिसमें कच्ची सामग्री के रूप में पेट्रो उत्पाद की आवश्यकता होती है। प्राकृतिक गैस का उपयोग धातुकर्मी उद्योग में किया जाता है। प्राकृतिक गैस पेट्रालियम की तुलना में सस्ती और अधिक ऊर्जा प्रदान करती है।

उद्योगों के संचालन में सर्वाधिक महत्व विद्युत शक्ति का होता है। यह मुख्यतः ताप विद्युत और जल विद्युत के रूप में प्राप्त होता है। जल विद्युत नदियों पर बांध बनाकर संयंत्र के माध्यम से पैदा की जाती है। यह शक्ति का सबसे सस्ता एवं स्वच्छ साधन है। जहां जल विद्युत शक्ति उत्पादन की आदर्श दशाएं है वहां इसका उत्पादन किया जाता है और इसके आस पास के क्षेत्रों उद्योग स्थापित कये जाते है। जैसे भाखड़ा नंगलपरियोजना, टिहरी बांध, कोयना जल विद्युत परियोजना आदि। ताप विद्युत का उत्पादन विद्युत घरों में कोयले को जलाकर किया जाता है। जहां से इसे तार और खम्भोंके द्वारा दुर्गम क्षेत्र तक पहुंचाया जाता है।विद्युत ग्रिड का विकास हो जाने से दूर दराज के क्षेत्रों में में भी विधुत पारेषण सम्भव हुआ है। अब भी जिन उद्योगों में लागत का अधिकांश भाग शक्ति पर ही व्यय होता है वे

शक्ति के स्रोत के निकट स्थापित होते है। लौह अयस्क प्रगलक, एल्यूमीनियम प्रगलक, फायरब्रिक, कृत्रिम नाइट्रेट आदि कच्चा धातु प्रगलक भट्टियां शक्ति स्रोतों के पास ही स्थापित होती है।

परमाणु ऊर्जा का भी शक्ति के साधन के रूप में उपयोग होता है। नाभिकीय रियक्टरों में यूरेनियम, थोरियम जैसे परमाणु खनिजों का विखण्डन करके परमाणु ऊर्जा प्राप्त होती है। इसके लिए अत्याधुनिक तकनीक और बड़े स्तर पर पूंजी की आवश्यकता होती है। इसका उत्पादन अधिकतर विकसित देशों में होता है, परन्तु अब भारत, चीन और अन्य देशों में इसका उत्पादन होने लगा है। बहुमूल्य वस्तुओं का उत्पादन करने वाले ऐसे उद्योग जिसे अधिक ताप की आवश्यकता होती है वे परमाणु शक्ति का उपयोग करते है।

सौर ऊर्जा का भी उपयोग बहुत से उद्योग में होता है। सौर ऊर्जा शक्ति का सबसे सस्ता, पर्यावरण अनुकूल एवं सर्वसुलभ स्रोत है। यह ऊर्जा का कभी न समाप्त होने वाला स्रोत है। यह उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र में वर्षभर सौर किरणों से प्राप्त होती है।सरकार इसके उपयोग को लेकर उद्योगों को प्रोत्साहन दे रही है। बड़े–बड़े औद्योगिक प्रष्ठिान, बैंक, होटल आदि विभिन्न उपयोग के भवनों में सौर पैनेल के माध्यम से सौर ऊर्जा का उपयोग हो रहा है।

अतः उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विविध प्रकार के उद्योगों में शक्ति के साधनों की आवश्यकता पड़ती है। उद्योग को जिस प्रकार की विद्युत की आवश्यकता होती है, उसकी स्थापना उसी प्रकार के विद्युत स्रोत के पास स्थापित होती है। विद्युत शक्ति पर आधारित वृहत् उद्योगों में लौह–इस्पात उद्योग, एल्यूमीनियम उद्योग, वस्त्र उद्योग आदि है। सभी उद्योगों के स्थापना में शक्ति एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्रोत है, जिसके बिना उद्योग की स्थापना सम्भव नहीं है।

15.7 उद्योग के स्थानीयकरण में श्रम का प्रभाव –

हमने अपने आस–पास के उद्योगों में लोगों को दिन–रात काम करते देखा होगा।श्रमिक द्वारा ही विभिन्न प्रक्रिया के माध्यम से वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है।श्रम उद्योगों का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। कच्ची सामग्री को एकत्रित करना और उसे उद्योग के स्थल तक पहुँचाना, उत्पादित पदार्थ की पैकिंग एंव बाजार तक पहुँचानें में श्रम की बड़ी भूमिका होती है। ऐसे उद्योग जिसमें श्रम की आवश्यकता अधिक होती है, वो श्रम की उपलब्धता वाले क्षेत्र की तरफ आकर्षित होते है।जिन उद्योगों में मशीन का उपयोग नहीं होता है अर्थात वस्तु उत्पादन में श्रमिक का उपयोग अधिक होता है, उनके स्थानीयकरण में श्रमिक की उपलब्धता बहुत महत्वपूर्ण होती है।हाथ से कार्य किये जाने वाले उद्योगों से वस्तुओं के उत्पादन की मात्रा तथा गुणवत्ता श्रमिकों की कुशलता पर निर्भर है। कढ़ाई–बुनाई, सिलाई, आभूषण निमार्ण आदि के निमार्ण में कुशल श्रमिकों होना आवश्यक होता है।कई उद्योग ऐसे भी है जिसमें मशीनरी का अधिक उपयोग होने के बाद भी अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होती है, जैसे सूती वस्त्र, जूट, जूते बनाने वाले उद्योग आदि।

श्रम की लागत एवं आपूर्ति में क्षेत्रीय स्तर पर भिन्नता पायी जाती है।श्रम एक गतिशील कारक है। यह गतिशीलता क्षेत्रीय एवं प्रादेशिक स्तर भिन्न–भिन्न पायी जाती है। विकसित देशों में श्रम की गतिशीलता अधिक पायी जाती जबकि अल्पविकसित देशों में गतिशीलता कम पायी जाती है। परिवहन साधनों की सुलभता के कारण श्रमिक प्रतिदिन 80–90 किमी0 दूर जाकर भी कार्य कर लेता है,जिससे क्षेत्रीय गतिशीलता अधिक पायी जाती है। जबकि अन्तर प्रादेशिक स्तर पर गतिशीलता कम पायी जाती है क्योंकि घर तथा सगे सम्बन्धियों को छोड़कर जाना पड़ता है। इसी प्रकार से एक उद्योग को छोड़कर दूसरे उद्योग में भी जाने की प्रवृति कम पायी जाती है।

उद्योग में कार्य करने वाले श्रमिक दो प्रकार के होते है– कुशल और अकुशल।ऐसे श्रमिक जो प्रशिक्षित होते है तथा तकनीकी सहयोग, प्रबन्धन, वितरण आदि कार्यों का संचालन करते है, कुशल श्रमिक के अन्तर्गत आते है।प्रशिक्षित होने के कारण इनकी मजदूरी अधिक होती है। कुशल श्रमिक की गतिशीलता अधिक पायी जाती है।अधिक मजदूरी और सुख–सुविधा के लिए ये विदेश भी चले जाते है। अकुशल श्रमिक विविध प्रकार के शारीरिक एवं भारी कार्य करते है। अप्रशिक्षित एवं अनपढ़ श्रमिक इस

वर्ग में आते है। अकुशल श्रमिक कम मजदूरी एवं सुविधा पर उपलब्ध हो जाते है।इनकी गतिशीलता कम पायी जाती है। अकुशल श्रमिकों की आवश्यकता उद्योगों के प्रकृति पर निर्भर करती है। जैसा की हमने देखा होगा कि मकानों के निमार्ण में विभिन्न प्रकार के श्रमिको में से अकुशल श्रमिक की आवश्यकता अधिक होती है।

उद्योगों में बढ़ते हुए मशीनीकरण के कारण अब कुशल श्रमिकों की आश्यकता बढ़ गयी है। इसलिए उद्योग ऐसे स्थानों पर स्थापित किये जाते है, जहां कुशल श्रमिक अधिक संख्या में कम मजदूरी पर उपलब्ध हो जाए। उद्योगों में श्रमकी लागत में केवल पारिश्रमिक ही नहीं बल्कि उत्पादन क्षमता, काम करने की प्रवृति, काम करने का औसत समय,अनुपस्थिति आदि सभी कारक आते है। ऐसा पाया गया है कि जिन प्रदेशों में मजदूरों के संगठन का अधिक विकास हुआ है वहां मजदूरी का दर उच्च पाया जाता है। जिससे उद्योगों की लागत का अधिकांश भाग श्रम पर खर्च हो जाता है। इसलिए उद्योग ऐसे क्षेत्र में स्थापित होने लगते है, जहां श्रम पर लागत कम आती है।

यूएसए में वस्त्र उद्योग का न्यू इंग्लैंण्ड से दक्षिणी राज्यों में खिसकने का एक कारण यह भी है। श्रम की आपूर्ति इस बात पर भी निर्भर करती है कि श्रमिक की उम्र, योग्यता,स्त्री–पुरूष अनुपात आदि क्या है। जिन देशों में औद्योगिक विकास उच्च स्तर का है उन देशों में उद्योगों में काम करने वाले श्रमिक कार्य में दक्ष होते है तथा अधिक से अधिक लोग इस ओर उन्मुख होते है। औद्योगिक वातावरण वाले क्षेत्र के लोगों में कृषि के क्षेत्र में कार्य करने की रूचि कम होती है। किसी उद्योग विशेष के लिए प्रशिक्षित श्रमिक की उपलब्धता सर्वत्र नहीं पायी जाती है, जिसके कारण उत्पादन लागत का अधिकांश भाग श्रम पर खर्च हो जाता है। इस अतिरिक्त खर्च से बचने के लिए ऐसे उद्योग श्रम की उपलब्धता के निकट स्थापित होते है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उद्योगों में यंत्रीकरण में दिन प्रतिदिन वृद्धि हो ती जा रही है, परन्तु उद्योगों में श्रमिको का महत्व कम नहीं हुआ है। श्रमिकों का उचित दर पर उपलब्ध न होने से उद्योग का विकास नहीं हो सकता है। उद्योगों में अत्याधुनिक मशीनों के उपयोग से कुशल श्रमिकों की मांग बढ़ गयी है। उद्योगों की स्थापना के श्रम का सामीप्य होना महत्वपूर्ण कारक है। भारत में अभी भी सस्ते एवं कुशल श्रमिक उद्योग की स्थापना में मुख्य तत्व बने हुए है।

15.8 पूंजी तथा उद्योग का स्थानीयकरण

हमने देखा होगा कि उद्योग को स्थापित करने के लिए पूंजी की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। यह उद्योग का अनिवार्य तत्व है, जिसका प्रभाव उद्योग की स्थापना से लेकर उत्पादन प्रक्रिया तक पर पड़ता है।उद्योग के आकार–प्रकार एवं प्रकृति के अनुसार पूंजी की आवश्यकता होती है। लघु आकर के उद्योग को स्थापित करने में कम पूंजी तथा वृहत् आकार के उद्योग को स्थापित एवं संचालित करने के लिए अधिक पूंजी की आवश्यकता होती है।उद्योग के लिए उपयुक्त भूमि क्रय करना, भवन निमार्ण, मशीनरी, शक्ति के साधन, कच्चे माल, श्रमिकों को मजदूरी, परिवहन व्यवस्था आदि के लिए बड़े स्तर पर पूंजी की आवश्यकता होती है। चूंकि उद्योगपति नगरों तथा महानगरों में रहते है जिसके कारण नगरों उद्योग को स्थापित करने के लिए पर्याप्त पूंजी की सुलभता रहती हैपरन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में पूंजी का अभाव पाया जाता है।

उद्योगों के लिए पूंजी जहां कम ब्याज पर उपलब्ध हो जाती हैवहां उत्पादन लागत कम आता है, जबकि जहां अधिक ब्याज पर पूंजी उपलब्ध होती है वहां उत्पादन लागत अधिक आता है। बैकिंग प्रणाली के विकास के पहले पूंजी का प्रबन्ध महाजनों से सूद लेकर करना पड़ता था जिससे कारण पूंजी अधिक गतिशील नहीं थी। बैकिंग प्रणाली के विकास एवं सरकार की नीतियों से उद्योग को स्थापित करने के लिए पूंजी की उपलब्धता आसानी से हो जाती है। इस कारण से पूंजी अब अधिक गतिशील हो गयी है और इसकी आपूर्ति में प्रादेशिक भिन्नता कम पायी जाती है। विकसित देशों के औद्योगिक तंत्रों में पूंजी अधिक गतिशील होती है, जिसके कारण उद्योग के स्थानीयकरण में इसका बहुत योगदान नहीं रहता

जबकि अविकसित देशों में पूंजी के कम गतिशील होने के कारण उद्योग स्थापना में महत्वपूर्ण स्थान होता है।

उद्योगों में लगी पूंजी दो प्रकार की होती है–प्रथम भारी मशीनरी, भवन, परिवहन के साधन आदि के रूप में अचल पूंजी एवं द्वितीय चल पूंजी जो एक बार उत्पादन प्रक्रिया काम में आती है जैसे कच्चा माल, कोयला, मजदूरी आदि। बैकिंग प्रणाली, ब्याज दर, सरकारी नीतियों आदि का प्रभाव पूंजी की उपलब्धता पर पड़ता है।उद्योग के स्थानीयकरण के अन्य कारकों की अपेछा पूंजी अधिक गतिशील होती है। जिसके कारण वर्तमान समय में पूंजी के स्थानीयकरण में पूंजी का महत्व कम होता जा रहा है। 1990 के दशक में भूमण्डलीकरण की प्रवृत्ति के कारण अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक रूप से पूंजी का निवेश होने लगा। आर्थिक रूप से पिछड़े देशों में विदेशी कम्पनियां पूंजी का निवेश करने लगी। आज के समय में कई वैश्विक संस्थाएं औद्योगिक विकास के लिए पूंजी उपलब्ध करा रही है।

15.9 सारांश

हमने इस इकाई में उद्योग के स्थानीयकरण में विभिन्न तत्वों के सापेक्षिक महत्व के बारे में समझा है।उद्योग मे सबसे पहले आवश्यकता कच्चे माल की होती है, क्योंकि उसी के रूप परिवर्तनद्धारा ही नवीन वस्तु का निमार्ण होता है। इसलिए कच्ची सामग्री का स्रोत उद्योग को अपनी तरफ आकर्षित करता है। उद्योग स्थानीयकरण में दूसरा सबसे अधिक महत्व बाजार का होता है। बाजार में ही उद्योग में उत्पादित वस्तुओं का क्रय–विक्रय होता है। इसके अलावा अन्य सुविधायें भी बाजार उद्योग को उपलब्ध कराती है। उद्योग में मशीनों को चलाने के लिए पर्याप्त तथा अबाधित रूप से विद्युत की आवश्यकता होती है। उद्योग का आकार जितना बड़ा होता है उसे उतना ही अधिक शक्ति साधनों की आवश्यकता है। इसलिए जहां शक्ति के साधन की उपलब्धता होती है,ऐसे स्थान उद्योग की स्थापना के लिए उपयुक्त होते है। उद्योग के लिए श्रमिक भी अनिवार्य तत्व है।उद्योगों में भले ही मशीनों का अधिकाधिक उपयोग होने लगा है परन्तु उसको संचालित करने के लिए कुशल श्रमिक की आवश्यकता होती है। श्रम प्रधान उद्योग को श्रम की उपलब्धता वाले क्षेत्रों की ओर आकर्षित होते है। उद्योग की स्थापना के लिए सबसे पहले पूंजी का प्रबन्ध करना होता है। उद्योग के आधारभूत तत्वों के लिए पर्याप्त मात्रा में पूंजी का निवेश करना होता है।

15.10 बोध प्रश्न

- उद्योग के स्थानीयकरण पर कच्चे माल के प्रभाव की व्याख्या कीजिए।
- उद्योगों के लिए शक्ति के साधनों के महत्व का वर्णन कीजिए।
- उद्योग की स्थापना में बाजार एवं पूंजी की भूमिका पर चर्चा कीजिए।
- उद्योग के लिए श्रम की उपयोगिता का वर्णन कीजिए।

15.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

- **सिंह, जगदीश, एवं सिंह, के.एन.(2010) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।**
- **मौर्य, एस. डी. (2022), आर्थिक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, प्रयागराज।**
- **श्रीवास्तव, वी.के. एवं राव, बी.पी. (2002), आर्थिक भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर।**
- **गौतम, अलका, (2019) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।**
- **अलेक्जेंडर, जे.डब्लू. (1979) इकोनॉमिक ज्योग्राफी, प्रेंटिस हाल,**
- **लांगमैन, जी.सी. एण्ड मार्गन, जी.सी. (1982) हयूमन एण्ड इकोनॉमिक ज्योग्राफी,आक्सफोर्ड प्रेस.**

इकाई –16 विश्व के औद्योगिक प्रदेश– यूरोपीय समुदाय के औद्योगिक प्रदेश, अमेरिका के औद्योगिक प्रदेश एवंजापान के औद्योगिक प्रदेश

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 औद्योगिक प्रदेश :
16.3.1 औद्योगिक प्रदेश की विशेषताएं
16.4 औद्योगिक प्रदेशों का सीमांकन
16.4.1 कारखानों की संख्या
16.4.2 कर्मचारियों की संख्या
16.4.3 उत्पादन में लगे श्रमिकों की संख्या
16.4.4 उद्योग में लगे श्रमिको का कुल जनसंख्या से अनुपात
16.4.5 ऊर्जा की मात्रा
16.4.7 मूल्य सम्बन्धी आँकड़े
16.4.8 उत्पादन प्रक्रियाजन्य मूल्य वृद्धि
16.5 औद्योगीकरण का स्तर निर्धारित करने की विधियाँ
16.6 विश्व के औद्योगिक प्रदेश
16.7 यूरोपीय समुदाय के औद्योगिक प्रदेश
16.7.1 उत्तरी सागर के तटवर्ती औद्योगिक प्रदेश
16.7.1.1 यूनाइटेड किंगडम के औद्योगिक प्रदेश
16.7.1.2 आन्तरिक मध्यदेशीय औद्योगिक प्रदेश
16.7.1.3 उत्तरी पूर्वी औद्योगिक प्रदेश
16.7.1.4 दक्षिणी वेल्स प्रदेश
16.7.1.5 स्काटलैण्ड घाटी औद्योगिक प्रदेश
16.7.1.6 पेरिस औद्योगिक प्रदेश
16.7.1.7 फ्लैण्डर्स औद्योगिक प्रदेश
16.7.1.8 एम्सटर्डम–राटरडम औद्योगिक प्रदेश
16.7.2 भूमध्य सागर तटवर्ती औद्योगिक प्रदेश
16.7.3 आन्तरिक औद्योगिक प्रदेश
16.7.3.1 रूर औद्योगिक प्रदेश :
16.7.3.2 साम्ब्रे–कैम्पाइन औद्योगिक प्रदेश :
16.7.3.3 ऊपरी राइन औद्योगिक प्रदेश :
16.7.3.4 लोरेन–सार औद्योगिक प्रदेश :
16.7.3.5 उत्तरी इटली का औद्योगिक प्रदेश :
16.7.3.6 दक्षिण स्कैण्डेनेविया औद्योगिक प्रदेश :
16.7.4 अन्य छिटपुट औद्योगिक प्रदेश
16..8 उत्तरी अमेरिका के औद्योगिक प्रदेश

16.8.1 न्यूइंग्लैण्ड औद्योगिक प्रदेश
16.8.2 मध्य अटलांटिक तटीय प्रदेश
16.8.3 दक्षिणी अप्लेशियन औद्योगिक प्रदेश
16.8.4 न्यूयार्क प्रदेश
16.8.5 महान झील औद्योगिक प्रदेश
16.8.6 ओहियो–इण्डियाना प्रदेश
16.8.7 मध्यवर्ती मैदानी औद्योगिक प्रदेश
16.8.8 खाड़ी तटीय औद्योगिक प्रदेश
16.8.9 राकी पर्वतीय औद्योगिक प्रदेश
16.8.10 प्रशान्त महासागर तटीय औद्योगिक प्रदेश
16.9 जापान के औद्योगिक प्रदेश
16.9.1 क्वातों का औद्योगिक प्रदेश
16.9.2 किंकी का औद्योगिक प्रदेश
16.9.3 नगोया औद्योगिक प्रदेश
16.9.4 किता–क्यूशू औद्योगिक प्रदेश
16.9.5 अन्य औद्योगिक क्षेत्र
16.10 सारांश
16.11 बोध प्रश्न
16.12 वस्तुनिष्ठ प्रश्न
16.13 संदर्भ ग्रंथ

16.1 प्रस्तावना :

अभी तक हमने इकाई 13 से 15 तक के अन्तर्गत उद्योग, उद्योग स्थानीयकरण के सिद्धान्त एवं उद्योग के स्थानीयकरण में विभिन्न क्षेत्रों के सापेक्षिक महत्व के बारे अध्ययन किया है। इस इकाई में हम विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों से निर्मित विशिष्ट आर्थिक प्रदेशों के बारे में पढ़ेगें।

16.2 उद्देश्य :

इस इकाई हम विश्व के औद्योगिक प्रदेश की चर्चा करेगें, जिसके अध्ययन के पश्चात आप–

1. औद्योगिक प्रदेश किसे कहते है इसके बारे में जान सकेगें।
2. औद्योगिक प्रदेशों की विशेषताओं को समझ सकेगें।
3. औद्योगिक प्रदेशों का निर्धारण करने वाले तत्वों के बारे में जान सकेगें।
4. औद्योगिक प्रदेशों के सीमांकन की विधियों को जान सकेगें।
5. विश्व के प्रमुख औद्योगिक प्रदेशों के बारे में चर्चा करेगें।

16.3 औद्योगिक प्रदेश :

औद्योगिक प्रदेश से तात्पर्य ऐसे विस्तृत भू–क्षेत्र से है जहाँ विविध श्रृंखलाबद्ध उद्योगों के अनेक कारखाने संकेन्द्रित पाये जाते है। इस प्रदेश का विकास उद्योग के लिए आदर्श परिस्थितियों वाले क्षेत्र पर होता है। औद्योगिक प्रदेश में विनिमार्ण उद्योग बड़े पैमाने पर संचालित होते है। यहाँ पर निवास करने वाली जनसंख्या का मुख्य आर्थिक कार्य कच्ची सामाग्री को संसाधित करना और उनसे परिष्कृत सामग्री का

निमार्ण करना है। औद्योगिक प्रदेश में कारखानों की संख्या की अपेछा उद्योगों की श्रृखलाबद्धता का अधिक महत्व होता है, जिसके चलते औद्योगिक भूदृश्य उभरते है। औद्योगिक प्रदेश के लिए औद्योगिक भूदृश्य का विकसित होना आवश्यक होता है। कारखानों, धुआँकश चिमनियों, परिवहन मार्गों, गोदाम व कार्यालयों के भवन, श्रमिकों के आवास, चारो तरफ कच्चे माल और कचरे का अम्बार आदि से औद्योगिक भूदृश्यों का विकास होता है।

16.3.1 औद्योगिक प्रदेश की विशेषताएं :

औद्योगिक प्रदेशों की अधोलिखित विशेषताएं पायी जाती है–

1. औद्योगिक प्रदेश की मुख्य विशेषता निमार्ण उद्योगों की प्रधानता है तथा अधिक मात्रा में कारखानों की संख्या और कार्यरत जनसंख्या का अधिकांश भाग द्वितीयक कार्यों में संलग्न पायी जाती है।
2. औद्योगिक प्रदेशों में द्वितीयक एंव तृतीयक वर्ग के व्यवसायाओं समूहन पाया जाता है।
3. नगरों के विकास में कारखानों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कारखानें जहाँ स्थापित होते है उसमें काम करने वाले श्रमिकों के आवास तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नगरों का विकास प्रारम्भ हो जाता है।
4. औद्योगिक प्रदेशों की अधिकांश जनसंख्या नगरों में निवास करती है, क्योंकि उद्योग और नगर आपस में धनिष्ट रूप से सम्बन्धित होते है।
5. औद्योगिक प्रदेशों में परिवहन मार्गों का घना–जाल पाया जाता है।
6. उद्योग परस्पर एक–दूसरे से सम्बन्धित होते है। इन सम्बन्धों में श्रृखलाबद्धता पायी जाती है।
7. औद्योगिक प्रदेश में सर्वत्र कारखानें, धुंये की चिमनियां, श्रमिकों के आवास, रेलयार्ड, मोटरगाड़ियां आदि तथा कई सन्नगर दिखाई देते है।

16.4 औद्योगिक प्रदेशों का सीमांकन :

औद्योगिक प्रदेशों का सीमांकन करने के लिए उन भूक्षेत्रों को शामिल किया जाता है जहाँ समान स्तर से औद्योगीकरण हुआ हो। औद्योगीकरण का स्तर एवं उसकी मात्रा ज्ञात करने के लिए विभिन्न मानदण्डों का उपयोग किया जाता है। इसके लिए कारखानों की संख्या, कर्मचारियों की संख्या, उत्पादन में लगे व्यक्तियों की संख्या, उद्योग में लगे कुल श्रमिकों की संख्या का कुल जनसंख्या से अनुपात, ऊर्जा की खपत, औद्योगिक उत्पादन, उत्पादन प्रक्रियाजन्य मूल्य वृद्धि एवं मूल्य सम्बन्धी आँकड़ों का उपयोग किया जाता है। सभी कारकों का मूल्यांकन कर औद्योगिक प्रदेशों का सीमांकन किया जाता है। इन कारको विवेचन अधोलिखित है–

16.4.1 कारखानों की संख्या :

औद्योगीकरण के स्तर का सबसे सरल मापक है कारखानों की संख्या। अधिक मात्रा में कारखानों की संख्या का पाया जाना उच्च औद्योगीकरण के स्तर को दर्शाता है। परन्तु दो क्षेत्रों में कारखानों की संख्या समान पाये जाने पर यह नहीं कहा जा सकता कि औद्योगीकरण का स्तर समान है, क्योंकि उत्पादन की मात्रा में अंतर पाया जा सकता है। इसलिए कारखानों की संख्या केवल स्थूल माप के लिए है, वास्तविक माप के लिए नहीं।

16.4.2 कर्मचारियों की संख्या :

कारखानों में कार्यरत कर्मचारियों की संख्या कारखानों की संख्या की अपेछा औद्योगीकरण के स्तर निर्धारित करने में अधिक उपयुक्त है। इसके आँकड़े भी आसानी से प्राप्त हो जाते है। परन्तु इस मापक का सबसे बड़ा दोष यह है कि किन्हीं दो कारखानों में कर्मचारियों की संख्या समान होने पर भी उत्पादन बराबर नहीं हो सकता। क्योंकि यंत्रीकृत कारखानों में कर्मचारियों की कम संख्या होने के बावजूद भी उत्पादन अधिक होता है और श्रम प्रधान कारखानों में कर्मचारियों की अधिक संख्या के बावजूद भी उत्पादन कम होता है। इसलिए औद्योगीकरण के स्तर के मापन के लिए बहुत उपयुक्त नहीं है।

16.4.3 उत्पादन में लगे श्रमिकों की संख्या :

इसके अन्तर्गत कारखाने में केवल उत्पादन कार्य में लगेश्रमिकों की संख्या का उपयोग किया जाता है। उत्पादन में सहायक लिपिक, व्यवस्थापक आदि कर्मचारियों को इसमें सम्मिलित नहीं किया जाता है। किन्तु कुछ विद्धानों का मत है कि ऐसे कर्मचारी भी अप्रत्यक्षरूप से उत्पादन कार्य में सहयोग देते है। परन्तु इसके बावजूद भी श्रमिकों की संख्या में समानता के स्थिति में भी उत्पादन की मात्रा में अंतर पाया जाता है। अतः यंत्रीकरण की भिन्नता के कारण उत्पादन की मात्रा और औद्योगीकरण के स्तर में अंतर पाया जाता है।

16.4.4 उद्योग में लगे श्रमिको का कुल जनसंख्या से अनुपात :

किसी क्षेत्र में कार्यशील जनसंख्या में से कितनी प्रतिशत जनसंख्या कारखानों में कार्यरत है, इसके आधार परऔद्योगीकरण के स्तर का सही अनुमान लगाया जा सकता है। इसके द्धारा औद्योगिक क्रियाकलापों की गहनता का पता चलता है। परन्तु इसके उपयोग को लेकर सावधानी बरतने की जरूरत पड़ती है। क्योंकि मान लीजिए किसी क्षेत्र में 200 व्यक्ति रोजगार में लगे है और उनमें से 180 व्यक्ति कारखानों में काम करते है तथा दूसरे क्षेत्र में 500 व्यक्ति रोजगार में लगे है तथा उनमें से 250 व्यक्ति कारखानों में कार्य करते है। इस प्रकार पहले क्षेत्र में 90 प्रतिशत तथा दूसरे क्षेत्र में 50 प्रतिशत व्यक्ति उद्योग में कार्य कर रहे है। अतः पहले क्षेत्र के औद्योगीकरण का स्तर उच्च तथा दूसरे क्षेत्र का निम्न होगा। जबकि पहले क्षेत्र में केवल 90 व्यक्ति ही उद्योग मे कार्य कर रहे जो यह बताता है कि यहाँ औद्योगीकरण का स्तर दूसरे क्षेत्र की अपेछा निम्न स्तर का है। इसलिए इस मापक का उपयोग करते समय एक न्यूनतम संख्या का निर्धारण करना आवश्यक हो जाता है जिससे कि सम्पूर्ण रोजगार में लगे लोगों की संख्या कम होने पर प्रतिशत के आधार पर तुलना नहीं की जा सके।

16.4.5 ऊर्जा की मात्रा :

औद्योगीकरण का स्तर ज्ञात के लिए उद्योग में प्रयुक्त ऊर्जा की मात्रा का भी उपयोग किया जा सकता है। इस मापक का उपयोग करने से ऊर्जा से संचालित उद्योगों का महत्व बढ़ जाता है तथा श्रम प्रधान उद्योगों का सापेक्षिक महत्व कम हो जाता है। परन्तु किसी उद्योग में उपयोग की जाने वाली शक्ति की कुल मात्रा के आँकडों को प्राप्त करना कठिन कार्य होता है, क्योंकि ऊर्जा विभिन्न स्रोत्रों से प्राप्त होती है।

16.4.6 औद्योगिक उत्पादन की मात्रा :

कुल औद्योगिक उत्पादन की मात्रा का भी औद्योगीकरण स्तर निर्धारण करने में किया जाता है। समान प्रकार के उद्योग के लिए इस मापक का प्रयोग सुगम होता है, परन्तु भिन्न प्रकार की वस्तुओं के उत्पादन करने वाले उद्योगों के लिए इस मापक का उपयोग करना कठिन हो जाता है। उदाहरण के तौर पर किसी उद्योग से इस्पात जैसी भारी वस्तु का उत्पादन होता है तो किसी से वस्त्र जैसी हल्की वस्तु का। इन दोनों वस्तुओं के उत्पादन में तुलना करना सम्भव नहीं है। अतः एक ही प्रकार के उद्योग के लिए यह मापक अधिक उपयोगी है।

16.4.7 मूल्य सम्बन्धी आँकड़े :

अन्य मापकों के उपयोग में आने वाली समस्याओं को दूर करने के लिए मूल्य सम्बन्धी आँकड़ों का उपयोग किया जाता है। कच्ची सामग्री, श्रम, पूंजी तथा उत्पादन के मूल्य सम्बन्धी आँकड़ों का उपयोग किया जाता है। कच्ची सामग्री के मूल्य से भी औद्योगीकरण के स्तर का सही अनुमान नहीं होता। यदि किसी क्षेत्र में अधिक कच्ची सामग्री का उपयोग होता है तो वहाँ कम कच्ची सामग्री का उपयोग करने वाले क्षेत्र की अपेछा औद्योगीकरण का उच्च स्तर नहीं माना जा सकता है, क्योंकि उन्नत तकनीक के उपयोग के द्वारा कम कच्ची सामग्री या निम्न किस्म की कच्ची सामग्री से भी अधिक उत्पादन हो सकता है। उद्योग में मजदूरी अथवा वेतन पर खर्च होने वाले मूल्य सम्बन्धी आँकड़े का भी उपयोग होता है परन्तु इससे यांत्रिक शक्ति की विभिन्नताजन्य कठिनाई का निवारण नहीं होता है। पूँजी की मात्रा अधिक उपयोगी मापक है परन्तु यदि किसी उद्योग में लगने वाली पूँजी सक्रिय नहीं है या दूसरे उद्योग की अपेछा कम सक्रिय है तो इससे उद्योग के सही स्तर का पता नहीं लग पाता है। कुल उत्पादन का मूल्य सबसे उपयुक्त मापक है पर एक ही वस्तु का विभिन्न उद्योगों में उत्पादन लागत में काफी भिन्नता पायी जाती है।

16.4.8 उत्पादन प्रक्रियाजन्य मूल्य वृद्धि :

औद्योगीकरण के स्तर के निर्धारण में सबसे सार्थक और विश्वसनीय मापक उत्पादन प्रक्रियाजन्य मूल्य वृद्धि है। किसी उद्योग में उत्पादित वस्तु के लागत में से कच्ची सामग्री का मूल्य घटा देने पर उत्पादन प्रक्रियाजन्य मूल्य प्राप्त होती है। उद्योग से वस्तु के उत्पादन की विभिन्न प्रक्रिया के कारण कच्ची सामग्री के मूल्य जो वृद्धि होती है उसे उत्पादन प्रक्रियाजन्य मूल्य वृद्धि कहते है। इस मापक के उपयोग से दो उद्योगों या दो क्षेत्रों के औद्योगीकरण के वास्तविक स्तर की तुलना की जा सकती है। परन्तु इस मापक के उपयोग में कठिनाई आँकड़ों का सुगमता से प्राप्त न होना है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि औद्योगिक प्रदेशों के सीमांकन में सभी मापकों की सीमायें है जिसके कारण प्रत्येक मापक उद्योग के किसी न किसी मापन में सहायक है। इसलिए औद्योगीकरण के स्तर के मापन में सभी का सम्मिलित रूप से उपयोग किया जाता है।

16.5 औद्योगीकरण का स्तर निर्धारित करने की विधियाँ :

अभी तक हमने पढ़ा कि औद्योगिक प्रदेश के सीमांकन में विभिन्न मापकों का उपयोग किया जाता है। अब आगे हम पढ़गें कि इन मापको का उपयोग किन विधियों द्वारा करके औद्योगीकरण के स्तर का निर्धारण करके औद्योगिक प्रदेश का सीमांकन किया जाता है।

इस दिशा में **स्टेन द गियर** ने 1927 में संयुक्त राज्य अमेरिका के 10,000 से अधिक जनसंख्या वाले नगरों में उद्योग में कार्य करने वाले मजदूरों की संख्या के आधार पर औद्योगीकरण का स्तर निर्धारित करने का कार्य किया था। **अल्फ्रेड राईट** ने 10,000 से अधिक जनसंख्या वाले नगरों में उत्पादन प्रक्रियाजन्य मूल्य वृद्धि का उपयोग कर औद्योगीकरण के स्तर का निर्धारण किया था। हेलेन स्ट्रांग ने उद्योगों में प्रयुक्त शक्ति को अश्व शक्ति में परिवर्तित कर ऑकड़ों को प्राप्त करके औद्योगीकरण के स्तर का निर्धारण किया। किसी एक मापक तत्वों का प्रयोग कर औद्योगीकरण स्तर निर्धारित करने में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए सी0एफ0जोन्स ने कई मापक तत्वों का एक साथ एक उपयोग किया। उन्होनें काउन्टी के औद्योगीकरण स्तर का निराकरण लिए श्रम की संख्या, शक्ति की मात्रा एवं उत्पादन प्रक्रियाजन्य मूल्य वृद्धि को दर्शाने वाले ऑकड़ों के आधार पर अलग–अलग मानचित्र बनाया। फिर तीनों मानचित्रों को एक दूसरे के ऊपर रखकर ऐसे क्षेत्रों को सीमांकित किया जो तीनों मापक तत्वों का दर्शाता है। यद्यपि इस दौरान कम महत्व वाले कुछ औद्योगिक क्षेत्र छूट गये परन्तु 95 प्रतिशत उद्योग सम्मिलित हो गये।

रिचर्ड हार्टशोर्न ने औद्योगीकरण स्तर का निर्धारण करने के लिए विभिन्न मापकों का उपयोग आनुपातिक विधि से किया है। इस विधि में किन्हीं दो मापकों जैसे रोजगार में लगे लोग एवं उद्योग में लगें लोगों का अनुपात के उपयोग ऐसे क्षेत्र उभड़ कर आ जाते है जहाँ अधिक औद्योगीकरण हुआ है। इसी प्रकार से किन्हीं दो अन्य मापकों का आनुपातिक विधि का उपयोग करते हुए औद्योगीकरण का स्तर ज्ञात किया जा सकता है। **थॉम्पसन** ने बहु–तात्विक मापक विधि का उपयोग औद्योगीकरण की गहनता एवं परिमाण को ज्ञात करने में किया है। इसके लिए सर्वप्रथम पचास चुने हुए मेट्रोपोलिटन क्षेत्रों के लिए प्रत्येक मापक तत्व का औसत निकाला। पुनः प्रत्येक मापक तत्व के लिए औसत 100 मानकर अलग–अलग मेट्रोपोलिटन क्षेत्रों के लिए प्रत्येक मापक तत्व के परिमाण का सूचकांक ज्ञात किया। इसे हम एक उदाहरण से समझ सकते है – उद्योग में यदि औसत रूप से 50,000 लोग काम करते है। किसी मेट्रोपोलिटन क्षेत्र में यदि केवल 25,000 उद्योग में कार्य करने वाले लोग है तो उनका सूचकांक 50 हुआ तथा जहाँ 28,000 लोग उद्योग में काम करने वाले है उनका सूचकांक 56 होगा। इसी प्रकार प्रत्येक मेट्रोपोलिटन क्षेत्र के लिए तीनों मापक तत्वों का सूचकांक निकाल कर उनके योग को तीन से विभाजित करके बहु–तात्विक मापक आधार ज्ञात कर लिया जाता है। यदि किसी मेट्रोपोलिटन क्षेत्र में उद्योग में कार्य करने वालों की संख्या का सूचकांक 50, मजदूरी सूचकांक 45 तथा उत्पादन–प्रक्रियाजन्य मूल्य वृद्धि सूचकांक 55 हुआ तो तीनो मान का योग कर 3 से भाग देने पर बहु–तात्विक मापक आधार 50 होगा। इसी प्रकार प्रत्येक मेट्रोपोलिटन क्षेत्र में उद्योग की गहनता ज्ञात करने के लिए इस विधि का उपयोग कर बहुतात्विक आधार मापक ज्ञात कर लेते है।

उक्त वर्णित विधियों का उपयोग कर औद्योगिक प्रदेशों का निर्धारण किया जाता है। इसके लिए विभिन्न क्षेत्रों के औद्योगीकरण के स्तर, उद्योग की गहनता एवं परिमाण सूचकांक ज्ञात करके उन सभी संलग्न क्षेत्रों को एक औद्योगिक प्रदेश में सम्मिलित करते है जिनमें समान स्तर का औद्योगीकरण क्षेत्र हो, लेकिन इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि इस क्षेत्र में औद्योगिक भूदृश्य पूर्णतः विकसित दशा में पाया जाता हो। इसके साथ ही औद्योगिक प्रदेशों के विश्लेषण में उद्योगों के केन्द्रीकरण का स्तर, स्थानीयकरण लब्धि, स्थानीयकरण गुणांक, स्थानीयकरण–वक्र एवं विशेषीकरण का गुणांक सम्बन्धी सूचकांको का भी उपयोग किया जाता है।

16.6 विश्व के औद्योगिक प्रदेश :

आधुनिक उद्योगों के विकास के साथ ही औद्योगिक प्रदेश का विकास प्रारम्भ हुआ। विश्व स्तर पर औद्योगिक प्रदेशों का वितरण बहुत असमान पाया जाता है। उद्योगों का केन्द्रीकरण वृहत् क्षेत्र पर विश्व के केवल कुछ ही क्षेत्रों में पाया जाता है। औद्योगिक विकास के स्तर, निमार्ण उद्योगों के उत्पादन की मात्रा, उद्योगों में संलग्न जनसंख्या का प्रतिशत तथा अन्य विशेषताओं के आधार पर विश्व को प्रमुख औद्योगिक प्रदेश और गौण औद्योगिक प्रदेशों में बाँटा जाता है–

प्रमुख औद्योगिक प्रदेश : 1. उत्तरी अमेरिका का मध्य पूर्वी भाग 2. पश्चिमी तथा मध्य यूरोप 3. रूस का यूरोपीय भाग 4. जापान के औद्योगिक प्रदेश

गौण औद्योगिक प्रदेश : 1. दक्षिणी संयुक्त राज्य अमेरिका 2. पश्चिमी आंग्ल अमेरिका 3. मध्यवर्ती अमेरिका 4. पश्चिमी मध्यवर्ती लैटिन अमेरिका 5. मध्य चिली 6. दक्षिणी पूर्वी लैटिन अमेरिका 7. दक्षिणी पूर्वी ब्राजील 8. भूमध्य सागरीय क्षेत्र 9. दक्षिण अफ्रीका एवं पूर्वी अफ्रीका का पठार 10. दक्षिण पूर्वी आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड 11. दक्षिणी तथा पूर्वी एशिया

उक्त औद्योगिक प्रदेशों में विविध प्रकार के उद्योग केन्द्रित पाये जाते है। प्रमुख औद्योगिक प्रदेश में कई लघु प्रदेश भी पाये जाते है, इसी कारण से परिमाण एवं गहनता में क्षेत्रीय विभिन्ता पायी जाती है। औद्योगिक प्रदेशों की विशेषताओं का प्रभाव उस देश की राजनैतिक एवं आर्थिक दशाओं पर पड़ता है। औद्योगिक प्रदेशों का विस्तार उस देश की आर्थिक विकास को भी दर्शाता है। प्रमुख औद्योगिक प्रदेशों का विवेचन आगे किया गया है।

16.7 यूरोपीय समुदाय के औद्योगिक प्रदेश :

विश्व में औद्योगीकरण की शुरूआत यूरोप से ही प्रारम्भ हुआ था, जिसके कारण यहाँ विकसित औद्योगिक प्रदेश पाया जाता है। यूरोप में औद्योगिक प्रदेश का विस्तार ब्रिटेन से लेकर मध्य पोलैण्ड तथा पो नदी की घाटी से स्वीडन तक त्रिभुजाकार आकार में फैला है। यहां कुल औद्योगिक श्रम का 1/3 भाग पाया जाता है। यूरोप के देश यूरोपीय संघ से सम्बद्ध होने के कारण एक विशाल भाग औद्योगिक भूदृश्य के रूप में प्रकट होता है। यहाँ औद्योगिक प्रदेश के विकास की अनुकूल दशाएं पायी जाती है। इस क्षेत्र में कोयला, जलविद्युत एवं आणुविक ऊर्जा की व्यापक मात्रा में उपलब्धता पायी जाती है। समुद्री परिवहन एवं नहरों के द्वारा जुड़ी नौवगम्य नदियां सस्ते परिवहन की सुविधा उपलब्ध कराती है, जो उद्योगों के विकास में सहायक है। यूरोप में सर्वत्र उद्योगों का वितरण पाया जा है परन्तु कुछ प्रदेशों में संकेन्द्रण अधिक पाया जाता है। यूरोप को चार वृहत् प्रदेशों में विभाजित किया जाता है–

1. उत्तरी सागर के तटवर्ती औद्योगिक प्रदेश
2. आन्तरिक औद्योगिक प्रदेश
3. भूमध्य सागर तटवर्ती औद्योगिक प्रदेश
4. अन्य छिटपुट औद्योगिक प्रदेश

16.7.1 उत्तरी सागर तटवर्तीऔद्योगिकप्रदेश :

यह यूरोप का सबसे प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है। तटवर्ती क्षेत्रों में समुन्नत बन्दरगाहों की उपस्थिति के कारण यह क्षेत्र औद्योगिक क्रियाकलापों में अग्रणी रहा है। बन्दरगाहों, नदियों एवं नहरों के सहारें व्यापक

मात्रा में उद्योगों का प्रसार इस क्षेत्र में हुआ जिससे बड़े–बड़े नगरों का विकास हुआ है। पेरिस, लन्दन, न्यूकैसिल, साउथम्पटन, लीवरपूल, मैनचेस्टर, ऐण्टवर्प जैसे नगरों के पृष्ठप्रदेशों में औद्योगिक विस्तार पाया जाता है। यूरोप का विश्व के अनेक देशों में औपनिवेश होने से कच्ची सामग्री की आपूर्ति और उत्पादित वस्तुओं के निर्यात की सुविधा के कारण उद्योग का तेजी से विकास हुआ। इस क्षेत्र में कई लघु औद्योगिक प्रदेश पाये जाते है–

16.7.1.1 यूनाइटेड किंगडम के औद्योगिक प्रदेश :

यह प्रदेश समुद्रतटवर्ती क्षेत्र एवं टेम्स नदी के सहारे आंतरिक भागों में फैला है। यहाँ भारी उद्योग की प्रधानता पायी जाती है। लन्दन इस क्षेत्र का प्रतिनिधि नगर है, जो इंजीनियरिंग, वस्त्र तथा रासायनिक उद्योगों के लिए विश्वविख्यात है। इसके अलावा खाद्य पदार्थ, मोटरगाड़ियां, जलयान, फर्नीचर, शीशे के सामान आदि के उद्योग बन्दरगाहों के निकट आयात–निर्यात की सुविधा वाले स्थानों पर विकसित है। आक्सफोर्ड, कैमडन, ग्रीनविले, एपिंग आदि नगरों में उद्योग विकसित पाये जाते है। इस क्षेत्र में घनी आबादी तथा प्रवासी लोगों के कारण श्रम की उपलब्धता भी उद्योगों के विकास के लिए आदर्श दशायें उपलब्ध कराती है।

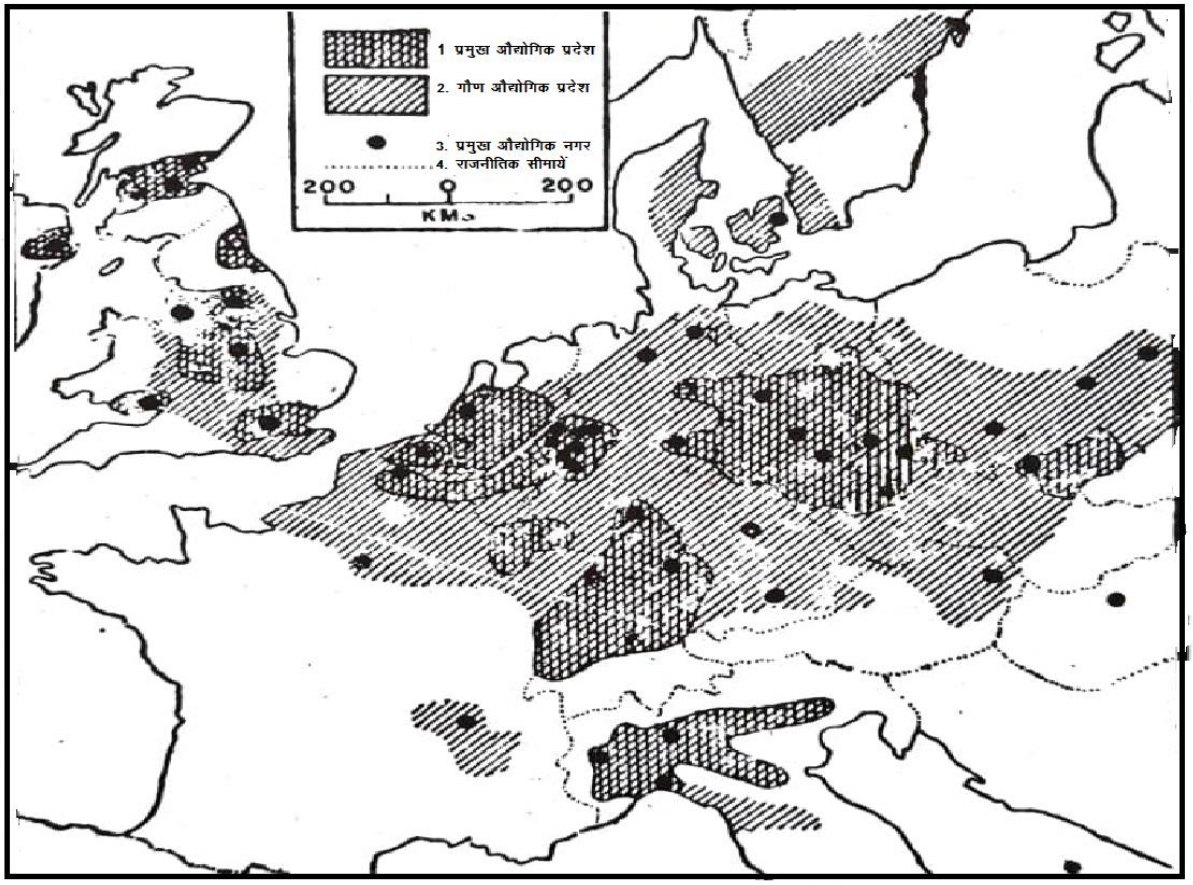

चित्र 16.1 : यूरोप के औद्योगिक प्रदेश

16.7.1.2 आन्तरिक मध्यदेशीय औद्योगिक प्रदेश :

यह क्षेत्र प्रेस्टन, लीड्स, लीवरपूल तथा बर्मिघम को मिलाने एक रेखा के रूप में ब्रिटेन के मध्यवर्ती भाग में फैला है। नॉटिंघम, शैफील्ड तथा डर्बी यहाँ के मुख्य केन्द्र है। यहाँ वस्त्र,मशीनरी तथा लोहा–इस्पात एवं अन्य भारी धातु उद्योग केन्द्रित है। यहाँ विविध प्रकार की वस्तुएं जैसे मशीनें, रेल इंजन, मोटर–गाड़ियां, साइकिल, रबर के सामान आदि के उद्योग पाये जाते है। लंकाशायर में आर्द्र जलवायु के कारण सूती वस्त्र उद्योग उन्नत है, जिसके मुख्य केन्द्र ब्लैकबर्ग, बर्नले मानचेस्टर, प्रेस्टन आदि है। हौजरी का सामान स्टैनफोर्ड, डर्बी तथा लौंगवरी में बनाया जाता है। ब्रेडफोर्ड, लीड्स, हैलीफैक्स, वेकफील्ड में ऊनी वस्त्र के कारखाने पाये जाते है। शेफील्ड इस्पात से बने सामानों के लिए विख्यात है।

16.7.1.3 उत्तरी पूर्वी औद्योगिक प्रदेश :

यह प्रदेश टाइनस नदी के किनारे न्यू कैसल के पास के क्षेत्र में विकसित हुआ है। कोयले की उपलब्धता तथा लोहा के आयात की सुविधा और टाइनस नदी मुहाने पर पोताश्रय की सुविधा के कारण यहाँ जलयान,रेलवे के सामान तथा हल्के उद्योग विकसित है। मिडिल–सवरों, स्टॉकन एवं हारटेल्पुल प्रमुख धातु उद्योग केन्द्र है। यहाँ ब्रिटेन का 10 प्रतिशत से अधिक लौह–इस्पात तैयार किया जाता है।

16.7.1.4 दक्षिणी वेल्स प्रदेश :

दक्षिणी वेल्स में लौह–इस्पात, तेलशोधन, ताँबा, टिन एवं एल्युमीनियम उद्योग विकसित पाये जाते है। उत्तम गुणवत्ता की कोयले की उपलब्धता एवं प्रारम्भ में कुछ क्षेत्रों में लोहा के प्राप्त होने से इस औद्योगिक प्रदेश का विकास हुआ था। कार्डिफ, न्यूपोर्ट, तथा स्वाँसी नगर समुद्र तट स्थित है जहाँ पर स्थित पोताश्रय से पहले कोयला एवं लोहा निर्यात किया जाता था। परन्तु लोहे का स्थानीय भण्डार समाप्त होने से विदेशों आयात होने लगा है।

16.7.1.5 स्काटलैण्ड घाटी औद्योगिक प्रदेश :

एडिनबरा से क्लाइड नदी मुहाने तक लगभग 80 किलोमीटर चौड़ी दरार घाटी में यह प्रदेश विकसित है। ग्लासगो, डंडी तथा एडिनबरा इस प्रदेश के मुख्य औद्योगिक केन्द्र है। कोयले की खाने, स्थानीय स्तर पर थोड़ी बहुत मात्रा में लोहा तथा चिकनी मिट्टी की सुलभता पायी जाती है। यहां स्थित क्लाइड नदी तथा नहरे सस्ता जल परिवहन की सुविधा प्रदान करती है। ग्लासगों बन्दरगाह आयात–निर्यात के लिए सुविधा प्रदान करता है। ग्लासगों में जलयान उद्योग, डण्डी वस्त्र उद्योग एवं एडिनवर्ग कागज तथा शराब उद्योग के लिए प्रसिद्ध है। इसके अलावा इंजीनियरिंग उद्योग, मशीनें, रेल इंजन, मोटरकार आदि उद्योग भी पाये जाते है।

16.7.1.6 पेरिस औद्योगिक प्रदेश :

यह फ्रांस में पेरिस के आस–पास केन्द्रस्थल के रूप में विकसित औद्योगिक प्रदेशों है। यहां मोटरवाहन, वायुयान, बिजली की मशीनें, धातु के सामान, रेल इंजन, छपाई, शराब बनाने, खाद्य पदार्थ आदि के उद्योग पाये जाते है। यहां अधिक जनसंख्या के कारण वस्तुओं की मांग अधिक है। कुशल श्रमिक, जल विद्युत तथा ताप विद्युत, सस्ता जल परिवहन और बाजार की सुविधा से उद्योगों के विकास को बढ़ावा मिला है। पेरिस

फ्रांस के प्रत्येक भाग से नौगम्य नदियों, रेलमार्गों, वायुमार्ग एवं सड़क मार्ग से जुड़ा है तथा पूँजी का एक बड़ा केन्द्र हैं।

16.7.1.7 फ्लैण्डर्स औद्योगिक प्रदेश :

बेल्जियम के दक्षिणी–पश्चिमी भाग एवं फ्रांस के समीपवर्ती भाग में 3000 वर्ग किमी0 क्षेत्र में फैले प्रदेश को फ्लैण्डर्स कहते है। यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही वस्त्र उद्योग के लिए प्रसिद्ध है। यहां सूती, ऊनी तथा लिनेन वस्त्र के उद्योग पाये जाते है। लीना नदी के जल में चूने की मात्रा अधिक होने से फ्लैक्स से रेशा निकालने में सहायता मिलती है। इस प्रदेश का मुख्य नगर घेण्ट तथा कोट्रीक मुख्य वस्त्र उत्पादक है। वस्त्र के अतिरिक्त रासायनिक पदार्थ, शीशे के वर्तन तथा धातु के सामान भी बनते है।

16.7.1.8 एम्सटर्डम–राटरडम औद्योगिक प्रदेश :

इस प्रदेश का विस्तार एम्सटर्डम से ब्रसल तक 250 किमी लम्बे एवं 65 से 100 किमी0 चौड़े क्षेत्र में पाया जाता है। यह क्षेत्र तटीय प्रदेश है तथा यूरोप के औद्योगिक प्रदेश के प्रवेश द्वार पर स्थित है। यहां न तो कोयला पाया जाता है, न कोई विशेष कच्ची सामाग्री उपलब्ध है, लेकिन आदर्श स्थिति के कारण यहां उद्योग विकसित हो गये है। राइन, म्यूज आदि नौगम्य नदीयां समुद्र में गिरती है तथा इनके किनारे ब्रुसेल्स, एन्टवर्प, राटर्डम, एम्सटर्डम जैसे बड़े नगर एवं बन्दरगाहों के किनारे तेलशोधन, चीनी साफ करना, गेहूँ, रबर, चमड़े आदि के उद्योग विकसित है। एन्टवर्प में विश्व का सबसे बड़ा हीरा तराशने का उद्योग है।

16.7..2 भूमध्यसागरीय औद्योगिक प्रदेश :

यूरोप के भूमध्यसागरीय तटीय भाग के सहारे स्थित बन्दरगाहों के आसपास के क्षेत्र में इस ओद्यौगिक प्रदेश का विकास हुआ है। इटली के वेनिस तथा जेनेवा एवं फ्रांस के मार्सेली प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है जहां पेट्रोल शोधन, रसायन उद्योग, लोहा–इस्पात प्रमुख उद्योग है। रसायन एवं लोहा–इस्पात उद्योग आयातित कच्ची साम्रागी पर निर्भर है। जल विद्युत, सुगम यातायात, कुशल श्रमिक एवं उन्नत तकनीक उद्योगों के विकास के लिए महत्वपूर्ण कारक है।

16.7.3 आन्तरिक प्रदेश :

यूरोप के आंतरिक भाग में जहां कोयला पाया जाता है उन क्षेत्रों में इस औद्योगिक प्रदेश का विकास हुआ है। ग्रेट ब्रिटेन के मिडलैण्डस्, ब्रुसेल्स, फ्रांस–जर्मनी सीमा पर सार–लारेन क्षेत्र, जर्मनी के रूर क्षेत्र तथा इटली के तूरिन प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है, जिसका विवेचन अधोलिखित है–

16.7.3.1 रूर औद्योगिक प्रदेश :

जर्मनी के वेस्टफेलिया प्रदेश के राइन घाटी प्रदेश में स्थित है। यह प्रदेश पश्चिम से पूर्व 120 किमी0 लम्बे तथा उत्तर–दक्षिण में 65 किमी चौड़े क्षेत्र में फैला हुआ है। यहां अनेक औद्योगिक नगर पाये जाते है जिनमें से ऐसेन, डार्टमुंड, डुइजेलफोर्ड, ग्लैनबैक आदि मुख्य केन्द्र है। स्थानीय स्तर पर उत्तम कोटि का कोयला, स्वीडन से लोहा का आयात, नदियों, सड़को, और रेलमार्गो द्वारा परिवहन की सुविधाएं प्राप्त है। इस क्षेत्र में घनी जनसंख्या के कारण सस्ता श्रम भी उपलब्ध है। डार्टमुंड, ओबरहाडजेन, ऐसेन, बोखुम में लोहा–इस्पात

आधारित भारी इंजीनियरिंग उद्योग पाये जाते है। रूर क्षेत्र में कोक पर आधारित रासायनिक उद्योगों का विशेष महत्व है। राइन नदी के पूर्व में वुपरताल, सीजबुर्ग एवं पश्चिम क्षेत्र में कोलोन, मुइनचेन–ग्लाडवाख, रीडर डोरमागेन तथा आखेन वस्त्र उद्योग के लिए प्रसिद्ध है।

16.7.3.2 साम्ब्रे–कैम्पाइन औद्योगिक प्रदेश :

उत्तरी फ्रांस के औसेज से मध्य बेल्जियम होता हुआ पश्चिमी जर्मनी के आखेन नगर तक इस प्रदेश का विस्तार पाया जाता है। इस क्षेत्र में साम्ब्रे–म्यूज तथा कैम्पाइन कोयले की खाने है। लोहा, जस्ता तथा सीसा उद्योग यहां के मुख्य उद्योग है। इस औद्योगिक प्रदेश में लीज बन्दूक–पिस्तौल के लिए प्रसिद्ध है। यहां के चालेराय क्षेत्र में उच्च कोटि के बालू की उपलब्धता से सीसा उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। वरवीयर नगर वस्त्र उद्योग एवं नामूर यांत्रिक इंजीनियरिंग उद्योग के प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त रसायन, मशीनरी, चमड़ा, कागज के भी उद्योग पाये जाते है।

16.7.3.3 ऊपरी राइन औद्योगिक प्रदेश :

यह प्रदेश पश्चिमी स्विटजरलैण्ड से मध्य जर्मनी तक विस्तृत है। इस प्रदेश की सबसे बड़ी विशेषता न तो यहां कोयला पाया जाता है और न ही लौह अयस्क। यहां ऐसे उद्योग की प्रधानता है जिनमें कम कच्ची सामाग्री की आवश्यकता होती है। इसलिए इस क्षेत्र में मुख्य रूप से इंजीनियरिंग उद्योग मिलते है जिसके लिए कुशल श्रमिक, पूंजी तथा मांग उपलब्ध है। फ्रैंकफुट, स्टटगार्ड,मान्नहाइम,स्ट्रासबर्ग, ज्यूरिख तथा बेल्फोर्ड प्रमुख केन्द्र है। फ्रैंकफुट में मशीन औजार, मोटर–गाड़ियां, रासायनिक पदार्थ, चमड़े तथा वस्त्र के उद्योग और मान्न्हाइम में शीशे, सेरामिक, मशीन औजार, भारी मशीन, वायुयान, मोटरगाड़ियां, कागज तथा रासायनिक पदार्थ के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है।

16.7.3.4 लोरेन–सार औद्योगिक प्रदेश :

फ्रांस के लारेन क्षेत्र तथा जर्मनी के सार क्षेत्र में यह प्रदेश स्थित है। लारेन क्षेत्र में लोहा एवं सार क्षेत्र में कोयला पाया जाता है। सार तथा मौसेल नदियां जल की सुविधा प्रदान करती है। लौह–इस्पात उद्योग इस क्षेत्र का प्राचीन उद्योग है। नान्सी में भारी उद्योग, वस्त्र, फर्नीचर, बिजली की मशीनों के उद्योग विकसित है।

16.7.3.5 उत्तरी इटली का औद्योगिक प्रदेश :

पो नदी घाटी क्षेत्र में इटली के इस औद्योगिक प्रदेश का विस्तार मिलता है। कोयले तथा लोहे की कमी के बावजूद भी उत्तम जल विद्युत की सुविधा, सुगम यातायात एवं कुशल श्रमिक की उपलब्धता के कारण इस क्षेत्र का विकास हुआ है। लोम्बार्डी तथा पीडमाउण्ट प्रान्त में इटली के अधिकांश उद्योग केन्द्रित है। मिलान में रेशम, ऊनी, सूती, रेयान तथा सभी प्रकार के वस्त्र का उत्पादन होता है। तुरिन में मोटरगाड़ियां, वायुयान, मशीन औजार, रेलवे इंजन तथा ट्रैक्टर का निमार्ण होता है। मोन्जा में लोहा–इस्पात एवं बोवीसा में रासायनिक पदार्थ के उद्योग पाये जाते है।

16.7.3.6 दक्षिण स्कैण्डेनेविया औद्योगिक प्रदेश :

यह प्रदेश पूर्वी डैनमार्क तथा स्वीडन के क्षेत्र में स्थित है। इस क्षेत्र में गैलावेर एवं किरूना में उत्तम कोटि का कोयला पाया जाता है। इस प्रदेश के अधिकांश कारखाने स्टाकहोम से वार्नेन झील को मिलाने वाली रेखा के दक्षिण में है। स्टाकहोम विद्युत का सामान बनाने के लिए प्रसिद्ध है। कोपनहेगन तथा मालमों में जलयान उद्योग, रसायन उद्योग, मशीने, वायुयान, कागज तथा वस्त्र के उद्योग स्थित है। पूर्वी डेनमार्क में धातु तथा लकड़ी के सामान तैयार किये जाते है।

16.7.4 यूरोप के अन्य औद्योगिक प्रदेश :

यूरोप के सभी देशों में प्रमुखता से औद्योगिक क्रियाकलाप होते है। प्रत्येक नगर कुछ न कुछ वस्तुएं अवश्य निर्मित करते है, जिसके कारण यूरोप में छोटे–छोटे अनेक औद्योगिक क्षेत्र फैले हुए है। फ्रांस, जर्मनी, पुर्तगाल, स्पेन, पोलैण्ड, चेकोस्लाविया, हंगरी, रोमानिया, यूगोस्लाविया, आस्ट्रिया आदि देशों में इस प्रकार के औद्योगिक प्रदेशों की प्रधानता पायी जाती है। पूर्वी जर्मनी के इनोवर,कासेल, प्राग एवं बर्लिन नगरों में रासायनिक उद्योग काविकास हुआ है। ऊपरी साइलेशिया के अंतर्गत दक्षिणी पश्चिमी पोलैण्ड, ऊपरी मध्य चेक एवं स्लोवाकिया क्षेत्र में लौह–इस्पात, रसायन तथा सूती वस्त्र के उद्योग पाये जाते है।

16.8 उत्तरी अमेरिका के औद्योगिक प्रदेश :

उत्तरी अमेरिका प्राकृतिक संसाधन में सम्पन्न, नगरीय जीवन शैली, यातायात की सुविधा, कच्चे माल की उपलब्धता, ऊर्जा, श्रम एवं वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के कारण बहुत कम समय में दुनिया का महान औद्योगिक प्रदेश बन गया है। यहां का औद्योगिक प्रदेश मिस्सौरी एवं मिसीसिपी नदी घाटी से लेकर अंधमहासागर तक विस्तृत है। यहां का औद्योगिक भूदृश्य, संरचना, उत्पादन,वितरण एवं प्रभाव उद्योगों के लिए आदर्श है। अप्लेशियन घाटियां, पश्चिमी जार्जिया एवं उत्तरी मध्य अलबामा पर्वतपदीय पठार तथा कनाडा के भाग इस प्रदेश में शामिल है। इस प्रदेश की सबसे बड़ी विशेषता यह्म सभी प्रकार के उद्योग का मिलना है। यहां के प्रत्येक लघु प्रदेश में अनेक प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन होता है, जिसका निर्यात विदेशों में होता रहता है। इस औद्योगिक प्रदेश को निम्न विशिष्ट लघु प्रदेशों मे विभाजित किया जाता है–

1. न्यूइंग्लैण्ड औद्योगिक प्रदेश
2. मध्य अटलांटिक तटीय प्रदेश
3. दक्षिणी अप्लेशियन औद्योगिक प्रदेश
4. न्यूयार्क प्रदेश
5. महान झील औद्योगिक प्रदेश
6. ओहियो–इण्डियाना प्रदेश
7. मध्यवर्ती मैदानी औद्योगिक प्रदेश
8. खाड़ी तटीय औद्योगिक प्रदेश
9. राकी पर्वतीय औद्योगिक प्रदेश
10. प्रशान्त महासागर तटीय औद्योगिक प्रदेश

16.8.1 न्यू इंग्लैण्ड औद्योगिक प्रदेश :

संयुक्त राज्य अमेरिका के कनेक्टिकट, रोड आइलैण्ड, मैसाचुसेट्स, वरमांट, न्यू हैम्पसायर एवं मेन राज्यों मे इस प्रदेश का विस्तार पाया जाता है। यह अमेरिका का सबसे पुराना ओद्यौगिक प्रदेश है। न्यू इंग्लैण्ड में विविध प्रकार के उद्योग पायी जाती है, जिनमें विद्युत की मशीन, वस्त्र, मोटरगाड़ी, जलयान, कागज, धातु के सामान, खाद्य पदार्थ आदि उद्योगों की प्रधानता है। उद्योगों की विविधता के आधार पर इसे पूर्वी तथा पश्चिमी क्षेत्रों विभाजित किया जाता है। पूर्वी क्षेत्र का केन्द्र बोस्टन नगर है जहां वस्त्र एवं चमड़ा उद्योग की प्रधानता है। पश्चिमी न्यू इंग्लैण्ड क्षेत्र के में धातु आधारित उद्योगों की प्रधानता है। यह क्षेत्र को तांबे वस्तुओं के निमार्ण में विशेषीकरण प्राप्त है। स्प्रिंगफील्ड, हार्टफोर्ड, ब्रिजफोर्ट, न्यूहैवेन आदि नगर मशीनरी, औजार, विद्युत के सामान, घड़ियां आदि वस्तुओं के उत्पादन के केन्द्र है।

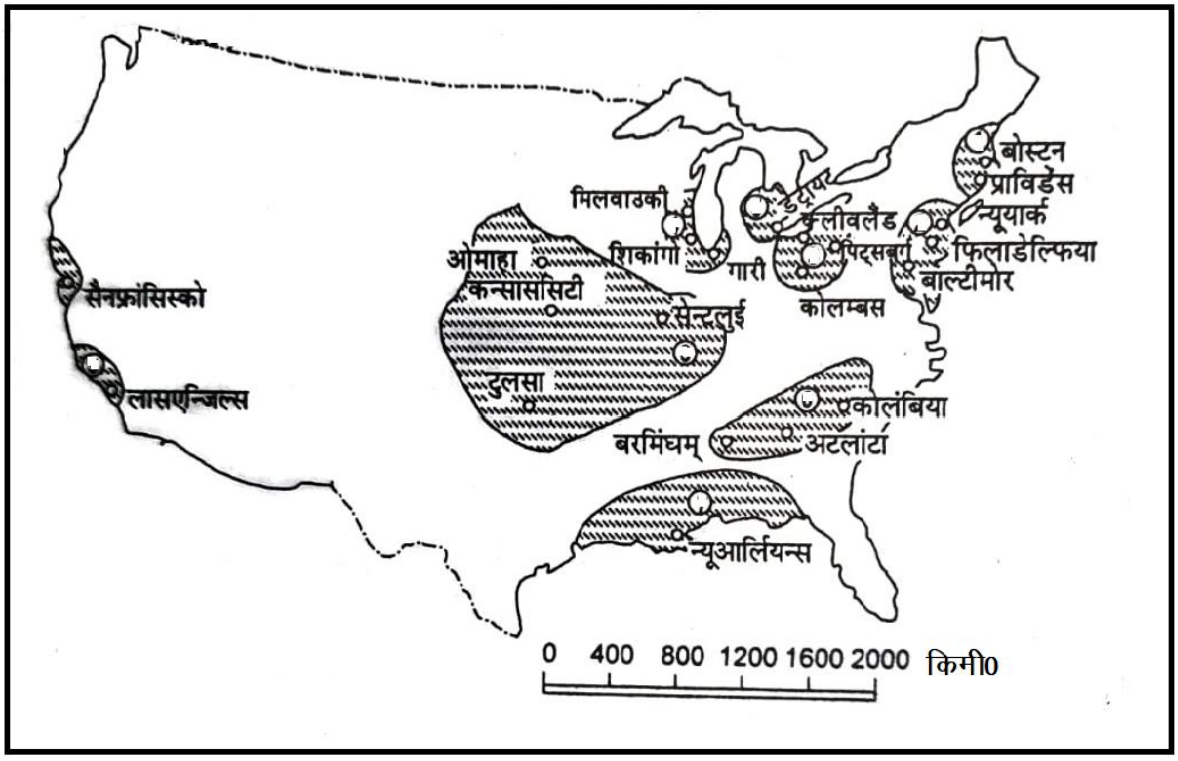

चित्र 16.2 :संयुक्त राज्य अमेरिका के औद्योगिक प्रदेश

16.8.2 मध्य अटलांटिक तटीय औद्योगिक प्रदेश :

पूर्वी न्यूयार्क, न्यूजर्सी, पूर्वी पेन्सिलवानिया, पूर्वी मेरीलैण्ड, कोलम्बिया तथा पूर्वी वर्जीनिया क्षेत्र में आने वाले उद्योग इस प्रदेश के अन्तर्गत आते है। यहां भारी उद्योगों की प्रधानता पायी जाती है। कोयला, लौह–इस्पात, परिवहन के साधन, पूँजी आदि की सुविधा में यह क्षेत्र सम्पन्न है। कारखानों की संख्या, कच्ची सामग्री का मूल्य एवं उत्पादन प्रक्रिया में लगे लोगों की संख्या के आधार पर यह अमेरिका बहुत महत्वपूर्ण औद्योगिक प्रदेश है। इस प्रदेश में उद्योगों का केन्द्रीयकरण पांच क्षेत्रों में हुआ है–

1. न्यूयार्क–न्यूजर्सी क्षेत्र में हल्के एवं भारी उद्योगों की प्रधानता है। मानहटन द्वीप पर हल्के उद्योगों की प्रधानता है जहां वस्त्र, छपाई, पोशाक, खाद्य–पदार्थ जैसे वस्तुओं के उद्योग पाये जाते है। वायुयान, जलयान, तांबा, पेट्रोल शोधन जैसे भरी उद्योग न्यूजर्सी में पाये जाते है।
2. फिलाडेल्फिया दूसरा प्रमुख क्षेत्र है जहां ट्रेन्टन से विलमिंगटन तक बिजली का सामान, चमड़ा, ऊनी वस्त्र, तम्बाकू, जलयान और इलेक्ट्रानिक्स आदि के उद्योग पाये जाते है। कैम्डेन में जलयान, मारिसविले में लौह–इस्पात, विलिंगटन में रासायनिक पदार्थ तथा वस्त्र और डेलावेयर में तेल शोधक कारखाने पाये जाते है।
3. पूर्वी पेन्सिलवेनिया क्षेत्र में लौह–इस्पात, मशीनरी, सीमेंट, वस्त्र उद्योग विशेष उल्लेखनीय है। यहां के बेथेलहम, कोस्टविले तथा स्टीलटन प्रमुख केन्द्र है।
4. चेसापिक खाड़ी तट क्षेत्र में बाल्टीमोर प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है जहां इस्पात, चीनी, अलौह धातु, जलपोत आदि उद्योग की प्रधानता है।
5. दक्षिण–पूर्वी वर्जीनिया भी मध्य अतलांटिक का महत्वपूर्ण है जहां पर रिचमांड,न्यूपोर्ट, न्यू हैम्पटन,पोर्टस्माउथ आदि नगरो में विविध उद्योग पाये जाते है। रिचमाड तम्बाकू , रसायन एवं धातु निमार्ण उद्योग के लिए अधिक महत्वपूर्ण है।

16.8.3 दक्षिणी अप्लेशियन औद्योगिक प्रदेश :

यह प्रदेश संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी पूर्वी भाग में अलबामा, जार्जिया, उत्तरी तथा दक्षिणी कैरोलिना, ल्यूजियाना, मिसीसिपी तथा टैनेसी राज्यों में फैला हुआ है। यह क्षेत्र कोयला तथा कपास उत्पादन में सम्पन्न है। अनुकूल जलवायु तथा प्रपात रेखा के सहारे जलविद्युत की भी सुलभता पायी जाती है। यहां लोहा–इस्पात उद्योग, मशीने एवं धातु उद्योग बर्मिघम में, वस्त्र उद्योग अटलांटा, ग्रीनविले एवं कोलम्बस नगर में केन्द्रित पाये जाते है।

16.8.4 मध्य न्यूयार्क औद्योगिक प्रदेश :

उत्तरी अमेरिका के इस औद्योगिक प्रदेश में विशिष्ट उद्योग पाये जाते है। इसका विस्तार न्यू इंग्लैण्ड की सीमा पर स्थित अलवानी से बफेलों तक एक पेटी में पाया जाता है। इस क्षेत्र में मोहाक घाटी, इड़सन घाटी और ओन्टारियो के मैदान में उद्योग विशेष रूप से केन्द्रित है। यहां लौह–इस्पात, मोटरगाड़ी, वायुयान, विद्युत मशीन, धातु की वस्तुएं एवं वस्त्र के उद्योग विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ट्राय में पोशाक के उद्योग सिरेक्यू में मशीने व रासायनिक पदार्थ, मासेन में एल्यूमीनियम, सेनेकटेडी में रेल इंजन व विद्युत सामाग्री का निमार्ण का होता है। इस क्षेत्र के विकास का प्रमुख कारण समुद्र तट तथा आंतरिक प्रदेश के सभी परिवहन मार्ग इसी प्रदेश से गुजरते है।

16.8.5 महान् झील का औद्योगिक प्रदेश :

यह प्रदेश महान झीलों – सुपीरियर, मिशीगन, इरी, ओन्टेरियों तथा ह्यूरन के क्षेत्र में फैला हुआ है। इस क्षेत्र में उत्तरी अप्लेशियन से उत्तम कोटि का कोयला, सुपीरियर झील क्षेत्र से लोहा तथा महान झीलों तथा नदियों शुद्ध जल एवं पविहन का साधन उद्योगों के विकास का प्रमुख कारक है। शिकागों रेल सड़क मार्गों का जंक्शन है, जिससे कच्चे माल उद्योगों तक तथा उत्पादित पदार्थ आसानी से बाहर भेज दी जाती है। इस क्षेत्र को चार उपविभागों में बॉटा जा सकता है–

1. नियाग्रा–आन्टोरियों – यह क्षेत्र लौह इस्पात उद्योग, मशीन, रसायन, इंजीनियरिंग और परिवहन उपकरणों के निमार्ण में अग्रणी है। बफेलो, हैमिल्टन, ट्रेन्टन एवं नियाग्रा में प्रमुख औद्योगिक केन्द्र पाये जाते है।
2. पिट्सबर्ग– इरी क्षेत्र– इसका विस्तार ईरी झील से दक्षिण पूर्व की तरफ 200 किमी तक क्लीवलैण्ड से पिट्सबर्ग तक पाया जाता है। यहां लौह–इस्पात, धातु मशीन और रबर उद्योग की प्रधानता है। यहां लौह–इस्पात उद्योग की पिट्सबर्ग, इरी, यंगटाउन आदि नगरों में प्रधानता पायी जाती है।
3. डेट्रायट– यह क्षेत्र मोटरगाड़ियों के लिए विश्वविख्यात हैं। इस क्षेत्र के अन्तर्गत मिशीगन, उत्तर पश्चिमी ओहियों तथा पश्चिमी ओण्टारियों के क्षेत्र समाहित है।
4. मिशिगन झील क्षेत्र – मिशीगन झील के दक्षिण तट पर घोड़े के खुर के आकार वाले क्षेत्र में इस लघु औद्योगिक क्षेत्र का विस्तार मिलता है। मध्य अटलांटिक तटीय क्षेत्र के बाद सर्वाधिक मात्रा में कारखाने यहां पाये जाते है। मिलवावकी, शिकागों, ग्रीनवे,राकफोर्ड महत्वपूर्ण औद्योगिक केन्द्र है। मशीनरी, लौह–इस्पात, मोटरगाड़ी, खाद्य पदार्थ, पोशाक, फर्नीचर इस प्रदेश के प्रमुख उद्योग है।

16.8.6 ओहियो–इण्डियाना औद्योगिक प्रदेश :

इस औद्योगिक प्रदेश का विस्तार ओहियो और इण्डियाना प्रदेश में पाया जाता है। सिनसिनाती, इण्डियानापोलिस और कोलम्बस इस औद्योगिक प्रदेश में एक त्रिभुज का निमार्ण करते है। इस प्रदेश में ओहियो नदी का जलमार्ग, पश्चिम के कृषि प्रदेश एवं भारी उद्योग के बीच की स्थिति औद्योगिक विकास में सहायक है। यहां के प्रमुख उद्योगों में एल्यूमीनियम, मशीनरी, वायुयान, विद्युत उपकरण, कागज और कृषि आधारित उद्योगों की प्रधानता पायी जाती है। सिनसिनाटी, कोलम्बस, मिडिलटाउन, इण्डियानापोलिस, डेटन हैमिल्टन एवं लुइसविले प्रमुख औद्योगिक नगर है।

16.8.7 मध्यवर्ती औद्योगिक प्रदेश :

यह प्रदेश मिसीसिपी तथा मिसौरी नदी घाटी के मैदानी क्षेत्र में फैला हुआ है। यहां पर कृषि आधारित उद्योगों की प्रधानता पायी जाती है, जिनमें माँस, आटा, कपास, तेल, कागज और खाद्य सामाग्री के उद्योग विशेष महत्व के है। कांसास सिटी, सेंट लुइस, सेंटपाल, वेनीपेग आदि प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है।

16.8.8 खाड़ी तटीय औद्योगिक प्रदेश :

खाड़ी तटीय क्षेत्र पर जलयान, वायुयान, मोटरगाड़ी, कागज, फर्नीचर जैसे उद्योगों का केन्द्रीकरण पाया जाता है। इन उद्योगों के लिए कृषि उत्पादन, जल यातायात, सस्ता श्रम एवं बाजार की सुविधा उपलब्ध है। ह्यूस्टन, न्यूमांट, आरेंज और पोर्टआर्थर प्रमुख औद्योगिक नगर है।

16.8.9 राकी पर्वतीय औद्योगिक प्रदेश :

इस औद्योगिक प्रदेश का विस्तार रॉकी पर्वतपदीय भाग पर कोलोरेडो, यूटा, एरोजोना, न्यू मैक्सिकों ,मोण्टाना राज्यों में विस्तृत है। इस क्षेत्र में पन–बिजली और कोयला पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। कृषि, पशुपालन, अन्न तथा रॉकी क्षेत्र में जंगल की लकड़ी की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता पायी जाती है। सोना, चाँदी, रांगा, लकड़ी, खनिज तेल आदि पर आधारित उद्योगों की प्रधानता है। इस क्षेत्र में डेनेवेयर, अलबर्क, बूटे, साल्टलेकसिटी प्रमुख नगर है।

16.8.10 प्रशान्त महासागर तटीय औद्योगिक प्रदेश :

उत्तरी अमेरिका के मुख्य औद्योगिक क्षेत्र से दूर प्रशान्त महासागर तट पर उद्योगों का विकास हुआ है। जलविद्युत, अलास्का का तेल क्षेत्र, वन सम्पदा, परिवहन के साधन आदि की सुलभता के कारण इस प्रदेश में उद्योगों का विकास हुआ है। यहां पर स्थित कोलम्बिया घाटी में स्थित वायुयान, जलपोत, तेलशोधन एवं लकड़ी पर आधारित उद्योग पाये जाते है। कोलम्बिया, सीटिल, पोर्टलैण्ड आदि प्रमुख नगर है। निचली कैलीफोर्निया घाटी में स्थित सैनफ्रांसिसकों, बर्कले, सेक्रेमाण्टों, सैनफ्रान्सिसको में भारी एवं हल्के उद्योग केन्द्रित है। ऊपरी कैलीफोर्निया घाटी के लॉसएंजिल्स औद्योगिक क्षेत्र में वायुयान, खाद्य पदार्थ, लकड़ी के सामान बनाने वाले उद्योग पाये जाते है।

16.9 जापान के औद्योगिक प्रदेश :

पूर्वी एशिया में प्रशान्त महासागर पर चापनुमा आकार में चार बड़े द्वीपों में विस्तृत पाया जाता है। जापान में 1850 ई0 से पहले परम्परागत हस्त उद्योग विकसित अवस्था में था, जिसके आधार पर 1870 ई0 के बाद आधुनिक उद्योगों की नींव पड़ी। तकनीकी प्रगति के साथ इस क्षेत्र के हस्त उद्योग यंत्रीकृत उद्योग में बदल गए। प्रथम विश्व युद्ध के बाद जापान में उद्योगों का तेजी से विकास हुआ। 1930 के बाद जापान में भारी उद्योगों की संख्या तेजी से बढ़ी। द्वितीय विश्व युद्ध में इस देश के क्षत–विक्षत हो जाने के बाद इस देश ने आश्चर्यजनक रूप से प्रगति की और दुनिया का सबसे महत्वपूर्ण औद्योगिक देश बन कर उभरा। यहां के चार प्रमुख औद्योगिक प्रदेशों में उद्योग का केन्द्रीकरण पाया जाता है–

1. क्वान्तों का औद्योगिक प्रदेश
2. किन्की का औद्योगिक प्रदेश
3. नगोया का औद्योगिक प्रदेश
4. किताक्यूशू औद्योगिक प्रदेश
5. अन्य औद्योगिक क्षेत्र

16.9.1 क्वातों का औद्योगिक प्रदेश :

यह औद्योगिक प्रदेश टोकियो–याकोहामा प्रदेश के नाम से भी जाना जाता है जिसका विस्तार कान्तों तटीय मैदान में विस्तृत है। यह प्रदेश हांशू द्वीप पर विस्तृत है। जापान के सबसे बड़े औद्योगिक प्रदेश के नाम से विख्यात है। यहां विविध प्रकार के उद्योगों में खाद्य पदार्थ, आप्टिकल यंत्र, रासासनिक पदार्थ, मशीने, इंजीनियरिंग एवं छपाई उद्योग अधिक महत्पूर्ण है। टोकियो एवं याकोहामा विश्व प्रसिद्ध बन्दरगाह है जिसके पृष्टप्रदेश में जलपोत, वायुयान, वस्त्र, लौह–इस्पात, विद्युत उपकरण, इलेक्ट्रानिक्स आदि वस्तुओं के उद्योग पाये जाता है। टोकियो जापान का आर्थिक एवं सांस्कृतिक केन्द्र भी है। क्वातों प्रदेश में व्यापारिक सुविधायें, कुशल श्रमिक, कोयला, परिवहन की सुविधा एवं जलविद्युत की सुलभता पायी जाती है जो उद्योगों की स्थापना में महत्वूर्ण भूमिका निभाते है। टोकियो के दक्षिण पूर्व चीबा में लौह–इस्पात कारखाना एवं कावासाकी में भारी उद्योगों की प्रधानता पायी जाती है।

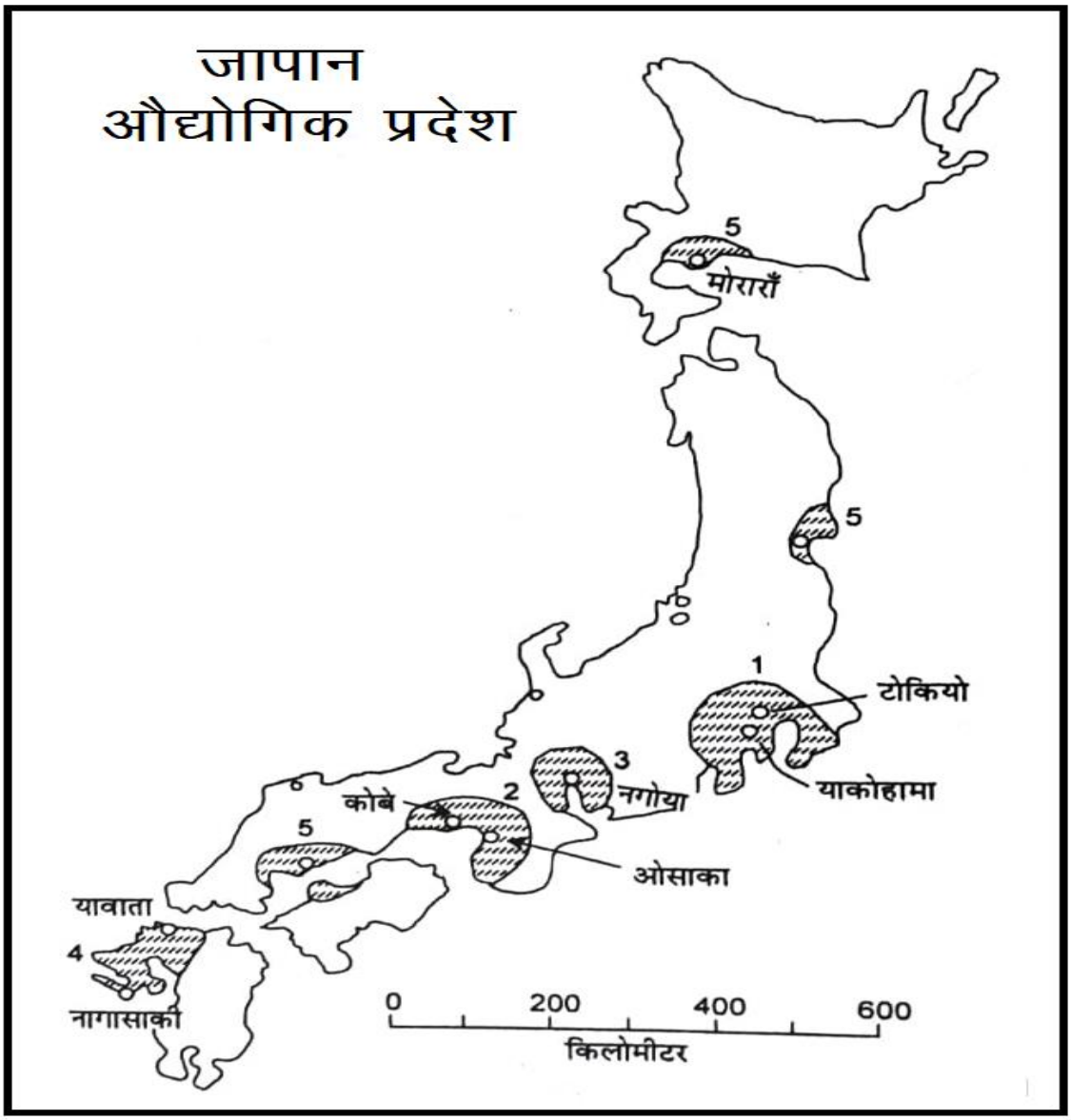

चित्र 16.3 : जापान के औद्योगिक प्रदेश

16.9.2 किंकी का औद्योगिक प्रदेशः

क्वातों मैदान के समान ही किन्की मैदान में भी सुविधाये मिलती है। इसे ओसाका–कोबे औद्योगिक प्रदेश के नाम से भी जाना जाता है। हांशू द्वीप के दक्षिण में फैला जापान का दूसरा प्रमुख औद्योगिक प्रदेश है। ओसाका में पहले सूत काटने का सबसे बड़ा केन्द्र था तथा इसके चारों ओर के नगरों में बुनने का माम होता था परन्तु 1930 के बाद से यहां धातु उद्योग की प्रधानता हो गयी और यह जलयान, वायुयान, मशीन तथा खाद्य पदार्थ के उद्योग विकसित हो गये। कोबे,क्योटो, नारा ,सकाई आदि इस क्षेत्र के प्रमुख औद्योगिक नगर है।

16.9.3 नागोया औद्योगिक प्रदेशः

क्वातों एवं किन्की औद्योगिक प्रदेशों के मध्य में इस प्रदेश का विस्तार पाया जाता है। यहां घनी जनसंख्या होने के कारण कुशल श्रमिक, जल विद्युत, पूँजी और यातायात की सुविधा उद्योगों के अनुकूल है। यह प्रदेश रेशमी, सूती एवं ऊनी वस्त्रों के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। जापान के ऊनी वस्त्रों के उत्पादन का 60 प्रतिशत भाग इसी क्षेत्र से होता है। नागोया मिट्टी के बर्तन का बनाने का सबसे वड़ा केन्द्र है, जिसकी कलाकृतियां विदेशों में बहुत प्रसिद्ध है। नागोया बन्दरगाह इस प्रदेश का प्रवेश द्वार है। वस्त्र उद्योग के अतिरिक्त वायुयान, मोटरगाड़ी, रासायनिक पदार्थ आदि अन्य महत्वपूर्ण उद्योग है।

16.9.4 किता–क्यूशू औद्योगिक प्रदेशः

क्यूशू द्वीप पर स्थित इस प्रदेश को नागासाकी औद्योगिक प्रदेश के नाम से जाना जाता है। यहां कोजला क्षेत्र स्थित होने से भारी उद्योगों की प्रधानता मिलती है। इसके प्रमुख केन्द्र नागासाकी,उत्तरी क्यूशू, केमोगी, यावाता, कोकुरा, फुकुओका, शिमोनोसेकी आदि प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है। जापान के लगभग 50 प्रतिशत इस्पात का उत्पादन इसी क्षेत्र में होता है, जिसके लिए यावाता प्रसिद्ध है। इस्पात के उत्पादन के आधार पर इंजीनियरिंग तथा धातु के सामान बनाने के कारखाने इस प्रदेश में विकसित है। इसके अतिरिक्त जलयान निमार्ण, सीमेंट, मोटरकार आदि के उद्योग भी पाये जाते है।

16.9.4 अन्य औद्योगिक क्षेत्र :

उपरोक्त मुख्य क्षेत्रों के अतिरिक्त गौण औद्योगिक क्षेत्र भी विभिन्न भागों में विकसित है जो बहुत ही महत्वपूर्ण है। दक्षिणी होकैड़ों उत्तरी जापान का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र जहां स्थानीय स्तर पर कोयला, जल विद्युत, खनिज आदि की उपलब्धता के कारण उद्योगों के महत्वपूर्ण केन्द्र बन गये है। हांशू के उत्तरी भाग में कैनेशी औद्योगिक क्षेत्र भी महत्वपूर्ण है। नाइगाता में वस्त्र उद्योग, रासायनिक पदार्थ, मशीन बनाने के कारखाने स्थित है।

16.10 सारांश

इस इकाई में हमने पढ़ा कि जिस क्षेत्र में स्थानीय स्तर कच्ची सामग्री, ऊर्जा के स्रोत, परिवहन के साधन एवं बाजार तथा अन्य अनुकूल अवस्थापनात्मक तत्वों के मिलने से बड़े पैमाने पर उद्योग स्थापित होने लगते है। उस क्षेत्र में उद्योग के सहायक अन्य छोटे–छोटे उद्योगों का विकास होने लगता है जिसके कारण वह क्षेत्र औद्योगिक प्रदेश के रूप में बदल जाता है। औद्योगीकरण के स्तर को निर्धारित करने के स्टेन द गियर, राइट, जोन्स आदि विद्धानों ने विभिन्न विधियों का उपयोग कर औद्योगिक प्रदेशों का निर्धारण किया तथा विश्व को औद्योगिक प्रदेशों में विभाजित किया है। प्रत्येक औद्योगिक प्रदेश की विशेषताएं एक दूसरे से भिन्न होती है। इन्ही औद्योगिक प्रदेशों में मनुष्य की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए वस्तुओं का उत्पादन होता है।

16.11 बोध प्रश्न

- औद्योगिक प्रदेशों का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
- औद्योगिक प्रदेशों को सीमांकित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।
- औद्योगिक प्रदेशों को निर्धारित करने वाले विधियों का वर्णन कीजिए।

- यूरोप के औद्योगिक प्रदेशों की विवेचना कीजिए।
- संयुक्त राज्य अमेरिका के ओद्योगिक प्रदेशों का वर्णन कीजिए।
- निम्नलिखित पर संक्षेप में लिखिए
    1. नागोया प्रदेश
    2. ओसाका
    3. डेट्रायट
    4. मिशिगन झील

16.12 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. न्यू इग्लैण्ड ओद्योगिक प्रदेश किस औद्योगिक प्रदेश में स्थित है
   अ.) उत्तरी अमेरिका औद्योगिक प्रदेश ब.) जापान के औद्योगिक प्रदेश
   स.) यूरोप के औद्योगिक प्रदेश द.)ग्रेट ब्रिटेन के औद्योगिक प्रदेश
2. डेट्रायट किसके उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है–
   अ. वस्त्र ब. मोटरगाड़ी
   स. कोयला द. खाद्य पदार्थ
3. रूर औद्योगिक प्रदेश स्थित है–
   अ. फ्रांस ब. जापान
   स. जर्मनी द. इटली

उत्तर – 1.अ, 2. ब, 3.स

16.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

- **सिंह, जगदीश, एवं सिंह, के.एन.(2010) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।**
- **मौर्य, एस. डी. (2022), आर्थिक भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, प्रयागराज।**
- **श्रीवास्तव, वी.के. एवं राव, बी.पी. (2002), आर्थिक भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर।**
- **गौतम, अलका, (2019) आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।**
- **अलेक्जेंडर, जे.डब्लू. (1979) इकोनॉमिक ज्योग्राफी, प्रेंटिस हाल,**
- **लांगमैन, जी.सी. एण्ड मार्गन, जी.सी. (1982) हयूमन एण्ड इकोनॉमिक ज्योग्राफी,आक्सफोर्ड प्रेस.**